विकास प्रशासन
(Development Administration)

प्रश्न पत्र-V

Paper-V

एम.ए. लोक प्रशासन (उत्तरार्द्ध)

M.A. Public Administration (Final)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक-124 001

Copyright © 2004, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

Developed & Produced by EXCEL BOOKS PVT. LTD., A-45 Naraina, Phase 1, New Delhi-110028

विषय सूची

अध्याय 1:	विकास	5
अध्याय 2:	विकास प्रशासन	18
अध्याय 3:	विकास प्रशासन का विकास	29
अध्याय 4:	विकास प्रशासन के मॉडल	33
अध्याय 5:	विकाशील देशों में विकास प्रशासन की भूमिका	37
अध्याय 6:	प्रशासनिक विकास	40
अध्याय 7:	प्रशासनिक विकास एवं विकास प्रशासन में अन्तर	47
अध्याय 8:	प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए संगठनात्मक एवं संस्थागत तरीके	50
अध्याय 9:	विकास प्रशासन की इकोलॉजी	58
अध्याय 10:	प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया	62
अध्याय 11:	प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया	76
अध्याय 12:	प्रशासन और सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के मध्य अन्तः क्रिया	86
अध्याय 13:	नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि का विकास प्रशासन पर प्रभाव	93
अध्याय 14:	प्रतिनिधि नौकरशाही	98
अध्याय 15:	तटस्थ बनाम प्रतिबद्ध नौकरशाही	103
अध्याय 16:	नीति-निर्माण एंव नीति को लागू करने में नौकरशाही की भूमिका	108
अध्याय 17:	राजनीतिज्ञ -नौकरशाही सम्बन्ध	117
अध्याय 18:	लोक नीतिः निर्माण एंव क्रियान्वन	123
अध्याय 19:	विकास सम्बन्धी नियोजन	139
अध्याय 20:	नियोजन प्रक्रिया; निर्माण क्रियान्वन एवं मूल्यांकन	144
अध्याय 21:	केन्द्र,राज्य एंव जिला स्तर पर नियोजन तन्त्र	151
अध्याय 22:	प्रोग्राम एवं प्रोजैक्टः निर्माण एंव क्रियान्वन	161
अध्याय 23:	विकास प्रशासन में जन-सहभागिता	175
अध्याय 24:	विशेषीकृत एजेंसियों की विकास में भूमिका	183
अध्याय 25:	स्वैच्छिक संगठनों की विकास प्रशासन में भूमिका	193
अध्याय 26:	जन-सम्पर्क एवं विकास प्रशासन	199
अध्याय 27:	चिर-स्थायी विकास	205

M.A. Public Administration (Final)

Paper-V

Development Administration

M. Marks : 100
Time : 3 Hrs.

Note: The question paper shall contain ten questions in all by including two questions from each unit. Every candidate shall attempt five questions in all, selecting one question from each unit. All questions carry equal marks.

UNIT–I

Development: Concept, Dimensions and Approaches, Development Administration: Concept, nature, scope and pre-requisites, Evolution of Development, Administration Models, Development Administration, Role of Development Administration in developing countries.

UNIT–II

Administrative Development: Concept, and its objectives Distinction between Development, Administration and Administration of Development; Institutional and Organisational arrangements for improving Administrative capability. Ecology of Administration; Interaction with political, socio-cultural and Economic System.

UNIT–III

Bureaucracy and Development: Influence of Social background on Development Administration, Representative Bureaucracy Neutral Versus Committed Bureaucracy, Role of Bureaucracy with special reference to policy formulation and Implementation, Relationship of Bureaucrats and Politicians.

UNIT–IV

Public Policy: Formulation and Implementation, Development Planning, Planning process-Formulation, Implementation and Evaluation; Planning Mechinery at Centre, State and Local Levels Programmes and Projects Formulation and Implementation.

UNIT–V

Citizens participation in Development Administration, Specialised Agencies for Development, Role of Voluntary Agencies in Development Administration, Public Relations and Development Administration, Sustainable Development.

Chapter–1
विकास
(Development)

मानव सदा से ही विकास के लिए प्रयासरत रहा है और प्रागैतिहासिक काल से आज तक का मानव इतिहास इस बात का द्योतक है। वास्तव में मानव की सभ्यता की कहानी उसके विकास की कहानी ही है। किन्तु आधुनिक काल में 'विकास' संभवतः सर्वाधिक प्रचलित शब्द है और ये कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि मानवता ने जितना विकास पिछली एक शताब्दी में किया है उतना ही विकास उससे पहले तक के अपने इतिहास में किया। इसमें भी पिछली सदी के पूवार्द्ध की अपेक्षा उतरार्द्ध में अधिक विकास हुआ। इसका एक कारण शायद ये रहा कि पिछली सदी में, और विशेष तौर पर दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात्, विकास केवल व्यक्तिगत लक्ष्य ही नहीं रहा, अपितु राज्य ने भी इसमें सक्रिय भूमिका निभानी आरम्भ कर दी। एक अमेरिकी विद्वान ब्रान ने ठीक ही कहा है आज "समस्त विश्व विकास की अवधारणा से प्रभावित है- इससे बचाव असंभव प्रतीत होता है।" वास्तव में पिछली शताब्दी में 'विकास' सभी देशों का चाहे वे विकसित रहे हों या अल्पविकसित, एक प्रमुख लक्ष्य बन गया है और वर्तमान में सभी देश विकास की ओर अग्रसर हैं और विकसित होने की होड़ में एक दूसरे से आगे निकलना चाहते हैं। अल्पविकसित देश विकसित होना चाहते हैं जबकि अन्य देश जो अपेक्षाक त अधिक विकसित हैं, अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए विकासोन्मुख हैं। किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि 'विकास' विकसित देशों की अपेक्षा अल्पविकसित देशों के समक्ष अधिक बड़ी चुनौती है।

विकास की अवधारणा

यद्यपि विकास की अवधारण कोई नई अवधारणा नहीं है। किन्तु जिस रूप में हम वर्तमान में विकास को समझ रहे हैं वह संभवतः विकास की सर्वथा नई व्याख्या है। वर्तमान स्वरूप में विकास एक बहुआयामी तथा सर्वसम्मिलित (Holidstic) अवधारणा है। वास्तव में आज विकास का अर्थ सर्वांगीण विकास - राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्क तिक, मनोवैज्ञानिक और यहाँ तक कि आध्यात्मिक - से लिया जाता है। इसके साथ ही विकास एक गत्यात्मक एवं प्रगतिशील अवधारणा है जिसके अर्थ तथा क्षेत्र में समय-समय पर परिवर्तन आता रहता है। अतः वर्तमान में (21वीं सदी के प्रारम्भ में) विकास की प्रक ति 20वीं सदी के प्रारम्भ में इसकी प्रक ति से भिन्न है। इसके साथ-साथ भूतकाल में विकास के लिए किए गए प्रयासों के अनुभवों के आधार पर भी विकास की अवधारणा में परिवर्तन होते रहते हैं। जिसके फलस्वरूप कालान्तर में अनेकों बार कई विद्वानों के विकास की अवधारणा के सम्बन्ध में स्वयं के विचारों में ही परिवर्तन आ जाता है। इन सब कारणों से यह स्वाभाविक है कि विकास के अर्थ तथा उद्देश्यों के सम्बन्ध मे विभिन्न विचारकों में मतैक्य नही पाया जाता है और इसकी एक सर्वमान्य परिभाषा देना कठिन हो जाता है।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोष ने 'विकास' का अर्थ बताते हुए लिखा है कि 'विकास उच्चतर, पूर्णतर और प्रौढ़ स्थिति की ओर बढ़ने की प्रक्रिया है। विकास की अवधारणा के प्रतिपादक *एडवार्ड वीडनर* के अनुसार विकास सतत् परिवर्तन की चिरस्थायी प्रक्रिया है तथा एक तुलनात्मक अवधारणा है। उनके अनुसार, 'विकास मन की एक स्थिति, एक प्रव ति और एक दिशा है। एक निश्चित लक्ष्य की अपेक्षा यह एक

विशिष्ट दिशा में परिवर्तन की दर हैं।[3] टी. एन. चतुर्वेदी के अनुसार, "विकास एक बहुर्मुखी प्रक्रिया है इसक उद्देश्य आर्थिक विकास एवं व द्धि करना, लोगों में सामाजिक एवं साहित्यिक परिवर्तन लाना तथा भिन्न-भिन्न वर्गो के लोगों को सामाजिक न्याय प्रदान करना है।[1] कोल्म तथा जीजर ने विकास को परिभाषित करते हुए कहा है कि "'विकास' शब्द का प्रयोग 'व द्धि' के पर्यायवाची के रूप में नहीं होता है। उनके अनुसार एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के अल्पविकसित देशों में विकास के लिए सामाजिक-सांस्क तिक परिवर्तन के साथ-साथ आर्थिक व द्धि की भी आवश्यकता है। अर्थात मात्रात्मक बढ़ोतरी (व द्धि) के साथ-साथ गुणात्मक परिवर्तन भी अवश्य होना चाहिए। वस्तुतः इन दोनों में परस्पर सम्बन्ध है तथा एक प्रक्रिया दूसरी की अनुपस्थिति में लम्बे समय तक या बहुत दूर तक जारी नहीं रह सकती। अतः विकास का अर्थ है परिवर्तन के साथ व द्धि।"[2]

माइकल टोडारो के अनुसार विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें संरचनाओं, व्यवहारों तथा संस्थाओं में परिवर्तन के साथ-साथ आर्थिक व द्धि की गति बढ़ाना, विषमताओं में न्यूनता लाना तथा सम्पूर्ण गरीबी (absolute poverty) का उन्मूलन करन सम्मिलित है।[3]

हाहन-बिन ली ने विकास को "एक व्यवस्था की नवीन तथा प्रगतिशील राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक उद्देश्यों के सतत् परिवर्तन की क्षमताओं की प्राप्ति की दिशा में अवलम्ब व द्धि (Sustained growth) प्राप्त करने की प्रक्रिया के रूप में" परिभाषित किया है।" मोण्टागोमारी के अनुसार, "विकास परिवर्तन का एक अभीष्ट पहलू है जो कि मोटे तौर पर सम्भावित या नियोजित है या कम से कम सरकारी (राज्य की) कार्यवाहियों द्वारा प्रभावित है।" विकास को सामाजिक परिवर्तन से जोड़ते हुए ची-यैन-वू ने कहा है कि "विकास परम्परावादी समाज के आधुनिक समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया है। ऐसे परिवर्तन को आधुनिकीकरण भी कहते हैं।

फ्रेड रिग्ज ने 'विकास' को परिभाषित करते हुए कहा है कि विकास "विर्वतन के उभरते स्तर द्वारा सम्भाव्य सामाजिक प्रणालियों की वर्द्धमान स्वायत्तता (विवेक) की प्रक्रिया है।"[7] इस परिभाषा में 'विवेक' का अर्थ 'विकल्पों में से चुनाव करने की क्षमता' तथा 'विर्वतन' का अर्थ 'सामाजिक प्रणाली में विशिष्टीकरण' की मात्रा से है।[1] निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते है कि 'कम वांछित स्थिति से अधिक वांछित स्थिति की ओर जाने की प्रक्रिया'[2] का विकास की संज्ञा दी जाती है।

विकास की विशेषताएँ :-

उपरोक्त परिभाषाओं के विश्लेषण करने के उपरान्त हम विकास की कुछ विशेषताएँ बता सकते हैं। इन विशेषताओं का वर्णन नीचे किया जा रहा हैं :-

(1) गत्यात्मक अवधारणा (Dynamic Concept):–

विकास एक स्थिर अवधारणा नहीं है। यह एक ऐसी अवधारणा है जिसमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। वास्तव में विकास का अर्थ समय तथा स्थान के साथ परिवर्तित होता रहता हैं अतः बीसवीं सदी में विकास का जो अर्थ समझा जाता था वह इक्कीसवीं सदी में विकास के अर्थ से काफी भिन्न है।। उदाहरण के तौर पर भारत में 1960 के दशक में क षि विकास का अर्थ खाद्यान्नों के मामले में आत्मनिर्भर होना था जबकि इक्कीसवी सदी में क षि विकास का तात्पर्य रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के प्रयोग को न्यूनतम करना है क षि विकास की अवधारण में यह परिवर्तन इसलिए आया क्यों कि 1960 के दशकमें भारत खाद्यान्नों के मामले में दूसरे देशों पर निर्भर था इसलिए उस समय क षि विकास का मुख्य उद्देश्य खाद्यान्नों के मामले में पर निर्भरता समाप्त करना था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उस समय सरकार ने रासायनिक खादों और रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग को भी बढ़ावा दिया। फलस्वरूप भारत खाद्यान्नों के मामले में स्वावलम्बी बन गया। किन्तु शनैः शनैः

रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग के दुस्परिणाम सामने आने लगे। अतः वर्तमान में भारत में क षि विकास का अर्थ रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग में कमी लाना बन गया है।

दूसरी ओर स्थान में परिवर्तन के साथ भी विकास का अर्थ बदल जाता है। अतः विकासशील और विकसित देशो में विकास के उद्देश्य सर्वथा भिन्न हैं। अतः भारत में जहाँ विकास का एक उद्देश्य बच्चों को कुपोषण से बचाना है वहीं दूसरी ओर विकसित देशों में विकास का एक उद्देश्य बच्चों को मनोरंजन के अधिक से अधिक साधन उपलब्ध करवाना है।

(2) विकास उद्देश्य परक प्रक्रिया है:-

विकास की प्रक्रिया सदैव एक लक्ष्य या उद्देश्य लेकर चलती है तथा उसकी प्राप्ति के लिए प्रयासरत रहती है। विकास की प्रक्रिया कभी भी उद्देश्यविहीन या लक्ष्यविहिन नहीं होती है। इसका कारण यह है कि विकास एक तर्कसंगत या विवेकपूर्ण प्रक्रिया है। अर्थात विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत सभी निर्णय सोच-समझकर व पूर्ण विवेक के साथ लिए जाते है।

(3) सतत् या चिरस्थायी प्रक्रिया
(Continuous or Unending Process):–

विकास का एक ही समय में उद्देश्यपरक एवं चिरस्थायी प्रक्रिया दोनों ही होना विरोधाभाषी प्रतीत होता है। क्योंकि सामान्यतः एक उद्देश्य परक प्रक्रिया के कुछ लक्ष्य या उद्देश्य होते हैं जिनकी प्राप्ति के उपरान्त उस प्रक्रिया का अन्त या समाप्त हो जाता है। किन्तु विकास उद्देश्यपरक होने के साथ-साथ चिरस्थायी भी है। इसका कारण यह है कि विकास एक उद्देश्य पूरा होने के साथ ही दूसरा लक्ष्य निर्धारित कर लेता है और फिर उसकी प्राप्ति के लिए प्रयास करता है।

इस प्रकार विकास एक लक्ष्य की प्राप्ति के उपरान्त दूसरा लक्ष्य निर्धारित कर लेता है और यह प्रक्रिया अनन्त तक चलती रहती हैं क्योंकि प्रथम, विकास एक तुलनात्मक अवधारण है और दूसरे, विकास तथा विनाश दोनो ही प्रक्रियाएं साथ-साथ चलती है।

(4) बहुआयामी प्रक्रिया
(Multidimensional process)

विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्क तिक, मानवीय आदि सभी आयाम सम्मिलित रहते हैं। अर्थात विकास का उद्देश्य केवल आर्थिक या राजनैतिक या सामाजिक विकास तक सीमित नहीं रहता अपितु चहुमुखी विकास होता है। यदि विकास का उद्देश्य केवल किसी एक पहलू को विकसित करना होगा तो परिणाम असंतुलित विकास होगा।

(5) जटिल विषय-वस्तु
(Complex Subject-matter)

क्योंकि विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें सभी पहलू सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्क तिक आदि सम्मिलित हैं, इस कारण यह काफी जटिल प्रक्रिया बन जाती है। ऐसा इस कारण होता है कि विकास के विभिन्न पहलूओं के सम्बन्ध में लक्ष्य निर्धारित करने के लिए विभिन्न सामाजिक विज्ञानों समाजशास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, लोक प्रशासन, मनोविज्ञान आदि का सम्पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक होता है। इस कारण से विकास की विषय-वस्तु अर्न्त-विषयक (Interdisciplinary) तथा इसी कारण से काफी जटिल हो जाती है।

विकास तथा सम्बन्धित शब्दावली
(Development and Related Words) :–

कई बार 'विकास' को इससे कुछ मिलते-जुलते शब्दों जैसे कि परिवर्तन, व द्धि, आधुनिकीकरण आदि

के पर्यायवाची के रूप में प्रयुक्त किया जाता है जिससे कि भ्रम पैदा हो जाता है। वास्तव में ये कुछ ऐसे शब्द हैं जो यद्यपि विकास से मिलते जुलते हैं तथापि विकास के समानार्थक या पर्यायवाची नहीं हैं। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि विकास का इन शब्दों से भेद अच्छी प्रकार से समझ लिया जाए।

विकास और परिवर्तन
(Development and Change) :–

वर्तमान स्थिति में कोई भी बदलाव या हलचल परिवर्तन कहलाता है। परिवर्तन नकारात्मक भी हो सकता है और सकारात्मक भी इसके साथ ही परिवर्तन वांछित भी हो सकता है और अवांछित भी। दूसरी ओर विकास केवल सकारात्मक दिशा में होता है। उदाहरणार्थ, यदि शिशु म त्यु दर में बढ़ोतरी होती है तो यह परिवर्तन तो अवश्य है किन्तु विकास नहीं। साथ ही विकास सामान्यतः वांछित ही होता है। किन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि विकास कई बार अवांछित भी होता है। उदाहरण स्वरूप यदि रक्षा मन्त्रालय किसी ग्रामीण इलाके में फौज के लिए छावनी बनाता है तो छावनी में रहने वाले रक्षा जवानों और अधिकारियों की प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उस ग्रामीण क्षेत्र में एक बाजार विकसित होता है जिससे की उस ग्रामीण क्षेत्र का विकास होता है। इसे हम उस ग्रामीण क्षेत्र मे परिवर्तन के साथ-साथ विकास की संज्ञा भी देंगे यद्यपि विकास की यह प्रक्रिया वांछित नहीं थी। फिर भी हम यह कह सकते हैं कि सामान्यतः विकास वांछित प्रयासों का ही प्रतिफल होता है। अतः परिवर्तन एक बड़ी अवधारणा है जबकि विकास उसका एक भाग या पहलू क्योंकि सभी विकास परिवर्तन होते हैं किन्तु विलोमतः सभी परिवर्तन विकास नहीं होते।

विकास और व द्धि
(Development and Growth) :–

व द्धि का तात्पर्य बढ़ोतरी से है और इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मात्रा से होता है। अतः साधारणतय हम कहते हैं कि प्रति व्यक्ति आय, सकल या निवल घरेलू उत्पाद, सकल या निवल राष्ट्रीय उत्पाद, कर संग्रह राशि, जन्म या म त्यु दर में कितनी व द्धि हुई। इस प्रकार से व द्धि का सम्बन्ध सामान्यतः ऑकड़ों या मात्रा से होता है जबकि विकास का सम्बन्ध मात्रा व गुणवत्ता दोनों से होता है। दूसरो शब्दों में हम कह सकते हैं कि जहाँ विकास के अनेक पहलू हैं जैसे कि सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, मानवीय, सांस्क तिक आदि वहीं अधिकतर व द्धि का सम्बन्ध केवल आर्थिक पहलू से है।

विकास और आधुनिकीकरण
(Development and Modernisation)–

विकास और आधुनिकीकरण दोनों ही जुड़ी हुई अवधारणाएं हैं तथा दोनों में कई समानताएँ भी पाई जाती है। दोनों का क्षेत्र काफी व्यापक है जिसमें राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक तथा मानवीय पक्ष या पहलू सम्मिलित किए जाते हैं। दोनों ही सकारात्मक परिवर्तन की पर्याय हैं तथा दोनों की ही सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकी है। किन्तु इन समानताओं से यह तात्पर्य नहीं लगाया जाना चाहिए कि दोनों अवधारणाओं में कोई अन्तर नहीं है। वास्तव में दोनों अवधारणाएं एक दूसरे से आधारभूत रूप से भिन्न हैं। विकास एक उद्देश्य परक प्रक्रिय है जबकि आधुनिकीकरण अपने लिए कोई उद्देश्य या लक्ष्य नहीं बनाता। अर्थात आधुनिकीकरण के समक्ष प्राप्त करने के लिए कोई लक्ष्य या उद्देश्य नहीं होते और इसी कारण इसकी कोई समय सीमा भी नहीं होती जबकि विकास अपने समक्ष जो लक्ष्य निर्धारित करता है उन्हें प्राप्त करने के लिए समय सीमा भी निर्धारित कर लेता है। सुनिश्चित लक्ष्य तथा समय सीमा के अभाव में आधुनिकीकरण एक अन्तहीन और चिरस्थायी प्रक्रिया बन जाती है जो कभी समाप्त नहीं होती। यद्यपि इसमें कोई सन्देह नहीं कि विकास भी एक चिरस्थाई तथा कभी समाप्त न होने वाले प्रक्रिया है तथापि इन दोनों अवधारणाओं या प्रक्रियाओं के चिरस्थाई

होने के कारण अलग-अलग हैं। जहाँ आधुनिकीकरण इसलिए एक अन्तहीन प्रक्रिया है क्योंकि इसके समक्ष प्राप्त करने के लिए कोई लक्ष्य नहीं होता वहीं दूसरी ओर विकास इसलिए चिरस्थाई प्रक्रिया है क्योंकि विकास एक लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति के पश्चात् प्राप्त करने के लिए अपने लिए नये उद्देश्य या लक्ष्य निर्धारित कर लेता है।

विकास की दिशाएँ या सन्दर्भ या पहलू
(Dimensions or Contexts or Aspects of Developmemt)

जैसा कि हम देख चुके हैं कि विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि विकास का क्षेत्र बहुत व्यापक है। मुख्य रूप से हम विकास के अन्तर्गत राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक -सांस्क तिक पक्षों का अध्ययन करते हैं और इनका वर्णन नीचे किया जा रहा है :-

राजनैतिक विकास
(Political Development)

साम्राज्यवादी शक्तियों ने द्वितीय विश्य युद्ध के पश्चात् एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका महाद्वीपों के अपने उपनिवेशों को स्वतन्त्र करने से पहले उनका भरपूर आर्थिक शोषण किया तथा इनके राजनैतिक विकास की ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। अतः दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों के समक्ष आर्थिक विकास के साथ-साथ राजनैतिक विकास लाना भी एक प्रमुख चुनौती थी। इन देशों में साम्राज्यवाद की समाप्ति और लोकतान्त्रिक व्यवस्था के सूत्रपात के साथ ही राज्य के उद्देश्य भी परिवर्तित हो गए। बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप विद्यमान संरचनाओं को रूपान्तरित करने की अथवा उनके स्थान पर नई संरचनाए स्थापित करने की आवश्यकता अनुभव की गई। इसके साथ ही लोकतन्त्र की सफलता के लिए लोगों की प्रशासनिक कार्यवाही में भागीदारी को सुनिश्चित करना भी अनिवार्य समझा गया।

राजनैतिक विकास के मुख्य रूप से तीन पहलू हैं :- संरचनात्मक (Structural), कार्यात्मक (Functional) तथा पर्यावरणात्मक (Environmental). राजनैतिक विकास के संरचनात्मक पहलू के अन्तर्गत संरचनाओं के विभेदीकरण तथा विशिष्टीकरण (Differetiation & Specialistaion) के अतिरिक्त विद्यमान संरचनाओं का नए उद्देश्यों के अनुरूप रूपान्तरण या आवश्यकतानुसार उनके स्थान पर नई संरचनाओं का गठन भी सम्मिलित किया जाता है। विभेदीकरण (Differentiation) का तात्पर्य है प्रत्येक कार्य एक ही संरचना के द्वारा सम्पन्न किया जाए (न की अनेकों संरचनाओं के द्वारा) तथा प्रत्येक संरचना केवल एक ही कार्य सम्पन्न करे (न कि अनेक)। विशिष्टीकरण का अर्थ है कार्य को छोटे-छोटे भागों में विभक्त करना तथा प्रत्येक व्यक्ति को करने के लिए एक छोटा भाग सौंप देना ताकि वह व्यक्ति कार्य के उस छोटे भाग को करने में निपुण हो जाए। किन्तु विभेदीकरण और विशिष्टीकरण का तात्पर्य संरचनाओं का एक दूसरे से स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करना नहीं है अपितु एकीकरण (Integration) की भावना से कार्य करने से है।

राजनैतिक विकास के कार्यात्मक पहलू से तात्पर्य है कि राजनैतिक क्षमता में व द्धि करना। राजनैतिक क्षमता में व द्धि का अर्थ है कम से कम (न्यूनतम) संसाधनों के निवेश (Input) से अधिक से अधिक उत्पादन (output) प्राप्त करना। डा. अवस्थी के अनुसार, "प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में निवेश (Inputs) और निर्गत (Outputs) पाये जाते हैं। निवेश का तात्पर्य माँगें और समर्थन तथा निर्गत का अभिप्राय नीतियों और निर्णयों से है।"

राजनैतिक विकास के पर्यावरणात्मक पहलू का अर्थ है समानता लाना समानता को तीन अर्थो में प्रयुक्त किया जाता है :-

(a) समस्त राजनैतिक प्रक्रियाओं में जनसहयोग, प्रतिबद्धता तथा सहभागित का होना आवश्यक

है। यह सहभागिता जन सहयोग, प्रजातन्त्र एवं अन्य प्रकार की विचारधारा में सम्भव है। इसमें चुनाव के अतिरिक्त अन्य कार्यो में जनता की सक्रियता अपेक्षित है।

(b) कानून के समक्ष सभी समान हो। सभी को कानून का संरक्षण समान होना चाहिए और कोई कानून से ऊपर या बाहर नहीं होना चाहिए।

(c) समस्त सरकारी पद सभी के लिए समान रूप से खुले हों। तथा चयन जाति, धर्म, भाषा, लिंग, अमीर-गरीब या क्षेत्रीयता के आधार पर न होकर खुली प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर होना चाहिए।

आर्थिक विकास
(Economic Development)

आर्थिक विकास को विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू माना जाता है क्योंकि आर्थिक विकास के अभाव में अन्य विकास (राजनैतिक, सामाजिक, सांस्क तिक, मानवीय आदि) प्रभावहीन हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर यदि एक व्यक्ति की आधारभूत आवश्यकताएं पूरी नहीं होती तो राजनैतिक अधि ाकारों के प्रयोग करने में उसकी कोई रूचि नहीं होगी। यही बात राज्य तथा प्रशासन के स्तर पर भी लागू होती है। यदि राज्य के पास आर्थिक संसाधनों का अभाव होगा तो राजनैतिक, सामाजिक, सांस्क तिक विकास कि दिशा में उसके प्रयास सीमित हो जायेंगे। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सहित सभी नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों न आर्थिक विकास कि दिशा में अनेक प्रयास किए। सामान्यतः उत्पादन, उत्पादकता, तथा राष्ट्रीय आय में व द्धि होना आर्थिक विकास के सूचक माने जाते है। किसी भी देश का आर्थिक विकास वहाँ उपलब्ध श्रम तथा पूंजीगत संसाधनों पर निर्भर करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि एक देश में आर्थिक विकास की दर वहाँ उपलब्ध श्रम तथा पूंजीगत संसाधनों के न्यायोचित उपयोग पर निर्भर करती है। इसका तात्पर्य यह है कि आर्थिक विकास के लिए पूंजी, संसाधन तथा श्रम आवश्यक घटक हैं किन्तु इन घटकों की उपलब्धता स्वतः आर्थिक विकास नहीं ला सकती। इसके लिए उपयुक्त अभिकरण (Agency) की आवश्यकता होती है और वह अभिकरण है उस देश में उपलब्ध संरचनात्मक ढ़ाँचा। नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों ने विरासत में जो संरचनात्मक ढ़ाँचा पाया वह उन देशों के आर्थिक विकास के प्रतिकूल था। इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों में से जिसने इस संरचनात्मक ढ़ाँचे को अनुकूल बनाने के लिए आवश्यक परिवर्तन किए, वो देश तुलनात्मक रूप में अधिक तीव्र गति से आर्थिक विकास कर पाये।

आर्थिक विकास के निर्धारक तत्व

किसी भी देश की आर्थिक विकास की गति के कुछ निर्धारक तत्व होते हैं जिनमें से कुछ प्रमुख का उल्लेख नीचे किया जा रहा है :-

(1) भौगोलिक एवं प्राक तिक पर्यावरण :-

किसी भी देश में आर्थिक विकास की गति वहाँ उपलब्ध प्राक तिक संसाधनों पर निर्भर करती है। ये संसाधन प्रत्यक्ष तथा परोक्ष दोनों ही रूप से आर्थिक विकास की गति को निर्धारित करते हैं। प्राक तिक संसाधनों में हम खनिज सम्पदा, जलवायु, क षि योग्य उपजाऊ भूमि, नदियाँ, समुद्रतट आदि सम्मिलित करते हैं।

(2) **मानवीय संसाधन** :- एक देश में उपलब्ध मानवीय संसाधन भी वहाँ की आर्थिक गति एवं स्थिति का एक प्रमुख निर्धारक तत्व है। यद्यपि मानवीय संसाधन के संख्यात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही पहलू महत्वपूर्ण हैं किन्तु गुणात्मक पहलू अधिक महत्वपूर्ण है। गुणात्मक पहलू का तात्पर्य है तकनीकी रूप में दक्ष जैसे डाक्टर, इन्जिनियर, वैज्ञानिक, पर्यावरणवीद, अर्थशास्त्री, प्रबन्धक इत्यादि। कई बार मानवीय संसाधनों का संख्यात्मक पहलू आर्थिक विकास में बाधा भी बन जाता है। उदाहरणार्थ, यदि

एक देश में जनसंख्या का अनुत्पादक भाग (Unproductive part) अर्थात 15 वर्ष से कम आयु वर्ग तथा 60 वर्ष से अधिक आयु वर्ग के लोग - अधिक होगा तो आर्थिक विकास की गति धीमी हो जाएगी।

(3) **उद्यमशीलता** :- किसी भी देश में उद्यमशीलता (Enterpreneurship) की उपलब्धता भी उस देश में आर्थिक विकास की गति को निर्धारित करती है। उद्यमशीलता से अभिप्राय है जोखिम उठाने की क्षमता। जिस देश के लोगों में उद्यमशीलता की भावना अधिक होती है वहाँ आर्थिक विकास की गति अधिक होती है।

(4) **पूँजी** :- पूँजी वह मानव निर्मित साधन है जिसके द्वारा दूसरी अन्य वस्तुओं व सेवाओं का उत्पादन किया जाता है। पूंजी के अन्तर्गत मशीनों, भवनों, सड़कों, यातायात के साधनों, संचार के साधनों आदि को सम्मिलित किया जाता है। जिस स्थान पर पूंजी बहुतायत में पाई जाती है वहाँ आर्थिक विकास की दर अधिक होती है।

(5) **प्रबन्धकीय क्षमता** :- तीव्र आर्थिक विकास के आवश्यक या निर्धारक तत्वों में प्रबन्धकीय क्षमता को भी अहम स्थान दिया जाता है। प्रबन्धकीय क्षमता के अन्तर्गत प्रबन्धकों की नियोजन करने, निर्णय लेने एवं उन्हें लागू करने, कार्य के विभिन्न पक्षों में समन्वय लाने, कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने, संचार व्यवस्था स्थापित करने, वित्त की व्यवस्था करने आदि क्षमताओं को सम्मिलित किया जाता है।

(6) **तकनीकी ज्ञान** :- तकनीकी ज्ञान आर्थिक विकास का एक अन्य महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है। आधुनिक तकनीकी ज्ञान के अभाव में एक देश के उद्यमियों द्वारा उत्पादित माल विश्व स्तर पर नहीं टिक पाता क्योंकि व महंगा भी होता है और उसकी गुणवत्ता भी अच्छी नहीं होती।

(7) **राज्य की भूमिका** :- आर्थिक विकास के लिए आवश्यक उपरोक्त सभी निर्धारक तत्व विद्यमान हों तब भी राज्य की सकारात्मक भूमिक के अभाव में आर्थिक विकास की गति धीमी पड़ जाती है। आर्थिक विकास के लिए शान्ति और व्यवस्था का वातावरण पाया जाना नितान्त आवश्यक है जो कि राज्य के द्वारा ही उपलब्ध करवाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त राजनैतिक इच्छा शक्ति, राजनैतिक स्थिरता आदि भी आर्थिक विकास को निर्धारित करने वाले तत्वों में शामिल हैं।

सामाजिक-सांस्क तिक विकास
(Socio-Cultural Development)

औपनिवेशिक काल में यूरोप की साम्राज्यवादी शक्तियों ने एशिया, अफ्रीका एवं लैटिन अमेरिका के अपने उपनिवेशों का आर्थिक शोषण करने के साथ-साथ इन देशों में सामाजिक असहिष्णुता भी फैलाई। उन्होंने इन देशों की सामाजिक व्यवस्था को अनेकों आधारो पर बाँट कर लोगों को आपस में लड़वाया। इससे उनके बीच आपसी सहयोग की भावना को ह्रास हुआ। इसके साथ ही शिक्षा के न्यूनतम अवसर उपलब्ध करवाए गए ताकि लोगों में ज्ञान का प्रचार-प्रसार न हो और समालोचक विवेचना (Criticality) करने की क्षमता न आने पाये। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय इन देशों में अज्ञानता एवं अंधविश्वास, सामाजिक असहिष्णुता, क्षेत्रीयता की भावना, धार्मिक उन्माद आदि प्रचर मात्रा में व्याप्त थे। ये सामाजिक-सांस्क तिक परिस्थितियाँ विकास के सर्वथा प्रतिकूल थी। इसलिए यह आवश्यक था कि इन देशों में राजनैतिक-आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक-सांस्क तिक विकास की प्रक्रिया को भी अपनाया जाए।

सामाजिक-सांस्क तिक विकास के सूचक :-

सामाजिक-सांस्क तिक विकास की स्थिति जानने के कुछ प्रमुख सूचक हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है :-

(1) शहरीकरण - लोगों के गाँवों से शहरों की ओर पलायन की प्रक्रिया को शहरीकरण की संज्ञा दी जाती है। शहरीकरण औार सामाजिक विकास वर्तमान में एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं क्योंकि

शहरों में लोगों को दैनिक जीवन की बुनियादी आवश्यकताएं तथा सुविधाएं जैसे जलापूर्ति, नगरीय आवास, सड़क, विद्युत आपूर्ति, सफाई, स्वास्थ्य सेवाएं, पार्को की सुविधा, मनोरंजन की सुविधा आदि उपलब्ध होती हैं। वास्तव में इन सभी सेवाओं तथा सुविधाओं की उपलब्धता सामाजिक विकास की एक प्रमुख सूचक है।

(2) समानता :- सामाजिक विकास का एक अन्य प्रमुख सूचक है सामाजिक समानता एवं निष्पक्षता। समाज में सभी को समान समझा जाना, सभी को बिना किसी भेदभाव-जातिगत, धार्मिक, क्षेत्रीय, अमीर-गरीब, लिंग, रंग या वर्ण आदि के आधार पर - के विकास के लिए समान अवसर उपलब्ध करवाना समानता के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त सामाजिक न्याय प्रदान करना, समस्त व्यवसाय, सरकारी सेवाएँ तथा सरकारी रोजगार सभी को बिना किसी भी प्रकार के भेदभाव के उपलब्ध होना भी सामाजिक समानता के अन्तर्गत शामिल किए जाते हैं।

(3) शिक्षा :- शिक्षा सामाजिक विकास के एक प्रमुख सूचक है। एक शिक्षित व्यक्ति समाज एवं देश के लिए एक महत्वपूर्ण सम्पति होता है क्यांकि वह विकास की दिशा में प्रशासन के प्रयासों की आलोचना करने के साथ-साथ अपने सुझाव प्रस्तुत करने में भी सक्षम होता है। वास्तव में विकास केवल सरकार और प्रशासन के प्रयासों का प्रतिफल नहीं होता अपितु इसमें नागरिकों के विचार एवं सुझाव भी महत्वपूर्ण होते हैं।

(4) जन-सहभागिता :- शिक्षा और जनसहभागिता एक दूसरे से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। एक शिक्षित व्यक्ति ही सकारात्मक रूप से सामाजिक विकास के लिए आवश्यक प्रशासनिक क्रियाओं में सहभागी हो सकता है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया के लिए यह आवश्यक है कि जनता विकास की प्रक्रिया में भागीदार बने। प्रशासन के द्वारा सामाजिक विकास के लिए जितने भी प्रयास किये जाते हैं उन सभी की सफलता जनता की उन कार्यक्रमों में सकारात्मक भागिदारिता या भूमिका एक पूर्वशर्त है।

(5) धार्मिक-सहिष्णुता :- धार्मिक-सहिष्णुता की भावना का पाया जाना सामाजिक-सांस्क तिक विकास का अन्य महत्वपूर्ण सूचक है। सभी धर्मो का समान आदर तथा किसी भी धर्म के अपनाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना सामाजिक-सांस्क तिक विकास का द्योतक है। विलोमतः धार्मिक उन्माद की भावना का पाया जाना सांस्क तिक विकास में एक प्रमुख बाधा है।

(6) क्षेत्रीय सहिष्णुता :- सामान्यतः अनेक राष्ट्रीयताओं वाले देशों में विभिन्न क्षेत्रों (Regions) के बीच आपसी सद्भाव का अभाव पाया जाता है। इसे हम सामाजिक-सांस्क तिक विकास नहीं कह सकते। विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को किसी भी दूसरे क्षेत्र में समान सम्मान एवं अवसर उपलब्ध कराना तथा भेदभाव एवं पक्षपात रहित व्यवहार करना सामाजिक-सांस्क तिक विकास के लिए आवश्यक है।

(7) **भाषा सम्बन्धी विवाद न होना** :- भारत जैसे बहुभाषी देशों में सामाजिक-सांस्क तिक विकास का एक अन्य प्रमुख सूचक है वहां पर भाषाई विवाद न होना तथा भाषा के आधार पर किसी के साथ भेदभाव न करना।

विकास के उपागम
(Approaches to Development)

विकास के तीन प्रमुख उपागम हैं : पूंजीवादी, साम्यवादी या मार्क्सवादी तथा त तीय विश्व। इन तीनों का विस्त त वर्णन नीचे किया जा रहा है।

(I) पूंजीवादी उपागम
(Capitalist Approach) :–

विकास का पूँजीवादी उपागम आरम्भ में अमेरिका, इग्लैण्ड, फ्रांस, जापान, पश्चिमी जर्मनी आदि

विकसित देशों ने सफलतापूर्वक अपनाया। इन देशों में इस उपागम की सफलता से प्रभावित होकर द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् एशिया, अफ्रीका, और लैटिन अमेरिका महाद्वीप के अनेक नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों ने भी इस उपागम को अपनाया। यह उपागम उत्पादन के साधनों पर निजि नियन्त्रण रखने पर बल देता है तथा व्यक्ति के निजि जीवन पर राज्य और प्रशासन के नियन्त्रण को न्यूनतम करता है। यह उपागम राज्य की अहस्तक्षेपवादी नीति (Lasssez Faire Policy) से प्रभावित है इसलिए व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर अधिक बल देता है। इस उपागम के अन्तर्गत प्रशासन को केवल कुछ विनियमन कार्य (Regulatory Fuctions) ही सम्पन्न करने होते हैं। इसके अलावा प्रशासन को कानून और व्यवस्था बनाए रखना, बाह्य सुरक्षा, न्याय प्रदान करना आदि कार्य भी करने होते हैं। विकास के इस उपागम की प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार हैं :-

(1) **औद्योगिकरण** :- विकास का यह उपागम औद्योगिकरण पर बल देता है। यह उपागम औद्योगिकरण के द्वारा विकास को महत्व देता है। अर्थात अधिक से अधिक उद्योग लगाना। जब उद्योग-धन्धे अधिक लगते हैं तो प्रतियोगिता बढ़ती है और उत्पादन बड़े स्तर पर होता है। इससें कीमतों में कमी आती है और विकास की प्रक्रिया को गति मिलती है।

(2) आर्थिक विकास को महत्व :- यह उपागम विकास के अन्य आयामों की अपेक्षा आर्थिक विकास को अधिक महत्व देता है। इसकी मूल मान्यता यह है कि आर्थिक विकास महत्वपूर्ण है तथा आर्थिक विकास होने पर अन्य विकास स्वतः ही हो जाते हैं।

(3) **निजि क्षेत्र को महत्व** :- यह उपागम निजि क्षेत्र को महत्व देता है तथा उसे राज्य या प्रशासन के नियन्त्रण से मुक्त रखने की सिफारिश करता है। वास्तव में यह उपागम व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को अधिक महत्व देता है तथा इसी कारण उत्पादन के साधनो पर निजि नियन्त्रण चाहता है तथा सार्वजनिक क्षेत्र की भूमिका न्यूनतम करना चाहता है।

(4) **प्रतिस्पर्धा पर बल** :- इस उपागम की एक अन्य प्रमुख विशेषता यह है कि यह प्रतिस्पर्धा पर बल देता है। अर्थात किसी भी क्षेत्र में यह उपागम कोई नियन्त्रण नहीं लगाना चाहता। किसी भी Industry में कितने व्यक्ति उद्योग लगायेंगे या उत्पादन करेंगे इसका निर्णय बाजार शक्तियों पर छोड़ दिया जाता है अर्थात प्रशासन कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाता है। इसके साथ ही किसी भी वस्तु का कितना उत्पादन किया जाएगा यह भी बाजार शक्तियों पर छोड़ दिया जाता है। साथ ही किसी भी वस्तु की कीमतों का निर्धारण भी बाजार शक्तियों के द्वारा ही किया जाता है। अतः स्पष्ट है कि प्रतिस्पर्धा इस उपागम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(5) **मुक्त या खुली अर्थव्यवस्था** (Open Eoconmy) इस उपागम के अन्तर्गत बाह्य उद्यमियों के ऊपर भी कोई नियन्त्रण नहीं लगया जाता। अर्थव्यवस्था पूरी तरह से खुली होती है तथा विदेशी पूंजी पर अपने देश में आकर उद्योग लगाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। इसी प्रकार स्वदेशी उद्यमियों को भी विदेशों में उद्योग-धन्धे स्थापित करने की स्वतन्त्रता रहती है।

(6) **आधुनिकीकरण पर बल** :- यह उपागम नवीनतम तकनीकें अपनाने का हिमायती है। यह उत्पादन के लिए आधुनिक मशीनें, यन्त्र, उपकरण आदि अपनाने पर भी बल देता है। जिससे कि उत्पादित माल न्यूनतम कीमतें तथा उत्तम गुणवत्ता के साथ लोगों तक पहुंच सके।

मूल्यांकन :- विकास का पूंजीवादी उपागम कई देशों में सफलतपूर्वक अपनाया जा चुका है। और वर्तमान में यह उपागम काफी लोकप्रिय है। विशेष तौर पर भूतपूर्व सोवियत संघ के 1991 में विघटन के पश्चात् जब वहां पर साम्यवादी विचारधारा का परित्याग किया गया उसके बाद से इस उपागम की लोकप्रियता और अधिक बढ़ गई। इस उपागम के अनेकों गुण हैं जिनमें से प्रमुख निम्नांकित हैं:-

(1) इस उपागम के अन्तर्गत उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता है। साथ ही प्रतिस्पर्धा होने के कारण उपभोक्ताओं के पास एक ही उत्पाद (Product) के अनके विकल्प होते हैं। अतः उपभोक्ताओं को कोई भी उत्पाद खरीदने में चुनाव की स्वतन्त्रता रहती है।

(2) प्रतिस्पर्धा होने के कारण उपभोक्ताओं को न्यूनतम कीमत पर सर्वोत्तम गुणवता उपलब्ध होती है।

(3) अधिक उत्पादन तथा प्रतिस्पर्धा होने के कारण कीमतें स्थिर रहती हैं।

(4) उत्पादन अधिक होने के कारण रोजगार के साधन अधिक उपलब्ध होते हैं तथा साथ ही आय में भी व द्धि होती है।

(5) निजि उद्यमियों को विकास का पूरा अवसर प्रदान किया जाता है।

किन्तु उपरोक्त गुणों के साथ-साथ इस उपागम में कुछ दोष भी पाये जाते हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है :-

(1) समाज में दो वर्ग बन जाते हैं - साधनसम्पन्न तथा साधनविहिन तथा दोनों के बीच का अन्तर अधिक होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि आय तथा सम्पति का असमान वितरण होता है।

(2) साधन सम्पन्नों (haves) के द्वारा साधन विहिनों (Have Not) का शोषण किया जाता है।

(3) क्योंकि किस वस्तु का उत्पादन किया जाए यह बाजार में वस्तुओं की माँग और पूर्ति द्वारा निर्धारित होता है। अतः कई बार ऐसी वस्तुओं का उत्पादन बढ़ जाता हैं जिनकी माँग अधिक होती हैं किन्तु किसी-न-किसी रूप में समाज के लिए अहितकर होती है।

(4) लाभ अर्जित करने की भावना की प्रधानता के कारण कई बार ऐसी वस्तुओं का उत्पादन नहीं या कम होता है जिनमे लाभ की मात्रा कम हो किन्तु समाज के लिए आवश्यक हों। ऐसी परिस्थितियों में सामान्यतः गरीबों की अवहेलना की जाती है।

(II) साम्यवादी या मार्क्सवादी उपागम
(Communist or Marxist Approach)

विकास के पूंजीवादी उपागम के सिद्धान्तों के ठीक विपरीत साम्यवादी विचारधारा है। इस विचारधारा के जनक कार्ल मार्क्स थे अतः इसे मार्क्सवादी विचारधार या उपागम की संज्ञा भी दी जाती है। मार्क्स ने पूंजीवादी विचारधारा को शोषण का माध्यम बताते हुए इस वैकल्पिक उपागम को प्रतिपादित किया। मार्क्स ने पाया की राज्य की अहस्तक्षेपवादी नीति के कारण साधनसम्पन्नों के द्वारा साधनविहिनों का शोषण किया जाता है। अतः उन्होंने साम्यवादी सिद्धान्त या उपागम का प्रतिपादन किया जिसमें कि निजि सम्पति के अधिकार को समाप्त कर सभी साधनों पर राज्य का नियन्त्रण स्वीकार किया गया। इस उपागम को सर्वप्रथम 1917 में रूस में लेनिन के नेत त्व में हुई बोल्सेविक क्रान्ति के पश्चात् सोवियत संघ के गठन के बाद अपनाया गया। दूसरे विश्व युद्ध के समाप्त होने तक सोवियत संघ, जो कि 1917 तक रूस के रूप में यूरोप का एक पिछडा हुआ देश था, एक विश्व महाशक्ति (World Super Power) बन चुका था। सोवियत संघ में इस उपागम की सफलता के कारण दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् यूरोप के कई राष्ट्रों जैसे पूर्वी जर्मनी, पौलेण्ड आदि सहित कई नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों में इस उपागम को अपनाया गया। इस उपागम की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

(1) यह उपागम निजि सम्पति के अधिकार के स्थान पर उत्पादन के सभी साधनों पर राज्य के नियन्त्रण पर बल देता है।

(2) यह उपागम लोगों के व्यक्तिगत विकास को भी राज्य की परिधि में लाता है।

(3) निजि उद्यमशीलता पर प्रतिबन्ध लगाता है।

(4) सभी वस्तुओं का उत्पादन राज्य द्वारा किया जाएगा। अतः किस वस्तु का उत्पादन होना है और कितनी मात्रा में यह निर्णय राज्य द्वारा ही किया जाएगा।

(5) क्योंकि राज्य एकमात्र उत्पादक होता है अतः बाजार तथा बाजारी ताकतें (Market and Market Forces) अनुपस्थित रहती हैं।

(6) क्योंकि समस्त उत्पादन राज्य द्वारा किया जाता है इसलिए उत्पादन लाभ के उद्देश्य से नहीं किया जाता।

(7) खुली अर्थव्यवस्था के स्थान पर बन्द अर्थव्यवस्था (Closed Economy) होती है। अतः विदेशी पूंजी और उद्यमशीलता पर प्रतिबन्ध होता है।

(8) वस्तुओं तथा सेवाओं के आयात-निर्यात के सम्बन्ध में भी निर्णय राज्य द्वारा लिया जाता है।

मूल्यांकन :- पूंजीवादी उपागम की भांति साम्यवादी उपागम में भी कुछ गुण तथा दोष दोनों ही पाए जाते हैं। इस उपागम के प्रमुख गुण निम्नलिखित हैं :-

(1) इस व्यवस्था के अन्तर्गत पूंजी का निजि अधिकार नहीं होता इसलिए सभी लोगों को कार्य प्रदान करना तथा उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना राज्य का उत्तरदायित्व होता है।

(2) उत्पादन के सभी साधनों पर राज्य का नियन्त्रण होता है। अतः ये व्यवस्था वर्ग-रहित (Classless Society) व्यवस्था होती है।

(3) वर्ग-रहित व्यवस्था होने के कारण शोषण का तत्व अनुपस्थित रहता है।

(4) राज्य सभी लोगों को उनके द्वारा किए गए कार्य के अनुसार प्रतिफल तथा सुविधाएं प्रदान करवाता है।

(5) क्योंकि उत्पादन राज्य के द्वारा किया जाता है इसलिए सभी लोगों की आवश्यकताओं की वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन किया जाता है।

इसके साथ ही इस उपागम में कुछ अवगुण या दोष भी पाए जाते हैं। जिनका वर्णन नीचे किया जा रहा है :-

(1) लोगों के व्यक्तिगत जीवन में राज्य का हस्तक्षेप बढ़ जाता है इसलिए व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का ह्रास होता है।

(2) प्रतिस्पर्धा के अभाव में वस्तुओं एवं सेवाओं की गुणवता प्रभावित होती है।

(3) निजी सम्पति के अधिकार की अनुपस्थिति के कारण उद्यमशीलता को बढ़ावा नहीं मिलता।

(4) वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्यों का निर्धारण राज्य द्वारा किया जाता है न कि बाजारी शक्तियों द्वारा।

(5) निजी सम्पति का अधिकार न होने के कारण उत्प्रेरणा (Incentive) का अभाव रहता है।

(III) त तीय विश्व या मिश्रित अर्थव्यवस्था उपागम
(Third Worldist or Mixed Economy Approach)

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् स्वतन्त्र हुए देशों के समक्ष चहुमुखी विकास एक प्रमुख चुनौती थी। विकास के लिए बड़े स्तर पर संसाधनो एवं पूंजी की आवश्यकता थी किन्तु इन राज्यों के पास इन दोनों का ही नितान्त अभाव था क्योंकि साम्राज्यवादी शक्तियों के आर्थिक शोषण ने इन देशों की अर्थव्यवस्था को जर्जर बना दिया था। दूसरी ओर इन देशों में निजि पूंजी और संसाधन भी इतने सक्षम नहीं थे कि चहुमुखी विकास के लक्ष्य की प्राप्ति हेतू निवेश कर सकें। इस कार्य के लिए यद्यपि विदेशी

पूंजी का सहारा लिया जा सकता था किन्तु अपने अनुभवों को ध्यान में रखते हुए अधिकतर विकासशील देशों ने इस विकल्प को न चुनने का फैसला किया। परिणामस्वरूप इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की, जिसमें भारत भी सम्मिलित था, ने विकास करने का उत्तरदायित्व राज्य तथा निजि स्वामित्व दोनों के ही पास रखा। अर्थात् ऐसी व्यवस्था स्थापित की गई जिसमें निजि सम्पति के साथ सार्वजनिक क्षेत्र भी विकास की प्रक्रिया में योगदान करें। उदाहरण के तौर पर भारत के औद्योगिक नीति प्रस्ताव (Industrial Policy Resolution), 1948 में दोनों क्षेत्रों - निजि तथा सार्वजनिक - का प्रावधान किया गया तथा दोनों के मध्य सह-अस्तित्व का सिद्धान्त अपनाया गया ओर समन्वय स्थापित किया गया। दोनों ही क्षेत्रों के मध्य विषयों का बटवारा कर दिया गया और राज्य से यह अपेक्षा की गई कि वह बड़े उद्योगों (Core Sector) एवं संस्थागत ढ़ांचा (Infrastructure) स्थापित करने के लिए निवेश करे। इस उपागम को त तीय विश्व उपागम या मिश्रित अर्थव्यवस्था उपागम की संज्ञा दी गई एवं भारत सहित अनेकों विकासशील देशों ने इस उपागम को विकास का माध्यम बनाया। इस उपागम की प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार हैं :-

(1) निजि और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों का अस्तित्व तथा दोनों के द्वारा की जाने वाली गतिविधियों का बंटवारा।

(2) पूंजीवादी तथा साम्यवादी दोनों व्यवस्थाओं के गुणों का समावेश तथा दोनों के दोषों को दूर करने का प्रयास।

(3) निजि स्वामित्व तथा बाजारी शक्तियों के साथ सार्वजनिक क्षेत्र की उपस्थिति जिससे कि प्रतिस्पर्धा का तत्व विद्यमान रहे।

(4) इस उपागम के अन्तर्गत सामान्यतः नियोजित विकास की प्रक्रिया अपनाई जाती है जिसमें की सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सम्पूर्ण नियोजन (Exhaustive Planning) तथा निजि क्षेत्र के लिए निर्देशक नियोजन (Indicative Planning) की जाती है।

(5) लाभ के उद्देश्य (Profit Motive) के साथ-साथ कल्याणकारी उद्देश्य (Service or Welfarestic Motive) विद्यमान रहता है।

(6) विदेशी पूंजी के आगमन को नियन्त्रित किया जाता है।

(7) धन तथा सम्पति का अपेक्षाक त समान वितरण रहता है।

मूल्यांकन :- यद्यपि विकास के इस उपागम का उद्देश्य था पूंजीवादी तथा साम्यवादी उपागमों के गुणों को रखते हुए इन दोनों के अवगुणों से मुक्ति पाना। तथापि इस उपागम में भी गुण तथा दोष दोनों ही पाए जाते हैं। इस उपागम के प्रमुख गुण निम्नांकिंत हैं :-

(1) इस उपागम के अन्तर्गत पूंजीवादी व्यवस्था की तरह व्यक्तिगत स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है।

(2) यह उपागम सार्वजनिक क्षेत्र के साथ-साथ निजि क्षेत्र का प्रावधान करके उद्यमशीलता को बढ़ावा देता है।

(3) यह उपागम नियोजित विकास को अपनाता है। अतः संतुलित विकास संभव हो पाता है।

(4) इस उपागम के अन्तर्गत आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण रहता है।

(5) इस उपागम के अन्तर्गत व्यक्तिगत विकास का सम्पूर्ण अवसर तथा अभिप्रेरणा मिलती है।

(6) इस उपागम का एक अन्य गुण यह है कि इसके अन्तर्गत धन एवं सम्पति का वितरण असमान नहीं होता।

त तीय विश्व उपागम के मुख्य अवगुण निम्न प्रकार हैं :-

(1) विदेशी पूंजी को नियन्त्रित करने से प्रतिस्पर्धा का अभाव रहता है जिससे कीमतें पूरी तरह बाजारी शक्तियों से निर्धारित नहीं होती।

(2) प्रतिस्पर्धा के अभाव में वस्तुओं तथा सेवाओं में गुणवता की कमी रहती है।

(3) सार्वजनिक क्षेत्र की उपस्थिति तथा प्रतिस्पर्धा के अभाव में बाजार पूरी तरह विकसित नहीं हो पाता जिससे कि आर्थिक विकास अवरूद्ध होता है।

(4) सार्वजनिक क्षेत्र राजनैतिक हस्तक्षेप, अधिक पूंजी की आवश्यकता होने तथा प्रतिफल की लम्बी अवधि (Longer Gestation Period) के कारण सामान्यतः घाटे में रहता है।

Chapter - 2
विकास प्रशासन
(Development Administration)

दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति के साथ ही उपनिवेशवाद की समाप्ति की भी नींव पड़ गई। दोनों ही औपनिवेशक शक्तियाँ (विजयी और पराजित) ही अपने उपनिवेशों (colonies) क ऊपर वर्चस्व बनाए रखनें में स्वय को अक्षम पा रहे थें क्योकि युद्ध की विभिषिका ने उन्हें आर्थिक एंव सैनिक रूप से काफी कमजोर बना दिया था। इस कारण से ये शाक्तियाँ दूसरे देशों पर आधिपत्य स्थापित किए रहने की अपेक्षा अपना ध्यान सर्वप्रथम अपनी खण्डित अर्थव्यवस्था को सुद ढ़ बनाने में लगाना चाहते थें। परिणामस्वरूप इन साम्राज्वादी शक्तियों ने एशिया, अफ्रीका एंव लैटिन अमेरिका महाद्वीपों के अपने उपनिवेशों का धीरे-धीरे स्वतन्त्र करना आरम्भ कर दिया। किन्तु स्वतंत्रता के समय अपने उपनिवेशों में औपनिवेशक शक्तियों ने जो व्यवस्था छोड़ी वह काफी दयनीय थी। यद्यपि पश्चिम के अनेको अर्थशास्त्रीयों एंव इतिहासकारों ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि एशिया, अफ्रीका एंव लैटिन अमेरिका के देशों के पिछड़ेपन एंव अल्पविकास के लिए औपनिवेशिक शोषण नहीं अपितु इन देशों की सामाजिक व्यवस्था, धार्मिक रूढ़िवादिता, उद्यम का अभाव, पूंजी की कमी, जनसंख्या की अधिकता आदि कारण उत्तरदायी रहे हैं।

किन्तु वास्तविकता यह है कि भारत सहित एशिया, अफ्रीका एंव लैटिन अमेरिका के उन अल्पविकसित देशों, जो कि उपनिवेशवाद की शिकार रहे, के पिछड़ेपन के लिए औपनिवेशिक शोषण प्रमुख रूप से जिम्मेदार रहा। उदाहरण के तौर पर भारत के सन्दर्भ में इस प्रकार का मत न केवल भारत के अर्थशास्त्रियों बल्कि इग्लैण्ड़ के इतिहासकारों ने भी प्रकट किया है। ब्रिटिश संसद के एक सदस्य विलियम फुल्लर्टन के अनुसार"बीते दिनों में बंगाल के गांव विभिन्न जातियों के लोगों से भरे-पूरे थे और पूर्व में वाणिज्य, धनसम्पदा तथा उद्योग के भण्डार थे लेकिन हमारे कुशासन ने 20 वर्षो में ही इन गाँवों के बहुत सारे हिस्सों को बंजर बना दिया। खेतों में अब खेती नहीं की जाती, काफी इलाकों में झाड़ियाँ उगी पड़ी हैं, किसान लुट चुके हैं, औद्योगिक निर्माताओं का दमन किया जा चुका है, बार-बार अकाल पड़े हैं और फलस्वरूप जनसंख्या कम हुई है।"

औपनिवेशिक काल में साम्राज्यवादी शाक्तियों के विभिन्न प्रकार के शोषण को झेल चुके और द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् स्वतन्त्र हुए अन्य राष्ट्रों की भाँति भारत ने पाया कि उसकी अर्थव्यवस्था जर्जर हो चुकी थी। इसके साथ भारत में अंग्रजों ने 'फूट डालों और राज करो' की नीति भी अपनाई जिसके कारण यहाँ पर जातिगत और धार्मिक असहिष्णुता की भावना भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान थी। अतः भारत सहित अनेक नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों के समक्ष न केवल राजनैतिक-आर्थक विकास की चुनौती थी बल्कि सामाजिक विकास भी एक प्रमुख समस्या थी। दूसरे शब्दों में हम सकते हैं कि चहुमुखी विकास इन देशों की प्राथमिकता थी। जहाँ तक राजनैतिक, सामाजिक और सांस्क तिक विकास का प्रश्न था, तो यह स्पष्ट था कि यह कार्य इन देशों की सरकारों द्वारा ही सम्पन्न किया जाना था । क्योंकि यह कार्य निजी स्वामित्व में लगभग असम्भव था, किन्तु एक अन्य समस्या जो इन देशों में लगभग समान रूप में विद्यमान थी वह थी आर्थिक विकास के लिए निजी

पूंजी का अभाव। अतः इन देशों की सरकारों को राजनैतिक और सामाजिक-सांस्क तिक विकास के साथ-साथ आर्थिक विकास की जिम्मेदारी भी अपने प्रशासन को देनी पड़ी जिसके फलस्वरूप इन देशों का वह प्रशासन जो विकास के कार्यो में लगा हुआ था ' विकास प्रशासन' कहलाया।

विकास प्रशासन का अर्थ और परिभाषा
(Meaning & Defination of Development Administration)

'विकास प्रशासन' दो शब्दों 'विकास' तथा 'प्रशासन' के योग या मेल से बना है। जैसा कि हम देख चुके हैं ' कम वांछित परिस्थिति से अधिक वांछित परिस्थितियों की ओर अग्रसर होने की प्रक्रिया' को विकास की संज्ञा देते हैं जबकि 'प्रशासन सरकार का कार्यात्मक पहलू है जिसका अभिप्राय सरकार द्धारा लोक-कल्याण तथा जन-जीवन को व्यवस्थित करने हेतु किये गये प्रयासों से हैं।

लोक प्रशासन के शब्दकोष (Dictionary of Public Administration) के अनुसार "एक देश , विशेषतौर पर उभरते हुए नए देशों, की प्रशासनिक क्षमता को बढ़ाने हेतु वहाँ पर प्रविधियों, प्रक्रियाओं, तथा व्यवस्थाओं में सुधार या उन्नति" को विकास प्रशासन कहते हैं।

एडवार्ड वीडनर के अनुसार, "विकास प्रशासन उन प्रगतिवादी राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक उददे्श्यों जो किसी न किसी रूप में आधिकारिक स्तर पर निर्धारित होते हैं, को प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन की प्रक्रिया है।

जॉन मोण्टगोमरी के अनुसार," विकास प्रशासन का तात्पर्य अर्थव्यवस्था (जैसे कि क षि या उद्योग या इन दोनों में से किसी से भी सम्बन्धित पूंजीगत आधारिक संरचना) तथा कुछ सीमा तक राज्य की समाज सेवाओं (विशेषतया शिक्षा और लोक स्वास्थय) में नियोजित परिवर्तन लाना है। सामान्यतः राजनैतिक योग्यताओं में सुधार करने के प्रयासों से इसका सम्बन्ध नहीं होता।"

फेनसोड ने विकास प्रशासन को परिभाषित करते हुए "इसे नवीन मूल्यों का वाहक बताया है। "उनके अनुसार, "विकास प्रशासन में वे सभी कार्य साम्मिलित होते हैं जो विकासशील देशों ने आधुनिकीकरण एंव औद्योगिकीकरण के मार्ग पर चलने के लिए ग्रहण किए हैं या अपनाएं है। प्रायः विकास प्रशासन में संगठन और साधन सम्मिलित हैं जो नियोजन आर्थिक विकास तथा राष्ट्रीय आय का प्रसार करने हेतू साधन जुटाने और उनके आबंटन के लिए स्थापित किए जाते हैं।"

रिग्स के अनुसार, "विकास प्रशासन को दो परस्पर सम्बन्धी रूपों में प्रयुक्त किया जाता है। प्रथम, विकास प्रशासन का सम्बन्ध विकास कार्यक्रमों को लागू करने से , बड़े संगठनों, विशेष तौर पर सरकारों, के द्धारा प्रयुक्त प्रणालियों, नीतियों और उन नीतियों के विकासवादी उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु बनाई गई योजनाओं के कार्यान्वयन से हैं दूसरे, अप्रत्यक्ष रूप में प्रशासनिक क्षमताओं में व द्धि लाना भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता हैं।[8]

विकास प्रशासन की विशेषताएँ (Characteristics of Development Administration)} Or विकास प्रशासन की प्रक ति (Nature of Development Administration)

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम विकास प्रशासन की कुछ विशेषताओं का उल्लेख कर सकते हैं। विकास प्रशासन की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

(1) **परिवर्तनोन्मुखी**:- विकास प्रशासन की पहली प्रमुख विशेषता यह है कि यह परिवर्तनोन्मुखी प्रशासन है अर्थात समय-समय पर आवश्यकताओं के अनुरूप अपने कार्यक्रमों, नीतियों एंव योजनाओं में परिवर्तन लाता रहता है। विकास प्रशासन राष्ट्र के चहुमुखी विकास के लिए कुछ कार्यक्रम बनाता है तथा उन्हें लागू करता है । क्रियान्वयन के पश्चात् विकास प्रशासन कार्यक्रमों

का विश्लेषण करता हैं जिसके आधार पर उन कार्यक्रमों में वांछित परिवर्तन किए जाते हैं। साथ ही एक उद्देश्य के पूरा होना पर विकास प्रशासन अपने लिए दूसरे लक्ष्य निर्धारित कर लेता है। अतः परिवर्तन विकास प्रशासन का अर्न्तनिहित गुण है और यदि विकास प्रशासन परिवर्तनोन्मुखी नही होगा तो यह अर्थहीन हो जाएगा।

(2) **उद्देश्योन्मुखी**:- विकास प्रशासन की दूसरी प्रमुख विशेषता यह है कि विकास प्रशासन उद्देश्य परक है अर्थात विकास प्रशासन अपने समक्ष कुछ लक्ष्य या उद्देश्य बनाता है जिन्हें वह एक समय सीमा के अन्तर्गत प्राप्त करने के लिए कुछ कार्यक्रम तथा योजनाएँ भी बनाता हैं। उदाहरण के तौर पर भारत में विकास प्रशासन अपने समक्ष अनेकों उद्देश्य लेकर चलता हैं जैसे कि गरीबी उन्मूलन, , बेरोजगारी दूर करना, आर्थिक विषमताओं को दूर करना , ग्रामीण विकास, क षि विकास, औद्योगिक विकास महिला एवं बाल विकास आदि। वास्तव में विकास एक विवेकशील प्रक्रिया है इसलिए स्वभाविक ही है कि विकास प्रशासन भी तर्कयुक्त एंव विवेकशील होगा और एक विवेकशील प्रक्रिया के लिए यह आवश्यक है कि उसके कुछ लक्ष्य हों जिन्हें वह एक समय सीमा में प्राप्त करने के लिए प्रयास करे।

(3) **परिणामोन्मुखी**:- विकास प्रशासन केवल उद्देश्य निर्धारित करने, उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्यक्रम बनाने तथा उन्हें लागू करने तक ही सीमित नहीं हैं। अपितु यह प्रशासन ये जानने का भी प्रयास करता है कि विकास के इन कार्यक्रमों के लागू होने से अभीष्ट परिणाम निकले अथवा नहीं। अर्थात विकास प्रशासन अपने प्रयासों का सतत् रूप से विश्लेषण करता रहता है और अपने प्रयासों के परिणामों पर ध्यान केन्द्रित रखता है । यदि आवश्यकता हो तो विकास प्रशासन विश्लेषण के आधार पर प्राप्त परिणामों के मद्देनजर अपने कार्यक्रमों में आवश्यक परिवर्तन भी करता हैं।

(4) **लोचशीलता** :- विकास प्रशासन विकासशील देशों से सम्बन्धित है। और विकासशील देश विकसित होने के लिए प्रयास कर रहे हैं अर्थात वे विकास के दौर से गुजर रहे हैं। इस कारण इन देशों में सतत् या लगातार परिवर्तन हो रहे है। उनकी समस्याओं में भी लगातार परिवर्तन आ रहे हैं। उदाहरण के तौर पर भारत में जो समस्याएं 1950 के दशक में थी वे 1960 या 1970 के दशक में नहीं थी । इसी प्रकार भारत में जो समस्याएं पिछली शताब्दी में थी वे वर्तमान शताब्दी में नही है; उन समस्याओं का स्थान दूसरी समस्याओं ने ले लिया है। क्योंकि विकास प्रशासन इन समस्याओं के अनूरूप अपने उद्देश्य निर्धारित करता है तथा कार्यक्रम बनाता व लागू करता है। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि विकास प्रशासन लोचशील रहे।

(5) **नियोजित विकास**:- किसी भी देश में किसी भी समय समस्याएं असीमित होती है तथा संसाध न सीमित । और यह तथ्य विकासशील देशें के सन्दर्भ में और भी सत्य हैं। अतः विकास प्रशासन, जो अपने समक्ष विकासशील देशों के चहुमुखी विकास का उद्देश्य लेकर चलता हैं, के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि संसाधनों के सर्वथा उचित तथा सर्वोतम प्रयोग के लिए योजनाबद्ध रूप से विकास करे।

(6) **स जनात्मक**:- सुजन का तात्पर्य है 'नये विचारों का विकास करना तथा उन्हें लागू करनां'। यदि इस रूप में देखा जाए तो विकास प्रशासन स जनात्मक है। विकास प्रशासन सदैव ही प्रयासरत रहता है कि अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए वह कौन से कार्यक्रम अपनाए जिससे कि उन उद्देश्यों की पूर्ति कम से कम समय तथा कम से संसाधनों के द्धारा की जा सके। इस की पूर्ति के लिए विकास प्रशासन सदैव ही प्रविधियों, पद्धतियों, संस्थाओं, प्रणालियों, सरंचनाओं, कार्यो , व्यवहारों, नीतियों, कार्यक्रमों योजनाओं आदि के साथ नये-नये प्रयोग करता रहता हैं। तथा उन प्रयोंगें में सफलता मिलने पर उन्हें व्यापक,स्तर पर लागू भी करता है। उदाहरण के तौर पर भारत में विकास प्रशासन ने स्वतन्त्रता के पश्चात् गरीबी हटाने, बेरोजगारी उन्मूलन तथा ग्रामीण विकास

के सन्दर्भ में कार्यक्रमों, पद्धतियों, प्रणालियों, सरंचनाओं आदि में अभी तक अनेकों प्रयोग किए हैं। ये सभी भारत में विकास प्रशासन की स जनात्मक प्रक ति के द्योतक हैं।

(7) **सहभागी प्रशासनः**- विकास प्रशासन की प्रक ति सहभागिता पर आधारित है। अर्थात विकास प्रशासन अपने कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के लिए जन सहयोग को बढ़ावा देता है। वास्वत में कोई भी प्रशासन अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु जन सहभागिता पर आधारित हेाता है और विकास प्रशासन कोई अपवाद नहीं है। भारत में ग्रामीण विकास के लिए सन् 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम लागू किया गया किन्तु ग्रामीण विकास की दिशा में सरकार का यह प्रयास असफल रहा। बलवन्तराय मेहता समिति, जो कि इन कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिए गठित की गई थी , ने बताया कि इन कार्यक्रमों की असफलता का कारण इनमें जनसहभागिता का अभाव था। इस समिति ने यह भी सुझाव दिया कि जब तक सहभागिता को सुनिश्चित नहीं किया जाएगा, विकास की दिशा में कोई भी प्रयास सफल नहीं होगा।

(8) **प्रबन्धकीय कार्यकुशलता** :- विकास प्रशासन केवल राजनैतिक, सामाजिक, सांस्क तिक तथा आर्थिक विकास हेतु ही लक्ष्य नहीं बनाता अपितु वह विकास प्रशासन में लगे कार्मिक एंव अधिकारियों की क्षमताएं बढ़ाने का भी प्रयास करता है ताकि विकास कार्यक्रमों को सफलता एंव कार्यकुशलता के साथ लागू किया जा सके। यह विकास प्रशासन की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। क्योंकि यदि विकास प्रशासन से सम्बन्धित कार्मिक एंव अधिकारी कार्यकुशल नहीं होंगे तो विकास प्रशासन कितने भी अच्छे कार्यक्रम क्यों न बनाए, वे कार्यक्रम इच्छित या अभीष्ट परिणाम नहीं दे पांएगे तथा समय व संसाधनों दोनों का ही अपव्यय होगा जो कि एक विकासशील देश किसी भी अवस्था में नहीं चाहेगा। अतः विकास प्रशासन का एक प्रमुख लक्ष्य अपने कार्मिकों तथा अधिकारियों की कार्यकुशलता में व द्धि करना होता हैं।

(9) **जन-आकांक्षाओं के अनुरूपः**- विकास प्रशासन सदैव ही अपने लाभार्थियों की आंकाक्षाओं एंव इच्छाओं कों केन्द्र बिन्दु बनाकर चलता है तथा अपने जो भी कार्यक्रम बनाता है वह जन-आंकाक्षाओं को ध्यान में रखकर बनाता है। जब विकास प्रशासन जन-आकांक्षाओं के अनुकूल कार्य नहीं करता है अथवा जन-आंकाक्षाओं के अनुरूप विकास कायर्क्रम नियोजित एंव क्रियान्वित नहीं करता है, तो विकास प्रशासन को उसका मूल्य चुकाना पड़ता है तथा वह कार्यक्रम असफल सिद्ध होता है। उदाहरण के तौर पर भारत मे विकास प्रशासन के अनेको कार्यक्रमों की असफलता का एक प्रमुख कारण उन कार्यक्रमों में जन-आकांक्षाओं एंव अभिलाषाओं का समावेश न होना था।

(10) **आर्थिक विकास महत्वपूर्ण घटकः**- विकास प्रशासन बहुउद्देश्यीय है अर्थात इसके विभिन्न आयाम या घटक हैं जैसे कि राजनैतिक विकास, सामाजिक विकास, मानवीय विकास, आर्थिक विकास, सांस्क तिक विकास आदि। साथ ही विकास प्रशासन को इन सभी आयामों में सन्तुलन बना कर भी चलना होता है अन्यथा विकास असंतुलित होगा। किन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि विकास प्रशासन के लिए सबसे महत्वपूर्ण आयाम आर्थिक विकास है । इसका कारण यह है कि आर्थिक विकास अन्य सभी विकास की आधारशिला है एंव आर्थिक विकास के अभाव में अन्य विकास अर्थहीन हो जाते है। उदाहरणार्थ यदि एक व्यक्ति की आधारभूत आवश्यकताएं (रोटी, कपड़ा और मकान) की पूर्ति नहीं होती तो राजनैतिक विकास (अधिकारों एंव कर्त्तव्यों का बोध आदि) अर्थहीन हो जाते हैं। इसी प्रकार एक व्यक्ति का सामाजिक स्तर उसकी आर्थिक सम्पन्नता पर निर्भर करता है।

इसी प्रकार कोई भी देश आर्थिक द ष्टि से सम द्ध हुए बिना शक्तिशाली नहीं बन सकता । एक देश को अपने अस्तित्व के लिए आर्थिक रूप से सम द्ध एंव सम्पन्न बनना आवश्यक है। "इसलिए विकास प्रशासन ऐसे प्रशासनिक संगठन की रचना करता है जो देश की आर्थिक प्रगति को संभव बनाता है तथा आर्थिक विकास के लिए मार्ग प्रस्तुत करता है।"

यदि हम भारत में विकास कार्यक्रमों पर नजर डालें तो यह स्थिति और भी स्पष्ट हो जाती है। अतः ग्रामीण विकास के लिए जितने भी कार्यक्रम प्रशासन द्धारा बनाए गए उन सभी का मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों को आर्थिक रूप से सम द्ध बनाना रहा है। किन्तु हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि आर्थिक पहलू के अन्य पहलुओं से महत्वपूर्ण होने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि विकास के अन्य पहलू अर्थहीन हो जाते है।

विकास प्रशासन का क्षेत्र
(Scope of Development Administration)

व्यवहाारिक रूप से विकास प्रशासन के क्षेत्र में वे सभी गतिविधियाँ सम्मिलित की जाती हैं जो कि एक देश के प्रशासन के द्वारा उस देश के विकास के लिए सम्पन्न की जाती हैं। अतः विकास प्रशासन के क्षेत्र के अन्तर्गत वे सभी गतिविधियाँ आती है जो सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्क तिक, औद्योगिक, क षि , मानवीय , प्रशासनिक आदि क्षेत्रों से सम्बन्धित है एंव सरकार द्धारा संचालित हों । किन्तु इस प्रकार से विकास प्रशासन के क्षेत्र को परिभाषित करने का कोई भी प्रयास वैज्ञानिक रूप में सफल नहीं हो सकेगा । इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि विकास प्रशासन के क्षेत्र की कुछ सीमाएं निर्धारित की जाएं। सुविधा की द ष्टि से विकास प्रशासन के क्षेत्र को निम्नलिखित बिन्दुओं की सहायता से वर्णित किया जा रहा हैः-

(1) राष्ट्र निर्माण और सामाजिक गठबंधन/संसर्ग :–

अपने उपनिवेशों में लोगों को संगठित होकर साम्राज्यवादी सत्ता को चुनौती देने से रोकने के लिए साम्राज्यवादी शक्तियों ने दमनकारी नीति अपनाने के साथ-साथ और भी कई हत्थकण्डे अपनाए। इनमें से एक प्रमुख था 'फूट डालो और राज करो'। इसके परिणमस्वरूप साम्राज्यवादी शक्तियों नें अपने उपनिवेशों में लोगों में सामाजिक असहिष्णुता की भावना फैलाई तथा उन्हें अनेकों आधारों पर बाँटकर आपस में लड़वा दिया ताकि इन उपनिवेशों के लोग असंगठित रहे और साम्राज्यवादी सत्ता और उसके द्धारा किए जा रहे शोषण को चुनौती देने के बारे में उन्हें सोचने का अवसर ही न मिले। उदाहरण के तौर पर आजादी से पूर्व अंग्रेजों ने भारत की जनता को धर्म, जाति, प्रदेश आदि अनेकों आधारों पर बांटकर आपस में लड़वा दिया। फलस्वरूप दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों को धार्मिक-सामाजिक तथा सांस्क तिक असहिष्णुता विरासत में मिली। इसीलिए इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों के समक्ष न केवल आर्थिक विकास की समस्या थी अपितु राष्ट्र निर्माण व सामाजिक गठबन्धन या संसर्ग भी एक प्रमुख चुनौती थी जो कि विकास प्रशासन के क्षेत्र का एक अभिन्न अंग बन गया। विभिन्न नव-स्वतन्त्र या विकासशील देशों के प्रशासन ने पाया कि वहाँ का समाज अनेको आधारों पर बंटा हुआ था और वहां पर पुराने व संकुचित सामाजिक सम्बन्ध, जो कि भाई-भतीजावाद, जाति, धर्म, क्षेत्रवाद आदि से प्रभावित थे, विद्यमान थे। किन्तु इस प्रकार के सामाजिक सम्बन्ध राष्ट्र-निर्माण में बाधक होते हैं । इसलिए विकास प्रशासन इन सामाजिक संरचानाओं को तोड़कर नई सरंचनाएँ गठित करता है। साथ ही विकास प्रशासन विभिन्न वर्गो के मध्य सामाजिक- धार्मिक तनाव दूर करके सामाजिक सद्भावना लाने का प्रयास करता है ताकि एक स्वच्छ एंव स्वस्थ समाज का निर्माण हो सके।

(2) विकासात्मक नियोजन :–

किसी भी अर्थव्यवस्था में सदैव ही संसाधन सीमित होते हैं तथा समस्यांए असीमित । यह तथ्य विकासशील देशों के सन्दर्भ में और भी अधिक सटीक है। क्योंकि विकासशील देश एक ओर जहाँ तकनीक और प्रौद्योगिकी के अभाव में अपने संसाधनों का समुचित दोहन नहीं कर पाते वहीं दूसरी ओर उनके समक्ष समस्याएं भी अधिक होती है। अतः यह नितान्त आवश्यक हो जाता है कि विकास प्रशासन सीमित संसाधनों तथा समय के समुचित उपयोग के लिए नियोजित विकास की शरण ले।

अतः विकास प्रशासन समस्याओं समाधान के हेतु प्राथमिताएँ (priorities) निर्धारित करता है और के संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार उन्हें संसाधन आवंटित करता हैं दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि विकासात्मक नियोजन (Development Planning) विकास प्रशासन का एक प्रमुख कार्य है तथा उसके क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता हैं।

(3) विकास कार्यक्रमः-

विभिन्न क्षेत्रों(सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक, राजनैतिक आदि) में निर्धारित उद्देश्यों के सन्दर्भ में विकास योजनाओं को लागू करने के लिए विकास प्रशासन अनेक कार्यक्रम तैयार करता है तथा उन्हें लागू करता है। अतः विकास कार्यक्रम भी विकास प्रशासन के क्षेत्र का अभिन्न अंग हैं।

यदि हम भारत के परिप्रेक्ष्य में देखें तों भारतीय प्रशासन ने स्वतन्त्रत प्राप्ति के पश्चात् से आज तक विभिन्न वर्गो के विकास के लिएअनेकों कार्यक्रम चलाए है।

इन कार्यक्रमों में समाज के विभिन्न वर्गो को लक्ष्य बनाया गया तथा उनके विकास के लिए कार्य किया गया। उदाहरण के तौर पर सूखा सम्भावित क्षेत्रीय कार्यक्रम, कमाण्ड क्षेत्र विकास कार्यक्रम, पर्वतीय विकास कार्यक्रम, जनजाति विकास कार्यक्रम आदि क्षेत्रीय विकास के कार्यक्रम है। सघन क षि क्षेत्रीय कार्यक्रम, समग्र क षि विकास कार्यक्रम, अधिक उपज किस्म कार्यक्रम आदि क षि उत्पादन के सम्बन्धित कार्यक्रम है। ग्रामीण निर्माण कार्यक्रम, ग्रामीण रोजगार के लिए सघन कार्यक्रम, काम के बदले अनाज कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण युवाओं के लिए स्वरोजगार प्रशिक्षण, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, जवाहर रोजगार योजना प्रधानमंत्री रोजगार योजना, स्वर्णजयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, सम्पूर्ण ग्राम रोजगार योजना आदि ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध करवाने तथा गरीबी दूर करने के उद्देश्य से चलाये गये कार्यक्रम है।

(4) संस्था निर्माणः-

विकास-प्रशासन की गतिविधियां केवल योजनाओं, नीतियों व कार्यक्रमों के निर्माण तक ही सीमित नहीं है अपितु इनका सफल एंव प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन भी विकास प्रशासन का उत्तरदायित्व है। विकास नीतियों, योजनाओं व कार्यक्रमों को लागू करने के लिए विकास प्रशासन को कुछ सरंचनाओं की आवश्यकता होती है। इस उद्देश्य से विकास प्रशासन सर्वप्रथम पहले से विद्यमान संस्थाओं का सहारा लेता है। कई बार ये संस्थाए विकास कार्यक्रमों को लागू करने में सहायक होती है। किन्तु अनेकों अवसरों पर विकास प्रशासन को इन संस्थाओं में कुछ आवश्यक परिवर्तन भी करने पड़ते हैं ताकि ये संस्थाऐ विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन में सहायक बन सकें। इसके अतिरिक्त कई बार विकास प्रशासन को सर्वथा नई संस्थाए भी स्थापित करनी पड़ती हैं क्योंकि वर्तमान विद्यमान संस्थाएं किसी या किन्हीं विशेष विकास कार्यक्रम या कार्यक्रमों के प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन में सहायक सिद्ध नहीं हो पाती। उदाहरण के तौर पर भारत में विकास प्रशासन ने स्वतन्त्रता प्राप्ति से अब तक अनेकों विकास कार्यक्रम बनाए तथा लागू किए और इन कार्यक्रमों के उद्देश्यों की प्राप्ति व उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अनेक संस्थागत परिवर्तन किए गए। इसके अतिरिक्त प्रशासन ने आवश्यकता पड़ने पर कई बार नई संस्थाओं का भी निर्माण किया। ग्रामीण विकास के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक जिले अन्तर्गत खण्ड स्तरीय प्रशासनिक ढ़ांचे का निर्माण इसका एक उदाहरण है। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रो के विकास के लिए बनाए एंव लागू किए जाने वाले सभी कार्यक्रमों में समन्वय लाने के लिए जिला स्तर एक पर संस्था जिला ग्रामीण विकास अभिकरण (DRDA) का गठन किया गया है इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि संस्था निर्माण भी विकास प्रशासन का एक महत्वपूर्ण कार्य है एंव इसके क्षेत्र में सम्मिलित किया जाता है।

(5) पर्यावरण का अध्ययनः-

तुलनात्मक प्रशासनिक समूह (CAG) के विद्धानों द्धारा किये गये अध्ययनों से यह सिद्ध हो गया

कि विकास प्रशासन और उसके सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक, राजनैतिक पर्यावरण के मध्य सतत् रूप से अन्तः क्रिया होती है तथा दोनों एक दूसरे को गहनतम रूप से प्रभावित करते हैं। अतः विकास प्रशासन की प्रविधियां, पद्धतियां, व्यवहार तथा संरचनाएं इसके पर्यावरण से प्रभावित होते हैं। इसके साथ ही इन अध्ययनों से यह निष्कर्ष भी निकला कि कोई भी प्रशासनिक संस्था या विकास कार्यक्रम जो एक विशेष पर्यावरण (सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक, संवैधानिक, राजनैतिक आदि) में प्रभावपूर्ण रहा है और अभिष्ट फल दे रहा है, आवश्यक नहीं कि यदि उसी रूप में उस कार्यक्रम या संस्था को दूसरे पर्यावरण में स्थापित किए जाने पर वह इच्छित परिणाम दे और सफल रहे। इसलिए यह आवश्यक हैं। कि विकास प्रशासन किसी अन्य देश या पर्यावरण के सफल परीक्षणों को अपनाने से पहले दोनों व्यवस्थाओं की परिस्थितिकी का अध्ययन करे। अतः पर्यावरण या सन्दर्भ या परिस्थितकी का अध्ययन विकास प्रशासन का एक महत्वपूर्ण व अभिन्न अंग है तथा विकास प्रशासन के क्षेत्र के अन्तर्गत इसके अध्ययन को आवश्यक रूप से सम्मिलित किया जाता है।

(6) प्रबन्धकीय क्षमता का विकास एवं प्रशासनिक सुधारः-

प्रो. रिग्स के अनुसार विकास प्रशासन के दो महत्वपूर्ण आयाम है। पहला, विकास प्रशासन उस प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है जिसके द्धारा प्रशासन सामाजिक सांस्क तिक, आर्थिक तथा राजनैतिक परिवर्तनों का संचालन करता है। दूसरा, यह प्रशासनिक प्रक्रियाओं, पद्धतियों सरचंनाओ, कार्यप्रणालियों, व्यवहारों आदि का भी अध्ययन करता है। पहले आयाम को 'विकास के प्रशासन' तथा दूसरे को 'प्रशासनिक विकास' की संज्ञा दी गई है। अतः प्रशासनिक विकास अर्थात विकास की समस्याओं के निवारण तथा बदलती हुई परिस्थितियों में प्रशासनिक पद्धतियों, कार्यवाहियों, प्रणालियों, व्यवहारों, प्रक्रियाओं, सरंचनाओं आदि में यथेचित परिवर्तन लाना विकास प्रशासन का महत्वपूर्ण भाग है। यदि विकास प्रशासन प्रशासनिक विकास को नजरअंदाज करता है तो विकास प्रशासन को इसका मूल्य अपने विकास कार्यक्रमों की असफलता के रूप में चुकाना पड़ता है । क्योंकि यदि प्रशासनिक अधिकारी, उनका व्यवहार, कार्यप्रणालियों तथा नियम, सरंचानाएँ आदि विकास की आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं होंगे तो विकास कार्यक्रम भले ही कितने भी युक्तिसंगत तथा प्रभावपूर्ण क्यों न हो, अभीष्ट परिणाम नहीं दे पायेंगें। इससे संसाधनों तथा समय दोनों की ही बर्बादी होगी जिसे कि एक विकासशील देश को रोकने का हर संभव प्रयास करना चाहिए।

अतः विकास प्रशासन को विकास का प्रभावशाली यन्त्र बनाने के लिए प्रशासनिक पदाधिकारियों के द ष्टिकोण में ,प्रशासकीय संगठनों सरंचनाओं के व्यवहार में तथा प्रशासन के ढ़ांचे में सतत् रूप से परिवर्तन की प्रक्रिया जारी रखना अति आवश्यक है। इसके लिए उन प्रशासकीय पदाधिकारियों जो कि सामाजिक-सांस्क तिक, आर्थिक व राजनैतिक विकास की प्रक्रिया में अहम भूमिका निभाते हैं, को समय-समय पर द ष्टिकोण प्रशिक्षण (Orientation Training) प्रदान करवाने की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ प्रशासन की प्रक्रिया एंव प्रविधियों को भी सरल एंव विवेकपूर्ण (Rational) बनाना आवश्यक है ताकि वह सकारात्मक परिवर्तन (विकास) की प्रक्रिया में बाधक न बने अपितु सहायक बने। अतः प्रशासनिक विकास भी विकास प्रशासन के अध्ययन क्षेत्र का महत्वपूर्ण अंग है।

(7) मानवीय तत्व या पक्ष का अध्ययनः-

विकास प्रशासन के क्षेत्र में मानवीय पक्ष का अध्ययन अपरिहार्य है। क्योंकि लोक प्रशासन (और इसलिए विकास प्रशासन का उददे्श्य 'सेवा करना' (To Serve) है। यूं तो सभी प्रशासन के अध्ययन क्षेत्र में मानवीय तत्व का अध्ययन अवश्यंभावी है किन्तु विकास प्रशासन में इस तत्व का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि यह (विकास प्रशासन) अधिक संवेदनशील है। विकास प्रशासन को अनेकों बार समाज के उन नागरिकों के लिए कार्यक्रम बनाने तथा लागू करने होते हैं जो कि बाकि समाज से पिछड़े हुए हैं। जैसे कि भारत में विकास प्रशासन के लाभार्थियों में महिला एवं शिशु ,

अनुसूचित जाति एंव जनजातियों के लोग, पिछड़ी जातियों या वर्गों के लोग सम्मिलित है। ऐसे वर्गों को सेवित करने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि विकास प्रशासन की प्रणाली तथा कार्यवाहियाँ मानवतापूर्ण हों। इसलिए "विकास प्रशासन में विविध समस्याओं को हमें मानवीय व्यवहार के परिप्रेक्ष्य मे देखना चाहिए। इस प्रकार हम इसके अर्न्तगत सामाजिक मानक, मूल्यों, व्यवहार, विचारों आदि का अध्ययन करते हैं।"

(8) जन-सहभागिता:-

कोई भी प्रशासन जनसहभागिता के अभाव में अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह प्रभावपूर्ण तरीके से नहीं कर सकता और विकास प्रशासन इसका अपवाद नहीं है। उदाहरणार्थ पुलिस प्रशासन जनसहयोग के अभाव में अपराधियों और कानून तोड़ने वालों को पकड़ने में असुविधा का अनुभव करता है व अपराधों को रोकने में पूरी तरह प्रभावी नहीं हो पाता । इसी प्रकार विकास प्रशासन भी जन सहयोग और जन-सहभागिता के अभाव मे अपने विकास कार्यक्रमों को पूरी तत्परता से लागू नहीं कर पाता है। यदि विकास कार्यक्रमों का निर्माण करते समय जन-सहभागिता को सुनिश्चित नहीं किया जाता तो जनता उन कार्यक्रमों को लागू करवाने मैं कोई सहयोग नहीं देती जिससे कि ये कार्यक्रम असफल हो जाते हैं। दूसरी ओर यदि कार्यक्रमों को बनाते समय लोगों की आकांक्षाओं को ध्यान में रखा जाता है तथा उनके सहयोग से इनका निर्माण किया जाता है तो लोगों में ये भावना रहती है कि ये कार्यक्रम उनके अपने हैं तथा वे उन कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक लागू करवाने में पूरा सहयोग देते हैं जिससे कि कार्यक्रम अभिष्ट परिणाम देते हैं।

आरम्भ में भारत में विकास प्रशासन ने विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता को अवांछित समझा और इन कार्यक्रमों के बनाने तथा लागू करने में जनसहयोग नहीं लिया। इसी कारण अनेकों विकास कार्यक्रम इच्छित परिणाम नहीं दे पाए। किन्तु पिछले कुछ समय से विकास प्रशासन ने विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के लिए जन-सहभागिता के महत्व को समझते हुए अनेक विकास कार्यक्रमों में जन-सहयोग को बढ़ावा दिया है इसका ज्वलंत उदाहरण है "स्वजल धारा।" यह कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों मे पीने का पानी उपलब्ध करवाने के लिए चलाया जा रहा है। इस योजना के अन्तर्गत ग्रामीणों को अपने गाँव मे पीने का पानी उपलब्ध करवाने के लिए स्वंय योजना बनानी है तथा कुल लागत का 90% हिस्सा स्वंय देना है जबकि 10% भाग केन्द्रीय सरकार के द्वारा वहन किया जाता है।

विकास प्रशासन के क्षेत्र का वर्णन करने का उपरोक्त प्रयास किसी भी तरह से पूर्ण नहीं कहा जा सकता क्योंकि पहले तो विकास प्रशासन का क्षेत्र बहुत अधिक व्यापक है तथा दूसरे, समय समय पर इसके क्षेत्र मेंपरिवर्तन होता रहता है। वास्तव में राज्य की क्रियाओं के क्षेत्र में परिवर्तन के साथ-साथ विकास प्रशासन के क्षेत्र में भी परिवर्तन होता रहता है। उदाहरणार्थ, भारत में वर्तमान में राज्य का क्षेत्र संकुचित हुआ है। इसके अनुरूप विकास प्रशासन का क्षेत्र भी सकुंचित हुआ है।

विकास प्रशासन के आवश्यक तत्व या परिस्थितियाँ या पूर्व शर्ते
(Essentials or Pre-Requisites of Development Administration)

विभिन्न विकासशील देशों के विकास प्रशासन पर द ष्टिपात करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विकास प्रशासन कहीं अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है तो कहीं कम सफलतापूर्वक इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ आवश्यक परिस्थितियाँ या तत्व (Pre-Requisites) हैं जो कि विकास प्रशासन की सफलता के लिए आवश्यक हैं और जिनके अभाव विकास प्रशासन अभीष्ट परिणाम नहीं दे पाता । अब प्रश्न यह उठता है कि वह कौन सी परिस्थितियाँ या तत्व हैं जो कि विकास प्रशासन की सफलता के लिए आवश्यक हैं। नीचे हम इन आवश्यक तत्वों या परिस्थितियों का वर्णन कर रहे हैं।

(1) पर्याप्त संसाधनः-

विकास प्रशासन की सफलता के लिए पर्याप्त संसाधनों का पाया जाना आवश्यक है। प्रायः संसाधन को दो प्रकारों में बांटा जाता है - भौतिक संसाधन तथा मानवीय संसाधन । विकास प्रशासन की सफलता के लिए दोनों का समुचित मात्रा में पाया जाना आवश्यक है। भौतिक संसाधनों के अभाव में विकास प्रशासन विकास योजनाओं को लागू नहीं कर सकता क्योंकि हर योजना को लागू करने हेतू संसाधनों की आवश्यकता होती है। उदाहरण के तौर पर विकास प्रशासन महिला व बाल विकास से सम्बन्धित योजना बनाता है जिसमें के महिलाओं को प्रसूतिपूर्व व नवजात शिशुओं को पूरक पोषाहार देने की व्यवस्था की गई हो। किन्तु प्रशासन इस योजना को तब तक लागू नहीं कर सकता जब तक कि समुचित मात्रा में खाद्य पदार्थ उपलब्ध न हों। दूसरी ओर मानवीय संसाधनों की उपलब्धता भौतिक संसाधनों की अपेक्षा अधिक आवश्यक है क्योंकि यह मानव ही है जो किसी भी सरंचना को चलाता है। भले ही कितनी अच्छी योजना क्यों न बनाई गई हो और भौतिक संसाधन भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों किन्तु यदि विकास प्रशासन के संसाधनों का मानवीय पक्ष अयोग्य है तो वह योजना कभी -भी वांछित परिणाम नहीं देगी। विलोमतः यदि मानवीय संसाधन योग्य और तकनीकी रूप में प्रशिक्षित हैं तो एक बुरी योजना और संसाधनों के अभाव के पश्चात् भी अच्छे परिणाम मिल सकते हैं।

सामान्यतः विकासशील देशों में मानवीय संसाधन प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं किन्तु तकनीकी रूप से प्रशिक्षित मानवीय संसाधनों का अभाव पाया जाता है। साथ ही इन देशों के समक्ष एक अन्य समस्या यह रहती है कि इन देशों के द्धारा काफी संसाधन जुटा कर तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान खोले जाते हैं और तकनीकी शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता है किन्तु तकनीकी शिक्षा ग्रहण करके अनेक प्रशिक्षित युवक व युवतियाँ विकसित देशों मे पलायन कर जाते हैं। मानव संसाधनों के सम्बन्ध में ये समस्यांए भारत सहित सभी विकासशील देशों के समक्ष आती हैं। इसी कारणवश विकास प्रशासन अधिकतर विकासशील देशों में पूरी तरह से सफल नही हो पा रहा है।

(2) उन्नत प्रौद्योगिकीः-

विकास के लिए उन्नत प्रोद्योगिकी का पाया जाना नितान्त आवश्यक है। उन्नत प्रोद्योगिकी के अभाव में विकास प्रशासन सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाता और इच्छित परिणाम नहीं दे पाता । उन्नत प्रोद्योगिकी के विकास के लिए निरन्तर 'शोध एवं विकास' (Research & Development -R & D) की आवश्यकता होती है जिसके लिए इन देशों के पास भैातिक तथा मानवीय दोनों ही संसाधनों का अभाव होता है। अतः इन देशों को उन्नत प्रोद्योगिकी के लिए विकसित देशों पर निर्भर रहना पड़ता है। किन्तु विकसित देश प्रोद्योगिकी के हस्तान्तरण के साथ-साथ विकासशील देशों पर कुछ शर्ते भी लगा देते हैं जो कि स्वाभाविक रूप से विकसित देश के लिए लाभकारी होती हैं तथा विकासशील देश के लिए अहितकारी। अनेकों बार ये शर्ते भी विकासशील देशों के विकास मे बाधा बनती हैं। दूसरे, तेजी से परिवर्तित होते वर्तमान युग में प्रोद्योगिकी की आयु मात्र 3-5 वर्ष रह गई है अर्थात् हर 3 से 5 वर्ष के पश्चात् वर्तमान तकनीकें व प्रौद्योगिकी बेकार हो जाती है और उसका स्थान नई और अधिक उन्नत प्रौद्योगिकी ले लेती है। किन्तु विकासशील देशों में शोध एंव विकास संस्थानों (Research & Development Institutes) के अभाव में प्रोद्योगिकी के नवीकरण (Renoation) के लिए प्रयोग नहीं हो पाते इसलिए जो प्रोद्योगिकी इन देशों ने विकसित देशों से प्राप्त की थी वह जल्द दी बेकार (Outdated) हो जाती है क्योंकि नई प्रोद्योगिकी उसका स्थान ले लेती है। परिणामस्वरूप विकास प्रशासन अभीष्ट परिणाम नहीं दे पाता ।

(3) बेहतर समन्वयः-

समन्वय किसी भी संगठन का पहला सिद्धान्त है और विकास प्रशासन के संगठन इसके अपवाद

नहीं हो। समन्वय के अभाव में विकास प्रशासन अपनी नीतियों, योजनाओं व कार्यक्रमों को प्रभावी तरीके से लागू नहीं कर पायेगा। यदि समन्वय का अभाव होगा तो धन, समय व श्रम सभी की हानि होगी। विकास प्रशासन के क्षेत्र में समन्वय का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि इसे समाज के अनेकों ऐसे वर्गो के विकास के लिए योजनाएं एवं कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं जो एक से ज्यादा सामाजिक वर्गो का भाग होते हैं। उदाहरण के तौर पर महिला एवं बाल विकास, विधवा कल्याण, युवा कल्याण, हरिजन कल्याण, ग्राम विकास आदि कुछ कल्याण कार्यक्रम हैं जो समाज के विभिन्न वर्गो से सम्बन्धित हैं। किन्तु साथ ही ये सभी वर्ग आपस में एक दूसरे से परस्पर जुड़े हैं। जैसे कि कुछ युवा महिलाएं विधवा होंगी, हरिजन जाति से होंगी तथा ग्रामीण क्षेत्र में वास करती होंगी। यदि इन सभी वर्गो के कल्याण से सम्बन्धित विभिन्न विभागों में परस्पर समन्वय का अभाव होगा तो इससे मूल्यवान साधनों का अपव्यय होगा।

(4) बेहतर संचार व्यवस्थाः-

प्रभावी संचार प्रणाली किसी भी प्रशासनिक व्यवस्था की जीवन रेखा होती है। विकास कार्यक्रमों के उद्देश्यों को लाभार्थियों तक पहुँचाने तथा उन कार्यक्रमों के बारें में लाभार्थियों की प्रतिक्रियाएं जानने की प्रक्रिया की प्रभावपूर्णता वास्तव में संचार व्यवस्था की प्रभावपूर्णता पर निर्भर करती है। प्रभावी संचार व्यवस्था के अभाव में विकास कार्यक्रमों के निर्धारित लक्ष्यों को प्रशासनिक अधिकारियों को प्रेषित नहीं किया जा सकता जिसके कारण विकास योजनाओं एवं कायक्रमों के बारे में लाभार्थियों के अनुभव एवं योजनाओं एवं कार्यक्रमों का क्रियान्वयन त्रुटिपूर्ण रहता है। इसके अतिरिक्त इन योजनाओं एंव कार्यक्रमों के बारे में लाभार्थियों के अनुभव तथा प्रतिक्रियाएँ (Feedback) भी विकास प्रशासन के पास नहीं पहुंच पाते। उपयुक्त प्रतिक्रियाओं (Feedback) के अभाव में भविष्य में बनाए जाने वाले विकास कार्यक्रमों व योजनाओं के उद्देश्य या लक्ष्य निर्धारण की प्रक्रिया भी त्रुटिपूर्ण रहती है। और जब किसी योजना या कार्यक्रम के उद्देश्य ही त्रुटिपूर्ण होंगे तो उसके परिणाम भी स्वभाविक रूप से वांछित व अभीष्ट नहीं होगें। अतः हम कह सकते हैं कि उपयुक्त एवं प्रभावी संचार व्यवस्था का पाया जाना विकास प्रशासन की सफलता के लिए एक पूर्वशर्त है।

(5) जन-सहभागिताः-

जन-सहभागिता के अभाव में कोई भी प्रशासन अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सकता और यह बात विकास प्रशासन के ऊपर भी समान रूप से लागू होती है। विकास कार्यक्रमों का निर्माण जनता के हित के लिए होता है। इसलिए इनके निर्माण तथा क्रियान्वयन दोनों ही स्तरों पर जनता की भागीदारी आवश्यक हो जाती है और इसके अभाव में विकास कार्यो में सफलता प्राप्त करना सम्भव नहीं है। प्रशासनिक निर्णयों एंव गतिविधियों में जन-सहभागिता का आधारभूत दर्शन यह है कि जो निर्णय व्यक्ति के जीवन को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं उन निर्णयों के सम्बन्ध में उस व्यक्ति की प्रतिक्रियाएं जानना व इन प्रतिक्रियाओं का उन निर्णयों में यथासम्भव समावेश करना आवश्यक है। क्योंकि प्रत्येक प्रशासनिक निर्णय लोगों के जीवन को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गहरे से प्रभावित करता है अतः इन प्रशासनिक निर्णयों में लोंगों की भागीदारी आवश्यक हो जाती है। योजनाएँ तथा कार्यक्रम बनाने के स्तर पर जन-भागीदारिता का सबसे बड़ा लाभ शायद यह होता है कि इससे इन कार्यक्रमों-योजनाओं के लक्ष्य निर्धारण में प्रशासनिक मनमानी पर अंकुश लगता है। किसी कार्यक्रम-योजना को बनाने के स्तर पर लोगों भागीदारी का एक अन्य लाभ यह भी होता है कि लोग उस कार्यक्रम को स्वंय अपना समझते हैं तथा उसके क्रियान्वयन में भी भागीदार होते हैं। इससे लाभार्थी तथा प्रशासन दोनों ही लाभान्वित होते हैं। एक ओर जहां इस योजना-कार्यक्रम के कार्यान्वयन में भ्रष्टाचार में कमी आती है और वह प्रभावी तरीके से सम्पादित होता है वहीं दूसरी ओर इस कार्यक्रम या योजना के कार्यान्वयन का निरीक्षण एंव परीक्षण सम्बन्धी कार्य भी कम हो जाता है। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि विकास कार्यक्रमों में

जन-सहभागिता से जनता तथा प्रशासन दोनों ही लाभन्वित होते हैं। विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता का महत्व वी. सुब्राह्मणयन की इन पक्तियों से स्पष्ट हो जाता है "किसी भी कार्यक्रम की सफलता लोगों, और विशेष तौर पर उस कार्यक्रम के लाभर्थियों, उस कार्यक्रम के प्रति द ष्टिकोण या रूझान पर निर्भर करती है।"

(6) लोचशील कानून और नियमः-

विकास प्रशासन के सफल एंव प्रभावी होने के लिए एक अन्य पूर्वशर्त यह है कि कानूनों तथा नियमों में पर्याप्त लोचशीलता होनी चाहिए तथा प्रशासनिक पदाधिकारियों को पर्याप्त स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वे इन कानूनों व नियमों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकें। ऐसा इसलिए आवश्यक है क्योंकि विकास कार्यक्रमों को लागू करते समय प्रशासनिक पदाधिकारियों को अनेकों बार ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है जो सर्वथा नवीन होती हैं तथा जिनके बारे में पहले से सोचकर कानूनों एंव नियमों में प्रावधान नहीं किया जा सकता। यदि ये नियम और कानून कठोर होंगे और उनमें लोचशीलता का अभाव होगा तो प्रशासनिक पदाधिकारियों को किसी भी नवीन परिस्थिति के पैदा होने पर-जो कि विकास प्रशासन की प्रक ति को देखते हुए बहुत ही स्वभाविक है निर्णय लेने से पहले समर्थ प्राधिकारी से अनुमति लेनी होगी। इससे लालफीताशही को बढ़ावा मिलेगा, अकारण देरी होगी तथा विकास प्रशासन कम प्रभावी बनेगा।

(7) स्थिर राजनैतिक व्यवस्थाः-

स्थिर राजनैतिक व्यवस्था का पाया जाना विकास प्रशासन के प्रभावी होने की एक अन्य पूर्व शर्त है। राजनैतिक अस्थिरता के समय में राजनैतिक कार्यपालिका प्रशासन को निर्देश देने व नीति निध ार्रण की अपेक्षा अपना अधिक ध्यान सत्ता में बने रहने पर देती हैं । यह बात अध्यक्षीय व्यवस्थाओं की अपेक्षा संसदीय प्रणाली वाले देशों में अधिक लागू होती है क्योंकि संसदीय प्रणाली में संसद के निचले सदन मे बहुमत खोने की स्थिति में सरकार को त्यागपत्र देना पड़ता है। अतः संसदीय प्रणाली वाले देशों में सरकार के सत्ताहीन होने का खतरा अपेक्षाक त अधिक बना रहता है। इसके साथ ही अस्थिरता के दौर में जब सरकारें बार-बार परिवर्तन होती रहती हैं तो नीतियों में भी बार-बार परिवर्तित होता है जिससे कि विकास प्रशासन प्रतिकूल रूप मे प्रभावित होता हैं।

साथ ही अन्य सभी प्रशासन की तरह विकास प्रशासन में भी नौकरशाही कार्य करती है और नौकरशाही की सभी विशेषताएँ विकास प्रशासन में भी पाई जाती हैं। नौकरशाही की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वो 'एक अच्छी सेवक है किन्तु एक बुरी स्वामी है'(Bureaucracy is a good servant but a bad master) अतः अस्थिरता के दौर में राजनैतिक निर्देशन का अभाव हो जाता है जिससे कि विकास प्रशासन में कार्य करने वाले प्रशासनिक पदाधिकारी सेवक की अपेक्षा स्वामी अधिक बन जाते हैं और उसी प्रकार व्यवहार करतें हैं। इससे विकास प्रशासन की प्रभावपूर्णता प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है।

उपरोक्त से स्पष्ट हो जाता है कि विकास प्रशासन का सफल या प्रभावी होना वास्तव में कुछ आवश्यक तत्वों या पूर्व शर्तो के ऊपर निर्भर करता है और इन पूर्व शर्तो के अभाव में विकास प्रशासन प्रभावी तरीके से कार्य नहीं कर पाता। किन्तु खेद का विषय यह है कि अधिकांश अल्पविकसित देशों में ये आवश्यक तत्व या पूर्वशर्ते पूरी नही होती और इसलिए वहां विकास प्रशासन अप्रभावी रहता है जिसके परिणामस्वरूप ये देश अल्पविकसित ही रह जाते है। अतः हम कह सकते हैं कि अल्पविकसित या विकासशील देश अल्पविकास के दुश्चक्र में फंसे हुए हैं।

Chapter - 3

विकास प्रशासन का विकास
(Evolution of Development Administration)

''विकास प्रशासन' की अवधारणा का उदय और विकास दूसरे विश्व युद्ध के बाद की घटना है। दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका महाद्वीप के उन देशों, जो कि साम्राज्यवादी शक्तियों के उपनिवेश थे, को स्वतन्त्रता मिली। विकास प्रशासन की अवधारणा इन्हीं नव-स्वतन्त्रता राष्ट्रों, जिन्हें अल्पविकसित, विकासशील, त तीय दुनिया या विश्व के देश आदि कई नामों से पुकारा जाता है, के सन्दर्भ में विकसित हुई। किन्तु विकास प्रशासन का एक दूसरा पहलू भी है जिसके अर्न्तगत हम इसे राज्य के नागरिकों के जीवन में बढ़ते हुए हस्तक्षेप के रूप में देखते हैं। यदि इस रूप में देखा जाए तो विकास प्रशासन का इतिहास द्वितीय विश्व युद्ध से काफी पहले अर्थात् उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध और बीसवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध से माना जाता है। यद्यपि इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस समय (द्वितीय विश्व युद्ध से पहले) 'विकास प्रशासन' शब्द का प्रयोग नही किया जा रहा था किन्तु जो कार्य हम वर्तमान में विकास प्रशासन की परिधि में सम्मिलित करते हैं वे अवश्य ही (काफी हद तक) उस समय लोक प्रशासन की परिधी में सम्मिलित थे।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में औद्योगिक क्रान्ति के दुष्परिणाम सामने आने लगे। इसके फलस्वरूप साधनहीन तथा साधनसम्पन्न लोगों के बीच का अन्तर बहुत अधिक बढ़ गया। अधिकतर संसाधनों पर मुट्ठी भर लोगों ने कब्जा जमा लिया तथा यूरोप के अधिकतर देशों में जनसंख्या का काफी बड़ा हिस्सा साधन विहिन हो गया। बड़े स्तर पर बेरोजगारी फैली। साधनसम्पन्न लोगों ने साधनविहिन लोगों का बड़े पैमाने पर शोषण बढ़ गया। बड़े शहरों में गन्दी बस्तियों, जहाँ कि मजदूर वर्ग रहता था, की संख्या निरन्तर बढ़ने लगी। इस सबके साथ-साथ अपराधिक घटनाएं भी काफी ज्यादा बढ़ने लगी। परिणामस्वरूप राज्य, जो अब तक अहस्तक्षेप की नीति (Policy of Laissez Faire or Non-Intervention in the Life of Citizens) अपनाए हुए था, इस द श्य का मूक दर्शक नहीं बना रह सका और उसकी प्रक ति मे एक परिवर्तन आया। राज्य अब अहस्तक्षेप वादी न रहकर कल्याणकारी (Welfare State) बन गया। राज्य की प्रक ति में परिवर्तन के फलस्वरूप अब राज्य ने लोगों के कल्याण के लिए कुछ कार्य करने आरम्भ कर दिये। साधन सम्पन्न वर्ग के द्धारा साधनविहिन लोगों का शोषण रोकने के लिए अनेक कानून बनाकर फैक्टरियों मे काम के घण्टे निश्चित किए गए, मजदूरों के लिए न्यूनतम वेतन निश्चित किया गया, फैक्टरियों में कार्य करने के लिए दशांए सुधारी गई, मजदूरों के बच्चों के लिए अनेक कल्याणकारी कदम उठाए गए आदि। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राज्य की प्रक ति में परिवर्तन विकास प्रशासन की अपधारणा के उदय की दिशा में पहला महत्वपूर्ण कदम था। रूस में जार के कुशासन के विरूद्ध लेनिन के नेत त्व में 1917 की बोल्सेविक क्रान्ति को विकास प्रशासन के उदय की दिशा में दूसरा प्रमुख कदम माना जा सकता है। इस क्रान्ति के द्धारा रूस शक्तिशाली तथा दमनकारी एवं शोषणकारी जार शासन को उखाड़ फैंका गया और उसके स्थान पर रूस में साम्यावादी व्यवस्था की स्थापना की गई। रूस

सहित सोलह गणराज्यों को मिलाकर सोवियत संघ की स्थापना की गई तथा वहां पर निजी सम्पति या स्वामित्व का अधिकार समाप्त कर दिया गया एवं सम्पूर्ण संसाधनों पर राज्य का आधिपत्य स्वीकार कर लिया गया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत नागरिकों के सभी प्रकार के कल्याण का उत्तरदायित्व राज्य अर्थात प्रशासन का बन गया। सोवियत संघ ने इस साम्यवादी व्यवस्था के अन्तर्गत काफी विकास किया और सोवियत संघ जो 1917 की क्रान्ति से पूर्व रूस के रूप में यूरोप का एक पिछड़ा हुआ देश था, दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति तक एक विश्व महाशक्ति बन गया था। सोवियत संघ के नियोजित विकास के सफल अनुभव से भी विकास प्रशासन की अवधारणा के उदय में सहायता मिली।

बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक के अन्तिम वर्षो में विश्वव्यापी आर्थिक महामन्दी आई। इस महामन्दी का प्रभाव यूरोप तथा अमेरिका में स्पष्ट रूप से देखने को मिला । महामन्दी के कारण अर्थशास्त्र के सभी शास्त्रीय सिद्धान्त (Classical Theories) विफल हो गई। जॉन मेनार्ड केन्स (John Maynard Keynes) नामक अमेरिकी अर्थशास्त्री ने उस समय महामन्दी की समस्या से निपटाने के लिए अर्थशास्त्र के अनेक नए सिद्धान्त प्रतिपादित किए। केन्स नें महामन्दी की समस्या से निपटने के लिए राज्य के सक्रिय हस्तक्षेप, राज्य के द्धारा अर्थव्यवस्था नियन्त्रित करने हेतु कुछ कार्य सम्पन्न किए जाने और घाटे का बजट बनाने आदि पर बल दिया। अमेरिका के द्वारा केन्स द्धारा दिए गए सुझाावों पर आधारित महामन्दी से निपटने के लिए जो कदम उठाए गए उन्हें New Deal की संज्ञा दी जाती है। New Deal के अन्तर्गत अमेरिका में राज्य ने अर्थव्यवस्था को नियन्त्रित करने के लिए सक्रिय भूमिका निभाई। इस New Deal कार्यक्रम से भी विकास प्रशासन की अवधारणा के उदय को बल मिला क्योंकि इसके अन्तर्गत भी प्रशासन को करने के लिए कुछ ऐसे कार्य सौंपे गए जा आज का वर्तमान विकास प्रशासन विकासशील देशों मे सम्पन्न कर रहा है। दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् यूरोप के सभी देशों की अर्थव्यवस्था चरमरा गई । यूरोप के आर्थिक पुर्ननिर्माण हेतु एक योजना बनाई गई जिसे Marshall Plan for Econmic Recontrtation of Eurpe नाम से जाना जाता है। इस योजना के अन्तर्गत भी यूरोप के देशों की अर्थव्यवस्थाओं के पुर्ननिर्माण हेतु वहां पर राज्य तथा प्रशासन को करने के लिए अनेकों ऐसे कार्य सौंपे गए जो वर्तमान में विकास प्रशासन विकासशील देशों के सन्दर्भ में कर रहा है। अतः Marshalll Plan भी विकास प्रशासन के उदय की दिशा में महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

उपरोक्त सभी परिस्थितियों ने राज्य की अहस्तक्षेपवादी नीति को कमजोर किया तथा राज्य और प्रशासन के द्धारा विकास की दिशा में सक्रिय भूमिका निभाने पर बल दिया। अतः उपरोक्त परिस्थितियों का यद्यपि विकास प्रशासन के विकास और उदय से सम्बन्ध न होने पर भी इन्हें विकास प्रशासन के अग्रदूत के रूप में देखा जाता है।

किन्तु विकास प्रशासन के उदय की दिशा में जो सबसे महत्वपूर्ण कारक था वह द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका महाद्वीपों में अनेकों स्वतन्त्र राष्ट्रों (जो कि अब तक साम्राज्यवादी शाक्तियों के उपनिवेश थे) का उदय था। इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों ने पाया कि एक ओर जहां लोगों की राज्य के प्रति आकांक्षाओं में बहुत अधिक व द्धि हो गई वहीं दूसरी ओर जन-आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए राज्य के पास आवश्यक संसाधनों का नितान्त अभाव थां। दूसरी ओर दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् यद्यपि 'साम्राज्यादी' का तो पतन हो गया किन्तु इसका स्थान एक अन्य नई विचाराधारा 'नव-साम्राज्यवाद' का उदय हो गया जिसके अन्तर्गत विकसित देशों ने विकासशील देशों के ऊपर वास्तव में आधिपत्य जमाने की अपेक्षा उनकी अर्थव्यवस्था पर आधिपत्य जमाना आरम्भ कर दिया (Instead of physically capturing them, to capture their economies) अतः एक ओर जहां अपनी विकास सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विकसित राष्ट्रों की सहायता लेना नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की मजबूरी थी वहीं दूसरी ओर विकसित देश इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की सशर्त मदद करने को तैयार थे।

विकासशील देशों के चहुमुखी विकास का लक्ष्य निर्धारित होने के पश्चात् अब प्रश्न उठा कि विकास की प्रक्रिया को लागू करने का माध्यम (Channel) क्या होना चाहिए। नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों का प्रशासन इस कार्य के लिए सर्वथा अनुपयुक्त था क्योंकि इन देशों का प्रशासनिक ढ़ाँचा औपनिवेशिक काल का था तथा संरचनात्मक एवं व्यवहारात्मक दोनों ही द ष्टियों से लोकतन्त्र के सिद्धान्तों के अनुरूप नहीं था। अतः यह आवश्यकता अनुभव की गई कि इन राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्था में द ष्टिकोणात्मक परिवर्तन लाया जाए ताकि यह लोकतान्त्रिक मूल्यों के अनुरूप कार्य कर सके। इसके साथ ही एक अन्य विचार भी प्रकट किया गया कि इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्था के अर्न्तगत ही विकास कार्य सम्पन्न करने के लिए अलग से प्रशासनिक मशीनरी का गठन किया जाए। प्रशासन के इस भाग को जो कि इन देशों विकास की प्रक्रिया में लगा हुआ था, पहली बार एक भारतीय प्रशासनिक लेखक यु. एल. गोस्वामी (U.L. Goswami) ने सन् 1955 में Indian Journnal of Public Administration में छपे एक लेख में 'विकास प्रशासन' (Development Administration) से सम्बोधित किया। पश्चिमी देशों में भी लगभग इसी समय कुछ विद्वानों जैसे कि लुसियन पाई आदि ने भी अपने लेखों में इस अवधारणा का प्रयोग आरम्भ कर दिया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पिछली सदी के पाचवें दशक के मध्य में 'विकास प्रशासन ' की अवधारणा अस्तित्व में आई और इसका प्रचलन आरम्भ हुआ। किन्तु इसके विकास में 'तुलनात्मक प्रशासन समूह' (Comparative Administration Group-CAG) नें प्रमुख भूमिका निभाई।

1950 और 1960 के दशकों में पूंजीवादी और साम्यावादी खेमों (अमेरिका की अगुवाई में पूंजीवादी और सोवियत संघ की अगुवाई में साम्यावादी) ने विकासशील देशों को अपनी-अपनी राजनैतिक विचारधारा में सम्मिलित करने हेतू विकासशील देशों को 'तकनीकी-आर्थिक सहायता कार्यक्रम' (Techno - Economic Assistance Programme) के अन्तर्गत उदार अनुदान (Liberal Grants) दिए किन्तु खेद का विषय यह रहा कि तकनीकी एवं आर्थिक अनुदान कार्यक्रम सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाया और इन देशों में अभीष्ट विकास नहीं हो पाया। इसलिए कार्यक्रम की असफलता के कारण जानने का प्रयास किया गया। इस दिशा में अमेरिका के फोर्ड फाउन्डेशन (Ford Foundation) ने काफी दिलचस्पी दिखाई और 1961 में American Society of Public Administration (ASPA) के फ्रेड रिग्स की अध्यक्षता में गठित अध्ययन दल-तुलनात्मक प्रशासन (CAG) को एशिया , अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के विकासशील देशों में अध्ययन करने के लिए पर्याप्त आर्थिक सहायता अनुदान के रूप में उपलब्ध करवाई।

परिणामस्वरूप CAG के विद्वानों जैसे कि रिग्स, फैरेल हैडी, विलियम सिफिन, मोण्टगोमरी इत्यादि ने अनकों विकासशील देशों की प्रशासकीय व्यवस्थाओं का इन देशों में जाकर अध्ययन किया। इन विद्वानों ने पाया कि त तीय विश्व के इन विकासशील देशों की प्रशासकीय व्यवस्थाओं को विकसित देशों के सन्दर्भ में विकसित प्रशासनिक सिद्वान्तों, प्रक्रियाओं, अवधारणाओं आदि की सहायता से नहीं समझा जा सकता । अतः इन विद्वानों ने नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को समझने तथा उनकी व्याख्या करने के लिए अनेकों नए सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं, अवधारणाओं आदि प्रतिपादित की । इसी सन्दर्भ में CAG के विद्धानों ने 'प्रशासन के पर्यावरण' (Environment or Ecology of Administration) का भी प्रतिपादन किया। इन विद्धानों ने विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करते हुए पाया कि प्रत्येक देश में कुछ ऐसे बाह्य तत्व जाते हैं जो निरन्तर प्रशासन को प्रभावित करते रहते हैं तथा उससे प्रभावित भी होते रहते हैं । इन्हीं तत्वों या शक्तियों के कारण एक देश की प्रशासनिक सरंचना किसी दूसरे देश में सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाती। जिन शक्तियों के प्रभाव के अन्तर्गत वह सरंचना पहले स्थान पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही थी उनका दूसरे स्थान पर अभाव पाया जाता है। तथा वहां पर अन्य शक्तियों क्रियाशील (Active) होती हैं जिनके प्रभाव में रहकर वहाँ की प्रशासनिक संरचनाएं कार्य करती हैं। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि जब तक हम इन बाह्य शक्तियों को नहीं पहचानेगें (Identify) और

उनका प्रशासन की संरचनाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है यह नहीं समझेगे तब तक किसी भी देश की प्रशासनिक व्यवस्था के अध्ययन का प्रयास अर्थहीन रहेगा। CAG के विद्वानों ने प्रशासन के साथ निरन्तर अतःक्रिया करने वाली इन शक्तियों को सामूहिक रूप से 'प्रशासन के पर्यावरण' (Environment or Ecology of Public Adminitration) की संज्ञा दी। इस प्रकार CAG के विद्वानों ने 'विकास प्रशासन ' के क्षेत्र में अनेकों सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं, अवधारणाओं आदि का विकास किया तथा विकास प्रशासन को एक सैद्धन्तिक आधार प्रदान करते हुए एक अध्ययन विषय के रूप स्थापित एंव प्रतिष्ठित किया।

Chapter - 4

विकास प्रशासन के मॉडल
(Models of Development Administration)

विभिन्न विकासशील देशों में विकास लाने हेतु विकास प्रशासन के द्धारा परिस्थिति अनुसार अलग-अलग मॉडल अपनाए जाते हैं। विकास प्रशासन के द्धारा अपनाए जाने वाले प्रमुख मॉडल निम्नलिखित है।:-

(I) Diffusion Model :–

Diffusion मॉडल विकास प्रशासन को समाजशास्त्र के देन है। रोर्जस तथा एडारी समाजशास्त्र में इस मॉडल के प्रमुख प्रस्तावक हैं। एडारी त तीय विश्व के देशों में विकास की प्रक्रिया की व्याख्या इस सिद्धान्त की सहायता से करते हैं। एडारी के अनुसार विकासशील देश विकास की जिस प्रक्रिया से गुजर रहे हैं या गुजरेगें, विकसित देश उस प्रक्रिया से पहले ही गुजर चुके हैं। इस प्रक्रिया में विकसित देशों ने अनेकों समस्याओं का सामना किया और उनके समाधान निकाले। अतः विकसित देशों ने विकास की प्रक्रिया में अनेक अनुभव प्राप्त किए। एडारी के अनुसार विकसित देशों के ये अनुभव विकासशील देशों की विकास की प्रक्रिया में बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं इसलिए विकासशील देशों को इन अनुभवों को अपनाना चाहिए।

एडारी के अनुसार विकासशील देशों में विकास की प्रक्रिया निम्न तीन बातों पर निर्भर करती है:-

(1) पश्चिम के औद्योगिक देश विकासशील देशों के विकास कार्यक्रमों में निवेश के लिए ऋण तथा अनुदान के रूप में पूँजी उपलब्ध करवायें।

(2) विकासशील देश क षि एंव औद्योगिक उत्पादन की आधुनिक तकनीकें अपनायें।

(3) विकासशील देश पश्चिम के औद्योगिक देशों के मूल्यों तथा व्यवहार पद्धतियों को अपनाएं।

एडारी की उपरोक्त व्याख्या से स्पष्ट हो जाता है कि वे विकासशील देशों के द्धारा पश्चिम के औद्योगिक देशों का अनुकरण करने की सिफारिश करते हैं। किन्तु इस मॉडल की इस आधार पर आलोचना की जा सकती है कि यह माडॅल परिस्थितकीय विचारधारा (Ecological Viewpoint) के सिद्धान्त के विरूद्ध है। परिस्थितकीय विचारधारा के अनुसार हर संरचना या संस्था का अपना एक पर्यावरण (राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्क तिक आदि) होता है जिसमें कि वह फलीभूत होती है और यदि उस संरचना या संस्था का किसी अन्य स्थान पर इसके पर्यावरण की उपेक्षा करते हुए) प्रत्यारोपण किया जाए तो यह आवश्यक नहीं कि वह सरंचना अभीष्ट फल दे।

(II) Human Need Cantred Development Model:-

Production Centred Development Model की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि यह मॉडल मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं की उपेक्षा करता है तथा निवेश पर लाभ (Return on Investment) को अधिकतम करने हेतु वस्तुओं और सेवाओं के अधिकाधिक उत्पादन

पर बल देता है। इसके परिणाम स्वरूप साधन-सम्पन्न तथा साधनविहीन लोगों के मध्य की खाई (Gap between Haves and Havenots)बहुत अधिक बढ़ जाती है। Production Centered Development Model की मानवीय पक्ष की उपेक्षा करने के कारण आलोचना की जाती है। इस मॉडल के इस दोष के कारण संगठन में मानवीय पहलू के पक्षधर सामाजिक वैज्ञानिकों ने विकल्प के रूप में Human Needs Centrel Development मॉडल का विकास किया। यह मॉडल आधारभूत मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति को महत्व देता है। इस मॉडल का केन्द्र-बिन्दु मानव हैं न कि वस्तुएँ। अतः यह मॉडल मानव -प्रधान तथा लोचशील है।

इस मॉडल के अन्तर्गत प्रशासन से यह अपेक्षा की जाती है कि वह आधारभूत मानवीय आवश्यकतओं की पूर्ति के एक प्रमुख अभिकरण (Agent) की भूमिका निभाये तथा ऐसी व्यवस्था प्रतिपादित करे जिसमें लोगों की आवश्यकताओं का प्रभावी तरीके से विश्लेषण किया जा सके तथा उन आवश्यकताओं की पूर्ति भी की जा सके। इस मॉडल के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पहचान की जाती है और तदनुपरान्त इन आवश्यकताओं का प्राथमिकीकरण (Priortisation) किया जाता है। प्राथमिकीकरण करने के बाद इन आवश्यकताओं को नियोजन के लक्ष्यों तथा उद्देश्यों के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। इस प्रकार मानवीय आवश्यकताओं का नियोजन में विलय हो जाता है। इसके पश्चात् योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए जो कार्यक्रम बनाए जाते हैं उनमें भी लोगों की सहभागिता सुनिश्चित की जाती है। वस्तुत इस मॉडल के अन्तर्गत सम्पूर्ण प्रशासनिक प्रक्रिया सहभागितापूर्ण (Participatiory) बन जाती है और कार्यक्रमों एवं योजनाओं के निर्माण में लोगों की भागीदारिता को बढ़ावा दिया जाता है। अतः इस मॉडल के अन्तर्गत मानवीय पहलू को महत्व दिया जाता है और लोगों को सम्मान की द ष्टि से देखा जाता है।

(III) Sustainable Development Model:-

सामान्यतः विकास के विभिन्न Model की इस आधार पर आलोचना की जाती है कि वे विकास को केवल वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में देखते है। विकसित होने की होड़ में भौतिक संसाधनों का दोहन नियोजित तरीके से नहीं किया जाता । अधिकतर मॉडल अदूरदर्शितापूर्ण कार्यवाही करते हुए पर्यावरण के अविवेकपूर्ण क्षरण (degradation) के भविष्य में होने वाले दुष्परिणामों की उपेक्षा कर देते हैं। वास्तव में अधिकांश देशों में पर्यावरण को एक ऐसे संसाधन के रूप में देखा जा रहा है जिसका उपयोग एवं दोहन सर्वथा निजी लाभ के लिए किया जा सकता है।

विभिन्न पर्यावारणविद विकास की इस अवधारणा एवं प्रक्रिया को लक्ष्य बनाते है तथा इसकी गम्भीर आलोचना करते हुए इसके दूरगामी परिणामों की ओर चेताते हैं। इसी आधार पर Sustainable Development Model का उदय हुआ। इस मॉडल का मूल दर्शन यह तर्क है कि हमने अपने पूर्वजों से प्राक तिक धरोहर के रूप में जो कुछ प्राप्त किया है, यदि अधिक नहीं तो न्यूनतम उतना तो हमें अपनी संततियों (Future Generations) को अवश्य ही देना चाहिए। यह मॉडल प्राक तिक संसाधनों के उचित प्रबंधन और सरंक्षण पर बल देता है। इस मॉडल के अनुसार हमें विकास और परिवर्तन की प्रक्रिया को इस प्रकार संचालित करना चाहिए कि वर्तमान और भविष्य दोनों में ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित हो सके। अर्थात् हमें प्राक तिक संसाधनों का उपयोग इस विवेकपूर्ण तरीके से करना चाहिए कि वर्तमान में हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति होने के साथ-साथ आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए भी प्राक तिक सम्पदा सुरक्षित रह सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि विकास के अन्य Model जो कि प्राक तिक संसाधनों का दोहन करते समय केवल वर्तमान सन्दर्भ को ध्यान में रखते हैं, Sustainable Development Model वर्तमान के साथ-साथ भविष्य पर भी नजर रखता है। इसीलिए यह मॉडल अधिक दूरदर्शितापूर्ण है। वास्तव में यह मॉडल लोगों की विचारधारा में परिवर्तन लाने की बात करता है और उनमें प्राक तिक सम्पदा के विवेकपूर्ण प्रयोग की दिशा में

जागरूकता लाने का प्रयास करता है।

(IV) Gandhian Model of Development:-

यद्यपि महात्मा गांधी ने विकास के सम्बन्ध में अलग से कोई सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं किया तथापि भिन्न- भिन्न स्थानों पर विकास के सम्बन्ध में उन्होनें अपने जो विचार प्रकट किए उन्हें मिलाकर एक विचारधारा का रूप दिया गया है जिसे हम विकास के गाँधीवादी मॉडल की संज्ञा देते हैं। गांधीजी सत्ता के केन्द्रीकरण के पक्षधर नहीं थे। उन्होंने राजनीति सत्ता को प्राप्ति का माध्यम बताते हुए इसकी आलोचना की और कहा कि इसमें सर्मपण के साथ सेवा करने की भावना का अभाव पाया जाता है। गाँधी जी राज्य रूपी सत्ता के शनैः-शनैः किन्तु अन्ततः समाप्ति (Progressive withering away of the State) के पक्षधर थे।

गाँधीजी वास्वविक संघीय लोकतन्त्र चाहते थे जिसमें कि गांव आधारभूत इकाई हों। गाँधीजी विकास के अन्तर्गत आर्थिक परिवर्तन को महत्व देते थे लेकिन साथ ही वे बड़े स्तर पर उत्पादन के विरूद्ध थे। इसकी अपेक्षा गांधीजी लघु एंव कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना चाहते थे। उनका विचार था कि इस प्रकार की विकास की प्रक्रिया से आर्थिक विषमता या भेदभाव नहीं पनपता। साथ ही गांधीजी ने विकास के सन्दर्भ में निम्न बातों पर बल दियाः-

(1) क षि तथा उद्योगों पर आधारित स्वावलम्बी ग्रामीण अर्थव्यवस्था।

(2) सीमित आवश्यकताओं पर आधारित अर्थव्यवस्था।

(3) संघीय (Trusteeship) अर्थव्यवस्था।

गांधीजी का विचार था कि सीमित आवश्यकता आधारित अर्थव्यवस्था व्यक्तित्व के चहुमुखी विकास का साधन बनती है तथा हमें भ्रष्टाचार और पक्षपातपूर्ण व्यवहार जैसे दोषों से भी मुक्ति दिलाती है। उनके अनुसार शिक्षा नैतिक तथा भौतिक दोनों ही प्रकार के विकास का सशक्त माध्यम है। विकास के बारे में गांधीजी के विचारों से प्रभावित होकर ही भारत प्रधानमन्त्री के श्री मनमोहन सिहं ने भारत में विकास लाने के लिए पूर्व में गाँधीवादी विचारधारा को अपनाने का सुझाव दिया था।

(V) Dependency Model of Development:-

इस मॉडल के प्रणेता फ्रैन्क के अनुसार त तीय विश्व के देशों की गरीबी का प्रमुख कारण इन देशों की पर-निर्भरता है। उनका मानना है कि वास्तव में परनिर्भरता की एक जंजीर (chain) बनी हुई है जो कि दुनिया के अधिक विकसित देशों से अल्पविकसित देशों की ओर चलती है। अर्थात अल्पविकसित देश अपने से अधिक विकसित देशों पर निर्भर हैं, जो कि अपने से और अधिक विकसित देशों पर निर्भर हैं।

Dependency Model of Development के प्रमुख प्रस्तावकों कारडोसो तथा फालैटो अर्जेन्टाइना, पैरू, चिल्ली, ब्राजील आदि अल्पविकसित देशों में फैली गम्भीर गरीबी का प्रमुख कारण इन देशों के ऊपर पश्चिम के औद्योगिक देशों के राजनैतिक-आर्थिक प्रभावों को मानते है। इन विद्धानों ने तीसरी दुनिया के अल्पविकसित देशों में औद्योगिक विकास के अभाव के लिए इन अर्थव्यवस्थाओं के पास संसाधनों की कमी तथा अतिरिक्त उत्पादन (Surplus Production) के अभाव के अलावा इन देशों की पश्चिम के विकसित देशों के ऊपर निर्भरता को माना है। विकासशील देशों के विकसित होने के लिए यह मॉडल कुछ सिफाारिशें करता है जो निम्न प्रकार हैंः-

(1) विकासशील देशों को पूंजीपती देशों के साथ अपने सम्बन्ध विच्छेद करने होंगे।

(2) इसके लिए यह आवश्यक है कि ये देश , विशेषतौर पर यहां का कामगार वर्ग (Working Class) को सर्वप्रथम अपने ही देश धनाढ़य वर्ग (Elite Class) को समाप्त करे और तत्पश्चात् पुंजीवादी को चुनौती दे।

(3) इन देशों को चाहिए कि वे एक दूसरे के सहायतार्थ अपने ही बीच अर्थात् त तीय विश्व के देशों के मध्य एक प्रभावशाली औद्योगिक आधार स्थापित करें तथा आपसी सहयोग और गठबन्धन की नीति अपनायें।

अतः स्पष्ट हो जाता है कि यह मॉडल असमानों (Dislikes) के बीच निर्भरता के स्थान पर समानों (Likes) के बीच परस्पर निर्भरता और सहायता का वातावरण बनाने का पक्षधर है। क्योंकि इस मॉडल के अनुसार, असमानों के मध्य परस्पर निर्भरता (Mutual Dependence) नहीं होती और जहां परस्पर निर्भरता नहीं होती वहां शोषण होता है अर्थात अधिक विकसित के द्धारा कम विकसित का शोषण किया जाता है।

(VI) Altatnative Model of Development:-

अपनी प्रमुख पुस्तक "Small is Bautiful" में शूमेकर ने इस मॉडल का प्रतिपादन किया है। यह मॉडल त तीय विश्व के देशों में स्वावलम्बी तथा लघुस्तरीय तकनीकी व्यवस्थाओं की स्थापना की सिफारिश करता हैं। इस मॉडल की आधारभूत मान्यता, जो इसे अन्य Models से भिन्न करती है, वो यह कि त तीय विश्व के देशों का औद्योगिकरण वर्तमान में औद्योगिक त देशों के गैर-औद्योगिकरण (de-industrialisation) से ही सम्भव पाएगा। इसीलिए यह मॉडल सन्तुलन भंग किये बिना ही विकासशील देशों को विकसित करने के लिए इन देशों में लघु उद्योगों के फैलाव की सिफारिश करता है।

शूमेकर ने 1961 में भारत आकर यहाँ विकास की प्रक्रिया का अध्ययन किया तथा भारत सरकार को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करते हुए भारत में लघु-उद्योग लगाने पर बल दिया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में बढ़ती हुई बेराजगारी की समस्या को हल किया जा सके। इसी आधार पर बाद मे अपनी पुस्तक में उन्होंने इस माम्डल का प्रतिपादन किया।

यह मॉडल त तीय विश्व में औद्योगिक विकास को नियन्त्रित करने की सिफारिश इस आरधार पर करता है कि इन देशों की काफी समस्याएँ विकसित देशों की अनुपयुक्त तकनीक को अपने यहाँ अविवेकपूर्ण तरीके से लागू करने की देन हैं।

Chapter–5

विकाशील देशों में विकास प्रशासन की भूमिका

(Role of Development Administration in Developing Countries)

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात, विश्व के मानचित्र पर एशिया, अफ्रीका एवं लैटिन अमेरिका के बहुत से देश जो इससे पहले साम्राज्यवादी शक्तियाँ के अधीन थे, उभर कर सामने आए। इन सभी देशों को विकासशील या तीसरी दुनिया के देशों के नाम से पुकारा जाता है। आजादी के समय ये सभी देश विभिन्न समस्याओं जैसे गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, अशिक्षा, अस्वास्थ्य आदि समस्याओं से ग्रसित थे। इसका मुख्य कारण साम्राज्यवादी देशों के द्वारा इनका लम्बे समय तक किया गया शोषण था। आजादी के बाद इन देशों के सामने मुख्य मुद्दा प्रत्येक क्षेत्र में विकास करना था ताकि विभिन्न समस्याओं का यथासम्भव हल निकाला जा सके। इसी कारण इन देशों के प्रशासन ने 'विकास प्रशासन' का रूप धारण किया। विकास प्रशासन का मुख्य उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्क तिक क्षेत्रों में विकास लाकर जनकल्याण को बढ़ावा देना था जिससे विभिन्न समस्याओं से छुटकारा पाया जा सके।

इस प्रकार विकासशील देशों में विकास प्रशासन एक आधारभूत भूमिका निभाता है जिसका वर्णन निम्न प्रकार है -

1. सामाजिक कल्याण को बढ़ावा
(Promotion of Social Welfare) :–

विकासशील देशों में समाज विभिन्न वर्गों जैसे कि अनूसूचित जाति एवं जनजाति, पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक, महिलाएं एवं बच्चे, असहाय एवं अपंग आदि अनेक प्रकार की समस्याओं से ग्रसित है। विकास प्रशासन का मुख्य उद्देश्य, समाज के भिन्न-भिन्न वर्गो के लिए कल्याणोपयोगी क्रियाओं का स जन करना है। इसके लिए यह अनेकानेक कल्याणकारी कार्यक्रम एवं योजनाओं का निर्माण करता है तथा उन्हें क्रियान्वित करता है ताकि समाज कल्याण को बढ़ावा मिल सके। इसके साथ-साथ विभिन्न कार्यरत श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम जैसे कि पेन्सन, बीमा, चिकित्सा, शिक्षा, आवास एवं आश्रितों को रोजगार प्रदान करना आदि चलाए जाते हैं।

2. आर्थिक विषमता कम करना
(Reducing Economic Inequalities)

विकासशील देशों की एक मुख्य समस्या आर्थिक विषमता से जुड़ी हुई है। विकास प्रशासन इन देशों में व्याप्त आर्थिक विषमता को कम करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह नियोजित विकास

की प्रक्रिया अपनाकर निषेधात्मक उपायों द्वारा एकधिकारी प्रव तियों पर रोक लगाता है। इसके साथ-साथ यह प्रगतिशील करारोपण तथा धनात्मक तरीकों के माध्यम से समाज के गरीब वर्ग की उत्पादक क्षमता बढ़ाने का प्रयास करता है ताकि समाज में फैली आर्थिक विषमताओं को न्यूनतम किया जा सके।

3. सामाजिक बुराईयों को दूर करना (Eradicate Social Evils):–

लगभग सभी विकासशील देशों में अनेकों सामाजिक बुराईयों जैसे कि अनपढ़ता, निर्धनता, अशिक्षा, जातिवाद धर्माधता एवं अन्धविश्वास आदि विद्यामन हैं और इन्हें दूर करने में विकास प्रशासन एक अहमभूत भूमिका निभाता है। ये सभी बुराईयाँ समाज के विकास के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा हैं। इन बुराईयों को दूर करने के लिए विकास प्रशासन विभिन्न उपाय करता है ताकि समाज को अधिकाधिक स्वस्थ बनाया जा सके। इन बुराईयों पर अंकुश लगाने के लिए विकास प्रशासन, गरीबी एवं बेरोजगारी को दूर करने, नई शिक्षा नीति अपनाने, धर्मान्धता एवं अन्धविश्वास दूर करने सम्बन्धी कानूनों का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस सम्बन्ध में यह अनेक कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं का संचालन करता है।

4. संतुलित आर्थिक विकास को बढ़ावा (Promotion of Balanced Regional Development):–

आमतौर पर विकासशील देशों की अर्थव्यवस्थाओं में क्षेत्रीय असमानता पाई जाती है अर्थात् इन देशों में कोई क्षेत्र कम विकसित है तो कोई अधिक। इस असमानता के अनेक कारण हो सकते हैं। विकास प्रशासन न केवल इन कारणों की जांच करता अपितु पिछड़े क्षेत्रों की आवश्यकताओं के अनुरूप नियोजित विकास प्रक्रिया के माध्यम से अनेक कार्यक्रमों को संचालित भी करता हैं। उदाहरण के तौर पर मरूस्थलीय विकास कार्यक्रम (Dessert Develpment Programmes), पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम (Hill Area Develpment Programmes), अनुसूचित जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम (Tribal Area Develppment Programme) आदि कार्यक्रम संतुलित आर्थिक विकास की दिशा में विकास प्रशासन की अमह भूमिका को दर्शाते है। इस प्रकार विकास प्रशासन विभिन्न क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों की मदद से पिछड़े इलाकों का विकास करके, उन्हें विकसित क्षेत्रों के समान लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

5. आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय को बढ़ावा (Promotion of Economic Developemt and Social Justice)

विकासशील देशों में विकास प्रशासन की अन्य भूमिका आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने सम्बन्धी है। आर्थिक विकास की सामाजिक न्याय के साथ प्राप्ति से तात्पर्य धन एवं सम्पति का समाज के कुछ ही लोगों के हाथों में केन्द्रीकरण न होकर, विभिन्न वर्गों में समान रूप से वितरण का होना है। इस सम्बन्ध में विकास प्रशासन इन देशों में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक विकास सम्बन्धी कार्यक्रम अपनाता है जिससे आर्थिक व द्धि एवं सामाजिक विकास दोनों ही प्राप्त हो सकें। सामाजिक न्याय के लिए आवश्यक है कि समाज के कमजोर वर्ग जैसे कि खेतिहर मजदूर, दस्तकार, अनुसूचित जाति एवं जनजाति आदि की आय में तेजी से व द्धि हो सके और किसी के साथ भी कोई भेदभाव न किया जा सके। इस प्रकार सामाजिक समानता, सामाजिक न्याय एवं आर्थिक विकास के क्रम में विकास प्रशासन एक सशक्त अवधारणा है।

6. लोगों के द ष्टिकोण को प्रगतिशील बनाना
(To make the People's outlook Progressive)

विकासशील देशों में लोगों के प्रगतिशील द ष्टिकोण एवं सुयोग्य नेत त्व की प्रायः कमी देखने को मिलती है जो किसी भी देश के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इन देशों की सरकारों के द्वारा संचालित कार्यक्रमों की असफलता का मुख्य कारण लोगों में इन कार्यक्रमों के प्रति जाग ति का अभाव होता है। विकास प्रशासन विद्यमान प्रशासन प्रणाली में अनेक परिवर्तन लाने की कोशिश करता है तथा लोगों में जाग ति पैदा करने हेतू तथा उनके द ष्टिकोण को प्रगतिशील बनाने के दिशा में अनेक कार्यक्रमों का संचालन करता है।

7. आत्मनिर्भरता
(Self-Reliance) :–

विकास प्रशासन की अन्य महत्वपूर्ण भूमिका विकासशील देशों में आत्म-निर्भरता की प्राप्ति से सम्बन्धित है। यह नियोजित विकास प्रक्रिया अपनाकर इन देशों की अर्थव्यवस्था को त्वरित विकास प्रक्रिया की स्थिति प्रदान करके इसे आत्मनिर्भरता की स्थिति तक पहुँचाने का प्रयास करता है ताकि ये राष्ट्र अधिकांश पूँजीगत एवं उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन में आत्म-निर्भर हो सकें।

8. जन-सहभागिता को सुनिश्चित करना
(Ensures People's Participation):–

विकासशील देशों में सरकार के विभिन्न कार्यक्रमों में प्रायः लोगों की भागीदारी का अभाव देखने को मिलता है। इस जन सहभागिता के अभाव के परिणाम स्वरूप विकास कार्यक्रमों की सफलता संदेहस्पद रहती है। इसलिए विकास कार्यक्रमों में जनसहभागिता का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसे सुनिश्चित करने में विकास प्रशासन एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

विकास प्रशासन वास्तव में जनकल्याण एवं लोगों की उन्नति से सम्बन्धित होने के कारण विकास नीतियों एवं कार्यक्रमों में जन सहभागिता पर दबाव डालता है। विकासशील देशों में जारी शिक्षा प्रसार, पर्यावरण संरक्षण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमों की सफलता, इन कार्यक्रमों में लोगों के अधिकाधिक सहयोग एवं सहभागिता पर निर्भर करती है। जनसहभागिता को विकास कार्यक्रमों में बढ़ावा देने की दिशा में विकास प्रशासन प्रमुख भूमिका निभाता है।

9. जन आकांक्षाओं की पूर्ति
(Fullfillment of Peoples' Needs & necessities)

विकासशील देशों में विकास प्रशासन विभिन्न वर्गो से सम्बन्धित तथा विभिन्न क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों की आवश्यकताओं एवं आकाक्षाओं की पहचान करता है तथा उनकी पूर्ति हेतू विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम तैयार करता है तथा उन्हें क्रियान्वित करता है। जन आकाक्षाओं के पूर्ति ही विकास प्रशासन का लक्ष्य है। इस प्रकार जन समस्यओं के समाधान तथा जनाकांक्षाओं की पूर्ति में विकास प्रशासन सशक्त भूमिका निभाता है।

Chapter - 6
प्रशासनिक विकास
(Administrative Development)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, अफ्रीका, लेटिन अमेरिका, मध्य एवं पूर्व एशिया के बहुत सारे देश विश्व के मानचित्र पर उभर कर आए। ये सभी तीसरी दुनिया के देश कहलातें हैं। आजादी के समय ये देश अनेक समस्याओं जैसे कि गरीबी, बेरोजगार, अशिक्षा, भ्रष्टाचार, भूखमरी, स्वास्थय सेवाओं की कमी, प्रशासनिक अकुशलता एवं अकुशल प्रशासनिक व्यवस्था आदि से घिरे हुए थे। विकास इन सब देशों की महत्वपूर्ण आवश्यकता थी। इन समस्याओं से निपटने के लिए प्रत्येक क्षेत्र जैसे कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक राजनैतिक एवं प्रशासनिक आदि में अत्याधिक विकास की आवश्यकता थी। इन सब क्षेत्रों में विकास की जिम्मेदारी इन देशों के प्रशासन को दी गई इसी कारण इनके प्रशासन ने 'विकास प्रशासन' का रूप धारण कर लिया। इन देशों के प्रशासन का मुख्य लक्ष्य राष्ट्र निर्माण एवं सामाजिक-आर्थिक प्रगति बन गया।

लेकिन विकास प्रशासन अपने उद्देश्यों की प्राप्ति सफलता पूर्वक करे, इसके लिए प्रशासन का स्वयं का विकास अर्थात् प्रशासनिक विकास भी अत्यधिक आवश्यक बन गया क्योंकि अगर प्रशासन स्वयं पूर्ण रूप से विकसित नहीं है तो वह विकासात्मक कार्यक्रमों एंव नीतियों के सफल संचालन व क्रियान्वन में अपनी भूमिका नहीं निभा सकता।

पिछले कुछ वर्षो में हालंकि लोक प्रशासन में विकास प्रशासन की अवधारणा पर तो काफी ध्यान केन्द्रित किया गया है जबकि प्रशासनिक विकास की अवधारणा को विकसित करने के लिए अधिक प्रयास नहीं किए हैं। विकासशील देशों में आजादी के पश्चात् प्रशासनिक विकास की दिशा में आधारभूत परिवर्तन नहीं किए गए है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि विकास प्रशासन के साथ-साथ प्रशासनिक विकास की ओर भी पूरा ध्यान केन्द्रित किया जाए क्योंकि विकासशील देशों के लिए जितना विकास प्रशासन आवश्यक है प्रशासनिक विकास भी ही आवश्यक है। प्रशासनिक विकास की मदद से ही विकास प्रशासन को समाज की बदलती हुई नई परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जा सकता है । विकासशील देशों के विकास प्रशासन के सामने खड़ी गम्भीर चुनौतियों का मुकाबला केवल प्रशासनिक विकास पर ही निर्भर करता है। इसी प्रकार लोक प्रशासन में आज 'प्रशासनिक विकास' एक महत्वपूर्ण विषय के रूप में उभरा है। वास्तव में विकासशील देशों की यह मूलभूत आवश्यकता है।

प्रशासनिक विकास-अर्थ एंव परिभाषा
Administrative Development-Meaning & Definition :

साधारण शब्दों में प्रशासनिक विकास का तात्पर्य विकासात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतू प्रशासन की

1. जे. एन. खोसला as quoted in विकास प्रशासन आनन्द प्रकाश अवस्थी, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2002 प.21

परम्परागत को कमियों दूर करना तथा उसमें प्रशसनिक कुशलता एवं क्षमता का विकास करके, उसे नवीन व परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप बनाना है।

जे. एन. खोसला के अनुसार, "प्रशासनिक विकास में नौकरशाही की नीतियों, कार्यक्रमो, क्रियाविधियो, कार्य पद्धतियों, संगठनात्मक संरचनाओं, भर्ती प्रतिमानों, विभिन्न प्रकार के सेवीवर्ग तथा प्रशासन के ग्राहकों के साथ सम्बन्ध, प्रतिमानों की संख्या एंव विशेषता में मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तनों को सम्मिलित किया जाता है।"

टी.एन. चतुर्वेदी के अनुसार, "प्रशासनिक विकास का अभिप्रायः है कि प्रशासन को उत्तरोतर सुचारू और क्रियाशील बनाना तथा प्रशासनिक दक्षता और अक्षमताओं को उत्तरोतर विकसित करना। इसके विचार में यह भाव अन्तर्निहित है कि प्रशासन के परम्परागत रूप में जो कमियाँ हों अथवा रिक्तता हैं उसे दूर करके प्रशासन को नवीन, परिवर्तित तथा विकासशील परिस्थितियों के अनुरूप बनाना।"[2]

प्रशासनिक विकासः मिलते - जुलते शब्द
Administrative Development : Some related Concepts

प्रशासनिक विकास कुछ शब्द जैसे कि विकास प्रशासन, प्रशासनिक व द्धि, प्रशासनिक सुधार, प्रशासनिक बदलाव आदि से काफी मिलता जुलता है। लेकिन ये सारे शब्द प्रशासनिक विकास से भिन्न हैं। प्रशासनिक विकास से इनकी भिन्नता को निम्नलिखित ढ़ंग से वर्णित किया जा सकता है -

1. विकास प्रशासन एवं प्रशासनिक विकास
(Administrative Development & Development Administration)

प्रशासनिक विकास एवं विकास प्रशासन में गहरा सम्बन्ध है। लेकिन दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द नहीं हैं । विकास प्रशासन एक व्यापक अवधारणा है और इसका क्षेत्र काफी विस्त त है जबकि प्रशासनिक विकास, विकास प्रशासन का ही एक भाग है।

विकास प्रशासन का सम्बन्ध देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्क तिक व्यवस्थाओं के पूर्ण विकास से है। जबकि प्रशासनिक विकास केवल प्रशासनिक व्यवस्था की क्षमता को बढ़ाने तक ही सीमित है।

इस प्रकार विकास का प्रशासन (Administration of Development) एवं प्रशासन का विकास (Administrative Development) एक दूसरे के साथ गहनतम रूप से जुड़े हुए हैं तथा एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। F.W.Riggs ने इन दोनों के सम्बन्ध को 'chicken and egg relationship' के नाम से सम्बोधित किया है।

2. प्रशासनिक विकास एंव प्रशासनिक व द्धि
(Administrative Development and Administrative growth)

प्रशासनिक व द्धि का तात्पर्य प्रशासनिक कार्यो व प्रशासनिक उतरदायित्वों में व द्धि से है जबकि प्रशासनिक विकास का अभिप्राय प्रशासनिक तन्त्र में होने वाले सुधार से है। इन दोनों में भी गहरा सम्बन्ध है। क्योंकि प्रशासनिक व द्धि की स्थिति में प्रशासनिक विकास अधिक आवश्यक बन जाता है। प्रशासनिक व द्धि परिवर्तित परिस्थितियों तथा नवीन उत्तरदायित्वों के निर्वाह हेतु आवश्यक हो जाती है।

इस प्रकार इन दोनों में अन्तर निम्न ढ़ंग से स्पष्ट किया जा सकता है-प्रशासनिक व द्धि प्रशासन के कार्यो एंव दायित्वों में व द्धि से सम्बन्धित है जबकि प्रशासनिक विकास की आवश्यकता इन बढ़े हुए दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वाह करने के लिए पड़ती है।

3. प्रशासनिक विकास एवं प्रशासनिक सुधार
(Administrative Development Administrative Reforms)

प्रशासनिक विकास व प्रशासनिक सुधार एक जैसे प्रतीत होते है। किन्तु प्रशासनिक विकास अधिक व्यापक अवधारणा है। इन दोनों में गहरा सम्बन्ध है। क्योंकि प्रशासनिक सुधार प्रशासनिक विकास का महत्वपूर्ण साधन है। प्रशासनिक विकास हेतू प्रशासनिक सुधार अति आवश्यक होता है।

इन दोनों में अन्तर इस प्रकार है -प्रशासनिक विकास की अवधारणा प्रशासनिक प्रणाली के विकास को व्यक्त करती है जबकि प्रशासनिक सुधार से तात्पर्य प्रशासनिक प्रणाली में सुधारात्मक परिवर्तन से है। प्रशासनिक सुधार प्रशासनिक व्यवस्था में बदलाव लाने से सम्बन्धित है ताकि इसकी कमियों को दूर किया जा सके। अतः प्रशासनिक सुधार एक ऋणात्मक अवधारणा है जोकि minus (-) से शुरू होती है तथा zero(0) तक पहुंचती है। जबकि प्रशासनिक विकास प्रशासन की कार्यक्षमता को बढ़ाने से सम्बन्धित है तथा यह ऋणात्मक अवधारणा है क्योंकि यह Zero(0) से शुरू होकर Positive(+) की ओर जाती हैं। यह प्रशासन में ऐसे परिवर्तनों जो इसे बेहतर बना सकें, लाने से सम्बन्धित है।

4. प्रशासनिक विकास एवं प्रशासनिक बदलाव
(Administrative Development and Administratative change)

परिवर्तन अर्थात् बदलाव प्रक्रिया का नियम है। अतः एक प्राक तिक प्रक ति है जो प्रक ति में बदलाव के साथ-साथ चलती है। अतः यह प्रशासनिक परिवर्तन वह है जो प्रक ति या पर्यावरण में आने वाले परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप आता है। इसकी दिशा ऋणात्मक एंव धनात्मक दोनों ही हो सकती है। यह मानव द्धारा संचालित न होकर प्रक ति द्वारा वंचालित होता है। जबकि प्रशासनिक विकास मनुष्य द्वारा प्रशासकीय यन्त्र की क्षमता को बढ़ाने एक प्रयास है। इसकी दिशा धनात्मक ही होती है।

प्रशासनिक विकास की विशेषतांए
(Salient Characterstics of Administrative Development).

प्रशासनिक विकास की विशेषताएँ निम्नलिखित हैः-

1. कार्यकुशलता से सम्बन्ध
(Related with Efficiency)

प्रशासनिक विकास का सीधा सम्बन्ध प्रशासन की कार्यकुशलता में व द्धि से है। प्रशासन में कार्यकुशलता का अर्थ कम से कम संसाधनों और न्यूनतम समय में प्रशासन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की अधिक से अधि ाक प्राप्ति, करने से है। प्रशासनिक विकास, प्रशासन में अधिकाधिक कार्यकुशलता लाने के साथ जुड़ा हुआ है।

2. प्रशासनिक आधुनिकीकरण से सम्बन्ध
(Administrative Modernisation)

प्रशासनिक विकास, प्रशासन को अत्याधिक आधुनिक बनाने से सम्बन्धित है। यह प्रशासन में पुरानी व प्राचीन तकनीकों के स्थान पर नई व आधुनिक तकनीकों की स्थापना करता है। इसके साथ सरंचनाओं का पुर्ननिर्माण तथा प्रशासनिक प्रक्रियाओं एंव तौर तरीकों को अत्याधिक तार्किक बनाने से सम्बन्ध रखता ताकि प्रशासन को अधिकाधिक आधुनिक त बनाया जा सके।

3. प्रजातान्त्रिक मूल्यों से सम्बन्ध
(Related with Democratic Values)

प्रशासनिक विकास का सम्बन्ध प्रजातान्त्रिक मूल्यों के साथ भी है। इसके माध्यम से प्रशासन प्रजातान्त्रिक संस्थाओं एवं व्यवहारों की में स्थापना व अधिकाधिक विकास किया जाता है। इससे

प्रशासन में मानव अधिकरों के प्रति सम्मान प्रशासनिक कार्य प्रक्रिया में प्रतिनिधित्व प्रणाली तथा उत्तरदायित्व की भावना का विकास सम्मिलित है। इस प्रकार प्रशासनिक विकास प्रशासन में प्रजातान्त्रिक मूल्यों की स्थापना एवं विकास का पर्यायवाची बन जाता है।

4. विकास प्रशासन की पूर्वावस्था
(Prior-stage of Development Administration)

विकास प्रशासन की पूर्वावस्था प्रशासनिक विकास को ही माना जाता है क्योंकि विभिन्न योजनाओं एवं विकासात्मक कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन के लिए प्रशासनिक विकास अत्याधिक आवश्यक हैं। प्रशासनिक विकास के अभाव में विकास प्रशासन के अनेक कार्यक्रम निष्क्रिय हो जाते है। अतः विकास प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों जैसे कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्क तिक, राजनैतिक में विकास कार्यक्रमों को सफलता पूर्वक लागू करने के लिए प्रशासन का विकसित होना अनिवार्य है।

प्रशासनिक विकास के उद्देश्य
(Objectives of Administrative Development)

प्रशासनिक विकास, विकास प्रशासन की सफलता के लिए अत्याधिक आवश्यक है। प्रशासनिक विकास के उद्देश्य निम्नलिखित हैंः-

1. प्रशासनिक क्षमता को बढ़ाना
(To Increase the Administrative Capability)

प्रशासनिक विकास का मुख्य उद्देश्य, प्रशासन की कार्यक्षमता को बढ़ाना है ताकि वह विभिन क्षेत्रों में लागू किए गए विकासात्मक कार्यक्रमों के उद्देश्यों की अधिकाधिक पाप्ति कर सके। पर्याप्त कार्यक्षमता के अभाव में विकास प्रशासन अपने कार्यक्रम का सफल संचालन नहीं कर सकता।

2. प्रशासनिक सरंचनाओं का पुर्नगठन एवं उनमें तार्किकता का विकास
(Administrative Reorganisation and Rationalisation)

प्रशासनिक विकास का अन्य मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक व्यवस्था की सरंचनाओं एंव प्रक्रियाओं में समयानुसार आवश्यक परिवर्तन लाकर उनका पुर्नगठन एंव पुनःनिर्माण करना है। इसके साथ-साथ यह प्रशासन की प्राकार्यात्मक कार्यवाही (Function working) में अधिकाधिक तार्किकता लाने का प्रयास भी करता है ताकि इसे परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप बनाया जा सके।

3. विकासात्मक कार्यो में कर्मचारियों की पहलकदमी को बढ़ावा
(To Promote Development Iintiative)

विकास प्रशासन द्वारा संचालित कार्यक्रमों को सफलता पूर्वक लागू करने हेतु कर्मचारियों में पहलकदमी करने की शाक्ति का विकास अत्याधिक आवश्यक है। अतः कर्मचारियों में इस पहलकदमी के विकास को प्रोत्साहित करना भी, प्रशासनिक विकास का एक उद्देश्य है।

4. बाह्य विशेषज्ञों पर प्रशासन की निर्भरता को कम करना
(Reducing Administrative Dependence on Foreign Exports)

विकास प्रशासन की निर्भरता बाह्य विशेषज्ञों (Foreign Experts) पर कम से कम हो, यह भी प्रशासनिक विकास का उद्देश्य है। यह तभी सम्भव है जब अपने देश में ही पर्याप्त मात्रा में विकासात्मक कार्यक्रमों को संचालित करने हेतू प्रशिक्षित मानवीय शाक्ति उपलब्ध हो। इस प्रकार प्रशिक्षित मानवीय शक्ति का पर्याप्त मात्रा में विकास करके ही किसी देश में बाह्य विशेषज्ञों से छुटकारा पाया जा सकता है।

5. सीमित संसाधनों का उच्चतम प्रयोग
(Effective Utilization of Scarce Resources)

विकास प्रशासन के सामने चुनौतियाँ अधिक एवं उन चुनौतियों से झूझने के लिए संसाधन कम हैं। अतः इन सीमित संसाधनों से ही प्रशासन को इन चुनौतियों का मुकाबला करना होता है। इसके लिए यह अति आवश्यक है कि इन सीमित भौतिक एंव मानवीय संसाधनों का उच्चतम प्रयोग किया जाए जो प्रशासनिक विकास का एक मुख्य उद्देश्य हैं।

6. प्रशासन में आधुनिक तकनीकों के प्रयोग को बढ़ावा
(Insertion of Advance and Sphisticated Technolgy)

प्रशासनिक विकास का एक अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य प्रशासनिक कार्यवाही में पुरानी या प्राचीन तकनीकों के स्थान पर नई एवं आधुनिक तकनीकों को स्थापित करना है ताकि विकास प्रशासन की कार्यक्षमता को काफी हद तक बढ़ाया जा सके।

7. नौकरशाही की स्थिलता एवं प्रशासन में व्याप्त भष्ट्राचार को कम करना
(Reducing Bureaucratie immobility and Widespread Corruption)

विकासशील देशों में प्रशासन की एक गम्भीर समस्या है इसमें व्याप्त भष्ट्राचार तथा स्थिल नौकरशाही का पाया जाना है जो विकास के मार्ग मे मुख्य बाधक हैं । इन समस्याओं के समाधान हेतु प्रशासनिक विकास अनिवार्य है। प्रशासनिक विकास की मदद से ही नौकरशाही की स्थिलता एवं प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को कम किया जा सकता है। अतः प्रशासनिक विकास यह एक अहमभूत उद्देश्य है।

8. प्रशासनिक कर्मचारियों के द ष्टिकोण में परिवर्तन
(Reorientation in the Attitude of Administrative Fnctionoaries)

प्रशानिक विकास का अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्य प्रशासन में कार्यरत प्रशासनिक कर्मचारियों के द ष्टिकोण में परिवर्तन लाना है। ताकि उन्हें विकासोन्मुख बनाया जा सके। अगर प्रशासनिक कर्मचारी विकास के प्रति उन्मुख होंगे तभी वे विकास प्रशासन के क्षेत्र में अपनी बेहतर भूमिका का प्रदर्शन कर सकते हैं। अतः विकास प्रशासन की सफलता के लिए प्रशासनिक कर्मचारियों के द ष्टिकोण में परिवर्तन अत्याधिक आवश्यक है।

प्रशासनिक विकास लाने हेतु तरीके
Means of Attaining Administrative Development

प्रशासनिक विकास, प्रशासन की संरचनाओं, प्रक्रियाओं, तौर तरीकों आदि में समानुकूल परिवर्तन का परिणाम है।

प्रशासन के इन विभिन्न पहलुओं में परिवर्तन लाने के लिए कुछ तरीके अपनाए जा सकते हैं जो निम्नलिखित हैं:-

1. नवीन तकनीकों का प्रयोग
(Application of New Techniques)

प्रशासन में पुरानी तकनीकों के स्थान पर आधुनिक तकनीकों का अधिक से अधिक इस्तेमाल प्रशासनिक विकास की प्राप्ति में काफी हद तक सहायक है। इन तकनीकों का इस्तेमाल प्रशासन की कमियों को दूर कर इसकी कमी क्षमता को बढ़ाने में कारगर सिद्ध होता है। कुछ आधुनिक तकनीकें जैसे कि कम्पयूटर, इन्टरनेट, ई-मेल आदि का प्रयोग प्रशासन की कार्यकुशलता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ये सब नवीन तकनीकें प्रशासनिक विकास को बढ़ावा देती है।

2. प्रशासनिक पुर्नगठन
(Administrative Reorganisation)

प्रशासनिक विकास के लिए प्रशासनिक ढ़ांचे में आवश्यक फेर बदल करके उसका पुर्ननिर्माण करना आवश्यक है ताकि उसे बदलते हुए परिवेश की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सके। प्रशासनिक पुर्नगठन के दौरान नए ढ़ांचे के अनुरूप कार्य प्रक्रियाओं एवं पद्धतियों का विकास किया जाता है। इसके साथ-साथ प्रशासनिक प्रणालियों को गतिमान एवं लचीला बनाया जाता है।

3. पुराने नियमों में परिवर्तन
(Change in the Old Rules)

प्रशासनिक विकास को बढ़ावा देने का एक तरीका प्रशासन के पुराने नियमों व कानूनों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन लाना है। प्रशासनिक प्रक्रियाएँ, पद्धतियाँ आदि बदलते हुए परिवेश के अनुरूप होने चाहिए। इसलिए प्रशासन के पुराने नियमों व प्रक्रियाओं को इस तरह परिवर्तित किया जाना चाहिए कि विकासोन्मुख परिवर्तन को बल मिल सके तथा सत्ता एवं शक्ति का प्रशासन में अनुकूल रूप में विकेन्द्रीकरण हो सके।

4. प्रशिक्षण व कार्य विशेषीकरण को बढ़ावा देकर
(More Stress on Training and Specialisation)

प्रशासनिक विकास, प्रशिक्षित मानवीय शक्ति एवं प्रशासन में अधिकाधिक विशिष्टीकरण पर निर्भर करता है। प्रशासन में कार्यरत कर्मचारियों को न केवल भर्ती के समय बल्कि समय -समय पर बदलते हुए समय की आवश्यकताओं को मध्धेनजर रखते हुए प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। यह प्रशिक्षण Refresher एवं Orientation कोर्सो के माध्यम से सम्भव है इसके अतिरिक्त प्रशासन में कार्य के अधिकाधिक विशेषीकरण पर जोर दिया जाना चाहिए अर्थात प्रशासन का प्रत्येक कार्य प्रशिक्षित व्यक्ति के द्वारा ही निष्पादित किया जाना चाहिए।

5. नवीन विचार पद्धति अपनाया जाना
(Adoption of New Idelolgy)

प्रशासन में नवीन विचारधारा एवं पद्धति का संचार भी प्रशासनिक विकास में अहमभूत भूमिका निभाता है। प्रशासन में समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं तथा परिवर्तित सन्दर्भो एवं मूल्य के अनुरूप कार्यशैली अपनाने के लिए नवीन विचारों का समावेश होना अति आवश्यक है। प्रशासन में नवीन विचार धारा का प्रवाह इसमें संकुचित सोच के स्थान पर अत्याधिक गतिशीलता एवं लोचशीलता को बढ़ावा देगा।

6. राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्ति
(Free from Political Interference)

राजनीति का प्रशासनिक मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप प्रशासनिक विकास को बढ़ावा देने के मार्ग में मुख्य बाधा है। प्रशासन एवं राजनीति का सम्बन्ध सामंजस्यपूर्ण रहे तथा दोनों अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करें। प्रशासनिक आधिकारियों के द ष्टिकोण एवं मूल्यों में बदलते हुए समय की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन लाया जाए। प्रशासनिक विकास के लिए यह आवश्यक है कि राजनेताओं का प्रशासनिक मामलों में कम से कम हस्तक्षेप हो ताकि प्रशासनिक कार्यक्षमता बाधित न हो।

7. प्रशासन में श्रम-विभाजन को बढ़ावा
(Division of Labour in Administration)

प्रशासन में श्रम विभाजन के सिद्धान्त को अपनाकर भी प्रशासनिक विकास को बढ़ावा दिया जा सकता हैं। श्रम-विभाजन से अभिप्रायः है कि किसी भी कार्य को छोटे से छोटे हिस्सों में बाँटा जाए तथा

प्रत्येक काम के हिस्से को एक विशेषज्ञ के द्वारा पूरा किया जाए। इसके लिए विशिष्ट योग्यता से युक्त उत्साही सेवी वर्ग का होना आवश्यक है।

प्रशासनिक विकास की समस्याएँ

(Problems of Administrative Development)

विकासशील देशों में प्रशासनिक विकास की निम्नलिखित समस्याएं हैं -

1. प्रशासन में नवीन-विचार भावना का अभाव,
2. तकनीकी दक्षता रखने वाले प्रशिक्षित प्रशासकों की कमी,
3. कार्य करने का परम्परागत तरीका,
4. अत्याधिक अनावश्यक गोपनीयता तथा पारदर्शिता का अभाव,
5. अभिप्रेरणा, पहल शक्ति, नवीन तकनीक आदि का अभाव,
6. प्रशासनिक कार्य में सहयोग एवं समन्वय की कमी,
7. आधुनिक तकनीक एवं अपर्याप्त संगठनात्मक प्रबन्ध,
8. पदोन्नित, सेवा सम्बन्धी शर्तो आदि का आकर्षक न होना,
9. भ्रष्टाचार का बढ़ता स्वरूप,
10. कागजी कार्यवाही को अधिक महत्व,
11. लालफीताशाही एवं अनावश्यक विलम्ब,
12. उत्तरदायित्व के प्रति उदासीनता एवं उससे बचने की प्रव ति आदि।

Chapter - 7
प्रशासनिक विकास एवं विकास प्रशासन में अन्तर
(Distinction between Development Administration and Administrative Development)

विकास प्रशासन एंव प्रशासनिक विकास आपस में गहरा सम्बन्ध है क्योंकि ये दोनों एक दूसरें के साथ घनिष्ठ रूप से जुढ़े हुए है। कभी - कभी लोग इन दोनों को एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप प्रयोग करत है। वस्तुतः इन दोनों में सूक्ष्म अन्तर है। इन दोनों में अन्तर स्पष्ट करने से पहले इनका अर्थ एंव आपस में सम्बन्ध की जानकारी आवश्यक है।

विकास प्रशासन, विकास व प्रशासन दो शब्दों के योग से बना है। विकास शब्द से अभिप्रायः किसी प्रशासन दो शब्दों के योग से बना है। विकास शब्द से अभिप्रायः किसी सामाजिक संरचना का प्रति की ओर बढ़ना हैं प्रशासन शब्द से तात्पर्य सरकार द्वारा जन-कल्याण सम्बन्धी मामलों का प्रबन्ध करने हेतु किए गए प्रयासों से है। इस प्रकार विकास प्रशासन अर्थ किसी देश के प्रशासन का उसके सामाजिक, आर्थि, राजनैतिक एंव सांस्क तिक विकास में अदा की जाने वाली भूमिका से है।

प्रशाासनिक विकास का अभिप्रायः प्रशासनिक तन्त्र की कार्यकुशलता सामर्थ्य एंव क्षमता का विकास करके उसे नवीन व परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप बनाना है ताकि वह विकासात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति कर सके। यह प्रक्रिया प्रशासनिक सुधार, प्रशासिनक प्रक्रिया में सुधार, प्रशासनिक कायदे-कानून का नवीनीकरण, प्रशासकों के द ष्टिकोण व सोच मे वास्तविक बदलाव लाने पर निर्भर करती है।

प्रशासनिक विकास के सम्बन्ध मे यह भाव अन्तनिर्हित है कि ," प्रशासन के परम्परागत रूप मे जो कमियाँ हो अथवा रिक्तता हो उसे दूर करके प्रशासन को नवीन परिवर्तित तथा विकासशील परिस्थितियों के अनुकूल बनाना।"

प्रशासनिक विकास एंव विकास प्रशासन में सम्बन्ध
Relationship between Administrative development and Development Administration

प्रशासन का विकास एंव का प्रशासन में शब्दों को हेर फेर होने के साथ-साथ दोनों में गहरा

1. अरोरा , रमेश तुलनात्मक लोकप्रशासन , राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर प० 125.
2. अवस्थी आनन्द प्रकाश , विकास प्रशासन लक्ष्मी अग्रवाल , आगरा 2002 प० 26.

सम्बन्ध हैं। कुछ विद्वान इन दोनों का विकास प्रशासन के ही दो आयामों के रूप में देखतें है। प्रोफेसर रमेश अरोरा का ऐसा ही मत है।उनके अनुसार, "विकास प्रशासन दो परस्पर सम्बद्ध अर्थो में प्रयोग होता हैं प्रथम, यह विकास कार्यक्रमों के प्रशासन तथा बड़े पैमाने के संगठनों विशेषतया सरकारी संगठनों द्वारा प्रयोग की गई विधियों एंव उनके वैकासिक लक्ष्यों को पूरा करने के लिए रचित नीतियों और योजनाओं के कार्यान्वन का उल्लेख करता हैं; दूसरे इसमें क्षमताओं को मजबूत करने का भाव सम्मिलित होता है। ये दोनों पक्ष, अर्थात् विकास का प्रशासन और प्रशासन का विकास , विकास प्रशासन की अधिकांश परिभाषाओं में संयुक्त हैं "।[1] इसी सम्बन्ध मे आनन्द प्रकाश अवस्थी का कहना है कि "विकास प्रशासन प्रशासनिक विकास को एक भीतरी प्रक्रिया के रूप में स्वतः मानकर चलता है"।[2]

विकास प्रशासन के इन दोनों पहलुओं के सम्बन्ध में प्रोफेसर रिग्स ने काफी हद तक स्पष्टता प्रदान करने की कोशिश की है। रिग्स के अनुसार विकास प्रशासन के इन दोनों पक्षों की परस्पर सम्बन्द्धता में अण्ड़े और मुर्गी के (chicken and egg relationship) समान कार्य कारण का भाव है । जैसे बिना मुर्गी अण्डा पैदा करना तथा बिना अण्डे मुर्गी पैदा करना सम्भव नहीं है, ठीक उसी प्रकार प्रशासन के विकास के बिना विकास का प्रशासन विकास के बिना प्रशासन का विकास सम्भव नहीं हैं अर्थात विकास का प्रशासन व एक का अस्तित्व दूसरे के बिना सम्भव नहीं हैं। इस प्रकार ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू है तथा इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। सामान्यतयाः प्रशासन में महत्वपूर्ण परिवर्तन पर्यावरण में परिवर्तन के बिना नही लाए जा सकते है। और पर्यावरण स्वंय जब तक परिवर्तित नहीं हो सकता जब तक कि विकास कार्यक्रमों के प्रशासन को सुद ढ़ नहीं किया जाता ।

प्रशासनिक विकास एंव विकास प्रशासन में अन्तर
Distinction between Administration Development and Development Adm

प्रशासनिक विकास एंव विकास प्रशासन में हांलाकि काफी गहरा सम्बन्ध है परन्तु ये दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं है। इन दोनों में अन्तर निम्न ढ़ंग से स्पष्ट किया जा सकता है-

अन्तर	विकास प्रशासन	प्रशासनिक विकास
1. कार्यक्षेत्र	विकास प्रशासन का क्षेत्र अधिक व्यापक है क्योंकि यह किसी देश के चहुमुखी विकास अर्थात् आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्क तिक आदि क्षेत्रों मे विकास करने के समय जुड़ा हुआ है।	प्रशासनिक विकास का क्षेत्र संकुचित एंव सीमित होता हैं क्योंकि यह केवल प्रशासनिक तन्त्र की सरंचनाओं एंव प्रक्रियाओं का विकास करने तक ही सम्बन्धित हैं।
2. प्रक ति	विकास प्रशासन की प्रक ति कार्योन्मुख, लक्ष्मोन्मुख, जनसहोयगी एंव जनकल्याणकारी है।	प्रशासनिक विकास की प्रक ति प्रशासनिक सूधारों एंव विकासें की होती हैं। इसका जन-सहयोग एंव जनकल्याण से सीधा सम्पर्क नहीं है।

Contd...

3. महत्व	विकास प्रशासन जनता से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होने के कारण, इसका महत्व सम्पूर्ण जीवन तथा समस्त देश के लिए होता है।	प्रशासनिक विकास महत्व प्रशानिक व्यवस्था तक ही सीमित होता है क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध प्रशासनिक तन्त्र के विकास और सुधार से है।
4.	यह "प्रशासन" द्वारा विकास है।	यह "प्रशासन का विकास" है।
5.	विकास प्रशासन, प्रशासनिक विकास को आधार प्रदान करता हैं	प्रशासनिक विकास , विकास प्रशासन की सफलता का आधार बनता हैं।

Chapter - 8

प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए संगठनात्मक एवं संस्थागत तरीके

(Organisational and Institutional Measures to enchance administrative capability)

प्रशासनिक सामर्थ्य, विकास प्रशासन का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिसकी प्रायः विकासशील देशों में अन्य संसाधनों की भांति प्रायः कमी देखने को मिलती है। किसी देश के सामाजिक-आर्थिक विकास एवं राष्ट्र निर्माण में प्रशासकीय सामर्थ्य का विशेष योगदान है। विकास सम्बन्धी प्रयासो की सफलता एवं असफलता दिशा में यह अत्याधिक आवश्यक है। क्योंकि इसके अभाव में विकासात्मक कार्यक्रमों एवं योजनाओं के उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव नहीं है। अतः प्रशासकीय सामर्थ्य को किसी राष्ट्र के बहुमुखी विकास के आवश्यक तत्व के रूप में देखा जाता है।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् प्रशासकीय सामर्थ्य सम्बन्धी पहलू विकासशील देशों के प्रशासन के सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय के रूप में उभरा क्योंकि इस समय पर विभिन्न राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्थओं के कार्यो में अपार व द्धि हुई। इसके साथ साथ आजादी के समय ये राष्ट्र अनेक समस्याओं से ग्रसित थे। इन चुनौतियों एवं समस्याओं का मुकाबला करने के लिए इन राष्ट्रों में ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था की आवश्यकता महसूस की गई जो विकास की गति को बल प्रदान कर सके। इस सम्बन्ध में पारम्परिक प्रशासन प्रक्रिया के स्थान पर लोचशील, सुव्यवस्थित एवं आधुनिक तकनीकी एवं प्रबन्ध से लैस प्रशासनिक व्यवस्था पर बल दिया गया। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक तन्त्र में विकासात्मक कार्यक्रमों, योजनाओं एवं परियोजनाओं को सफलतापूर्वक लागू करने के सम्बन्ध में समर्पण, वचनबद्धता एवं योग्यता जैसे तत्वों के विकास को भी प्राथमिकता दिए जाने की आवश्यकता पर बल दिया गया, ताकि प्रशासकीय सामर्थ्य को अधिकाधिक मात्रा में बढ़ाया जा सके। प्रोफेसर अवस्थी के अनुसार, "द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् प्रशासनिक आधुनिकरण को विकास प्रक्रिया का अविभाज्य अंग समझा जाने लगा है। नवीन कार्यो को करने की जटिलताओं का सामना करने की, नवीन समस्याओं का समाधान करने, संसाधनों आदि का आधुनिकीकरण करने की क्षमता उस प्रशासनिक योग्यता पर निर्भर करती है। जो संव द्ध व्यावसायिकता, आधिकारीतन्त्र, आधुनिकीकरण और प्रशासनिक प्रतिभा पर आधारित है।"[1]

प्रशासनिक सामर्थ्यः अर्थ एंव परिभाषा

Administrative capability: Meaning and Definition:

साधारण शब्दों में प्रशासकीय सामर्थ्य का अभिप्रायः प्रशासकीय प्रणाली के विकासत्मक उद्देश्यों को

1. अवस्थी, आनन्द प्रकास प्रशासन लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा 2002 प. 208.

प्राप्त करने की क्षमता से है।

Katz के अनुसार ," प्रशासनिक सामर्थ्य में विकास के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु सभी क्रियाओं , जिनकी तकनीकी तौर पर आवश्यकता है, को क्रियाशील बनाना, निर्धारित करना तथा संगठित करना सम्मिलित हैं।[1]

United Nations Publication के अनुसार प्रशासकीय सामर्थ्य का अर्थ, "संगठन द्वारा अभिष्ट परिणामों को प्राप्त करने की क्षमता से है।"[2]

प्रशासकीय सामर्थ्य बढ़ाने हेतु संगठनात्मक एवं संस्थागत प्रयास
Organisational and Institutional arrangements for enhancing Administration capablility

प्रशासन की सामर्थ्य का विकास करने की दिशा में कुछ संगठनात्मक एवं संस्थागत प्रयास किए जा सकतें हैं। संगठनात्मक प्रयास, प्रशासन के परम्परागत ढ़ांचे के विकास से सम्बन्धित हैं जबकि संस्थागत प्रयास, प्रशसनिक संस्थाओं के विकास या नई संस्थाओं के विकास से जुड़े हुए हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्नलिखित है -

(a) संगठनात्मक प्रयास
(Organisational arragements)

प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास के लिए प्रशासनिक ढ़ांचे का विकास आवश्यक है। इसकी आवश्यकता, विशेषकर भारत जैसे विकासशील देश जो लम्बे समय तक साम्राज्यवादी शाक्तियों के अधीन रहे हैं, में और भी अधिक बढ़ जाती है। इन देशों के प्रशासनिक ढ़ांचे में बदलते हुए परिवेश के अनुरूप फेर बदल आवश्यक हैं। ताकि प्रशासन के सामने खड़ी चुनौतियों का सामना किया जा सके इसके अतिरिक्त प्रशासनिक प्रक्रियाओं एवं कानूनों में भी समयानुसार आवश्यक बदलाव एवं उनका पुननिर्माण अत्यन्त अनिवार्य है। प्रशासन में संगठनात्मक परिवर्तन लाने के लिए निम्नलिखित प्रयास किए जा सकते हैं-

1. विकेन्द्रीकरण की प्रव ति को बढ़ावा
(Trend Towards Decentralisation)

प्रशासकीय सामर्थ्य का विकास प्रशासन में विकेन्द्रीकरण की प्रव ति को प्रोत्साहित करने पर निर्भर करता है। लगभग सभी विकासशील देशों में सता का केन्द्रीकरण प्रशासन की एक मुख्य विशेषता पाई जाती है जो उपनिवेशवाद की देन है। लेकिन बदलते हुए परिवेश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर सत्ता का विकेन्द्रीकरण अत्याधिक आवश्यक है। सत्ता का विकेन्द्रीकरण प्रशासनिक निर्णयों एवं नीति निर्माण प्रक्रिया में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करके बेहतर निर्णय एवं बढ़िया नीतियों के निर्माण में

---

1. Saul , M.Katz as quoted in Development Administration by R. K. Sapru, Deep and Deep publications, New Delhi, 1986, p. 113.

   "Administratative capablity for development involves the ability to mobilize, allocate and combine the actions that are technically needed to achieve development objectives"

2. United Nations publications as quoted in *Vikas Prssasham* by Anand Parkash Awasthi, Laxmi Narayan Agarwal, Agra, 2002 p 209

   Administrative capablity is . " the capacity to obtain inteded results through organisation."

कारगर सिद्ध होगा, जिसका असर प्रशासनिक सामर्थ्य पर सीधा रूप में पड़ेगा क्योंकि ये नीतियां एवं निर्णय लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप होंगे।

2. विशेषज्ञों की भूमिका पर बल
(Stress on the role of specialists)

विकास प्रशासन के सन्दर्भ में आधुनिक विकास एवं तकनीकी की भूमिका को नहीं नकारा जा सकता । आज विकास प्रशासन के क्षेत्र में आधुनिक तकनीकी एवं विज्ञान का प्रयोग अहमभूत हो गया है। इस बदलते हुए युग में, विकास प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में, आधुनिक तकनीकी एंव विज्ञान के अधिकाधिक प्रयोग हेतु विशेषज्ञों की भूमिका काफी महत्वपूर्ण हो गई है। हालांकि विकासशील देशों के प्रशासन में अभी भी विशेषज्ञों की बजाय सामान्यज्ञों का अधिक बोलबाला है। प्रशासन द्वारा कुछ विशेषज्ञों की नियुक्तियां आधुनिक युग की आवश्यकताओं के अनुरूप विभिन्न क्षेत्रों में की तो गई हैं लेकिन उनका प्रभाव विकासात्मक नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वन में बहुत कम दिखाई देता है। इन देशों में आज भी नीति निर्माण एवं उनके क्रियान्वन में सामान्यज्ञों का ही बोलबाला देखने को मिलता है। लेकिन प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास हेतु यह अत्यन्त अनिवार्य है कि सामन्यज्ञों के साथ विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों एवं नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में विशेषज्ञों को उचित स्थान दिया जाना चाहिए।

3. पदसोपान के स्तरों में कमी
(Reduction in the number of level of hierarely or modified Hierarehy)

पदसोपान संगठन का एक महत्वपूर्ण अंग है। लेकिन पदसोपान के स्तरों की संख्या प्रशासकीय सामर्थ्य के साथ सीधे तौर पर जुड़ी हुई है क्योंकि अगर इन स्तरों की संख्या अधिक होगी तो प्रशासन के निर्णय निर्माण केन्द्र एवं इसकी विभिन्न इकाईयों के बीच की दूरी बढ़ जाएगी। जिससे प्रधान कार्यालय एंव इकाई के मध्य सुचारू संचार व्यवस्था बाधित होगी । ऐसी संचार व्यवस्था के अभाव में न तो समयानुसार विकास प्रशासन के उद्देश्यों में आने वाले बदलाव को पूर्णरूप से निम्न अधिकारियों तक संचालित किया जात सकता है और न ही उच्च अधिकारी अपनी इकाईयों से जुड़ी आवश्यकताओं एवं समस्याओं को पूर्ण रूप से समझ सकेंगे । हालांकि भारत जैसे विकासशील देशों के प्रशासन में लम्बी पदसोपान व्यवस्था सम्बन्धी समस्या आज भी बनी हुई है। इस संगठनात्मक समस्या का शीघ्र अति शीघ्र निदान आवश्यक है ताकि इन देशों के प्रशासन की सामर्थ्य बढ़ाकर इन्हें अधिक क्रियाशील बनाया जा सके तथा विकासात्मक योजनाओं एवं कार्यक्रमों के उद्देश्यों की अधिकाधिक प्राप्ति की जा सके। अतः Modified hierarchy अर्थात् पदसोपान में कम से कम स्तर रखकर प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाया जा सकता है।

4. सत्ता का हस्तांतरण
(Delegation of Authority)

बड़े-बड़े संगठनों में सत्ता का हस्तांतरण आधुनिक समय की अमहभूत आवश्यकता है। ऐसे संगठनों के निन्त स्तरों पर अधिकारीगण हस्तांतरित सत्ता का उपयोग करते हैं। लेकिन आज भी विकासशील देशों के प्रशासन में सत्ता का हस्तातंरण बहुत कम मात्रा में पाया जाता है। इस प्रकार की प्रव ति इन देशों में उपनिवेशवाद के समय से ही चली आ रही है। क्योंकि उपनिवेशवाद के दौरान औपनिवेशक शासक इन देशों के अधिकारियों पर विश्वास नहीं करत थे, इसलिए वे इन्हें सत्ता हस्तांतरित करने में संकोच करते थे। लेकिन सत्ता के हस्तांतरण में संकोच की प्रव ति, जो उपनिवेशवाद के कारण जन्मी, आज भी इन देशों के प्रशासन में व्याप्त है इस ढ़ंग की संकुचित मानसिकता, विकास प्रशासन की सामर्थ्य के विकास में बहुत बड़ी बाधा है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि प्रशासन के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत कर्मचारियों को अधिक

से अधिक सत्ता हस्तांतरित की जाए ताकि ये विकास सम्बन्धी गतिविधियों को बढ़ावा देने के सम्बन्ध में पहल कर सकें । निम्न स्तर पर सत्ता का हस्तांतरण, विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों एंव योजनाओं के सफल संचालन एंव क्रियान्वयन में कारगर सिद्ध होगा, क्योंकि इससे प्रशासकीय सामर्थ्य को अधिकाधिक बढ़ावा मिलेगा।

5. स्टाफ एजेन्सियों के व्यवहार में बदलाव
(Reorientation of Staff Agencies)

प्रत्येक संगठन में कुछ स्टाफ एजेन्सियाँ पाई जाती हैं। स्टाफ एक ऐसी अभिकरण है जो उच्च श्रेणी के पदाधिकारी को सलाह देने का कार्य करता है और उसकी स्वंय की कोई क्रियात्मक जिम्मेदारी नहीं होती। यह उच्च अधिकारियों को परामर्श देने, सूचनाओं का सकंलन करने या अन्य महत्वपूर्ण कार्यो में सामान्य रूप से सहायता प्रदान करती हैं। योजना आयोग वित मन्त्रालय इसके मुख्य उदाहरण हैं। ये प्रक ति में पूर्ण रूप से सलाहकार एजेन्सियां होती है। लेकिन उपनिवेशवाद के दौरान भारत जैसे विकासशील देशों मे अंग्रेज इन स्टाफ एजेन्सियों का प्रयोग लाईन एजेन्सियों जैसे कि शिक्षा विभाग स्वास्थय विभाग आदि पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिए करते थे ताकि प्रशासन पर उनका आधिपत्य स्थापित रह सके। लेकिन आजादी के बाद भी इन विकासशील देशों मे स्टाफ एजेन्सियों की मानसिकता एवं व्यवहार में कोई खास बदलाव देखने को नहीं मिलता।

विकास प्रशासन की सामर्थ्य को बढ़ाने की दिशा में स्टाफ एजेन्सियों के व्यवहार में परिवर्तन अत्याधि ाक आवश्यक है। आज इन एजेन्सियों को अपनी कार्य सीमाओं में रहकर अपने आपको नीति सम्बन्ध ाी दिशा-निर्देशन तक ही सीमित रखना चाहिए। इन्हें लाइन एजन्सियों के साथ भरपूर सहयोग करने की आवश्यकता है ताकि विकासात्मक लक्ष्यों की अधिकाधिक प्राप्ति हो सके। इन एजेन्सियों की मानसिकता एवं व्यवहार में परिवर्तन भी प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाने में अहमभूत भूमिका निभा सकता है।

6. संगठनात्मक लक्ष्यों एंव मूल्य की स्पष्ट जानकारी
(To Generate awareness about Organisational goals & values)

विकास प्रशासन की सामर्थ्य के विकास हेतु विभिन्न संगठनों के विकास सम्बन्धी लक्ष्यों एवं मूल्यों की पूर्ण एवं स्पष्ट जानकारी प्रशासनिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों तथा जनता में होनी चाहिए। हालांकि इस ढ़ंग की स्पष्टता का अभाव विकासशील देशों के प्रशासन में देखने को मिलता है लेकिन अगर विकासात्मक संगठनों के लक्ष्य ही स्पष्ट नहीं होंगे तो उनकी प्राप्ति होना भी दुष्कर होगा।

7. प्रशानिक संगठनों के लक्ष्यों, नीतियों और क्रियान्वयन में समन्वय स्थापित करना
(To establish Coordination in the goals, policies and the implementation process of Differnet Administrative Organisations)

प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास की दिशा में विभिन्न प्रशासनिक संगठनों के मध्य तालमेल होना अति आवश्यक है। यह समन्वय इन संगठनों के उद्देश्यों , नीतियों एंव क्रियान्वयन प्रक्रिया के बीच स्थापति करने की आवश्यकता हैं आवश्यक समन्यवय के अभाव में ये संगठन cross purposes पर कार्य कर सकते हैं जिससे विकासात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव नहीं है। हालांकि भारत जैसे विकासशील देशों में इस ढ़ंग के समन्वय का प्रायः अभाव ही देखने को मिलता है। लेकिन प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाने के लिए आज इस बात की अत्याधिक आवश्यकता है कि विभिन्न प्रशासकीय संगठनों के लक्ष्यों, नीतियों एवं क्रियान्वयन प्रक्रिया में पूर्ण रूप से समन्वय हो।

8. मानवीय तत्व को उचित महत्व
(Adequate Importance to Human Element)

प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास की दिशा में मानवीय तत्व भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं इसलिए संगठन

में मानवीय पहलू को भी उचित महत्व प्रदान करना चाहिए। प्रशासन के सामने गम्भीर चुनौतियों का मुकाबला, प्रशासन में कार्यरत कर्मचारियों की योग्यता, प्रेरणा एवं उनकी कार्य सम्पादन क्षमता पर निर्भर करता है। इसके लिए कर्मचारी पद्धति में आवश्यक सुधार लाने जरूरी हैं।

9. पर्याप्त मानवीय तथा भौतिक संसाधन
(Availability of Sufficient Human and Material Resources)

संगठन में पर्याप्त मात्रा में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों की उपलब्धता भी, प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ावा देती है। संसाधनों के अभाव में विकास प्रशासन के लिए अपने कार्यक्रमों एवं योजनाओं के उद्देश्यों की प्राप्ति अत्यन्त कठिन है। इनकी प्राप्ति में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों की पूर्ण मात्रा में उपलब्धता ही कारगर सिद्ध हो सकती है।

10. प्रशासनिक प्रक्रियाओं का विकास
(Development of Administrative Procedures)

जटिल एंव उलझी हुए प्रक्रियांए, प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास में एक बहुत बड़ी बाधा है। इसके लिए इन प्रक्रियाओं का विकास एवं पुर्ननिर्माण आवश्यक है ताकि इन्हें सरल बनाया जा सके। भारत जैसे विकासशील देशों में जटिल प्रक्रियाएँ उपनिवेशवाद का परिणाम हैं क्योंकि उस समय पर इनका विकास ब्रिटिश संसद द्वारा किया गया थां लेकिन आजादी के बाद इन प्रक्रियाओं एवं कानूनों को विकासशील देशों में लगभग उसी रूप में अपनाया गया। इसके साथ-साथ स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इन देशों के प्रशासन की गतिविधियों में अत्याधिक व द्धि हो जाने के कारण, इनकी प्रक्रियाओं एवं तौर तरीकों की जटिलताओं में की ओर अधिक व द्धि हुई है। आज ये प्रक्रियाएं आम व्यक्ति की समझ से बाहर हैं तथा विकास प्रशासन के रास्ते की सबसे बड़ी बाधा बन गई हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि इन प्रक्रियाओं में विकास प्रशासन के बदलते हुए परिवेश को मध्येनजर रखते हुए आवश्यतानुसार परिवर्तन लाया जाए ताकि ये विकास प्रशासन द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में संचालित विकास कार्यक्रमों एवं योजनाओं के लक्ष्यों की प्राप्ति में अधिकाधिक सहायक हो सके। जिससे प्रशासकीय सामर्थ्य को बल मिल सकें। इसके अतिरिक्त अगर प्रशासनिक प्रक्रियाएं सरल होंगी तो विकास प्रशासन में अधिकाधिक जन सहभागिता को बढ़ावा मिलेगा जो प्रशासकीय सामर्थ्य के साथ सीधे रूप से जुड़ा हुआ है।

(b) प्रशासकीय सामर्थ्य हेतु संस्थागत प्रबन्ध
Institutional arrangements for enhancing adm-capability

प्रशासकीय सामर्थ्य को बढ़ाने की दिशा में कुछ संस्थाओं की स्थापना एवं विकास किया जा सकता हैं। क्योंकि संस्थाओं की सहायता से ही ये संस्थाएं जिसकी से प्रशासन अपने विकासात्मक कार्यक्रमों एवं योजनाओं के उद्देश्यों की प्राप्ति करने में सक्ष्म बन सकता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित संस्थागत प्रबन्ध किए जा सकते हैं

1. प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना
(Establishment of Training Institutes)

प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास के सम्बन्ध में प्रत्येक क्षेत्र में प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना एक कारगर कदम हो सकता है। आज बदलते हुए परिवेश की आवश्यकताओं के अनुरूप प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर प्रशिक्षित प्रशासकों का होना अति आवश्यक है। आज प्रशासक के कार्य की प्रक ति इतनी अधिक जटिल, तकनीकी एंव विशिष्ट प्रक ति की हो गई है कि लोक सेवक केवल विश्वविद्यालयों से प्राप्त डिग्री

के ज्ञान के आधार पर उनका सम्पादन नहीं कर सकते। अतः विकास प्रशासन की प्रक्रिया में संलिप्त कर्मचारियों की क्षमता बढ़ाने के लिए नवीन प्रशासनिक प्रक्रियाओं, तकनीकों आदि का प्रशिक्षण देना अनिवार्य है ताकि वे विभिन्न क्षेत्रों में चलाए गए विकासात्मक कार्यक्रमों के सफल संचालन में सक्ष्म हो सकें। अतः प्रशासनिक कर्मचारियों को कार्य एवं समय के अनुसार आधुनिकतम प्रशिक्षण देने की व्यवस्था का प्रबन्ध करना आवश्यक हैं इस सम्बन्ध में कुछ प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। ये संस्थान सेवापूर्व एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करके कर्मचारियों की कार्यक्षमता बढ़ाने में कारगर सिद्ध हो सकते हैं।

2. प्रशासकीय सुधार इकाईयों की स्थापना
(Institutionalisation of Administrative Reforms Units)

प्रशासकीय संगठनों की कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता के सम्बन्ध में सुझाव देने में सुधार लाने के लिए एवं संगठनात्मक कमियों को दूर करने हेतु, समय-समय पर कुछ आयोगो एवं समितियों का गठन किया जाता है। ये आयोग एवं समितियां अपनी रिर्पोट सरकार को पेश करती है। इनकी प्रक ति अस्थायी होने के कारण, इनका गठन बार-बार करना पड़ता है। लेकिन प्रशासनिक सुधार एक निरन्तर प्रक्रिया होने के कारण, विकास प्रशासन में इस बात पर बल दिया जाना चाहिए कि प्रशासकीय सुधार के लिए प्रत्येक विभाग में क्यों न स्थाई इकाईयों की स्थापना की जाए जो नक केवल प्रशानिक कर्मचारियों को उनकी त्रुटियों से अवगत कराएं बल्कि समयानुसार प्रशासकीय संगठनों की कार्य प्रक्रियाओं में सुधार हेतु प्रयासरत रहें। इस प्रकार ऐसी प्रशासकीय सुधार इकाईयों की स्थापना प्रशासनिक तन्त्र में समय-समय पर आवश्यक एवं आधारभूत सुधार परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

3. तकनीकी शोध संस्थानों की स्थापना
(Establishment of technical Reserach Institutes)

प्रशासन में प्रशासकीय सामर्थ्य एवे कार्यक्षमता का विकास काफी हद तक आधुनिक तकनीकों के प्रयोग पर निर्भर करता है। अतः विकास प्रशासन के बदलते हुए परिवेश में नवीन तकनीकों का विकास अनिवार्य है। इस सम्बन्ध में कुछ तकनीकी शोध संस्थानों की स्थापना की जानी आवश्यक है। ये संस्थान संगठन, कर्मचारी वर्ग, बजट एवं लेखा निर्माण, प्रत्यायोजन, समन्वय तथा पर्यवेक्षण आदि के सम्बन्ध मे शोधकार्य करके प्रशासनिक कार्य प्रणाली में नई-2 तकनीकों का विकास करके प्रशासन में कार्य सरलीकरण, गुण नियन्त्रण, आकंड़ा एकत्रीकरण इत्यादि में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

4. सूचना केन्द्रों की स्थापना
(Institutionalisation of Information Centres)

विकास प्रशासन के द्धारा निर्मित विकासात्मक कार्यक्रमों एवं नीतियों में सही आंकड़ों की उपलब्धता अत्यन्त आवश्यक है। इन्हीं आंकड़ों पर इन कार्यक्रमों एवं नीतियों की सफलता व असफलता निर्भर है। इस सम्बन्ध में प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर सूचना केन्द्रों की स्थापना महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। ये सूचना केन्द्र न केवल सरकार तक विभिन्न नीतियों के निर्माण हेतु सही आंकड़े उपलब्ध कराने में सहायक होंगे बल्कि विकासात्मक नीतियों एवं कार्यक्रमों के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के सम्बन्ध में विस्त त जानकारी भी जनता तक पहुंचाने में कारगर सिद्ध होंगे। इसके लिए छोटी-छोटी पुस्किाएँ, पत्रिकाएँ, पैम्फलेट आदि का प्रयोग कर सकते है।

5. कार्य निष्पादन के मूल्यांकन हेतु प्रशासकीय इकाईयों की स्थापना
(Estabishment of performancee Evaluation Administration Cell)

प्रशासकीय कार्यक्षमता एवं सामर्थ्य के विकास हेतु प्रशासकीय कार्य निष्पादन के मूल्याकंन हेतु कुछ प्रशासकीय इकाईयों की स्थापना करना अनिवार्य है। ये इकाईयाँ प्रशासन द्वारा संचालित कार्यक्रमों

एंव नीतियों के द्वारा प्राप्त किए गए उद्देश्यों का मूल्यांकन करती हैं। इस मूल्याकंन के दौरान यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उद्देश्य प्राप्त हुए या नहीं अगर प्राप्त हुए तो किस हद तक और नहीं हुए तो क्यों? ये इकाईयाँ प्रशासन में उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधक कारणों को जानने का प्रयास करती हैं तथा ये सूचनाएं प्रशासन को प्रदान की जाती हैं ताकि भविष्य में बनाए जाने वाले कार्यक्रमों में उन कमियों को दूर किया जा सके।

6. जनसमितियों एंव स्वैच्छिक संगठनों का बढ़ावा -

(To promote setting up of voluntary organisation & citizen's Councils)

प्रशासकीय सामर्थ्य एवं कार्यक्षमता के विकास की दिशा में जन-सहभागिता की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। विकास प्रशासन के द्धारा संचालित कार्यक्रमों एवं नीतियों के सफल क्रियान्वयन प्रशासन में जनता की अधिकाधिक भागीदारी पर निर्भर करता है। लेकिन प्रशासन में जनसमर्थन हासिल करने के लिए जन समितियों, संस्थाओं एवं स्वैच्छिक संगठनों का गठन व स्थापना अत्यन्त अनिवार्य है। ये संगठन जनता एवं सरकार की दूरियों को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। जिसके परिणामस्वरूप प्रशासन की कार्यक्षमता को बल मिलता हैं। अतः प्रशासकीय सामर्थ्य का विकास स्वैच्छिक संगठनों एवं Citizen's Councils जनसमितियों को ज्यादा से ज्यादा मात्रा में बढ़ावा देने पर निर्भर करता है।

प्रशासकीय सामर्थ्य के मार्ग में बाधाएँ
Obstacles in the way of Administrative capability

प्रशासकीय सामर्थ्य का मौलिक उद्देश्य प्रशासनिक संगठनों के निष्पादन स्तर को बेहतर बनाना है ताकि वांछित परिणामों की प्राप्ति की जा सके। परन्तु प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास के मार्ग मे निम्नलिखित बाधांए हैं-

1. निष्पादन का मूल्यांकन करना कठिन
(Difficulty in Perfomance Evaluation)

विकास प्रशासन द्धारा संचालित कार्यक्रमों एवं योजनाओं के निष्पादन का मूल्याकंन करना एक जटिल समस्या है क्योंकि सामाजिक कीमत एवं लाभों को मात्रा के रूप मे नहीं मापा जा सकता है। यही कारण है कि सही मायने में प्रशासकीय निष्पादन का मूल्यांकन करना कठिन कार्य है।

2. विकासात्मक कार्यक्रमों के उद्देश्यों की अस्पष्टता

(Unclarity of Dev. Programes)

विकासात्मक कार्यक्रमों एवं योजनाओं के उद्देश्यों की स्पष्टता का अभाव भी प्रशासकीय सामर्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। जब कार्यक्रमों के उद्देश्य ही अस्पष्ट होंगे तो उनकी प्राप्ति स्वतः ही दुष्कर होगी और ऐसे कार्यक्रमों के उद्देश्यों न्यायोचित नहीं होगा।

3. सरंचनात्मक समस्याएँ

(structure Problems)

प्रशासन का संगठनात्मक ढ़ांचा उसकी कार्यक्षमता व सामर्थ्य को प्रभावित करता है। प्रशासकीय सामर्थ्य के विकास हेतु संगठन का ढ़ांचा सरल एंव अनुकूल होना चाहिए। लेकिन विकास प्रशासन की सरंचनाओं में विकेन्द्रीकरण की प्रव ति एवं सत्ता हस्तांतरण का अभाव होने के कारण काफी जटिलताएं पाई जाती हैं जो प्रशासकीय सामर्थ्य की व द्धि में प्रतिकूल असर डालती हैं।

4. नागरिकों एवं प्रशासन के बीच उचित सम्बन्धों का अभाव
(Lack of healthy citizen Administration relationship)

प्रशासन की सामर्थ्य के विकास हेतु नागरिक एंव प्रशासन के मध्य मधुर सम्बन्धों का होना अति आवश्यक है। वास्तव में इन दोनों के मध्य उचित सम्बन्धों का अभाव देखने को मिलता है जो विकासशील देशों के प्रशासन की कार्यक्षमता एवं सामर्थ्य के विकास में काफी हद तक बाधक है।

5. प्रशासनिक कर्मचारियों में ईमानदारी का अभाव
(Lack of Integrity in Adm Staff)

प्रशासन की कुशलता, क्षमता एवं सामर्थ्य, उसके कर्मचारियों की सच्चाई व ईमानदारी पर निर्भर करती है। लेकिन विकासशील देशों के प्रशासन में प्रशासनिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों के स्तर पर भी ईमानदारी की भावना का अभाव पाया जाता है जो इनकी प्रशासकीय सामर्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालती है।

6. जनसहभागिता की कमी
(Lack of people 's Participation)

प्रशासन के विकासात्मक कार्यक्रमों में जन सहभागिता का अभाव भी प्रशासकीय कार्यक्षमता एवं सामर्थ्य पर प्रतिकूल असर डालता है। भारत जैसे विकासशील देशों के प्रशासन में जनसहभागिता का अभाव हर स्तर पर देखने को मिलता है।

Chapter - 9
विकास प्रशासन की इकोलॉजी
(Ecology of Development Administration)

विकास प्रशासन के संन्दर्भ में इकोलॉजी की अवधारणा का उदय त तीव विश्व के देशो में हुआ क्योंकि इकोलॉजी का इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। क्योंकि इकोलॉजी की अवधारणा का उदय द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की परिस्थितियों में हुआ इसलिए इस अवधारणा की चर्चा (Mention) परम्परागत लोक प्रशासन साहित्य में नहीं मिलता। दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात् नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं में उन सिद्धान्तों तथा नियमों का अभाव पाया गया जो कि विकसित देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं में पाए जाते हैं। इस कारण हम इन त तीय विश्व या विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के बारे में सार्वभौमिक सामान्य नियमों तथा सिद्धान्तों का उल्लेख नहीं कर सकते। इसके विपरित विकसित देशों के प्रशासन के सन्दर्भ में हम कुछ सर्वमान्य सिद्धान्तों जैसे Rule of Law, Chain of Command, Rational Bureaucracy इत्यादि का उल्लेख कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में कुछ ऐसे बाह्म तत्व या कारक पाए जाते हैं जो प्रशासन के साथ सतत् अन्तः क्रिया (intract) करते हैं और प्रशासन को प्रभावित करते हैं। प्रशासन को प्रभावित करने वाली इन बाह्म शक्तियों के समूह को प्रशासन की इकोलॉजी की संज्ञा दी गई है।

इकोलॉजी का उदगम् या विकास :-

इकोलॉजी की अवधारण का उदगम् स्त्रोत एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों को द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अमेरिका का तकनीकी-आर्थिक सहायता कार्यक्रम (Techno-Economic Assistane Programme) माना जाता है। इस सहायता कार्यक्रम के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि यह कार्यक्रम अपने उद्देश्य (विकासशी देशों का विकास) में सफल नहीं हुआ। अतः इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रदान की गई सहायता पर खर्च को अमेरिका में धन की बर्बादी मानते हुए विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करने की आवश्यकता अनुभव की गई क्योंकि इन कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व इन देशों के प्रशासन को ही दिया गया था। इस उद्देश्य से तुलनात्मक प्रशासनिक समूह (Comparatie Administration Group - CAG) का 1963 में American Society for Public Administration (ASPA) की एक समिति के रूप में गठन किया। इस समूह के पहले अध्यक्ष Prof. F. W. Riggs बने तथा वह 1970 तक इस पद पर बने रहे। फोर्ड फाउन्डेशन ने इस समूह को आरम्भ में आर्थिक सहायता प्रदान की और इसी के आधार पर समूह ने विकासशील देशों में अपनी अध्ययन गतिविधियाँ चलाई। समूह ने अध्ययन के लिए थाईलैण्ड, फीलीपीन्स, वियतनाम, दक्षिण कोरिया आदि एशियाई देशों को चुना और समूह के विभिन्न शोधकर्ताओं तथा विद्वानों इन देशों में जाकर उनकी प्रशासनिक व्यवस्थाओं का अध्ययन किया। इनमें थाईलैण्ड समूह की अध्ययन गतिविधियों का मुख्य केन्द्र रहा तथा फ्रैड डब्ल्यू रिग्स ने यहाँ पर अपने अध्ययन

के आधारपर "Thai - Model of Bureaucracy" का विकास किया और इसके आधार पर ही रिग्स ने अपने बाद के अध्ययन किए तथा मॉडल विकसित किए। वास्तव में समूह (CAG) के विद्वानों द्वारा किए गए अध्ययनों का मुख्य प्रयास त तीय विश्व की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में सिद्धान्त प्रतिपादित (Theory Buinding) करना था। सिद्धान्त प्रतिपादन की प्रक्रिया में विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करते समय समूह के विद्वानों ने पाया कि इन देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाएं विकसित देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं से काफी भिन्न थी। समूह के विद्वानों ने यह भी पाया कि त तीय विश्व की प्रशासनिक व्यवस्थाओं मे कुछ ऐसी शक्तियाँ या कारक या तत्व विद्यमान हैं जो कि यद्यपि प्रशासन के अधिकार क्षेत्र (Scope) से बाहर हैं तथापि प्रशासन को गहरे से प्रभावित करती हैं। अब इन विद्वानों का प्रमुख लक्ष्य प्रशासन को प्रभावित करने वाली इन शक्तियों की पहचान करना था क्योंकि इन शक्तियों (जिन्हें सामूहिक रूप में प्रशासन की इकोलॉजी कहा गया) की पहचान करने तथा उनका लोक प्रशासन पर प्रभाव जानने के पश्चात् ही त तीय विश्व की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में सिद्धान्त प्रतिपादित किया जा सकता था।

इकोलॉजी की विषय-वस्तु :-

विकास प्रशासन की इकोलॉजी की विषय वस्तु जटिल है। इसका कारण यह है कि विकास प्रशासन के सन्दर्भ में यह अवधारणा प्राक तिक या पर्यावरण विज्ञानों से ली गई है तथा सामाजिक विज्ञान के ऊपर लागू की गई है। अतः इस अवधारण में दो अलग-अलग विज्ञानों का समावेश हुआ है। इसके अतिरिक्त, सामाजिक विज्ञानों में भी इकोलॉजी केवल लोक प्रशासन की शब्दावली पर ही निर्भर नहीं रही है अपितु सामाजिक, सांस्क ति, राजनैतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक अनेक प ष्ठभूमियों का प्रभाव स्पष्ट रूप से इकोलॉजी पर देखने को मिलता है। इन सब कारणों से इकोलॉजी की अवधारणा बहुत ही जटिल एवं व्यापक बन गई।

अब प्रश्न यह उठा कि जब इकोलॉजी इतनी विस्त त अवधारण है तो फिर इसके अन्तर्गत कौन-कौन सी शक्तियाँ (मुख्य रूप से) आती है जिनका अध्ययन किया जाए। इस सन्दर्भ में Prof. Riggs ने सुझाव दिया कि यद्यपि विकास प्रशासन को अनेक बाह्य शक्तियाँ प्रभावित करती हैं तथापि इन सभी शक्तियों का इकोलॉजी की अवधाराणा में समावेश व अध्ययन सम्भव नहीं हैं। इसलिए Prof. Riggs ने इकोलॉजी की अवधारणा के अन्तर्गत आने वाली बाह्य शक्तियों को सीमित करते हुए केवल राजनीति, संस्क ति, संचार (Communication), भाषा तथा अर्थव्यवस्था को ही सम्मिलित किया क्योंकि Riggs का विचार था कि ये सभी शक्तियां विकास प्रशासन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं तथा इसलिए विकास प्रशासन को इकोलॉजी में इनका समावेश व अध्ययन आवश्यक है।

(1) राजनीति :-

विकास प्रशासन को प्रभावित करने वाले बाह्य तत्वों में सार्वधिक महत्वपूर्ण है राजनीति। इसका कारण यह है कि लोक प्रशासन को राजनीति के अन्तर्गत रह कर कार्य करना होता है तथा राजनीति ही लोक प्रशासन की दिशा, परिधि, कार्यक्षेत्र इत्यादि का निर्णय करती है। अतः राजनीति लोक प्रशासन को प्रभावित करने वाल तत्वों अर्थात विकास प्रशासन की इकोलॉजी के तत्वों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है। राजनीति के अध्ययन में मुख्य रूप से इसके संगठन, संरचनाएं, प्रक्रियाएं तथा राजनीतिक मूल्यों का विस्तार पूर्वक अध्ययन करना तथा इन सबकी विकास प्रशासन की कार्यवाही के सम्बन्ध में महत्ता स्थापित करना अनिवार्य है।

(2) संस्क ति :-

राजनीति के पश्चात् इकोलॉजी का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व या कारक उस देश की संस्क ति है जिसका कि उस देश के विकास प्रशासन के साथ सीधा या प्रत्यक्ष सम्बन्ध है तथा जोकि उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। संस्क ति का अध्ययन करते समय भी संस्क ति के विभिन्न भागों तथा भौतिक

संस्क ति, बौद्धिक संस्क ति तथा आध्यात्मिक संस्क ति का अध्ययन अनिवार्य है । इसके साथ ही संस्क ति के इन विभिन्न पहलुओं का विकास प्रशासन के साथ सम्बन्ध तथा उसके ऊपर प्रभाव का अध्ययन करना भी आवश्यक है क्योंकि संस्क ति तथा प्रशासन का सम्बन्ध स्थापित किए बिना केवल संस्क ति का अध्ययन इकोलॉजी के सन्दर्भ में अर्थहीन होगा।

(3) संचार
(Communication System):–

विकास प्रशासन की इकोलॉजी के अध्ययन में एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व या कारक संचार व्यवस्था है। एक देश की संचार व्यवस्था का प्रशासन के सन्दर्भ में बहुत महत्व है। संचार व्यवस्था के अन्तर्गत हमें यह अध्ययन करना होता है कि विभिन्न अनुभवों को एक स्थान से दूसरे स्थान तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी (From on generation to another generation) या एक सामाजिक व्यवस्था से दूसरी सामाजिक व्यवस्था तक किस प्रकार पहुंचाया जाता है। इन अनुभवों का लोक प्रशासन में बहुत महत्व है क्योंकि प्रशासन भूतकाल में तथा अन्य स्थानों पर हो रहे कार्यो या गतिविधियों से बहुत कुछ सीखता है। और इन अनुभवों को पहुंचाने का माध्यम संचार व्यवस्था है। इसलिए संचार व्यवस्था विकास प्रशासन की इकोलॉजी का एक महत्वपूर्ण कारक या तत्व है।

4) भाषा :–

भाषा का अध्ययन भी विकास प्रशासन की इकोलॉजी के अन्तर्गत अति महत्वपूर्ण है क्योंकि एक देश की भाषा वहाँ के विकास प्रशासन की कार्यशैली को गहरे से प्रभावित करती है। भाषा के द्वारा एक देश के नागरिकों का प्रशासन और प्रशासनिक अधिकरियों का नागरिकों के प्रति द ष्टिकोण को प्रदर्शित करता है। उदाहरणार्थ भारत के सन्दर्भ में अनेकों बार प्रशासनिक अधिकारियों को नागरिक 'माई बाप' कहकर सम्बोधित करते है। इससे प्रशासनिक अधिकारियों की कार्यशैली एवं भाषा दोनों ही अधिकारिक (Authoriatative) हो जाती हैं। अतः विकास प्रशासन की कार्यशैली का अध्ययन करने के लिए वह आवश्यक है कि वहां पर प्रचलित भाषा का अध्ययन किया जाए।

(5) अर्थव्यवस्था :–

एक देश की अर्थव्यवस्था वहाँ के विकास प्रशासन को प्रभावित करने वाला एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व है और इसलिए विकास प्रशासन की इकोलॉजी का एक महत्वपूर्ण घटक है। अर्थव्यवस्था का प्रशासन के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है तथा वह प्रशासन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। उदाहरणतः एक देश के भौतिक संशाधन, तकनीकी विशेषज्ञता, पूंजी की उपलब्धता, तकनीकी ज्ञान तथा आधारिक संरचना आदि एक देश की अर्थव्यवस्था के उत्पादन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक या घटक हैं और उत्पादन व्यवस्था पर प्रशासन बहुत कुछ निर्भर करता है। उत्पादन जितना अधिक होगा प्रशासन के लिए विकास कार्यो को सम्पन्न करना उतना ही अधिक आसान होगा क्योंकि अधिक उत्पादन का तात्पर्य है अधिक पूंजी निर्माण।

इकोलॉजी का महत्व :-

विकास प्रशासन के संदर्भ में इकोलॉजी की अवधारण का बहुत अधिक महत्व है। इस अवधारण के उदय से लोक प्रशासन के क्षेत्र में परम्परागत सिद्धान्तों की सार्वभौमिकता का दावा खोखला सिद्ध हो गया तथा यह सिद्ध हो गया कि ये सिद्धान्त विकासशील देशों के सन्दर्भ में लागू नहीं होते। इसके साथ ही इकोलॉजी की अवधारणा ने विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं को केन्द्र बिन्दु बनाकर उनका अध्ययन अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण बना दिया जबकि इससे पहले सभी परम्परागत अध्ययन विकसित देशों के सन्दर्भ में किए जा रहे थे। इसके अतिरिक्त प्रशासनिक चिन्तकों एवं विद्वानों की विकासशील देशों की प्रशासनिक व्यवस्थाओं के सन्दर्भ में जिज्ञासा भी बढ़ा दी और विकासशील

देशों के लोक प्रशासन के सन्दर्भ में सार्वभौमिक तथा सर्वमान्य सिद्धान्तों को प्रतिपादित करने की प्रक्रिया को गति प्रदान की।

इकोलॉजी की अवधारणा ने विकास प्रशासन के क्षेत्र को व्यापक तथा जटिल बना दिया और इस अर्न्त-विषयी भी बना दिया। इसका कारण था इकोलॉजी का प्राक तिक या पर्यावरण विज्ञानों से सामाजिक विज्ञानों मं incorporation अतः विकास प्रशासन में इकोलॉजी के अन्तर्गत न केवल प्राक तिक विज्ञानों की शब्दावली का प्रयोग हुआ अपितु अनकों अन्य सामाजिक विज्ञानों में प्रयोग होने वाली शब्दावली का भी प्रयोग हुआ।

इकोलॉजी की अवधारणा ने विकास प्रशासन को अर्न्त-विषयी बनाने के साथ-साथ तुलनात्मक भी बना दिया। विकास प्रशासन को किसी एक देश नहीं अपितु विभिन्न देशों और वह भी विकासशील देशों (जो कि स्वयं में ही काफी जटिल व्यवस्थाएं हैं) के सन्दर्भ में अध्ययन को बढावा दिया।

Chapter - 10

प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया (Politics-Administration Interaction)

सामान्यतः प्रशासन की और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया का सतही-स्तर (At the level of manifestation) पर अध्ययन करने की प्रव ति रहती है जबकि यह अन्तःक्रिया सतही-स्तर तक सीमित नहीं होती। इस अन्तःक्रिया की जड़े सामाजिक व्यवस्था में पाई जाती हैं। दूसरें शब्दों में हम कह सकते हैं कि प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया की विषयवस्तु और प्रक ति दोनों ही सामाजिक व्यवस्था के स्तर पर निर्धारित होती है। किसी भी देश के राजनीतिक व्यवस्था को उसे देश की सामाजिक व्यवस्था के द्वारा स्वरूप प्रदान किया जाता है। अतः जब तक हम एक देश की सामाजिक व्यवस्था की उन शक्तियों (Forces) का अध्ययन नहीं करते जो देश की राजनीतिक व्यवस्था को स्वरूप प्रदान करती हैं तब तक हम वहाँ के प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया को समझने में असमर्थ रहेंगे।

हर समान में कुछ समूह तथा वर्ग (उदाहरणार्थ क षक वर्ग, औद्योगिक वर्ग, मध्यम वर्ग आदि) पाए जाते हैं जिनके कुछ हित (Interests) होते हैं। ये सभी वर्ग तथा समूह सामाजिक व्यवस्था के भाग होते हैं तथा मिलकर सामाजिक व्यवस्था का निर्माण करते हैं तथा अपने-अपने हितों की पूर्ति के लिए राजनीति पर दबाव बनाते हैं। इन सभी वर्गो के हितों का एकीकरण (Integration) होता है तथा इस प्रक्रिया में सभी वर्गो के हित समानता और असमानता के आधार पर एक दूसरे के साथ organically जुड़ जाते हैं और अन्ततः प्रव तियों के रूप में उभर कर राजनीतिक व्यवस्था के ऊपर दबाव बनाते हैं। यदि भारत के सन्दर्भ में देखें तो हम पाते हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही सामाजिक स्तर पर दो प्रमुख प्रव तियाँ विद्यमान रही हैं। जहाँ तक परिवर्तन और विकास का प्रश्न है, ये दोनो ही प्रव तियाँ इसकी पक्षधर हैं। इसमे भी कोई सन्देह नहीं कि दोनों ही प्रव तियाँ नियोजित विकास की पक्षधर हैं। किन्तु जहाँ पहली प्रव ति सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को नियोजन की परिधि में लाने की पक्षधर है वहीं दूसरी प्रव ति इस विचार का विरोध करती है। दूसरी प्रव ति के अनुसार विकास की सीमाएँ नियोजन की सीमाओं के साद श्य (Congruent) नहीं होनी चाहिए। अर्थात विकास की परिधि ा नियोजन की परिसीमाओं के बाहर भी होनी चाहिए और विकास की प्रक्रिया में सार्वजनिक क्षेत्र के साथ-साथ निजि क्षेत्र की भी भूमिका होनी चाहिए। पहली प्रव ति को हम समाजवाद का ओर झुकी हुई (Leaning Towards Socialism) प्रव ति की संज्ञा दे सकते हैं जबकि दूसरी प्रव ति को पूँजीवाद की ओर झुकी हुई (Leaning Towards Capitalism) प्रव ति कहा जा सकता है। अतः स्पष्ट हो जाता है कि इन दोनों प्रव तियों में विकास की प्रक्रिया के सम्बन्ध में वैचारिक मतभेद रहा है। किन्तु ये दोनों ही प्रव तियों स्वतन्त्रता प्राप्ति से अब तक राजनीति पर निरन्तर दबाव बनाए हुए हैं तथा प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया को मूलतः इन्ही दोनों प्रव तियों के राजनीति के ऊपर प्रभाव के सन्दर्भ मे समझा जा सकता है।

इस प ष्ठभूमि में हम भारत में प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया का (अन्तःक्रिया की प्रक ति और विशेषताओं के आधार पर) अध्ययन निम्न चार चरणों (Phases) में विभाजित करके कर सकते

है :

1. स्वतन्त्रता प्राप्ति से 1960 के दशक के पूवार्द्ध (विशेषतौर पर 1963-64) तक।
2. 1960 के दशक के मध्य से 1970 के दशक की समाप्ति तक।
3. 1980 के दशक के आरम्भ से 1990 के दशक के आरम्भ तक।
4. 1900 के दशक के आरम्भ से अब तक।

अब हम चारों चरणों में प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया के स्वरूप, प्रक ति और विशेषताओं का वर्णन करेंगें।

प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया : प्रथम चरण

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के प्रमुख सूत्रधार, जिन्होंने देश को स्वतन्त्र करवाने के लिए अनेकों बलिदान दिए, त्याग किए व अग्रेजों के अत्याचार सहे, स्वतन्त्र भारत में राजनीतिक कर्णधार बने। इन राजनीतिज्ञों में देश सेवा की भावना व विशेष जोश और उत्तेजना थी। उस समय के राजनीतिक निर्देशन में भारतवर्ष को सम द्ध, महान व स्वावलम्बी बनाने की द ढ़ इच्छाशक्ति थी। विकास और राष्ट्र-निर्माण की भावना स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही आरम्भ हुए राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया के प्रथम चरण की धुरी बने। अन्तःक्रिया के प्रथम चरण की प्रमुख विशेषताए निम्नलिखित थी :-

(1) प्रशासन के द ष्टिकोण परिवर्तन की समस्या :–

राजनीतिक स्तर पर इस बात की पूरी अनुमति थी कि जो प्रशासनिक व्यवस्था हमें विरासत में मिली उसका उदय एवं विकास औपनिवेशिक आवश्यकताओं के अनूकूल हुआ एवं वह संरचनात्मक एवं कार्यात्मक दोनों ही रूपों में लोकतान्त्रिक मूल्यों तथा आवश्यकताओं के लिए सर्वथा अनुपयुक्त थी। अंग्रेजों ने भारत में यह प्रशासनिक व्यवस्था स्वतन्त्रता आन्दोलन को दबाने तथा लोगों में अंग्रेजी राज के प्रति डर पैदा करने - ताकि वे क्रान्तिकारियों का साथ न दें - के लिए स्थापित की थी। इस व्यवस्था में सेवा-भाव, जो कि लोक प्रशासन का मूल तत्व है, लेशमात्र भी नहीं था। अतः यह आवश्यक था कि इस प्रशासनिक व्यवस्था को राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में सहायक बनाने के लिए प्रशासनिक पदाधिकारियों में द ष्टिकोणात्मक परिवर्तन लाया जाए।

(2) सत्तारुढ़ दल में मतभेद :–

यद्यपि भारत के पहली पीढ़ी के राजनीतिज्ञ देश सेवा की भावना से ओतप्रोत थे किन्तु वे दो परस्पर विरोधी गुटों में बंटे हुए थे। एक ओर प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू के नेत त्व में प्रगतिवादी (Progressive) गुट था और दूसरी ओर उतना ही शक्तिशाली अप्रगतिवादी (Conservative) गुट था जिसमें भारत के पहले ग ह मंत्री सरदार वल्लभाई पटेल के अतिरिक्त गोविन्द वल्लभ पंत, गुल्जारी लाल नन्दा आदि प्रभावशाली व्यक्तित्व थे। इन दोनों गुटों के बीच वैचारिक मतभेद था। राजनीतिक स्तर पर इस मतभेद का प्रत्यक्ष प्रभाव उस चरण की राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया पर स्पष्ट देखने को मिला। उदाहरण के तौर पर प्रगतिवादी गुट प्रशासनिक व्यवस्था को लोकतान्त्रिक मूल्यों के अनुरूप बनाने के लिए प्रशासन में कुछ आधारभूत परिवर्तन लाने पर बल दे रहा था जबकि अप्रगतिवादी गुट इसका विरोध कर रहा था। इस राजनैतिक विरोध के परिणामस्वरूप प्रशासन में द ष्टिकोणात्मक परिवर्तन लाने की प्रक्रिया अवरूद्ध हो गई। यद्यपि प्रशासन में आधारभूत संरचनात्मक और कार्यात्मक परिवर्तन लाने हेतु कुछ प्रयास किए गए किन्तु मौटे तौर पर प्रशासन का पुराना स्वरूप ही विद्यमान रहा। वास्तव में इस राजनैतिक मतभेद के चलते भारतीय प्रशासन नूतन और पुरातन का बेमेल मिश्रण बन गया।

(3) सशक्त नौकरशाही :–

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व अंग्रजों ने भारत को अनेकों आधारों (धर्म, जाति, क्षेत्रीयता आदि) पर विभाजित करने का प्रयास किया जिसमें वे काफी हद तक सफल रहे। उदाहरणतः उन्होनें प्रशासकीय पदाधिकारियों को एक अभिजात वर्ग के रूप में विकसित किया तथा उनमें ऐसे मूल्य (Values) विकसित किए कि प्रशासकीय पदाधिकारी भारतीय होकर भी भारतीयों से न केवल अलग-थलग रहें अपितु उन्हें तुच्छ और हेय भी समझें। इसके लिए अंग्रजों ने प्रशासकीय पदधिकारियों की भर्ती में धर्म और जाति को विशेष महत्व दिया और उंची जातियों को अधिक महत्व दिया। इसके अतिरिक्त नए भर्ती हुए पदाधिकारियों को प्रशिक्षण के समय उनकी कुलीनता (Royal Blood) का एहसास करवाया जाता और लोगों से घुलने-मिलने की अपेक्षा उनसे अलग-थलग रहने के लिए भी प्ररित किया जाता। यही कारण था कि भारतीय नौकरशाही को 'कठोर जातिगत नौकरशाही' (Caste- Iron Bureaucracy) की संज्ञा दी गई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भी नौकरशाही का द ष्टिकोणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ अर्थात उसकी जीवन प्रणाली और मूल्य प्रणाली अपरिवर्तित रही इसी कारण उसकी मानसिकता feudal ही रही। परिणामस्वरूप स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के परिद श्य में नौकरशाही एक शक्तिशाली वर्ग बन गया जो कि सामाजिक-आर्थिक विकास के मार्ग में सहायक होने की अपेक्षा बाधक बन गई।

(4) परस्पर नकारात्मक भावना :-

अन्तःक्रिया के प्रथम चरण की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता उस समय के राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों में एक दूसरे के प्रति अविश्वास की भावना थी। एक ओर जहां नौकरशाही राजनीतिज्ञों को नीति-निर्माण के कार्य में अयोग्य समझती थी वहीं दूसरी ओर राजनीतिज्ञ नौकरशाही को नीति क्रियान्वयन के प्रति निष्ठावन नहीं मानते थे। वास्तव में अधिकतर राजनीतिज्ञों, विशेष तौर पर मध्यम और निचले स्तर पर, के अनुसार तो नौकरशाही स्वार्थ-सिद्धि के कार्य में लगी हुई थी। राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों में एक दूसरे के प्रति इस प्रकार की नकारात्मक और अविश्वास की भावना के कारण सामाजिक-आर्थिक विकास के अधिकतर कार्यक्रम निष्फल ही गए।

(5) नौकरशाही के हाथों में शक्ति का केन्द्रीयकरण :-

स्वतन्त्रता के बाद आर्थिक विकास राज्य के समक्ष एक प्रमुख समस्या थी। किन्तु आर्थिक विकास के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बड़े स्तर पर पूँजी निवेश की आवश्यकता था जो ना तो सरकार के पास उपलब्ध थी और न ही नीजि उद्यमियों के पास। अतः विकास के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था के सिद्धान्त को अपनाया गया जिसके अन्तर्गत सरकार तथा निजि उद्यमियों दोनों की ही अहम भूमिका निभानी थी। एक ओर निजि क्षेत्र था जिसमें निजि उद्यमियों को उद्योग-धन्धे लगाने की अनुमति थी। किन्तु प्रशासन को निजि क्षेत्र को नियन्त्रित करने के लिए आवश्यकतानुसार कोई भी दिशा-निर्देश जारी करने का अधिकार था। दूसरी ओर सार्वजनिक क्षेत्र पूरी तरह प्रशासन के अधीन था। सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरशाहों को नियुक्त किया गया। सार्वजनिक क्षेत्र के इन उपक्रमों के प्रबन्धन, प्रशासन, नीति-क्रियान्वयन आदि से सम्बन्धित सभी अधिकार नौकरशाही के पास आ गये। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र के सम्पूर्ण प्रबन्धन और निजी क्षेत्र के सम्बन्ध में दिशा-निर्देश जारी करने की शक्ति के कारण नौकरशाही के पास शक्तियों का केन्द्रीकरण हो गया। उपयुक्त एवं प्रभावशाली नियन्त्रण के अभाव में नौकरशाही में शक्तियों के इस केन्द्रीयकरण ने शक्तियों के दुरूपयोग की सम्भावनाओं को जन्म दिया। वास्तव में नौकरशाही का इन शक्तियों का दुरूपयोग, अन्य कारणों के साथ-साथ, दूसरी पंच वर्षीय योजना की असफलता का प्रमुख कारण बना।

(6) कार्यकुशल नौकरशाही की आवश्यकता :-

दूसरी पंचवर्षीय योजना की विफलता के पश्चात् कार्यकुशल एवं ईमानदार नौकरशाही की आवश्यकता

पर बल दिया जाने लगा। विपक्षी दलों के साथ-साथ सत्तारूढ़ दल में भी नौकरशाही को कार्यकुशल एवं ईमानदार बनाने की योजना को बल मिला। सत्तारूढ़ दल एवं सरकार में प्रगतिवादी गुट ने एक बार फिर से नौकरशाही के द ष्टिकोण में आधारभूत परिवर्तन लाने की आवश्यकता जताई। किन्तु अप्रगतिवादी गुट ने इस विचार को नकारते हुए कहा कि प्रशासन में कार्यकुशलता लाने के लिए आधारभूत परिवर्तनों की आवश्यकता नहीं है और अन्ततः इन दोनों प्रव तियों के परस्पर विरोधी विचारों के कारण प्रशासन को एक नया द ष्टिकोण प्रदान कर उसमे मूल्यात्मक, संरचात्मक, प्रक्रियात्मक, और व्यवहारत्मक परिवर्तन लाने का प्रयास एक बार फिर विफल हो गया।

(7) प्रशासन और राजनीति में बढ़ता गठजोड़ :-

प्रशासन-राजनीति अन्तःक्रिया के प्रथम चरण में एक अन्य विशेषता थी राजनीति के उच्च एवं मध्यम स्तर के नेताओं एवं प्रभावशाली नौकरशाहों के बीच गठजोड़ बनना। अपने निहित स्वार्थो की पूर्ति हेतु कुछ राजनेताओं और नौकरशाहों ने अपने इन रिश्तों को भुनाना भी आरम्भ कर दिया। उदाहरण के तौर पर प्रधानमंत्री पण्डित नेहरु के श्री क ष्ण मेनन की सिफारिश पर श्री जी.एस. बाजपाई को विदेश विभाग से प्रधान मंत्री सचिवालय में नियुक्ति पर काफी बावेला मचा। इसी प्रकार एक कैबिनेट मंत्री श्री रफी अहमद किदवइ ने मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र देने की धमकी दे डाली जब उनके चहेते कुछ अकार्यकुशल किन्तु प्रभावशाली नौकरशाहों के स्थानान्तरण का निर्णय लिया गया।

राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया का दूसरा चरण

राजनीति और प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया का दूसर चरण 1960 के दशक के मध्य से आरम्भ होकर 1970 के दशक के अन्त तक चला। प्रथम चरण की तुलना में इस चरण की अन्तःक्रिया का क्षेत्र और प्रक ति दोनों ही बदले हुए थे। यद्यपि पहली और तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं में क षि विकास को महत्व दिया गया और इन योजनाओं के अन्तर्गत पर्याप्त क षि विकास हुआ भी किन्तु बढ़ती हुई जनसंख्या ने इन सब उपलब्धियों को नकारा कर दिया और 1960 के दशक के मध्य तक भारत में खाद्यान्नों के अभाव की समस्या गम्भीर रूप ग्रहण कर चुकी थी। साथ ही खाद्यान्नों कें मामले में विदशों पर निर्भर भी नहीं रहा जा सकता था क्योंकि चीन के अतिक्रमण और 1965 के भारत-पाक युद्ध के समय भारत के मित्र राष्ट्रों ने भी आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति रोक दी थी। इसीलिए खाद्यान्नों के मामले में स्वालम्बी बनने पर विशेष बल दिया गया।

क षि उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रशासन के द्वारा पहला संगठित प्रयास 1960-61 में 'गहन क षि-जिला कार्यक्रम (IADP) के रूप में किया गया। किन्तु उस समय यह पायलट परियोजना मात्र सात चुन्निदा जिलों में आरम्भ की गई थी। इस परियोजना की सफलता से प्रभावित होकर 1965 (अक्तूबर) में प्रशासन ने इसे 'गहन क षि-क्षेत्र कार्यक्रम' (IAAP) के अन्तर्गत देश के 114 जिलों में लागू किया गया। इसके अन्तर्गत किसानों को उन्नत किश्म के बीज, उर्वरक, कीटनाशक दवाएं, क षि के आधुनिक यन्त्र उपलब्ध करवाने के साथ-साथ सिंचाई सेवा उपलब्ध करवाने पर भी विशेष बल दिया गया। परिणामस्वरूप खाद्यान्नों के उत्पादन में अभूतपूर्व व द्धि हुई और इसे 'हरित-क्रान्ति' (Green Revolution) का नाम दिया गया।

दूसरी ओर प्रथम चरण के अन्तर्गत योजना काल में भारत का औद्योगिक ढ़ांचा काफी विकसित हुआ। अनेकों बिजली परियोजनाएं सफलता पूर्वक स्थापित की गई, सड़कें और रेलों के जाल को विस्त त किया गया, सूचना प्रोद्योगिकी में विकास हुआ और साथ ही औद्योगिकरण के लिए साख (Credit) उपलब्ध करवाने के लिए भी प्रयास किए गए। इन सब कारणों से भारत में ढ़ांचागत विकास (Infrastrctural Developpment) हुआ। इससे भारत में औद्योगिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ और न केवल छोटे और मध्यम स्तर के अपितु कुछ बड़े उद्योग भी स्थापित किए गए।

इसके साथ ही प्रथम चरण की दो महत्वपूर्ण प्रव तियों के मध्य वैचारिक मतभेद और अधिक गहरा गया। किन्तु उस समय समाजवादी प्रव ति पूंजीवादी प्रव ति की तुलना में अधिक शक्तिशाली सिद्ध हुई। अतः एक ओर जहां 'सम्पति के अधिकार' (Right to Private Property) को मौलिक अधिकारों की सूचि से हटाकर समाजवाद की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया गया वहीं दूसरी ओर कई निजि संस्थानों का राष्ट्रीयकरण भी किया गया। उदाहरण के तौर पर 14 प्रमुख निजि क्षेत्र के बैंकों का जुलाई 1969 में राष्ट्रीयकरण किया गया।

इस प ष्ठभूति में राजनीति-प्रशासन के दूसरे चरण की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित थी :-

(1) विभाजित सत्तारूढ़ दल :-

किसी भी संगठन में वैचारिक मतभेद पाया जाना एक सहज या आम बात है और लोकतन्त्र में यह स्वाभिवक भी है। प्रसिद्ध अमेरिकी प्रशासनिक चिन्तक सुश्री फोलेट ने तो एक संगठन के विकास के लिए उसके सदस्यों के बीच मतभेदों का पाया जाना आवश्यक बताया है। उनका विचार है कि मतभेद को एक बुराई समझने की अपेक्षा पूँजीकरण (WE should Capitalise on the Conflicts) किया जाना चाहिए। सुश्री फोलेट का मत है जब किसी संगठन में दो या दो से अधिक गुटों में मतभेद होता है तो प्रत्येक गुट की कार्यकुशलता बढ़ जाती है जिससे संगठन में प्रगति होती है। शायद इसलिए कांग्रेस पार्टी में भी सदैव वैचारिक मतभेद रहे। वास्तव में मतभेद कांग्रेस पार्टी की परम्परा और संस्क ति रहीं। किन्तु 1960 के दशक के उतरार्द्ध में परिस्थितियां बदल चुकी थी। कांग्रेस पार्टी अब वैचारिक मतभेदों को absorb करने की स्थिति में नहीं थी।

1966 में प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री के अकस्मात् निधन के बाद कांग्रेस के कई वरिष्ठ नेता प्रध ानमंत्री पद के प्रमुख दावेदार थे। किन्तु परिस्थितियों ने कुछ इस प्रकार मोड़ लिया कि एक काफी कम अनुभवी युवा कांग्रेस नेता श्रीमती इन्दिरा गांधी को कुछ अनेक व्यक्तिगत गुणों के कारण व कुछ अनेक स्वर्गीत पण्डित जवाहर लाल नेहरु की पुत्री होने के कारण - कांग्रेस संसदीय दल की बैठक में नेता चुन लिया गया ओर इस प्रकार वे अनेकों वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं की दावेदारी को दरकिनार कर भारत की प्रधानमंत्री बन गई। श्रीमती गांधी के प्रधानमंत्री बनने के बाद कांग्रेस के आन्तरिक मतभेद गहराने लंगे। धीरे-धीरे कांग्रेस के अन्दर विभिन्न गुटों के वैचारिक मतभेद धीरे-धीरे व्यक्तिगत मतभेदों में परिवर्तित होने लगे और नीतिगत विरोधों (Conflicts & Difference on Policy Issues) को व्यक्तिगत विरोध (Personal Conflicts) माना जाने लगा। इस प्रकार आन्तरिक मतभेद संगठन के विकास में सहायक होने की अपेक्षा देश के विकास में बाधक बन गये क्योंकि आपसी मतभेदों के कारण अनेकों नीतिगत निर्णय नहीं लिये जा सके। उदाहरण के तौर पर आर्थिक प्रबन्धन के स्तर पर काफी विरोधाभास रहा जिससे कि समाजवाद और पूंजीवाद का बेमेल मिश्रण देखने को मिला।

(2) अनिर्देशित या दिशाहीन नौकरशाही :-

राजनैतिक अनिश्चतता या गतिरोध के दौर में नौकरशाही को राजनैतिक निर्देशन नहीं मिल पाता और इसलिए उसका (नौकरशाही का) दिशा से भटक जाना एक स्वाभाविक सी प्रक्रिया है। राजनीति कार्यपालिका आपसी मतभेदों में उलझी हुई थी और एक गुट दूसरे गुट के ऊपर अपना वर्चस्व स्थापित करने की भरपूर कोशिश कर रहा था। ऐसी परिस्थिति में राजनीतिक कार्यपालिका नीतिगत निर्णय लेने और प्रशासन को अभीष्ट दिशा निर्देश देने की स्थिति में सामान्यतः नहीं होती। इन राजनैतिक परिस्थितियों का दुष्परिणाम यह निकला कि राजनीति-प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया के दूसरे चरण में प्रशासन सही राजनैतिक निर्देशन के अभाव में अकार्यकुशल हो गया और विकास जो आधारशिला एवं नींव स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् डाली गई थी उसे एक बड़ा धक्का लगा।

(3) निस्तेज अथवा शक्तिहीन राजनैतिक नेत त्व :-

राजनीति और प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया के दूसर चरण में राजनैतिक नेत त्व न केवल विभाजित एवं

विरोधाभासी रहा अपितु शक्तिविहीन, निस्तेज एवं अनुत्साही भी था। भारतीय स्वतन्त्रता के अनेक जुझारु नेता 1960 के दशक की समाप्ति तक या तो म त्यु को प्राप्त हो चुके थे या व द्धावस्था के कारण सक्रिय राजनीति से सन्यास ले चुके थे। परिणामस्वरूप सत्ता की बागड़ोर उन राजनेताओं के पास आ गई थी जिनमें से अधिकतर ने या स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग नहीं लिया था या सक्रिय भूमिका नहीं निभाई थी। इन राजनेताओं में देश को विकसित और उन्नत करने के उस उत्साह उत्कण्ठा, अभिलाषा व लालसा का अभाव था जो कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की पहली पीढ़ी के राजनेताओं मे देखने को मिलता था। किन्तु यह एक साधारण एवं स्वाभाविक प्रक्रिया थी और इसलिए समस्याप्रद नहीं थी। खेदजनक एवं विचारणीय तथ्य यह था कि भारत को विकसित एवं उन्नत बनाने के लिए जो वैचारिक द ष्टिकोण कांग्रेस पार्टी एवं सरकार की स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद की पहली पीढ़ी के राजनेताओं ने विकसित किया वह व्यक्तिगत (Individualised) ही रहा और संस्थागत (Institutionalise) नहीं हो पाया अर्थात् यह द ष्टिकोण राजनीति की दूसरी और आगे आने वाले पीढ़ीयों में स्थानान्तरित नहीं हो पाया।

(4) विकास (परिस्थितिवश) प्राथमिकता न रहना :-

मात्र 10 वर्ष की अल्पावधि (1962 में चीन द्वारा अतिक्रमण और 1965 तथा 1971 में भारत-पाक युद्ध) में भारत को तीन युद्धों की विभिषिका झेलनी पड़ी। इन युद्धों के समय भारत को सैन्य सामग्री के लिए बाहरी देशों पर निर्भर रहना पड़ा। अचानक आई इन विपदाओं से निपटने के लिए भारत को विदेशों से अनेक हथियार व युद्ध-सामग्री खरीदनी पड़ी जो कि समय के अभाव के चलते प्रतिकूल शर्तो पर भी उपलब्ध हो पाई। इसके अतिरिक्त समय के अभाव व भारतीय सैन्य अधिकारियों का अधिक ध्यान युद्ध में लगे होने के कारण खरीदी गई सैन्य सामग्री भी कई बार सही गुणवता की उपलब्ध नहीं हो पाई। तीन युद्धों के इन कटु अनुभवों को ध्यान में रखते हुए भारतीय प्रशासन ने अपना ज्यादा ध्यान भविष्य में किसी भी युद्ध की सम्भावनाओं या खतरों से निपटने के लिए सैनाओं को तैयार रखने और उन्हें आधुनिक हथियार उपलब्ध करवाने पर केन्द्रित किया। अतः भारत का सामाजिक, सांस्क तिक, राजनैतिक विकास गौण विषय बन गया और सैन्य तैयारियां व आधुनिक हथियारों की खरीद या उनका देश में विकास करना प्राथमिक विषय बन गए। अतः स्वाभाविक ही था की संसाधनों का विकास बजट से सैन्य बजट की ओर अभूतपूर्व स्थानान्तरण हुआ।

(5) तकनीकी विशेषज्ञों की आवश्यकता एवं उनकी संख्या में व द्धि :-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् के लगभग तीन दशकों की समयावधि में भारत ने काफी विकास किया और विशेषतौर पर क षि, ढाँचागत व भारी उद्योग (Infrastructural and Heavy Industry), आणविक शोध एवं विकास रक्षा सामग्री विकास, Space Research आदि क्षेत्रों में प्रभावशली विकास हुआ। ये अत्यधिक तकनीकी क्षेत्र थे ओर इनमें बड़े स्तर पर तकनीकी विशेषज्ञों की आवश्यकता अनुभव की गई। परन्तु भारत में विभिन्न क्षेत्रों के तकनीकी विशेषज्ञों का नितान्त अभाव था क्योंकि यहाँ पर तकनीकी संस्थानों (जिनमें बड़े स्तर पर पूंजी निवेश की आवश्यकता थी जो कि भारत में पहले ही न्यून थी) को बड़े स्तर पर गठित नहीं किया जा सका था। परिणामस्वरूप, प्रथम विभिन्न क्षेत्रों में तकनीकी रूप से दक्ष विदेशी विशेषज्ञों की सहायता ली गई और द्वितीय, भारत में ही विभिन्न क्षेत्रों के तकनीकी विशेषज्ञों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु अनेक तकनीकी शिक्षण संस्थान खोले गए।

(6) सार्वजनिक क्षेत्र को बढ़ावा :-

प्रशासन और राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया के दूसरे चरण में सार्वजनिक क्षेत्र को अधिक बढ़ावा मिला। सार्वजनिक क्षेत्र में अनेक नए और बड़े-बड़े उद्योग लगाए गए और कुछ निजि क्षेत्र के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण भी किया गया। वास्तव में संविधान में संशोधन करके भारत को एक 'समाजवादी राज्य' बनाया गया। 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 के द्वारा भारतीय

संविधान के मौलिक तत्वों में व द्धि करते हुए भारत को एक 'सम्प्रभु, लोकतान्त्रिक, गणराज्य' (Sovereign, Democratic Repulic) के स्थान पर 'समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, सम्प्रभु, लोकतान्त्रिक, गणराज्य' (Soverign, Socialist, Secular, Democratic Republic) बनाया गया अर्थात राज्य का लक्ष्य देश में धीरे-धीरे समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना था। किन्तु 42वें संविधान संशोधन अधिनियम के पारित होने के बाद भी प्रशासन को भारत में समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने में एक प्रमुख समस्या का सामना करना पड़ रहा था और वह थी 'सम्पति का मौलिक अधिकार' (Rights to Private Property) जिसका वर्णन संविधान की धारा 31 में किया गया था। भारत को एक समाजवादी राज्य बनाने की दिशा में यह बाधा 44वें संविधान संशोधन अधिनियम की सूचि से हटा कर की गई। और इस प्रकार अन्ततः भारत के प्रशासन के समाजवादी बनने का रास्ता राजनीति-प्रशासन के अन्तःक्रिया के दूसरे चरण के समाप्ति तक साफ हो गया।

(7) नौकरशाही की विकास प्रशासन में सक्रिय भूमिका :-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् के आरम्भ के दो दशकों में नौकरशाही को उपनिवेशवाद काल की देन होने के कारण विकास प्रशासन में भागीदार बनाने में संकोच किया गया क्योंकि राजनैतिक नेत त्व के मन में नौकरशाही के प्रति अविश्वास की भावना थी। किन्तु 1970 के दशक के आरम्भ तक नौकरशाही के ऊपर अविश्वास का दौर समाप्त हो गया। धीरे-धीरे नौकरशाही भारतीय राजनीतिक-प्रशासनिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगी। इसके साथ ही नौकरशाही को बड़े पैमाने पर विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में भागीदार बनाया जाने लगा और वह धीरे-धीरे "विकासात्मक नौकरशाही" (Developmental Bureaucracy) का रूप धारण करने लगी।

राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया का तीसरा चरण :-

राजनीति और प्रशासन के बीच अन्तःक्रिया का तीसरा चरण 1977 में गठित पहली और कांग्रेसी सरकार के प्रयोग के विकास होने के बाद 1980 के आरम्भ में श्रीमति इन्दिरा गांधी के नेत त्व में कांग्रेस पार्टी के पुनः सत्ता में आने से प्रारम्भ हुआ और 1990 के दशक के आरम्भ तक अस्तित्व में रहा। अन्तःक्रिया के पहले व दूसरे चरण के विपरीत, जबकि समाजवादी प्रव ति ज्यादा प्रभावशाली रही, तीसरे चरण में पूंजीवादी प्रव ति सक्रिय होने लगी और पूंजीवादी प्रव ति की सक्रियता का कारण था भारत में सार्वजनिक क्षेत्र का अपेक्षाक त कम सफल रहना। नौकरशाही की अकार्यकुशलता, कुशल राजनैतिक निर्देशन का अभाव तथा राजनैतिक-प्रशासनिक भ्रष्टाचार के कारण अनेको सार्वजनिक उपक्रम घाटे में चलने लगे। इसके साथ ही सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं की गुणवता पर भी प्रश्नचिन्ह लगने लगे। अतः नौकरशाही को कार्यकुशल बनाने, प्रशासनिक कार्यवाही में मितव्यता लाने और भ्रष्टाचार पर रोक लगाने की माँग जोर पकड़ने लगी। जहाँ प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए तकनीकीकरण पर बल दिया गया वहीं दूसरी ओर भ्रष्टाचार पर रोक लगाने के लिए सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर सरकार को लोगों के अधिकाधिक पास ले जाने का असफल प्रयास किया गया।

प्रादेशिक या राज्यों के स्तर पर छोटे राजनैतिक दलों का गठन तीसरे चरण की राजनैतिक-प्रशासनिक अन्तःक्रिया को प्रभावित करने वाली एक प्रमुख घटना थी जिसने कि राजनीति व प्रशासन की अन्तःक्रिया की प्रक्रिया को प्रभावित किया। राष्ट्रीय स्तर के राजनैतिक दलों के द्वारा स्थानीय मुद्दों की उपेक्षा किया जाना इन दलों के उदय तथा अस्तित्व में बने रहने का प्रमुख कारण बना। इन छोटे राजनैतिक दलों ने 1980 के दशक में राज्यों के स्तर पर राजनीति को काफी प्रभावित किया और वहां राजनैतिक अस्थिरता फैलाने के प्रमुख कारण बनें। इनमें से अधिकतर दलों के विधायकों के द्वारा अकस्मात दल बदलना एक सामन्य सी प्रक्रिया थी। इस कारण कई राज्यों में सरकारें अस्थिर हो

गई थी और राजनैतिक अस्थिरता विकास प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती थी। विधायकों की दल-बदल की इस प्रव ति पर रोक लगाने के लिए संसद ने फरवरी 1985 में 52वें संविधान संशोधन पारित करके दल-बदल विरोधी कानून (Anti-Defectioon Law) बनाया।

कांग्रेस पार्टी में नीतिगत विरोधों के व्यक्तिगत विरोध के रूप में समझने की जो प्रक्रिया राजनीति व प्रशासन अन्तःक्रिया के दूसरे चरण में आरम्भ हुई उसका मूल कारण था राजनैतिक असहनशीलता। क्योंकि कांग्रेस में इस रोग का निदान समय रहते नहीं हो पाया इसलिए इस रोग ने अपने पैर फैलाकर सभी राजनैतिक दलों को अपनी चपेट में ले लिया। राजनैतिक असहनशीलता उस समय अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गई जब केन्द्रीय सरकार ने राज्यों के स्तर पर विपक्ष या विरोधी दलों की सरकारों कों किसी-न-किसी आधार पर संविधान के अनुच्छेद 356 का दुरूपयोग करते हुए निलम्बित कर वहाँ राष्ट्रपति शासन लागू करना आरम्भ कर दिया। यह प्रव ति केन्द्र में 1977 में जनता पार्टी की सरकार के गठन और फिर 1980 में दोबार कांग्रेस की सरकार के गठन के समय विशेष रूप से देखने को मिली। इस प्रव ति ने राज्य प्रशासन विशेष तौर पर वहां के विकास प्रशासन के ऊपर राज्यों में राजनैतिक अस्थिरता फैला कर नकारात्मक प्रभाव डाला।

उपरोक्त राजनैतिक-प्रशासनिक प ष्ठभूमि में हम राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कर सकते है :-

(1) विस्त त या बड़ा किन्तु सुस्त सार्वजनिक क्षेत्र :-

राजनीति और प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया के पहले व दूसरे चरण में समाजवादी प्रव ति अधिक प्रभावशाली रही और सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत बड़े-बड़े उद्योग धन्धे लगाए गए जिसके फलस्वरूप भारत में सार्वजनिक क्षेत्र का काफी विस्तार हुआ और देश में विकास की गति तीव्र हुई। इस कारण इन सार्वजनिक उपक्रमों में नियुक्त नौकरशाही की शक्तियों में भी काफी व द्धि हुई। परन्तु खेद का विषय यह रहा कि नौकरशाही की क्रियाओं को नियन्त्रित करने की लिए व्यवस्था स्थापित नहीं की गई। इस कारण नौकरशाही की शक्तियां और भी अधिक बढ़ गई या अनियन्त्रित हो गई और नौकरशाही 'शक्ति भ्रष्ट करती है और पूर्ण शक्ति पूर्णतयः भ्रष्ट करती है' वाली कहावत को चरितार्थ करते हुए पथभ्रष्ट हो गई और कार्यो/कर्त्तव्यों के निष्ठापूर्वक, कार्यकुशलतापूर्वक और मितव्ययता से सम्पादित करने की अपेक्षा स्वार्थ सिद्धि में अधिक ध्यान केन्द्रित किया। इससे सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों से जितना लाभ देश में सामाजिक-आर्थिक विकास की गति बढ़ाने में मिलना अपेक्षित था वह नहीं मिल पाया।

(2) राजनैतिक भ्रष्टाचार में व द्धि :-

1980 के दशक में भारतीय राजनीति में एक भयंकर प्रव ति तेजी से बढ़ रही थी और वह थी राजनैतिक भ्रष्टाचार। वास्तव में यह प्रव ति जैसा कि विलियम सिफिन ने कहा है, सभी विकासशील देशों की राजनीति का भाग बन चुकी थी और भारत भी इससे अछुता नहीं था। राजनैतिक भ्रष्टाचार को प्रमुख रूप से दो अर्थो में समझा जाता है। प्रथम अनुमोदित नियमों या सिद्धान्तों (Approved Norms) से हटना और दूसरे नैतिक पतन जिसमें रिश्वत का लेन-देन विशेष रूप से सम्मिलित है। तीसरे चरण में राजनैतिक भ्रष्टाचार दोनों ही रूपों में विद्यमान था। अतः जहाँ एक ओर भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और निजिकरण एवं औद्योगिक नीति में मौलिक परिवर्तन की प्रव ति बढ़ रही थी वहीं दूसरी ओर राजनीतिज्ञों में नैतिक एवं आचरण पतन तथा राजनैतिक संगठनों में आचार संहिता का गम्भीर क्षय भी द ष्टिगोचर हो रहा था। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी का नाम बोफोर्स तोप दलाली काण्ड से जोड़ा जाना इसी कड़ी के रूप में देखा जा सकता है।

(3) प्रशासकीय भ्रष्टाचार :-

राजनैतिक भ्रष्टाचार के साथ-साथ प्रशासकीय भ्रष्टाचार भी राजनीति-प्रशासन की अन्तःक्रिया के तीसरे चरण की प्रमुख विशेषता रही। काले धन (Black Money) के अर्थव्यवस्था में परिचालन के बारे में इस समय पर कई अनुमान भी लगाए गए और यह भी दोषारोपण हुआ कि काले धन के रूप में एक समान्तर अर्थव्यवस्था (Parallel Economy) के परिचालन में प्रशासन की भी भागीदारी है। ऐसा भी नहीं है कि इस बुराई के बारे में राजनैतिक नेत त्व अनभिज्ञ रहा हो। वास्तव में ऐसा प्रतीत होता है कि संभवत् राजनैतिक नेत त्व इस बुराई को रोक पाने में स्वयं को असमर्थ पा रहा था। इस सन्दर्भ में स्वर्गीय प्रधानमन्त्री के इस कथन "हम दिल्ली से यदि एक रूपया आपके लिए भेजते है तो आप तक मात्र 10 या 15 पैसे ही पहुंच पाते हैं, बाकी की राशि बीच में ही कहीं लुप्त हो जाती है।" जिसे कि उन्होंने 1989 में आम चुनाव से पहले कई जनसभाओं को सम्बोधित करते हुए दोहराया, को एक प्रधानमंत्री की प्रशासनिक भ्रष्टाचार को समाप्त करने में उनकी स्वीकारोक्ति के रूप में देखा जा सकता है। यह बात इसलिए भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि श्री राजीव गांधी के द्वारा यह स्वाकारोक्ति लगभग साढ़े चार वर्ष तक प्रधानमंत्री पद पर ऐसी परिस्थितियों में बने रहने के उपरान्त की गई जबकि लोकसभा भी उनके दल (कांग्रेस पार्टी) को 542 में 476 सीटें प्राप्त थी।

(4) मितव्ययता एवं कार्यकुशलता पर बल :-

बढ़ती हुई प्रशासनिक अर्कमण्यता तथा अकार्यकुशलता प्रशासन-राजनीति के मध्य अन्तःक्रिया के तीसरे चरण में एक प्रमुख मुद्दा रही। तथा प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ाने पर विशेष बल दिया गया। कार्यकुशलता का अभाव और इसमें व द्धि की माँग जैसे-जैसे तीसरा चरण परिपक्व होता गया वैसे-वैसे और अधिक उठने लगी। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने प्रशासकीय कार्यकुशलता बढ़ाने हेतु तकनीकीकरण तथा कम्पयूटरीकरण को विशेष महत्व दिया। इसके फलस्वरूप भारत में कम्पयूटर क्रान्ति का युग आया और प्रशासन (निजि और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों) में कम्पयूटर का बड़े पैमाने पर प्रयोग होने लगा। यद्यपि इस में कोई संदेह नहीं की तकनीकीकरण और कम्पयूटरीकरण से कार्यकुशलता में व द्धि हुई किन्तु इससे एक अन्य गम्भीर समस्या ने जन्म ले लिया और वह थी बेरोजगारी क्योंकि तकनीकी और कम्पयूटर क्रान्ति के कारण अनेकों आदमियों के द्वारा किया जाने वाला कार्य केवल एक मशीन के द्वारा किया जाने लगा और इस मशीन को चलाने (operate) के लिए केवल एक ही व्यक्ति की आवश्यकता होती थी। इस कारण अनेकों लोग बेरोजगार हो गए।

(5) क्षेत्रीयवाद व उग्रवाद की बढ़ती समस्याएँ :-

भारत एक विशाल, बहुभाषी और अनेक राष्ट्रीयताओं वाला और विविधताओं भरा देश है। यह कहा जाता है कि भारत में कई सदियां या शताब्दियां एक ही साथ निवास करती हैं अर्थात जहां एक ओर अत्याधुनिक व पूर्णतः विकसित व्यवस्थाएं पाई जाती है। वहीं दूसरी ओर पुरातन व अविकसित व्यवस्थाएं भी विद्यमान हैं। इसके साथ ही यह भी कहा जाता है कि भारत में अनेकों संस्क तियां व धर्म साथ-साथ वास करते हैं अर्थात भारत भ्रमण करने पर हमें पूरे विश्व की झलक मिल जाती है। इतनी विविधताओं वाले देश के लिए यह अति आवश्यक था कि विभिन्न वर्गो एवं क्षेत्रों की समस्याओं को समझ कर उनके स्थानीय हल निकाले जायें जिससे कि देश एकजुट रह सके। किन्तु कांग्रेस पार्टी व अन्य राष्ट्रीय स्तर के राजनैतिक दलों ने 1970 और 1980 के दशक में क्षेत्रीय समस्याओं एवं मुद्दों की उपेक्षा करनी आरम्भ कर दी तथा केवल राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं को महत्व दिया। इस कारण देश के विभिन्न भागों में अनेक समस्याएं लम्बे समय तक लम्बित पड़ी रही और धीरे-धीरे इन समस्याओं ने उग्र रूप धारण कर लिया। कालान्तर में इसके दो परिणाम निकले। क्षेत्रीय स्तर पर छोटे राजनैतिक दलों का तथा उग्रवाद का जन्म। जो लोग भारत के संविधान और उदय कानून में विश्वास रखते थे उन्होनें क्षेत्रीय मुद्दों एवं समस्याओं को आधार बना कर क्षेत्रीय दलों का गठन कर लिया जबकि

भारत के संविधान और कानून में विश्वास न रखने वालों ने उग्रवाद का रास्ता चुना। इस प्रकार राजनीति और प्रशासन अन्तःक्रिया के तीसरे चरण में हम पाते हैं कि क्षेत्रीयवाद की समस्या उग्र रूप धारण कर प्रशासन के लिए चुनौती बन गई।

(6) बाजार में प्रतिस्पर्धा की आवश्यकता को अनुभव किया गया :-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के लगभग चार दशक बीत जाने के उपरान्त तथा राज्य और प्रशासन के प्रयासों के कारण 1980 के दशक के मध्य तक काफी सुद ढ़ हो गई थी। अब बाजार में ग्राहक को वस्तुओं और सेवाओं की मात्रा या परिणाम (Quantity of Goods & Services) के सम्बन्ध में समस्या नहीं थी क्योंकि उसे लगभग सभी वस्तुएं पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध थी। इसलिए अब वह गुणवता (Quality) की मांग करने लगा अर्थात अब ग्राहक विभिन्न विकल्पों की मांग करने लगा जिसमें से वह चयन कर सके। किन्तु अनेकों वस्तुएं तथा सेवाए सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकार में ही उत्पादित होती थी। इसलिए राजनीति और अब राज्य को विभिन्न क्षेत्रों में वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में सार्वजनिक क्षेत्र के साथ-साथ निजि क्षेत्र को भी प्रवेश देने हेतु पुर्नविचार करना पड़ा। अर्थात वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन में गुणवता बढ़ाने के लिए बाजार में प्रतिस्पर्धा के तत्व को प्रवेश देने के बारे में पुर्नविचार करना पड़ा। इस पुर्नविचार को प्रशासनिक कार्यकुशलता बढ़ाने के प्रयास के रूप में भी देखा गया।

प्रशासन-राजनीति अन्तःक्रिया का चौथा चरण

राजनीति और प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया का चौथा चरण 1990 के दशक के आरम्भ से ही शुरू होता है तथा वर्तमान में भी चल रहा है। इस चरण में राजनीति और प्रशासन के सम्बन्धों को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक था केन्द्र में गठजोड़ की राजनीति। छोटे राजनैतिक दल जो कि क्षेत्रीय मुद्दों और समस्याओं को आधार बनाकर अस्तित्व में आये, 1980 के दशक तक केवल राज्यों के स्तर तक सीमित रहे। किन्तु 1990 के दशक में इन क्षेत्रीय राजनैतिक दलों ने केन्द्र की राजनीति में भी भाग लेना आरम्भ कर दिया। इस कारण 1989 के आम चुनावों के बाद एक प्रमुख राष्ट्रीय राजनैतिक दल के रूप में उभरी भारतीय जनता पार्टी व कांग्रेस दोनों में से कोई भी 1989 और पश्चात् के चुनावों में स्पष्ट बहुमत नहीं जुटा पाई और उन्हें केन्द्र में सरकार के गठन के लिए इन अनेकों छोटे क्षेत्रीय राजनैतिक दलों की बैशाखी के रूप में आवश्यकता पड़ी। केवल यही नहीं, प्रत्येक चुनाव के बाद सरकार (केन्द्रीय स्तर पर) के निर्माण में इन क्षेत्रीय दलों की भूमिका में व द्धि होती जा रही थी। और राष्ट्रीय स्तर के राजनैतिक दलों की भूमिका व भाग (share) भी कम होता जा रहा है। उदाहरणार्थ, मई 2004 में गठित चौदहवी लोकसभा में कांग्रेस पार्टी को मात्र 145 सीटे प्राप्त हुई है जबकि भारतीय जनता पार्टी को 138 सीटे ही मिली।

1990 के दशक के आरम्भ में एक आम घटना जिसने कि राजनीति प्रशासन अन्तःक्रिया को प्रभावित किया वह थी समाज के पिछड़े वर्गो को सरकारी रोजगारों में आरक्षण प्रदान करना। पिछड़े वर्गो को सरकारी नौकरियों में आरक्षण प्रदान करने की सिफारिश केन्द्र में 1977 में सत्तारूढ़ हुई पहली गैर-कांग्रेसी सरकार द्वारा गठित मंडल आयोग ने की भी। किन्तु 1979 के अन्त में हुए मध्यावधि चुनावों के पश्चात् केन्द्र में दोबारा कांग्रेस पार्टी सत्तारूढ़ हो गई जिस कारण मण्डल आयोग की रिर्पोट को लागू नहीं किया जा सका। एक दशक से भी अधिक समय के बाद सन् 1991 में यह रिर्पोट अचानक महत्वपूर्ण बन गई। 1989 नवम्बर में सम्पन्न हुई आम चुनावों के बाद भारतीय जनता पार्टी और वाममोर्चा के बाहरी समर्थन के साथ प्रधानमंत्री श्री वी.पी. सिंह ने सन् 1991 में इस रिर्पोट को उस समय ढाल के रूप में प्रयोग किया जब उनकी सरकार के ऊपर खतरे के बादल मंडरा रहे थे। यद्यपि इस रिर्पोट को लागू करने के पीछे राजनैतिक कारण रहे और इसे लागू करने पर देश भर में युवा वर्ग के द्वारा रोष प्रकट किया गया और आंदोलन भी किए गए तथापि इस कार्यवाही को देश में सामाजिक-आर्थिक समानता लाने के एक प्रयास के रूप में देखा जा सकता है।

यद्यपि नौकरशाही में व्याप्त अनेकों दोषों (जैसे मितव्ययता का अभाव, अकार्यकुशलता, अर्कमण्यता, भ्रष्टाचार आदि) का कई अवसरों पर उल्लेख किया गया और इन्हें दूर करने की मांग भी अनेकों बार उठाई गई। इन दोषों को दूर करके के लिए यद्यपि कुछ प्रयास भी किए गए परन्तु उनसे कोई विशेष लाभ नहीं मिला और सार्वजनिक क्षेत्रों के अधिकार उद्यम निरन्तर बदहाली की ओर अग्रसर होते रहे। इसके साथ ही विदेशी पूंजी के आगमन पर रोक लगी होने के कारण बाजार में प्रतिस्पर्धा का अभाव था और इसलिए निजि एवं सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं की गुणवता सही नहीं थी। परिणामस्वरूप हमारा विदेश व्यापार निरन्तर प्रतिकूल चल रहा था और जब श्री पी.वी. नरसिम्हा राव के नेत त्व में मई 1991 में कांग्रेस सरकार का गठन हुआ उस समय विदेशी मुद्रा कोष लगभग रिक्त हो चुका था और विदेशी व्यापार के भुगतान के कुछ ही सप्ताह के लिए पर्याप्त था। इसलिए नरसिम्हा राव सरकार के द्वारा अर्थव्यवस्था में आधारभूत संरचनात्मक परिवर्तन लाना अपरिहार्य हो गया।

जैसी कि पहले व्याख्या की जा चुंकी है 1989 के आम चुनावों के बाद ही केन्द्र की राजनीति में क्षेत्रीय दलों का प्रभाव बढने लगा और वे केन्द्र में सरकार के गठन व उसके चलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे। सरकार बनाने के लिए राष्ट्रीय दलों को समर्थन देते समय ये छोटे राजनीतिक दल प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से कुछ माँगें मुख्य राजनीतिक दल के समक्ष रखते हैं और यदि सत्तारूढ़ दल के द्वारा उनकी इन मांगों को अस्वीकार या नजरअंदाज कर दिया जाए तो ये दल समर्थन वापस लेने से परहेज नहीं करते। इस कारण राजनैतिक अस्थिरता की स्थिति बनी रहने के साथ-साथ अनेकों बार केन्द्र में सत्ता में बने रहने के लिए सत्तारूढ़ दल को इन छोटे राजनैतिक दलों की अनुचित मांगों को भी स्वीकार करना पड़ता है। इसके साथ ही निर्णय लेने में भी अनुचित देरी होती है क्योंकि सरकार के द्वारा निर्णय लेने से पूर्व सभी सहयोगी दलों से परामर्श करना पड़ता है। इन सभी कारणों से केन्द्रीय सरकार अपेक्षाक त कम प्रभावशाली और कम कार्यकुशल हो गई। इन परिस्थितियों में 1990 के दशक में न्यायपालिका ने सक्रियता दिखाते हुए सामान्य नागरिकों के हित में अनेकों निर्णय दिए और कई बार केन्द्र और राज्य सरकारों को अपने कर्त्तव्यों का सही निर्वाह न करने पर फटकार भी लगाई और कई अवसरों पर सरकार को कोई विशिष्ट कार्य करने या न करने के कठोर आदेश भी दिए। राजनीति-प्रशासन के मध्य अन्तःक्रिया के वर्तमान चरण में भ्रष्टाचार, धारा 356 के दुरपयोग, दिल्ली में CNG बसों के चलाने के लिए दिए गए अपने आदेशों को लागू करवाने, गुजरात के बेस्ट बेकरी काण्ड आदि मामलो में न्यायालयों के निर्णय न्यायपालिका की सक्रियता के उदाहरण के रूप में देखें जा सकते हैं।

उपरोक्त प ष्ठभूमि में राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया के चौथे और वर्तमान चरण की प्रमुख विशेषताओ का उल्लेख निम्न प्रकार किया जा सकता है :-

(1) भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण, निजिकरण तथा उदारीकरण :-

मई 1991 में जब पी.वी. नरसिम्हाराव के नेत त्व में केन्द्र में कांग्रेस पार्टी ने एक अल्पमत सरकार का गठन किया तब देश गम्भीर आर्थिक संकट से गुजर रहा था। राजनैतिक अस्थिरता के कारण नौकरशाही दिशाहीन थी, उसमें कार्यकुशलता का अभाव था, सरकार का गैर-विकासात्मक खर्च (Non-Developmental Expenditure) बहुत अधिक बढ़ गया था, भ्रष्टाचार व्याप्त था, विदेशी मुद्रा कोष लगभग न के बराबर था, बाजार में प्रतिस्पर्धा के अभाव के कारण वस्तुओं व सेवाओं की गुणवता पर प्रश्नचिन्ह लग रहा था। दूसरी ओर विश्व स्तर पर हो रहे परिवर्तनों से भी भारत अछूता नहीं था। सोवियत संघ का विघटन और उसके पश्चात् वहां समाजवादी व्यवस्था का समापन, पूर्वी तथा पश्चिमी जर्मनी का एकीकरण और एकीक त जर्मनी में पूंजीवादी व्यवस्था का अपनाया जाना और समाजवाद को नकारा, उत्तरी और दक्षिणी कोरिया का भी एकीकरण और जर्मनी की भांति वहां भी पूंजीवाद को अपनाया जाना, चैकोस्लोवाकिया (एक अन्य समाजवादी व्यवस्था) में ग हयुद्ध छिड़ना और उसका

विखण्डन होना, चीन की राजधानी में तायनानमन स्क्वेयर (Tiananmen Square) पर वहां के अनेकों छात्रों द्वारा चीन में खुली अर्थव्यवस्था अपनाने के लिए प्रदर्शन आदि ऐसी घटनाएं थी जिन्होनें समाजवादी व्यवस्था की सफलता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया। आन्तरिक तथा बाह्य घटनाओं से प्रभावित होकर भारत सरकार ने मुक्त अर्थव्यवस्था अपनाने की दिशा में अनेक प्रयास किए और 1991 में राव सरकार में वित्त मंत्री (जो कि वर्तमान सरकार में हाल ही में प्रधान मंत्री बने है) डॉ. मनमोहन सिंह ने अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक परिवर्तन में प्रमुख भूमिका निभाई। डा. मनमोहन सिंह जो कि एक विशिष्ट अर्थशास्त्री हैं, ने उस समय भारतीय अर्थव्यवस्था को बदहाली से निकालने के लिए अनेक कदम सुझाए जिनको राव मन्त्रिमण्डल की स्वीक ति मिलने के पश्चात् लागू किया गया। इन उपायों में से कुछ प्रमुख निम्नलिखित थे :-

(1) भारतीय अर्थव्यवस्था को शनै-शनै मुक्त अर्थव्यवस्था (Open Economy) में परिवर्तित किया जाए और FDI बढ़ाने के लिए नियमों और कानूनों को सरल बनाया जाए।

(2) निजिकरण को बढ़ावा दिया जाए तथा रूग्ण और लगातार घाटे में चल रही सार्वजनिक इकाईयों को निजि क्षेत्र के हाथों बेच दिया जाए।

(3) वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन में गुण्वता बढ़ाने के उद्देश्य से बाजार में प्रतिस्पर्धा को बढ़ाया जाए।

(4) सरकारी खर्च को कम करने तथा मितव्यता लाने के उद्देश्य से नौकरशाही में कटौती की जाए।

(5) आर्थिक सहायता (Subsidies) में कटौती की जाये ताकि वित्तिय घाटे को कम किया जा सके।

वैश्वीकरण, उदारीकरण और निजिकरण के उद्देश्य से उपरोक्त और अनेक अन्य विशेषताओं के साथ एक नई औद्योगिक नीति (Industrial Policy Resolution) की घोषणा 24 जुलाई सन् 1991 को की गई।

(2) अनियन्त्रित भ्रष्टाचार :-

भ्रष्टाचार भारतीय प्रशासन, राजनीति और अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख कार्यात्मक विशेषता, (Functional Feature) है। भूतकाल में भ्रष्टाचार पर रोक लगाने के कई प्रयास किए गए किन्तु यह प्रव ति बढ़ती ही गई। वास्तव में भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के पूर्ण रूप से असफल न हो पाने का एक प्रमुख कारण है राजनैतिक और प्रशासनिक भ्रष्टाचार भी था। राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया के तीसरे चरण में तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी के द्वारा भ्रष्टाचार पर काबू पाने के लिए सत्ता को लोगों के नजदीक लाने का प्रयास किया गया। राजीव गांधी सरकार ने इसके लिए दो विधेयक (65वाँ तथा 66वाँ संविधान संशोधन अधिनियम) संसद में पेश किए। यद्यपि ये प्रस्ताव लोक सभा में पारित हो गए किन्तु राज्यसभा में बहुमत न होने के कारण गिर गए। इन दो अधिनियमों के द्वारा क्रमशः ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान कर उन्हें स्थानीय विषयों से सम्बन्धित अनेकों शक्तियाँ पदत्त की जानी थी। राव सरकार ने 1991 में सत्ता में अपने पर 65वें तथा 66वें संविधान संशोधन विधेयकों को 73 वें तथा 74वें संविधान संशोधन विधेयकों के रूप में संसद में पेश किया जिन्हें संसद के दोनो सदनों ने 22 दिसम्बर 1992 को पारित कर दिया और 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति की स्वीक ति मिलने के पश्चात् इनको गजट में प्रकाशित कर दिया गया। स्थानीय शासन की संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के साथ-साथ इन दो अधिनियमों ने, ग्रामीण तथा शहरी स्थानीय शासन की इकाईयों को एकरूपता प्रदान की, उनकी अवधि (Tenure) निर्धारित करने के साथ-साथ संविधान में 11वीं अनुसूचि जोड़ कर 29 ऐसे विषय निर्धारित किए जो स्थानीय महत्व के थे तथा शहरी तथा ग्रामीण स्थानीय संस्थाओं के द्वारा ही सम्पन्न किए जा सकते थे। किन्तु इन विषयों का

हस्तान्तरण राज्य सरकारों की इच्छा पर छोड़ दिया गया और स्थानीय संस्थाओं के सशक्तीकरण की दिशा में एक अच्छा प्रयास पूरी तरह सफल नहीं हो पाया और इस कारण भ्रष्टाचार पर भी काबू नहीं पाया जा सका।

(3) पादर्शिता तथा अच्छी सरकार (Good Governance) पर बल :-

भ्रष्टाचार तथ अकार्यकुशलता को नियन्त्रित करने के उद्देश्य से चौथे चरण में एक अन्य प्रयास प्रशासनिक कार्यवाही में पारदर्शिता लाने तथा अच्छी सरकार गठित करने के रूप में किया गया। प्रशासनिक कार्यवाही में जितनी अधिक पारदर्शिता होगी भ्रष्टाचार तथा प्रशासन की अकार्यकुशलता की संभावना उतनी ही कम होगी। इसी उद्देश्य से भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अनेकों अवसरों पर प्रशासन की कार्यवाही में अधिकाधिक पारदर्शिता लाने पर बल दिया।

अच्छी सरकार (Good Government) को परिभाषित करते हुए एक UNO Document ने लिखा है कि अच्छी सरकार वह जो कार्य स्वयं करने की अपेक्षा उन पर नियन्त्रण करती है, अपनी कार्यवाही में पारदर्शिता लाती है, सत्ता का विकेद्रीकरण करती है, जन भागीदारिता को बढ़ावा देती है तथा बाजार में प्रतिस्पर्धा पैदा कर जन मानस को वस्तुएं तथा सेवाएं सही मात्रा, गुणवता और कम से कीमत पर उपलब्ध करवाना सुनिश्चित करती है। चौथे चरण में भारतीय राजनीतिक नेत त्व इस बात पर बल दे रहा है कि प्रशासन इन अच्छी सरकार के तत्वों को अधिकाधिक अपनायें।

(4) सीमा-पार से आंतकवाद को बढ़ावा :-

1980 के दशक के आरम्भ में जन्मी क्षेत्रीयवाद की समस्या ने धीरे-धीरे उग्रवाद का रूप धारण कर लिया और यह उग्रवाद धीरे-धीरे देश के अनेक राज्यों जैसे कि जम्मू-कशमीर, पंजाब, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, असम, नागालैण्ड इत्यादि में फैल गया। उग्रवाद को हमारें पड़ोसी देशों पाकिस्तान, बंग्लादेश, श्रीलंका आदि से भी परोक्ष रूप में सहायता मिली। दूसरे देशों की सहायता के कारण उग्रवाद ने हमारे देश में एकता व अखण्डता के लिए भंयकर खतरा उत्पन्न कर दिया है। प्रशासन का अधिकतर ध्यान उग्रवाद से निपटने में लग जाता है इस कारण विकास प्रशासन के लिए संसाधनों (समय तथा धन) अपेक्षाक त कम हो जाते हैं। साथ ही उग्रवाद की समस्या उन राज्यों की अर्थव्यवस्था को भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है जहां यह पैर पसारे हुए है। उदाहरण के तौर पर जम्मु तथा कश्मीर जिसकी अर्थव्यवस्था मुख्यतः पर्यटन पर आधारित थी, उग्रवाद के कारण बुरी तरह प्रभावित हुई है क्योंकि उग्रवाद के कारण वहां पर्यटन उद्योग लगभग ठप्प हो गया है।

(5) राजनैतिक अस्थिरता :-

छोटे राजनैतिक (क्षेत्रीय) दलों के केन्द्रीय स्तर की राजनीति में उपस्थिति से केन्द्र में राजनैतिक अस्थिरता की समस्य पैदा हो गई है। राजनैतिक, अस्थिरता का दौर 1996 से 1999 के बीच विशेष तौर पर देखने को मिला। यद्यपि 1991 से 1996 तथा फिर 1999 से 2004 के बीच केन्द्रीय सरकारें (1991 से 1996 के बीच नरसिम्हाराव की कांग्रेस सरकार और 1999 से 2004 के बीच वाजपेयी की NDA सरकार) नहीं बदली तथा उन्होनें अपना 5 वर्ष का कार्यकाल पूरा किया किन्तु इस समय भी सरकार के किसी भी समय गिर जाने का खतरा सर्वदा मण्डराता रहा क्योंकि श्री राव एक अल्पमत सरकार चला रहे थे जबकि श्री वाजपेयी 16 छोटे-बड़े राजनैतिक दलों की मिली-जुली सरकार चला रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में केन्द्रीय सरकार न तो निश्चिन्त होकर नीति निर्माण और उसके नौकरशाही द्वारा उचित क्रियान्वयन करवाने पर ध्यान केन्द्रित कर पाती है और न ही कठोर निर्णय ले पाती है। ऐसे में विकास प्रशासन प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है।

(6) अनुसूचित जातियों/जनजातियों और पिछड़ें वर्गो में Creamy Layer का प्रश्न

राजनीति-प्रशासन अन्तःक्रिया के चौथे चरण की अन्य विशेषता यह रही कि इस समय जाति या वर्ण

आधारित आरक्षण के ऊपर उठाए गए प्रश्न और यह तर्क दिया गया कि इन जातियों में जो लोग आरक्षण के लाभ उठाकर सामान्य वर्ग के बराबर आ गये हैं उनके बच्चों को आरक्षण प्रदान करने का क्या औचित्य है इसलिए इस चरण में यह प्रश्न अक्सर उठने लगा है कि आरक्षण जाति या वर्ण के आधार पर नहीं अपितु आर्थिक आधार पर होना चाहिए और अनुसूचित जाति/जनजाति व पिछड़े वर्ग में जिन लोगों की आर्थिक अवस्था सुद ढ़ है उन्हें आरक्षण का लाभ नहीं मिलना चाहिए और स्वर्ण जातियों में जो आर्थिक रूप से कमजोर हैं उन्हें आरक्षण की सुविधा प्रदान की जानी चाहिए।

(7) आर्थिक सुधारों में मानवीय पक्ष की अवहेलना :-

सन् 1991 में आरम्भ किए गए आर्थिक सुधार के परिणाम जल्द ही सामने आने लगे। जहां एक और अर्थव्यवस्था में विदेशियों का विश्वास बना और उन्होनें भारत मे निवेश करना आरम्भ किया जिसके फलस्वरूप विदेशी व्यापार घाटा कम हुआ, लोगों को वस्तुओं तथा सेवाओं में गुणवता उपलब्ध हुई, रूपए का मूल्य स्थिर हुआ वहीं दूसरी ओर आर्थिक सत्ता का केन्द्रीयकरण हुआ, अमीर-गरीब के बीच का अन्तर बढ़ा व इसके साथ-साथ बेरोजगारी में भी बढ़ोतरी हुई। ये समस्याएं पिछले लगभग एक दशक से लगातार उग्र रूप धारण करती जा रही हैं। और यह माँग जोर पकड़ती जा रही है आर्थिक सुधारों में मानवीय पक्ष की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए। वास्तव में केन्द्र में मई 2004 में सम्पन्न हुए चुनावों में NDA सरकार की हार का एक प्रमुख कारण उस सरकार का मानवीय पक्ष की अवहेलना ही रही।

Chapter - 11

प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया

(Administration-Economy Interaction)

एक देश के प्रशासन और वहाँ की अर्थव्यवस्था के बीच गहन अर्न्तसम्बन्ध पाया जाता है प्रशासन अर्थव्यवस्था के ढ़ांचे, दिशा और उसकी विकास की गति को निर्धारित करता है। प्रशासन के द्वारा ही यह निर्धारित किया जाता है कि अर्थव्यवस्था का स्वरूप पूँजीवादी होगा या समाजवादी, अर्थव्यवस्था खुली होगी या बन्द, अर्थव्यवस्था में नियोजित विकास की पद्धति को अपनाया जायेगा या अनियोजित तथा प्रशासन किस सीमा तक अर्थव्यवस्था में हस्तक्षेप करेगा अर्थात प्रशासन अहस्तक्षेप की नीति अपनायेगा या कल्याणकारी भूमिका निभायेगा आदि सभी निर्णय प्रशासन के द्वारा ही लिय जाते हैं। दूसरी ओर अर्थव्यवस्था प्रशासन के लिए संसाधन उपलब्ध करवाकर उसके कार्यक्षेत्र का निर्धारण करती है क्योंकि संसाधनों की उपलब्धता पर ही प्रशासन का कार्यक्षेत्र निर्भर करता है। दूसरे शब्दों में हम सकते है कि एक देश में प्रशासन कौन-कौन से कार्य करेगा और कौन-कौन सी गतिविधियाँ सम्पन्न करेगा यह उस देश की अर्थव्यवस्था पर निर्भर करेगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रशासन और अर्थव्यवस्था दोनों एक दूसरे से जुड़े हूए हैं और एक दूसरे पर निर्भर हैं।

यदि हम भारत के सन्दर्भ में प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तः क्रिया पर द ष्टिपात करें तो पाते हैं कि यहाँ भी प्रशासन और अर्थव्यवस्था एक दूसरे से गहन रूप से जुड़े हुए हैं और एक दूसरे पर निर्भर हैं। भारत में नियोजित विकास की प्रक्रिया को अपनाया जाना, विकास में प्रशासन की भूमिका होना , मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाना आदि निर्णय इन दोनों के बीच अर्न्तसम्बन्ध का ही परिणाम हैं। इस प ष्ठभूमि में हम भारत में प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया का (अन्तःक्रिया की प्रक ति और विशेषताओं के आधार पर) अध्ययन निम्न दो चरणों (Phases) में विभाजित करके कर सकते हैः

1. स्वतन्त्रता प्राप्ति से 1980 के दशक के मध्य तक।
2. 1980 के दशक के मध्य से अब तक।

अब हम इन दोनों चरणों में प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया की विशेषताओं का वर्णन करेंगे।

अर्थव्यवस्था और प्रशासन अन्तःक्रिया : प्रथम चरण

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारत में जहां एक ओर अत्याधिक गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी और आर्थिक विषमता की समस्याएँ थी वहीं दूसरी ओर भौतिक, तकनीकी और मानवीय संसाधनों का अभाव था। इसके साथ ही उद्योग धन्धे बहुत काम थे, क षि बहुत पिछड़ी हुई थी और क षि तथा उद्योगों

में पुरानी तकनीकों का प्रयोग हो रहा था। बिजली, सड़क और यातायात, संचार के साधन, क षि के लिए सिंचाई व्यवस्था तथा अन्य सरंचनात्मक ढ़ांचा भी अविकसित था। इसके साथ ही देश के विभाजन के कारण पाकिस्तान छोड़ कर भारत आए शरणार्थियों को रोटी, कपड़ा, मकान और रोजगार उपलब्ध करवाने की भी समस्या थी। अतः स्पष्ट हो जाता है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारतीय अर्थव्यवस्था के जीर्णोद्धार के लिए उस समय सरकार के समक्ष बहुत कम विकल्प खुले थे। सरकार आर्थिक विकास के लिए विदेशी सहायता प्राप्त करने के पक्ष में नहीं थी क्योंकि हमारा भूतकाल का इस सम्बन्ध में बहुत ही कटु अनुभव था। अंग्रेज आरम्भ में भारत में व्यापारी बन कर ही आए थे और फिर धीरे-धीरे उन्होंने भारत पर अपनी सत्ता जमा ली। इसलिए सरकार को विदेशी सहायता पर विश्वास नहीं था। दूसरी ओर न तो निजी स्वामित्व में और न ही सरकार के पास इतने संसाधन थे कि अकेले इन दोनों में से कोई भी देश में आर्थिक विकास के उद्देश्य को प्राप्त कर सकते। इसलिए उस समय विकास के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल को अपनाया गया जिसके अर्न्तगत निजी क्षेत्र और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों को अपने-अपने निर्धारित क्षेत्रों में उद्योग लगाने थे। क्योंकि निजि क्षेत्र के पास एक तो पूंजी का अभाव था और दूसरे वह जल्दी लाभ अर्जित करना चाहता है इसलिए अधिक पूंजी की आवश्यकता वाले और ऐसे उद्योग जिनमें लाभ की दर कम थी या लाभ बिल्कुल नहीं होना था तथा लम्बी समयावधि (Long Gestation Period) के उद्योगों में सार्वजनिक क्षेत्र ने निवेश किया। इसके साथ ही नियोजित आर्थिक विकास की पद्धति को अपनाया गया और नियोजन में निजी तथा सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया। सार्वजनिक क्षेत्र के लिए सम्पूर्ण नियोजन (Exhaustive Planning) तथा निजी क्षेत्र के लिए Indicative Planning की व्यवस्था की गई।

इस प ष्ठभूमि में हम प्रशासन तथा अर्थव्यवस्था के मध्य प्रथम चरण की प्रमुख विशेषताओं का निम्न प्रकार वर्णन कर सकते हैं

(1) नियोजन से सम्बन्धित समस्याएँः-

नियोजित विकास का लक्ष्य निर्धारित करने के साथ ही यह आवश्यकता पड़ती है कि योजना बनाने तथा उन्हें कार्यान्वित करने के लिए एक विशेष सरंचना का गठन किया जाए । इस बात को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय स्तर पर एक योजना आयोग (Plannng Commision) का गठन 15 मार्च सन् 1950 को किया गया। इस आयोग का प्रमुख उद्देश्य पंच-वर्षीय योजनाओं का निर्माण करना, उन्हें कार्यन्वित करवाना तथा उनका मूल्यांकन करना था। परन्तु भारत जैसे विशाल और विविधताओं भरे देश के लिए नियोजन करने हेतु केवल एक सरंचना योजना आयोग गठित कर देना काफी नहीं था। दूसरे, आर्थिक और सामाजिक नियोजन संवर्ती सूची का विषय है इसलिए यह आवश्यक था कि राज्यों के स्तर पर भी नियोजन के लिए आवश्यक सरंचनाओं का गठन किया जाये। परन्तु एक ओर संसाधनों (भौतिक तथा विशेषज्ञों) के अभाव और दूसरी ओर इच्छाशक्ति के अभाव के कारण इस प्रकार की विशिष्ट सरंचनाओं का राज्यों के स्तर पर गठन या तो नहीं पाया और जहां हुआ वहाँ यह वास्तविकता की अपेक्षा औपचरिकता अधिक थी ।

क्योंकि विशेषज्ञों के स्थान पर इनमें नियुक्त अधिकतर नौकरशाह थे जिन्हें नियोजन के निर्माण तथा मूल्यांकन के सम्बन्ध में विशिष्ट जानकारी नहीं थी।

(2) दक्ष मानवीय संसाधनों का अभावः-

प्रशासन-अर्थव्यवस्था अन्तःक्रिया के प्रथम चरण की एक अन्य विशेषता थी तकनीकी रूप से कुशल एवं दक्ष मानवीय संसाधनों का अभाव। खेद का विषय यह रहा कि जहाँ एक ओर बेरोजगारी की समस्या थी वहीं दूसरी और तकनीकी रूप से दक्ष मानवीय संसाधनों का अभाव था। ऐसा इसलिए था कि स्वतन्त्रता से पहले शिक्षण संस्थान और विशेष तौर पर तकनीकी शिक्षण संस्थान बहुत ही कम

थे। इस कारण जनसंख्या का बहुत थोड़ा भाग शिक्षित था और उसमें भी तकनीकी शिक्षा प्राप्त लोग नगण्य थे । दूसरी ओर स्वतन्त्रता के पश्चात् भी संसाधनों तथा पूंजी के अभाव में सरकार दक्ष मानवीय संसाधन विकसित करने के लिए तकनीकी शिक्षण संस्थान नहीं खोल सकी। परिणामस्वरूप तकनीकी मानवीय संसाधनों के अभाव के कारण भारत में विकास की प्रक्रिया प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुई।

यदि नियोजन के सन्दर्भ में देखा जाए तो दक्ष मानवीय संसाधनों की आवश्यकता दो स्तरों पर पड़ती है। पहला योजना बनाने के स्तर पर (क्योंकि नियोजन एक तकनीकी प्रक्रिया है और इसमें यदि सभी तथ्यों का सही विश्लेषण न किया जाए तो बनाई गई योजना अर्थहीन हो जायेगी) और दूसरा उसके क्रियान्वयन के स्तर पर (क्योंकि योजना को लागू करते समय उसके निरन्तर विश्लेषण की आवश्यकता होती है जिसके आधार पर, यदि आवश्यकता हो तो, योजना में आवश्यक या वांछित परिवर्तन करने की आवश्यकता होती है जो कि एक कुशल एंव तकनीकी रूप से नियोजन में विशेषज्ञ कार्मिक द्धारा ही किया जा सकता है। दुर्भाग्यवश भारत में इन दोनों ही तकनीकी रूप से कुशल मानवीय संसाधनों का अभाव था।

(3) विकासोन्मुख (Development Oriented) नौकरशाही का अभावः-

प्रमुख विचारक राइजर का मत है कि विकासशील देशों में विकास कार्य निष्पादित करने हेतू प्रशिक्षित नौकरशाही का अभाव पाया जाता है। परिणामस्वरूप इन देशों में विकास योजनाओं को लागू करने के लिए आवश्यक कार्यकुशलता का अभाव पाया जाता है। वास्तव में द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् स्वतन्त्र हुए राष्ट्रों में नौकरशाही का वर्तमान रूप में गठन एवं विकास औपनिवेशिक काल में हुआ। और औपनिवेशिक काल में कार्यकुशलता के मापदण्ड एक विकासशील देश में कार्यकुशलता के मापदण्डों से सर्वथा भिन्न थे। अतः यह आवश्यक था कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इन नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों में नौकरशाही का द ष्टिकोणात्मक परिवर्तन किया जाये। परन्तु दुर्भाग्यवश भारत सहित अनेकों देशों में ऐसा सम्भव नहीं हो पाया और इस कारण इन देशों में नौकरशाही से कार्यकुशलता के सम्बन्ध में अपेक्षाओं में काफी अन्तर (Gap) रहा है।

(4) सूचनातन्त्र (Information Machinery) का अभावः-

भारत में प्रशासन और अर्थव्यवस्था के बीच अन्तःक्रिया की एक अन्य प्रमुख विशेषता उपयुक्त सूचनातन्त्र का अभाव रहा है। अशोक मेहता भारतीय नियोजन के सन्दर्भ में टिप्पणी करते हुए कहा है कि नियोजन के लिए आवश्यक तकनीकी रूप से दक्ष या कार्यकुशल मानवीय संसाधनों की कमी के साथ साथ हमारे देश में सूचनातन्त्र का भी अभाव पाया जाता है। नियोजन में उपयुक्त सूचनाओं, तथ्यों व आंकड़ों का बहुत महत्व है सही एवं विश्वसनीय तथ्यों एवं आंकड़ों के अभाव में योजना का उद्देश्य निर्धारण भी अनुपयुक्त होगा। जब योजना के उद्देश्यों में त्रुटि होगी तो उसका कार्यन्वयन और मूल्यांकन भी त्रुटिपूर्ण होगा और इस प्रकार यह प्रक्रिया चलती रहेगी क्योंकि नियोजन का एक चक्र (Cycle) होता है और इस चक्र में हर पग (Step) की उपयुक्तता इस बात पर निर्भर करती है कि उससे पहले वाला पग (Step) कितना तर्कसंगत, वैज्ञानिक तथा अत्रुटिपूर्ण था। अतः स्पष्ट हो जाता है कि नियोजन की प्रक्रिया में उपयुक्त सूचनाएं बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। परन्तु खेद का विषय यह है कि भारतीय प्रशासन में सूचनातन्त्र में बहुत सी त्रुटियाँ पाई जाती हैं। प्रथम, सूचनातन्त्र में नियुक्त प्रशासकीय अधिकारी तकनीकी रूप से इस कार्य को करने के लिए कुशल नहीं होते हैं। दूसरे, इन अधिकरियों को सूचनाएं एकत्रित या संकलित करने के उद्देश्य का ज्ञान नहीं होता। तीसरे, इन पदाधिकारियों का द ष्टिकोणात्मक प्रशिक्षण नहीं दिया जाता। इन सभी कारणों से सूचना संकलित करने वाले अधिकारी उनके द्धारा एकत्रित सूचनाओं का महत्व नहीं समझ पाते और इसलिए सही जानकारी या सूचनाएं एकत्रित नहीं कर पाते।

(5) योजनाओं के क्रियान्वयन की समस्याः-

भारत में योजनाओं का निर्माण केन्द्रीय स्तर पर गठित योजना आयोग के द्धारा किया जाता है। योजना आयोग के पदेन अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं तथा इसका कार्य सुचारू रूप से देखने के लिए एक उपाध यक्ष (पूर्णकालिक) की नियुक्ति प्रधानमंत्री के द्धारा की जाती है। इसके अतिरिक्त योजना आयोग की सरंचना इस प्रकार है कि इसमें राज्यों को कोई प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता और पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण केन्द्रीय सरकार की अनुशंशाओं के अनुरूप होता है। यद्यपि योजना का मसौदा तैयार करने के पश्चात् इसे अन्तिम रूप अगस्त 1952 में पहली बार गठित राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council) में दिया जाता है। राष्ट्रीय विकास परिषद् में प्रधानमंत्री , कैबिनेट स्तर के सम्बन्धित मन्त्रियों के अलावा सभी राज्यों के मुख्यमंत्री भी सम्मिलित होते हैं किन्तु क्योंकि राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक वर्ष भर में एक या दो बार ही हो पाती है इसलिए पंचवर्षीय योजनाओं की राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक में स्वीक ति प्राप्त करना महज एक औपचारिकता है। इस प्रकार पंचवर्षीय योजनाओं, जिनमें कि केन्द्रीय तथा राज्यों दोनों के संसाधनों के सम्बन्ध में नियोजन किया जाता है, का निर्माण केवल केन्द्रीय सरकार के दिशा-निर्देशों के अधीन किया जाता है और इसमें राज्यों की भागीदारी नगण्य रहती है इसलिए सामान्यतः राज्य सरकारें पंचवर्षीय योजनाओं और नियोजन को केन्द्र सरकार के द्धारा राज्यों के अधिकार-क्षेत्र का अतिक्रमण मानती है। परन्तु दूसरी ओर इन योजनाओं को कार्यान्वित करने में राज्य प्रशासन की अहम भूमिका अपेक्षित होती है। इस विरोधाभासी परिस्थिति में अधिकतर राज्य पंचवर्षीय योजनाओं के क्रियान्वयन में सहयोग नहीं करते। ऐसा अधिकतर उस परिस्थिति में होता है जब केन्द्र और राज्य में अलग अलग दलों की सरकारें सत्तारूढ़ होती है।

(6) योजनाओं के मूल्याकंन सम्बन्धी समस्याः-

विकास योजनाओं का निष्पक्ष मूल्यांकन विकास प्रशासन की सफलता के लिए नितान्त आवश्यक है। निष्पक्ष मूल्यांकन के आधार पर ही हम यह जान सकते हैं। कि भूतकाल में बनाई एवं लागू की गई विकास योजनाओं एवं कार्यक्रमों की क्या उपलब्धियाँ रही और कहाँ पर वे असफल हुए। यह जानकारी या सूचना नियोजन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी पर भविष्य में किये जाने वाले नियोजन की उद्देश्य -निर्धारण प्रक्रिया निर्भर करती है । परन्तु दुर्भाग्यवश प्रशासन-अर्थव्यवस्था अन्तःक्रिया के प्रथम चरण में इस प्रकार की मूल्यांकन मशीनरी या तो उपलब्ध ही नहीं थी और यदि गठित भी की गई थी तो उसमें कुशल एवं दक्ष कार्मिकों का अभाव होने के साथ निष्पक्ष मूल्यांकन के लिए उपयुक्त यन्त्र (Tools) भी विकसित नही किये गये थे।

(7) जनसहभागिता का अभावः-

विकास प्रक्रिया में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार ने सन् 1952 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जन्मदिन पर सामुदाायिक विकास कार्यक्रम लागू किए गए और ठीक एक वर्ष पश्चात् राष्ट्रीय विस्तार सेवाएं भी लागू की गई। इन दोनों ही कार्यक्रमों का उद्देश्य भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में जनता के सहयोग एवं सहभागिता के द्धारा विकास कार्यक्रमों को लागू करना था। सन् 1956 में बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में योजना आयोग द्धारा गठित योजना परियोजना समिति (Committee on Plan Projects) (या बलबन्तराय मेहता समिति) ने 1957 मे दी अपनी रिर्पोट में स्पष्ट किया कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय विस्तार सेवाएं अपने उद्देश्य (जनसहभागिता बढ़ाने में) अक्षम रहे हैं। साथ ही समिति ने जनसहभागिता सुनिश्चित करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था लागू करने की सिफारिश भी दी। समिति ने सुझाव दिया कि ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर खण्ड समिति तथा जिला स्तर जिला परिषद् का गठन किया जाना इन तीनों स्तर की संस्थाओं में लोगों के चुने हुए प्रतिनिधि होने चाहिए, इन तीनों संस्थाओं में आपसी अर्न्तसम्बन्ध होना चाहिए तथा विकास सम्बन्धी योजनाओं के निर्माण और उनके कार्यान्वयन में इन

संस्थाओं को भागीदार बनाया जाना चाहिए ताकि विकास कार्यक्रमों में जनसहभागिता सुनिश्चित हो सके।

परन्तु इस समिति की रिर्पोट को राजस्थान, महाराष्ट्र आदि कुछ राज्यों (और वहां भी 1960 के दशक के मध्य तक ही) के अतिरिक्त अधिकतर राज्यों में विशेष महत्व न देते हुए केवल औपचारिकतावश लागू किया गया इस प्रकार जनसहभागिता को सुनिश्चित नहीं किया जा सका। इस दिशा में एक अन्य प्रयास 1977 में केन्द्र में जनता पार्टी के सत्ता में अपने पर अशोक मेहता समिति गठित करके किया गया। परन्तु इस समिति की सिफारिशें आने तक केन्द्र में सत्ता परिवर्तन हो गया और श्रीमति इन्दिरा गाँधी के नेत त्व में कांग्रेस पार्टी फिर से केन्द्र में सत्तारूढ़ हो गई जिसने कि अशोक मेहता समिति की सिफारिशें लागू करने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। इस प्रकार विकास प्रक्रिया में जनसहभागिता को सुनिश्चित नहीं किया जा सका। और इसी कारण सरकार के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में चलाए गए अनेक विकास कार्यक्रम (विशेषतः गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार कार्यक्रम) इच्छित परिणाम नहीं दे सके क्योंकि इन कार्यक्रमों को बनाते समय लोगों की आकांक्षाओं का ध्यान नहीं रखा गया। इस कारण लोगों ने इन्हें अपने कार्यक्रम नहीं समझा तथा उनकी कार्यन्विती में सहयोग नहीं दिया जिस कारण ये असफल रहे।

(8) स्थानीय स्तर पर नियोजन का अभावः-

सम्भवतः भारत में नियोजन की सबसे बड़ी कमी शायद यह रही कि यहां पर केन्द्रीक त नियोजन को अपनाया गया। अर्थात केन्द्रीय स्तर पर पूरे देश के लिए नियोजन करना और उसे निचले स्तर के प्रशासन के द्धारा कार्यन्वित करवाना। भारत जैसे विशाल और विविधताओं भरे देश में जहां पर क्षेत्रीय विषमताएं बहुत अधिक पाई जाती हैं, केन्द्रीक त नियोजन का अपनाया जाना बुद्धिमतापूर्ण कार्य नहीं है। भारतीय सन्दर्भ में विकेन्द्रित नियोजन को अपनाया जाना नितान्त आवश्यक था। इसके अर्न्तगत स्थानीय स्तर पर स्थानीय लोगों के द्धारा स्थानीय आवश्यकताओं एवं समस्याओं के लिए स्थानीय संसाधनों की उपलब्धता के अनुरूप नियोजन किया जाना चाहिए था तथा स्थानीय स्तर पर किए गए नियोजन का समावेश राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर के नियोजन में किया जाना चाहिए था।

(9) भ्रष्टाचारः-

प्रशासन-अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तः क्रिया के प्रथम चरण की एक अन्य विशेषता थी भ्रष्टाचार में व द्धि। जैसे-जैसे भारतीय अर्थव्यवस्था सुद ढ़ होती गयी वैसे-वैसे इसमें भ्रष्टाचार भी बढ़ता गया। भ्रष्टाचार में व द्धि का प्रमुख कारण था मिश्रित अर्थव्यवस्था। मिश्रित अर्थव्यवस्था होने के कारण सार्वजनिक क्षेत्र पूर्णतयः नौकरशाही और राजनीति के अर्न्तगत कार्य कर रहा था इसके साथ ही नौकरशाही पर उपयुक्त नियन्त्रण व्यवस्था का अभाव था जिस कारण नौकरशाही इन सार्वजनिक उद्यमों की कार्यकुशलता बढ़ाने की अपेक्षा स्वार्थ-सिद्धी में अधिक लिप्त हो गई। दूसरे, निजी क्षेत्र में उद्योग लगाने के लिए निजी उद्यमियों को अनेक प्रकार की औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ती थी। इससे भी नौकरशाही तथा राजनीति में भ्रष्टाचार का संचार हुआ।

(10) विस्त त किन्तु सुस्त सार्वजनिक क्षेत्रः-

भारत में विकास के लिए अपनाए गए मिश्रित अर्थव्यवस्था के सिद्धान्त के अर्न्तगत यह आशा की गई थी कि इससे हमें पूँजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं के लाभ मिल सकेंगे और इन दोनों के दोषों को हम दूर कर पायेंगे। क्यों 'इस सिद्धान्त को अपनाने पर हम पूंजीवाद और समाजवाद के दोषों को दूर रखकर इन दोनों के गुणों से लाभन्वित हो सके या नहीं' इस विषय पर बहस न करे तो हम पाते है कि इस सिद्धान्त के अपनाने से निश्चित तौर भारत ने काफी विकास किया। भारत खाद्यान्नों के मामले में न केवल स्वावलम्बी बना अपितु इनका निर्यात भी करने लगा, देश मे अनेक पूंजीगत उद्योग लगाए गए, सड़को एंव रेलवे का जाल फैलाया गया, सिंचाई एंव विद्युत परियोजनाओं का सफलतापूर्वक क्रियान्वयन हुआ, संचार माध्यमों के क्षेत्र में काफी विकास हुआ, सैन्य सामग्री और space research

इत्यादि में भारत की उपलब्धियां सराहनीय रही।

किन्तु इस सिद्धान्त को अपनाने से कुछ नकारात्मक परिणाम भी निकले। उदाहरणार्थ इससे नौकरशाही की शक्तियों में अभूतपूर्व व द्धि हुई। परन्तु नौकरशाही के उतरदायित्व के लिए प्रभावशाली व्यवस्था (Effective Mechanism) विकसित नही किया गया जिसके कारण नौकरशाही ने इन शाक्तियों का दुरपयोग किया। अतः भ्रष्टाचार और अकार्यकुशलता में व द्धि हंई। इस सबके कारण सार्वजनिक क्षेत्र से जितना प्रतिफल लोगों को मिलना चाहिए था वह नहीं मिल पाया।

प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया का दूसरा चरण

जैसा कि हम देख चुके हैं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारतीय अर्थव्यवस्था की दशा बहुत पिछड़ी हुई थी। दूसरे, न तो सार्वजनिक क्षेत्र के पास और न ही निजी क्षेत्र के पास अकेले अर्थव्यवस्था को उस बदहाली से निकालने के लिए पर्याप्त पूंजी थी । इसलिए यह निर्णय लिया गया कि अर्थव्यवस्था के विकास के लिए दोनों ही क्षेत्रों का सहयोग लिया जाए। अर्थात मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया जाए। इस बीच 1970 के दशक में प्रशासन का झुकाव (Inclination) समाजवाद की ओर अधिक हो गया और इस कारण कुछ ऐसे निर्णय लिए गए जिनसे भारतीय अर्थव्यवस्था समाजवाद की ओर अग्रसर हुई । उदाहरणार्थ, निजी क्षेत्र के बैंको का राष्ट्रीकरण, अनेक (निजि) औद्योगिक इकाइयों का राष्ट्रीयकरण, 42वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम द्धारा भारतीय संविधान का उद्देश्य शनैः शनैः किन्तु निरन्तर समाजवाद की ओर गतिमान होना Coradual movement towards socialistic pattern of society) निर्धारित करना, 44वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्धारा 'सम्पति के अधिकार' को मौलिक अधिकारों की सूची से हटाना ये सभी प्रशासन के समाजवादी प्रव ति की ओर झुकाव को प्रर्दशित करते है।

इसके साथ ही हम यह भी देख चूके हैं कि इस मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल के परिणाम भी मिश्रित ही रहे अर्थात इसकी कुछ कमिया भी रही अर्थात इसके सकारात्मक एंव नकारात्मक दोनों ही पहलू रहे। परन्तु 1980 के दशक के अन्तिम वर्षो में तथा 1990 के आरम्भ में कुछ ऐसी परिस्थितयां उत्पन्न हुई जिनके कारण इस मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल की उपयोगिता पर प्रश्नचिन्ह लग गया। यह आरोप लगाया गया कि सार्वजनिक क्षेत्र की कमियों व त्रुटियों के कारण मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल असफल हो गया। सन् 1991 मे भारत की एक बडें गम्भीर आर्थिक संकट से गुजरना पड़ा। संभवतः 1991 का यह आर्थिक संकट स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से भारतीय अर्थवयवस्था का सबसे गंभीर संकट था। परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि विकास की रणनीति अथवा युक्ति इस संकट के लिए उत्तरदायी नहीं थीअपितु 1980 के दशक में अर्थव्यवस्था का जिस लापरवाही के साथ समष्टि प्रबन्धन (Macro Management) किया गया उसी के फलस्वरूप यह आर्थिक संकट उत्पन्न हुआ। 1980 के दशक में अर्थव्यवस्था के नियमों को ताक पर रखकर सरकार ने बढ़ते गैर-विकास व्यय (Non development Expenditure) कारण हुए राजकोषीय घाटे (Fiscal Deficit) जो कि सरकार के राजस्व और व्यय में बढ़ते हुए अन्तर के कारण पैदा हुआ को बड़ी मात्रा में घरेलू ऋण के द्धारा पूरा किया गया। दूसरी ओर समग्र अर्थव्यवस्था की आय और व्यय में निरन्तर बढ़ते हुए अन्तर के फलस्वरूप भुगतान सन्तुलन के चालू खाते में भारी घाटा उत्पन्न हुआ जिसे विदेशी लोक ऋण के द्धारा पूरा किया गया। अतः मुद्रा की पूर्ति की तुलना में उत्पादन में व द्धि नहीं हुई जिस कारण मुद्रास्फीति (Inflation) बहुत अधिक बढ़ गई। दूसरे शब्दों में हम सकते हैं कि 1980 के दशक में विकास व्यय की तुलना में गैर-विकास व्यय अधिक बढ़ गया और इस गैर विकास व्यय के कारण राजकोषीय तथा बजट घाटा बढ़ गया। परन्तु जैसा कि प्रसिद्ध अर्थशास्त्री केन्स ने कहा है घाटे का बजट विकास कार्यो को सम्पन्न करने के लिए हितकर ना कि गैर-विकासात्मक कार्यो के लिए और यदि ऐसा किया जाता है तो इससे अर्थव्यवस्था में आन्तरिक असन्तुलन की स्थिति पैदा हो जाती है।

इसके साथ ही 1990 में खाड़ी युद्ध ने भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। युद्ध के कारण तेल की कीमतें अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में बहुत अधिक बढ़ गई। अतः भारत को कच्चा तेल आयात करने के लिए अधिक विदेशी मुद्रा का भुगतान करना पड़ा। इससे भारत का विदेशी व्यापार सन्तुलन गड़बड़ा गया और भारत का विदेशी मुद्रा कोष केवल कुछ ही सप्ताह के विदेशी मुद्रा के भुगतान के लिए पर्याप्त था। इससे अर्न्तराष्ट्रीय पूंजी बाजार में भारत का साख-विस्तार (Credit rating) बहुत गिर गया। इस कारण बाह्य सहायता या ऋण मिलना लगभग कठिन था। साथ ही यदि बाह्य सहायता या बाह्य ऋण के द्वारा इस घाटे को पूरा किया जाता तो समस्या और अधिक विकराल रूप धारण कर लेती क्यों कि इससें उत्पादन में व द्धि हुए बिना मुद्रा की पूर्ति बढ़ जाती जिससे कि मुद्रास्फीति की दर और अधिक बढ़ जाती जो कि पहले ही (1990-91 में) थोक कीमतों के आधार पर 10.3 प्रतिशत वार्षिक हो चुकी थी। इसी प्रकार इस राजकोषीय घाटे की स्थिाति से निपटने के लिए यदि आन्तरिक ऋण लिया जाता तो वह भी समस्या को कम करने की अपेक्षा बढ़ाता ही। एक अन्य विकल्प अतिरिक्त कर लगा कर इस समस्या से निपटने का था। परन्तु इस माध्यम से अधिक साधन संग्रहण की गुजांइस नहीं थी क्योंकि कर घरेलू सकल उत्पाद अनुपात पहले ही काफी अधिक था। यह अनुपात 1970-71 में 19 प्रतिशत, 1980-81 में 30 प्रतिशत और 1990-91 में 37 प्रतिशत हो गया था।

अतः इस परिस्थिति से निपटने के लिए बहुत ही सावधानीपूर्वक कार्य करने की आवश्यकता थी। इसीलिए, अन्ततः प्रशासन ने इस संकट से निपटने के लिए निम्नलिखित हल निकालेः-

(1) लोकव्यय को सीमित करना,

(2) आर्थिक -सहायता (Subsidy) कम करना,

(3) घरेलू उद्योगों की उत्पादकता बढ़ाना,

(4) घरेलू उद्योगों की उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं की गुणवता बढ़ाने के लिए बाजार में प्रतिस्पर्धा बढ़ाना,

(5) घरेलू उद्योगों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ विदेशी पूंजी को भी आंमत्रित करना ताकि उत्पादन बढ़े, भारतीय उत्पादन की गुणवता बढ़े तथा भारत में विदेशी मुद्रा कोष में व द्धि हो।

(6) भारत में विदेशी पूंजी (Forign Direct Innvestment FDI) बढ़ाने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना। अतः नई औद्योगिक नीति की घोषणा की गई, एकाधिकर एंव प्रतिबन्ध व्यवहार अधिनियम (Monopoliyic and Restrictive Trade Practies Act-MRTP Act) में परिवर्तन किए गए, उद्योग लगाने के लिए शर्तो को आसान किया गया आदि।

(7) जब तक उपरोक्त कदम उठाये जाएं और वे फल देना आरम्भ करे उस समय तक अर्थात अस्थायी रूप से विदेशी सहायता या ऋण प्राप्त करना क्योंकि प्रथम, भारत का विदेशी मुद्रा कोष लगभग रिक्त हो गया था और दूसरे 8वीं पंचवर्षीय योजना को लागू करने के लिए संसाधन जुटाना आवश्यक था।

उपरोक्त के अतिरिक्त भी भारतीय अर्थव्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए अनेकों कदम उठाये गये। इन प्रयासो का प्रतिफल जल्द ही मिलना आरम्भ हो गया और भारतीय अर्थव्यवस्था उस गंभीर आर्थिक संकट जो 1991 में पैदा हो गया था उससे शनैः शनैः उबरने लगी। किन्तु यह बात स्पष्ट हो गई कि 1991 में आर्थिक संकट से उबारने के लिए जो कदम उठाये गये उनके फलस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था पर अब समाजवादी प्रव ति का प्रभाव कम होता जा रहा है और पूंजीवादी प्रव ति अधिक प्रभावशाली होती जा रही है। 1991 के पश्चात् विगत 13 वर्षो में प्रशासन के द्वारा लिये गये अनेक निर्णय (अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वाले) इसके साक्षी हैं।

उपरोक्त आर्थिक प ष्ठभूमि में प्रशासन और अर्थव्यवस्था के दूसरे चरण की जो विशेषताएं रही उनका उल्लेख यहां किया जा रहा है:-

(1) विकास के मॉडल पर पुनर्विचारः-

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में सामाजिक-आर्थिक विकास लाना अनिवार्य था। उस समय की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए देश में विकास लाने का उतरदायित्व प्रशासन को सौंपा गया अर्थात प्रशासन को इस प्रक्रिया में एक मुख्य अभिकर्ता की भूमिका निभाने की जिम्मेदारी दी गई। साथ ही विकास के मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल को अपनाया गया। कालान्तर में इस मॉडल को अपनाने पर भारत में काफी विकास हुआ इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु प्रशासन की अकार्यकुशलता, अर्कमण्यता, भ्रष्टाचार आदि दोषों ने इस मॉडल की सफलता पर प्रश्न-चिन्ह लगा दिया। साथ ही 1991 के आर्थिक संकट ने मॉडल पर पुर्नःविचार की प्रक्रिया आरम्भ कर दी। यद्यपि, जैसा कि हम देख चुके हैं, 1991 का आर्थिक संकट विकास की इस युक्ति या मॉडल की देन नहीं था, फिर भी 1991 में पैदा हुई परिस्थितियों में इस मॉडल का परित्याग करना संभवतः अपरिहार्य हो गया। परिणामस्वरूप, प्रशासन ने विकास के लिए मिश्रित अर्थव्यवस्था मॉडल में परिवर्तन लाना आवश्यक समझा और इस मॉडल को अब तक जो रूझान समाजवादी प्रव ति की ओर था उसे अब पूंजीवादी प्रव ति की ओर झुकाव में परिवर्तित कर दिया गया। फलतः जहां 1970 के दशक में अनेकों उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया गया वहीं दूसरी ओर 1990 के दशक में और 21वीं शताब्दी के आरम्भ में अनेकों राष्ट्रीयक त उद्योगों का निजीकरण किया जा रहा है। यहां यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि केवल रूग्ण या बिमार सार्वजनिक उद्यमों का ही निजीकरण नहीं किया जा रहा है अपितु स्वस्थ एवं लाभ अर्जित करने वाली सार्वजनिक क्षेत्र की इकाईयों का भी उपनिवेश (Disinvestment) किया गया है। इनमें BALCO का प्रमुख रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

(2) बाजार में प्रतिस्पर्धा में व द्धिः-

भारत में सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों का एक प्रमुख दोष यह था कि इनके द्धारा उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं में गुणवता का अभाव था। इसका प्रमुख कारण था बाजार में प्रतिस्पर्धा का अभाव। मिश्रित अर्थव्यवस्था अपनाए जाने के कारण अर्थव्यवस्था के कुछ ऐसे क्षेत्र थे जो कि सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित रखे गए थे और निजी उद्यमियों को ऐसे क्षेत्रों में उद्योग लगाने की इजाजत नहीं थी। इस कारण इन क्षेत्रों में सार्वजनिक क्षेत्र का एकाधिकार था। अतः प्रतिस्पर्धा के अभाव में गुणवता की कमी के बावजूद भी जो भी वस्तुएं तथा सेवाएं सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के द्धारा उत्पादित की जाती उनका उपभोग हो जाता था। परन्तु इससे उपभोक्ताओं को हानि होती थी क्योंकि उन्हें पूरी कीमत अदा करने के बाद भी सही गुणवता उपलब्ध नहीं हो पाती थी। यद्यपि निजी क्षेत्र के उद्यमियों में प्रतियोगिता पाई जाती है थी परन्तु पूर्णतः खुली अर्थव्यवस्था न होने के कारण उपभोक्ताओं को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की गुणवता प्राप्त नहीं हो पाती थी क्योंकि घरेलू उत्पादों को विदेशों में उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं से प्रतिस्पर्धा नहीं करनी पड़ती थी।

इसलिए प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया के दूसरे चरण में उपभोक्ताओं को लाभन्वित करने के लिए उन्हें अर्न्तराष्ट्रीय स्तर की गुणवता की वस्तुएं तथा सेवाएं उपलब्ध करवाने के लिए अर्थव्यवस्था के खूलेपन पर बल दिया गया। इसके लिए आयात-निर्यात नीति (Exim Policy) में आधारभूत परिवर्तन करने के साथ प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश (FDI) बढ़ाने के लिए औद्योगिक नियन्त्रण कम किया गया (Industrial Deregulation or Delicencing)

(3) विकेन्द्रीक त नियोजन की दिशा में प्रयासः-

प्रशासन और अर्थव्यवस्था अन्तःक्रिया के दूसरे चरण की एक अन्य प्रमुख विशेषता थी विकेन्द्रीक त नियोजन की दिशा में प्रयास। यद्यपि भारत में केन्द्रीयक त नियोजन की अनेकों बार आलोचना की

गई और विकेन्द्रीक त नियोजन को अपनाने की सिफारिश अनेकों बार की गई परन्तु इस दिशा में कोई गम्भीर प्रयास नहीं किया गया। दिसम्बर 1992 में संसद के दोनों सदनों के द्धारा पारित हो किये जाने के पश्चात् अप्रैल 1993 में राष्ट्रपति की स्वीक ति मिलने के उपरान्त 74 वें संविधान संशोधन अधिनियम को गजट में प्रकाशित किया गया जिसके अन्तर्गत संवैधानिक तौर पर जिला नियोजन समिति (District Planning Committee) के गठन का (प्रत्येक जिले के स्तर पर) प्रावधान किया गया। इस समिति, जिसमें कि शहरी तथा ग्रामीण स्थानीय संस्थाओं के निर्वाचित प्रतिनिधि सदस्य बनाए गए, का कार्य था पूरे जिले (शहरी और ग्रामीण इलाकों) के लिए योजना बनाना।

यद्यपि केन्द्रीय सरकार का यह प्रयास सफल नहीं हो पाया क्योंकि अधिकतर राज्यों में या तो इस प्रकार की समितियों का गठन ही नहीं किया गया और यदि गठन किया भी गया तो इन समितियों की बैठकें ही नहीं हो पाती, तथापि केन्द्रीय सरकार का विकेन्द्रीक त नियोजन की दिशा में यह एक सराहनीय प्रयास था।

(4) जनसहभागिता का अभावः-

यद्यपि 1992 में संसद द्धारा पारित और 24 अप्रैल 1993 को राष्ट्रपति की स्वीक ति मिलने के पश्चात् गजट में प्रकाशित किए गए 73वें तथा 74वें संविधान अधिनियमों को विकास कार्यक्रमों में जनसहभागिता सुनिश्चित करने की दिशा में मील के पत्थर की संज्ञा दी गई। इन अधिनियमों के द्धारा ग्रामीण (73 वें अधिनियम के अर्न्तगत) तथा शहरी (74 वें अधिनियम के अर्न्तगत) स्थानीय संस्थाओं की संवैधानिक दर्जा दिया गया और भारतीय संविधान में 11वीं 12वीं अनुसूचि जोड़ कर स्थानीय महत्व के क्रमशः 29 तथा 18 विषय विषय इन संस्थाओं को हस्तांरित करने का प्रावधान किया गया। इन विषयों पर योजना बनाने तथा उन्हें लागू करने की शाक्ति इन स्थानीय संस्थाओं के चुने हुए प्रतिनिधियों को सौंपी गई। इसके साथ ग्राम सभा को भी 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्धारा संवैधानिक दर्जा दिया गया और यह प्रावधान किया गया कि ग्राम पंचायत अपने सभी निर्णयों को ग्राम सभा की बैठक के समय उसके समक्ष रखेगी और उसकी (ग्राम सभा) की सहमति उन निर्णयों के सम्बन्ध में लेगी। इस प्रकार प्रशासन ने एक सकारात्मक कदम उठाकर विकास योजनाओं एवं कार्यक्रमों में जनसहभगिता को सुनिश्चित करने का प्रयास किया।

किन्तु इन अधिनियमों के अर्न्तगत अनेकों प्रावधानों की कार्यान्विती को राज्य सरकारों पर छोड़ दिया गया अर्थात अधिकतर प्रावधान वैकल्पिक बनाए गए न कि अनिवार्य फलस्वरूप अलग-2 राज्यों में इस दिशा में किए गए प्रयासों की गम्भीरता में अन्तर पाया जाता है। परन्तु हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि इन दोनों अधिनियमों की कार्यान्विती पर देश भर में अनेक शोध किए गए हैं जिनमें यह पाया गया है कि यद्यपि इन दोनों अधिनियमों को लागू करने के एक दशक से अधिक समय बीतने के बाद भी विकास कार्यक्रमों और योजनाओं को बनाने तथा उन्हें लागू करने मे अधिकांश राज्यों में जनसहभागिता का अभाव पाया जाता है और इस दिशा में ये अधिनियम भी गुणात्मक (Appreciable) परिवर्तन कर पाने में असमर्थ रहे हैं।

(5) त तीय/टर्शरी क्षेत्र (Tertiany Sector) में अप्रत्याशित व द्धिः-

प्रशासन-अर्थव्यवस्था अन्तःक्रिया के दूसरे चरण की एक अन्य विशेषता है त तीय क्षेत्र में अत्याधिक विस्तार। अन्तःक्रिया के प्रथम चरण में जहां प्राथमिक क्षेत्र में तथा द्वितियक क्षेत्र में विस्तार एवं विकास पर अधिक बल दिया गया वहां दूसरे चरण में टर्शरी क्षेत्र को महत्व मिला। टर्शरी क्षेत्र, जिसे सेवा क्षेत्र (Service Sector) के नाम से भी जाना जाता है, का विकास अर्थव्यवस्था के विकास का द्योतक माना जाता हैं अतः इस द ष्टि से देखा जाए तो हम कह सकते हैं कि भरतीय अर्थव्यवस्था विकास की ओर अग्रसर है । किन्तु हमें यहां एक विरोधाभास नजर आता है। दुनिया के विकसित देशों में भी यद्यपि सेवा क्षेत्र काफी प्रबल हैं परन्तु वहाँ पर प्राथमिक तथा द्वितीयक क्षेत्र

भी काफी सशक्त हैं जबकि भारत में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान कम होता जा रहा है और इसके साथ ही द्वितीयक क्षेत्र में भी कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है। इन दोनों क्षेत्रों का तुलनात्मक रूप में (सेवा क्षेत्रा की तुलना) पिछड़ापन सन्तुलित विकास के मार्ग में बाधा उत्पन्न करता है। वास्तव में सेवा क्षेत्र को पोषित करने वाले प्राथमिक तथा द्वितियक क्षेत्र ही हैं। वस्तुत इन तीनों क्षेत्रों का सन्तुलित विकास ही पूरी अर्थव्यवस्था के विकास का मार्ग प्रशस्त करता है और इनमें से कोई भी एक क्षेत्र अन्य दो की अपेक्षा कम या अधिक विकास करता है तो उसे सन्तुलित आर्थिक विकास की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

(6) तकनीकीकरण में व द्धिः-

दूसरे चरण की एक अन्य विशेषता अर्थव्यवस्था में तकनीक एवं प्रौद्योगिकी का बढ़ता हुआ महत्व है। अतः हम पाते हैं कि वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन में नवीनतम तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है। यद्यपि अर्थव्यवस्था के तकनीकीकरण का प्रयास स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में आरम्भ कर दिया था तथापि तकनीकीकरण की प्रक्रिया वास्तव में 1991 में शुरू किए गए आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया के बाद ही सम्भव हो पाया । इसमें कोई सन्देह नहीं कि तकनीकीकरण में व द्धि से कार्यकुशलता में व द्धि हुई है लेकिन इसका एक नकरात्मक पहलू भी है। तकनीकी तथा प्रौद्योगिकी को अधिक महत्व दिए जाने के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था में पहले से चली आ रही बेरोजगारी की समस्या पिछले लगभग एक दशक के दौरान निरन्तर विकराल रूप धारण करती जा रही है। इसलिए भारतीय सन्दर्भ में अत्याधिक तकनीकीकरण की कई अर्थशास्त्री आलोचना करते हैं। वास्तव में कुछेक अर्थशास्त्री भारत जैसे श्रम-प्रधान देश में उत्पादन की पूँजी-प्रधान तकनीकों के प्रयोग को ही अनुचित मानते हैं। परन्तु इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि केवल श्रम-प्रधान तकनीकों को अपना कर हम वर्तमान युग में विकास नहीं कर सकते । इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि हम विकास के लिए तकनीकों एवं श्रम का इस प्रकार सन्तुलित प्रयोग करें कि विकास की प्रक्रिया भी अवरूद्ध न हो और साथ ही रोजगार के अवसर भी उपलब्ध हो जायें।

(7) आर्थिक सत्ता का संकेन्द्रिकरण (Concentration) :–

तकनीकीकरण पर अत्याधिक बल देने का एक अन्य दुष्परिणाम यह भी निकला कि आर्थिक सत्ता का केवल कुछ ही हाथों में संकेन्द्रण हो गया। पिछले लगभग एक दशक में साधन सम्पन्न तथा साधनहीन के बीच की दूरी निरन्तर बढ़ती जा रही है। वास्तव मे आर्थिक सुधारों की आलोचना यह कहकर भी की जाती है कि इनका लाभ मुख्यतः आर्थिक रूप से सम्पन्न कुछेक लोगों तक सीमित रहा है। सम्भवतः मई 2004 में सम्पन्न हुए 14 वीं लोकसभा के लिए आम चुनावों में श्री अटल बिहारी बाजपेयी के नेत त्व वाली राष्ट्रीय जन्तान्त्रिक गठबन्धन (NDA) सरकार की हार का एक प्रमुख कारण आर्थिक सुधारों का लाभ आम जनता तक पहुंचने की अपेक्षा मुट्ठीभर उच्च वर्ग के लोगों तक सीमित रहना है । इसी कारण आर्थिक सुधारों में मानवीय पक्ष की अवहेलना करने की आलोचना की जा रही है तथा 23 मई 2004 को डा. मनमोहन सिहं के नेत त्व वाली संयुक्त प्रगतिवादी गठबन्धन (United Progressive Alliance) सरकार के समक्ष आर्थिक सुधारों में मानवीय पहलू का उचित समावेश (Giving Human Face to Economics Reforms) एक प्रमुख चुनौती है।

Chapter - 12

प्रशासन और सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के मध्य अन्तः क्रिया

(Socio-Cultural Interaction with Administration)

जिस प्रकार प्रशासन और राजनीति तथा प्रशासन और अर्थव्यवस्था के मध्य अन्तःक्रिया होती है ठीक उसी प्रकार एक देश के प्रशासन तथा वहां की सामाजिक-सांस्क तिक परिस्थितियों के बीच भी निरन्तर अन्तःक्रिया होती रहती है तथा दोनों निरन्तर एक दूसरे से गहन रूप में प्रभावित होते रहते हैं। लोक प्रशासक लोक प्रशासन का भाग बनाने से पूर्व समाज का भाग होते हैं तथा रीति-रिवाजों में पलकर बड़े होते हैं। लोक प्रशासन में प्रवेश करने के उपरान्त भी ये प्रशासक उसी समाज में निवास करते हैं तथा पहले की ही तरह उसके साथ अन्तःक्रिया करते हैं। लोक प्रशासको की इस सामाजिक-सांस्क तिक प ष्ठभूमि का प्रभाव उनके प्रशासकीय उतरदायित्वों की पूर्ति के सन्दर्भ में स्पष्ट द ष्टिगोचर होता है। वास्तव में प्रशासन और सामाजिक -सांस्क तिक परिस्थितियों के मध्य अन्तःक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है तथा भारत जैसे बहु-भाषी, बहु-धर्मी तथा विविधताओं से भरे विकासशील देश में और भी जटिल रूप धारण कर लेती है। भारत एक विशाल देश है जिसमें विश्व के सभी धर्मो के अनुयायी निवास करते हैं, अनेक जनजातिय समूह पाये जाते हैं, विभिन्न जातियाँ पाई जाती हैं तथा विभिन्न आर्थिक स्तर के लोग रहते हैं। अतः जहां एक ओर दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता, बैंगलौर जैसे अत्याधुनिक महानगर हैं वहीं दूसरी ओर अनेक आदिवासी जनजातियाँ भी हैं जो कि आज भी आदिम मानव की तरह जीवन यापन करती हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारत के समक्ष अनेक अन्य नव-स्वतन्त्र राष्ट्रों की भांति आर्थिक पिछड़ेपन के साथ-साथ सामाजिक-सांस्क तिक पिछड़ेपन की समस्या भी थी। अतः यह स्पष्ट था कि आर्थिक विकास के साथ साथ सामाजिक विकास-सांस्क तिक विकास की प्रक्रिया भी चलाई जानी आवश्यक थी क्योंकि सामजिक-सांस्क तिक विकास के बिना आर्थिक अर्थहीन हो जाता है। इसलिए भारत में आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक, सास्ंक तिक व राजनीतिक विकास लाने का उतरदायित्व भी प्रशासन पर डाला गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रशासन और सामाजिक-सांस्क तिक परिस्थितियों के मध्य अन्तःक्रिया की प्रक्रिया की कुछ विशेषताएं रही हैं। इन विशेषताओं का वर्णन नीचे किया जा रहा है।

(1) पिछड़ा वर्ग का विकासः-

सामाजिक-सांस्क तिक विकास के सन्दर्भ में भारतीय प्रशासन ने समाज के विभिन्न वर्गो का निध ार्रण किया ताकि इनके विकास के लिए वांछित कार्यक्रम (विकास) बनाये तथा लागू किये जा सके। इनमें से एक वर्ग था 'पिछड़ा वर्ग' (Backword Classes)। पिछड़ा वर्ग में भारतीय समाज के वो

लोग सम्मिलित थे जो ऐतिहासिक रूप से तकनीकी मानवीय संसाधन (Technical Manpower) के रूप में कार्य करते थे। परन्तु औद्योगिकरण के कारण इन लोगों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं की मांग बाजार में समाप्त हो गई क्योंकि इनकी वस्तुएं तथा सेवाएं मशीनों द्वारा उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं की तुलना में मंहगी होने के साथ-साथ गुणवता में भी न्यून (inferior) थी । परिणामस्वरूप यह तकनीकी वर्ग धीरे-धीरे बेरोजगार हो गया और बाकि समाज से पिछड़ गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय प्रशासन ने इस वर्ग के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए अनेक कार्यक्रम तथा योजनाएं बनाई। 29 जनवरी 1953 को केन्द्रीय सरकार ने काका कालेलकर की अध्यक्षता में एक आयोग गठित किया। इस आयोग को सामाजिक-शैक्षणिक आधार पर विभिन्न्न वर्गो का पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए मापदण्डों की सिफारिश करने के लिए कहा गया था। आयोग ने अपनी रिर्पोट, जिसे तैयार करने मे लगभग दो वर्ष का समय लगा, में 2399 जातियों तथा समुदायों की एक सूचि तैयार की तथा इनके सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए अनेक तरीके सुझाए। किन्तु भारत सरकार ने शैक्षणिक तथा आर्थिक पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए जाति को आधार बनाने के काका कालेलकर के सुझाव को नकार दिया। इसके साथ ही केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारों को अपने-अपने राज्यों में पिछड़े वर्गो की पहचान करने हेतु जाचं या निरीक्षण (Survey) करवाने के आदेश दिए। अनेक राज्यों ने अपने यहां पिछड़े वर्गो की अलग-अलग आध ाारों पर पहचान की तथा राज्य के सरकारी पदों में भर्ती हेतू आनुपातिक रूप में पद भी आरक्षित किए।

1977 में आम चुनावों से पहले जनता पार्टी ने अपने चुनाव घोषणापत्र में पिछड़े वर्गो को सरकारी पदों पर भर्ती के समय आरक्षण देने का वायदा किया। सत्ता में आने के पश्चात् जनता पार्टी की मोरारजी देसाई सरकार ने अपने चुनाव घोषणा पत्र को लागू करने के लिए एक सांसद, बी.पी. मण्डल की अध्यक्षता में 'पिछड़ा वर्ग आयोग', जिसे सामान्यतः मण्डल आयोग के नाम से जाना जाता है, का गठन किया। मण्डल आयोग को सामाजिक-शैक्षणिक पिडछा वर्गो को परिभाषित करने के लिए मापदण्ड विकसित करने, पिछड़े वर्गो के लोगों के सामाजिक-शैक्षणिक विकास के जिए उपाय सुझाने तथा इन वर्गो के लोगों के विकास के लिए सरकारी पदों पर आरक्षण के विकल्प की तार्किकता की जांच करने के लिए कहा गया। मण्डल आयोग ने पिछड़ा वर्ग के लिए जाति को आधार बनाते हुए इन वर्गो के विकास (सामाजिक-शैक्षणिक-आर्थिक) के लिए सभी सरकारी पदों पर भर्ती के लिए 27% पद इन वर्गो के लोगों के लिए आरक्षित करने की सिफारिश की। इसके साथ ही यह आरक्षण शैक्षणिक संस्थाओं में करने का भी सुझाव दिया गया। जनता पार्टी सरकार मण्डल आयोग की सिफारिशों को समय से पहले गिर जाने के कारण लागू नहीं कर सकी। इन सिफारिशों को लागू करने की दिशा में 1989 (नवम्बर) में सत्ता में आए राष्ट्रीय मोर्चा सरकार के एक प्रमुख घटक जतना दल ने फिर से प्रयास किया। यद्यपि यह प्रयास तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री वी.पी. सिहं ने राजनैतिक लाभ के लिए किया और इसे लागू करने की घोषणा के साथ ही देश के अधिकतर भागों, विशेषकर उतरी भारत में, युवा वर्ग ने काफी शेष जताया और इसे लागू करने के विरूद्ध आंदोलन भी चलाया। परन्तु केन्द्र सरकार ने इसे लागू कर दिया और सामाजिक न्याय प्रदान करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाकर सभी सरकारी पदों का 27% भाग पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षित किया। प्रशासन पर इस निर्णय का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा और भारतीय नौकरशाही अधिक प्रतिनिधिपूर्ण होने की दिशा में मार्ग प्रशस्त हुआ।

(2) अनुसूचित जातियों का विकासः-

पुरातन भारतीय समाज चार वर्णो में विभाजित था। और यह विभाजन लोगों के द्वारा सम्पन्न की जाने वाली क्रियाओं पर आधरित था। अतः कर्मो के अनुसार कोई भी व्यक्ति एक वर्ण से दूसरे वर्ण में स्थानान्तरित हो सकता था। उदारहणार्थ यदि एक शूद्र विद्या ग्रहण कर विद्धान बन जाता तो

वह ब्राहमण कहलाता थां परन्तु कालान्तर में यह वर्ण व्यवस्था कर्म की अपेक्षा जन्म पर आधरित हो गई और एक वर्ण से दूसरे वर्ण में स्थनान्तरण धीरे-धीरे कठोर और फिर कठोर से असम्भव हो गया। शूद्र के घर पैदा हुए बच्चों को , भले ही वे कितने प्रतिभावान क्यों न हों, मजबूरी वश शूद्रों के काय ही करने पड़ते थे और वे शूद्र ही कहलाते थे। और इतिहास इस बात का साक्षी है कि तीनों उच्च वर्णो ने शूद्रों को 'अस्प श्य' जैसी अमानवीय संज्ञा दी तथा उनका शोषण किया। किन्तु 18वी व 19वीं शताब्दीह में भारतीय पुर्नजागरण काल (Rennaissance) के दौरान इन शोषित लोगों के उत्थान के लिए अनेक समाज सुधारकों ने सामाजिक, सांस्क तिक व धार्मिक आन्दोलन चलाए। पिछली शताब्दी में स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले तथा बाद में बाबा साहेब भीमराव अम्बेकडर व महात्मा गांधी ने इन अशप स्य कहे जाने वाले लोगों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए अथक प्रयास किए। महात्मा गांधी ने इन्हें 'हरिजन' अर्थात 'हरि के जन या लोग' (Children of God) कह कर सम्बोधित किया। संविधान निर्माताओं ने एक लम्बी बहस के बाद अशप श्य कहे जाने वाले इन लोगों के सामाजिक , शैक्षणिक व आर्थिक विकास के लिए सकरात्मक भेदभाव की नीति अपनाने का निर्णय लिया और इनके उत्थान के लिए संविधान में अनेक प्रावधान किए। इनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित है।:-

1. अस्प श्यता का उन्मूलन तथा किसी भी रूप में इसे अपनाने की मनाही (अनु17);
2. उनके शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा तथा सामाजिक अन्याय और प्रत्येक प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा (अनु. 46)
3. सार्वजनिक स्वरूप के धार्मिक हिन्दू संस्थानों को कानूनी तौर से हिन्दूओं की समस्त श्रेणियों तथा वर्गो के लिए खोल देना (अनु 25);
4. किसी भी प्रकार की असमर्थता, दायित्व, प्रतिबन्ध अथवा शर्त जो कि दुकानों, सार्वजनिक होटल, सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों के प्रवेश से सम्बन्धित हो अथवा कुओं, तालाबों, नहाने के घाटों, सड़कों तथा जन आश्रय के स्थान जो पूर्णरूप से अथवा आंशिक रूप से राज्य के कोष से संचालित हों अथवा आम जनता के उपयोग के लिए स्थापित हों, प्रयोग से प्रतिबन्ध को हटाना (अनु. 15);
5. सरकारी सेवाओं में पिछड़े वर्गो के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की स्थिति में राज्य को आरक्षण का अधिकार देना तथा राज्य को सरकारी सेवाओं में नियुक्ति के मामलों में अनुसूचित जातियों के दावों पर ध्यान देने की जिम्मेदारी सौंपना (अनु.16 और 335);'
6. किसी ऐसी शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश निषेध अथवा मनाही को समाप्त करना जो कि राज्य द्वारा संचालित है अथवा राजकोष से अनुदान मिलता है।(अनु. 29);
7. राज्यों में अनुसूचित जातियों के कल्याण को बढ़ावा देने और उनके हितों की रक्षा के जिए सलाहकार परिषदों और अलग विभागों की स्थापना तथा केन्द्र में विशेष अधिकारियों की नियुक्ति (अनु. 164 और 338 तथा पांचवी अनुसूची);
8. लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनूसूचित जातियों के लिए विशेष प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करना (अनु. 330, 332 और 334), 79 वें संविधान संशोधन के अनुसार आरक्षण की अवधि 26 जनवरी, 2010 तक के लिए बढ़ा दी गयी है;
9. मनुष्यों का व्यापार किये जाने और जबरन मजदूरी पर रोक लगाना (अनु. 23);

संविधान के अनुच्छेद 338 के अनुसार सन् 1950 में प्रथम बार एक विशेष अधिकारी की नियुक्ति की गई जिसे 'अनुसूचित जाति 'आयुक्त' कहा गया। इस अधिकारी की नियुक्ति राष्ट्रपति द्धारा की जाती है तथा यह अनुसूचति जातियों को संविधान द्धारा प्रदत्त सुरक्षाओं से सम्बन्धित सभी विषयों की जांच करने की शाक्ति रखता है। 1990 में पारित 65 वें संविधान संशोधन के द्धारा आयुक्त के स्थान पर 'अनुसूचि जाति और जनजाति राष्ट्रीय आयोग' की स्थापना की गई। हाल ही में NDA

सरकार ने इस आयोग को दो भागों में विभक्त कर दिया तथा 'अनुसूचि जाति' तथा 'अनुसूचि जनजाति ' के लिए दो प थक-प थक राष्ट्रीय आयोगों का गठन किया।

भारतीय प्रशासन ने समय समय पर अनुसूचित जातियों को दी गई आरक्षण की सुविधा की समीक्षा की है। प्रशासन ने पाया कि इन जातियों में कुछ विशिष्ट जातियाँ अन्य जातियों से आगे हैं तथा शैक्षणिक संस्थाओं और रोजगार के लिए आरक्षण का अधिकतर लाभ इन्हीं विशिष्ट जातियों को मिल रहा है। इसलिए प्रशासन ने इन अनुसूचित जातियों को भी दो वर्गो 'A' और 'B' में विभाजित कर दिया है तथा इनके लिए आरक्षण में भी वर्गीकरण कर दिया गया है।

परन्तु इन सभी संवैधानिक-प्रशासनिक प्रयासों के बाद भी इसमें सन्देह नहीं कि इन अनुसूचित जातियों को शेष समाज के साथ जोड़ने का कार्य पूरी तरह सफल नहीं हो पाया है और इस बारे में अभी काफी कुछ करना शेष है। वर्तमान प्रधानमंत्री डा0 मनमोहन सिहं का संयुक्त प्रगतिवादी गठबन्धन (UPA) सरकार के सांझा कार्यक्रम (Common Minimum Programme) की घोषणा करते समय यह कहना कि अनुसूचित जातियों, जनजातियों तथा पिछड़े वर्गो को निजी क्षेत्र के उद्यमों में आरक्षण दिलवाने के लिए प्रयास किया जाएगा, इस तथ्य को स्पष्ट कर देता है।

(3) अनुसूचित जनजाति विकासः-

भारत में अनुसूचित जनजातियां भारत की कुल जनसंख्या का 8% से थोड़ा अधिक हैं तथा देश के लगभग 20% भूभाग पर निवास करती हैं। सूदूर जंगलों एवं पहाड़ों में रहने के कारण अनुसूचित जनजातियों के लोग एकाकी जीवन व्यतीत करते हैं तथा देश की बाकि जनसंख्या एंव राष्ट्रीय मुख्यधारा से कटे हुए हैं। इसी कारण ये लोग शेष भारत की तुलना में बहुत पिछड़े हुए हैं। भारतीय संविधान की धारा 342(1) के अनुसार अनुसूचित जनजातियाँ वे आदिवासी समुदाय या जनजातिय समूदायों के भीतरी समूह या भाग हैं जिन्हें राष्ट्रपति सार्वजनिक सूचना के माध्यम से उद्घोषित करेगें। इस अनुच्छेद के प्रावधान के अनुरूप भारत के विभिन्न राज्यों एंव केन्द्र शासित प्रदेशों में निवास करने वाले तथा 106 विविध भाषाएं बोलने वाले 258 समदायों को अनुसूचित जनजातियों की श्रेणी में रखा गया है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय से ही जनजातियों को समाज की मुख्य धारा में मिलाने या जोड़ने के लिए अनेक प्रयास किए गए है। संविधान निर्माताओं को भी अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन की पूरी अनुभूति थी इसीलिए संविधान में भी इनके सामाजिक, सांस्क तिक, आर्थिक और शैक्षणिक उत्थान व विकास के लिए अनेक प्रावधान किए गए हैं। इनमें से कुछ प्रमुख का उल्लेख यहां किया जा रहा है।

(1) अनुसूचित जनजातियों के हितों की रक्षा करने की द ष्टि से सामान्य नागरिकों के जनजातिय क्षेत्रों में स्वतन्त्रापूर्वक आने-जो, निवास करने और सम्पत्ति अर्जित करने के अधिकारों को सीमित करने सम्बन्धी कानूनी व्यवस्था करना (धारा 19 (5))

(2) सभी पिछड़े एवं कमजोर वर्गो विशेषतया अनुसूचित जनजातियों और जातियों के लोगों का शैक्षणिक तथा आर्थिक विकास करने तथा उन्हें सब प्रकार के शोषण और सामाजिक अन्याय के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करना (अनुच्छेद 46)

(3) ऐसे क्षेत्रों जहां पर पर्याप्त संख्या में जनजातिय या आदिवासी लोग रहते हैं, को संविधान की 5वीं अनूसूचि के अन्तर्गत अनुसूचित क्षेत्र घोषित करना तथा संविधान की 6वीं अनुसूचि के अर्न्तगत आसाम में जनजातिय (Tribal) क्षेत्र घोषित करना (अनुच्छेद244)

(4) किसी भी राज्य सरकार के द्वारा केन्द्र सरकार की पूर्वस्वीक ति से अपने राज्य में रहने वाले जनजातिय लोगों के विकास अथवा अपने राज्य के अनुसूचित क्षेत्र के विकास के लिए योजनाएं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने पर आने वाले खर्च का भारत की संचित

निधि से भुगतान करने का प्रावधान (अनुच्छेद 275)

(5) लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित करने सम्बन्धी प्रावधान (अनुच्छेद 330, 332 और 334)

(6) राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने और उनके हितों की रक्षा करने के लिए जनजाति सलाहकार परिषदों और अलग विभागों की स्थापना तथा केन्द्र में विशेष अधिकारियों की नियुक्ति (धारा 338)

(7) बिहार, मध्यप्रदेश तथा उड़ीसा में जनजातियों के कल्याण सम्बन्धी कार्यो के लिए मंत्री की नियुक्ति (धारा 164)

संवैधानिक प्रावधानों को लागू करने के अतिरिक्त प्रशासन समय समय पर अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए नीति, योजनाएं एवं कार्यक्रम बनाता रहता है तथा उन्हें क्रियान्वित करता है। परन्तु खेद का विषय यह है कि इन सब प्रयासों के बावजूद भी आधुनिक भारतीय समाज तथा इन जनजातिय लोगों के बीच की दूरी में कोई विशेष कमी प्रदर्शित नहीं हो रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रशासन इन वर्गो की समस्याओं को अच्छी प्रकार समझ (Comprehend) तथा परिभाषित (Define) ही नहीं कर पाया है। वास्तव में इसके लिए विभिन्न जनजातिय समूहों के साथ तालमेल (Rapport) बैठाने तथा उनके स्तर पर जाने की आवश्यकता है ताकि ये जनजातियाँ प्रशासन को पराया (Alien) न समझते हुए अपनी समस्याओं को प्रशासन के समक्ष प्रकट कर सकें। इससे प्रशासन उनकी प्राथमिकताएं निर्धारित कर सकेगा और अपनी नीतियों तथा योजनाओं के सम्बन्ध में इन लोगों से आवश्यक सहयोग प्राप्त कर सकेगा।

(4) महिला एंव बाल विकासः-

महिलाएं और बच्चे हमारी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा प्रतिशत हैं और मानव संसाधन विकास का एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। महिला एवं बाल विकास कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य महिलाओं एवं बच्चों की विशेषता समाज के कमजोर वर्गो की महिलाओं और बच्चों की सुख-सम द्धि सुनिश्चित करना है। महिलाओं एवं बच्चों की भारतीय समाज में कमजोर स्थिति को देखते हुए भारतीय संविधान निर्माताओं ने इन दोनों वर्गो के साथ सब प्रकार भेदभाव मिटाने, इनका शोषण रोकने तथा उचित विकास करने के लिए अनेक संवैधानिक प्रावधान किए। महिलाओं के विकास के लिए जो प्रमुख प्रावधान भारतीय संविधान में किए गए हैं उनमें अनुच्छेद 14 के अर्न्तगत पुरूष और स्त्री को राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में समान अवसर प्रदान करना, अनुच्छेद 14-17 में 'स्थान और अवसर की समता' के अधिकार को व्यावहारिक रूप देना, अनुच्छेद 19.22 के अन्तर्गत विविध स्वातन्त्रय अधिकार देना; अनुच्छेद 32 के अर्न्तगत संवैधानिक उपचारों का अधिकार देना; (अनुच्छेद 39 (c)) के अर्न्तगत समान कार्य के लिए समान वेतन का उल्लेख करना आदि सम्मिलित है। उपरोक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त भारतीय संसद ने महिलाओं के विकास एवं उत्थान के लिए अनेक कानूनी प्रावधान किए हैं जैसे हिन्दू विवाह कानून 1955 (संशाधित 1976), दहेज निषेध कानून, 1961 (संशोधित 1984), बाल विवाह नियन्त्रण कानून 1976, समान परिश्रमिक कानून 1976 राष्ट्रीय महिला आयोग कानून, 1990 आदि।

इसी प्रकार बाल विकास के महत्व को ध्यान में रखते हुए बाल कल्याण के लिए अनेक संवैधानिक प्रावधान किए गए। प्रमुख प्रावधानों में अनुच्छेद 24 के अन्तर्गत 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को औद्योगिक संस्थानों में काम देने की मनाही, अनुच्छेद 45 के अन्तर्गत 14 वर्ष से कम आयु के सभी बच्चों को सरकार द्धारा निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करवाना, अनुच्छेद 39(E) के अनुसार बच्चों के स्वास्थ्य और शैशव का दूरपयोग किए जाने पर रोक, अनुच्छेद 39 F के अर्न्तगत बच्चों को स्वस्थ उन्मुक्त एवं गरिमापूर्ण ढ़ंग से विकसित होने के लिए उचित वातावरण प्रदान करवाना आदि

सम्मिलित हैं।

इसके अलावा प्रशासन ने भी समय-समय पर इन संवैधानिक प्रावधानों को कार्यरूप प्रदान करने के लिए और राजनीतिक निर्देशन के अन्तर्गत महिला एवं बाल विकास के लिए अनेक कदम उठाए हैं। इनमें 1953 में समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना, 1954 में कल्याण विस्तार परियोजना लागू करना, 1957 में विशुद्ध पोषाहार कार्यक्रम बनाना, 1967 में परिवार एवं बाल कल्याण परियोजना चलाना, 1970 में विशेष पोषाहार कार्यक्रम एवं बालवाड़ी पोषाहार परियोजना लागू करना, 1974 में बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति बनाना आदि सम्मिलित है। परन्तु 1975 में लागू की गई समेकित बाल विकास सेवा परियोजना सम्भवत महिला एवं बाल विकास के लिए भारतीय प्रशासन का अब तक का सबसे गम्भीर प्रयास रहा है। इस परियोजना के अर्न्तगत 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों, गर्भवती स्त्रियों तथा दूध पिलाने वाली माताओं के लिए एक बड़े पैकेज की घोषणा की गई जिसके अर्न्तगत निम्नलिखित 6 सेवाएं उपरोक्त तीनों श्रेणियों की लाभार्थियों को उपलब्ध करवाई जाती हैं पूरक पोषाहार सेवा, बिमारी बचाव संरक्षण सेवा, स्वास्थय देखभाल सेवा, रैफरल सेवा, पोषाहार तथा स्वास्थय शिक्षा, अनौपचारिक स्कूल पूर्व शिक्षा।

उपरोक्त से स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय प्रशासन ने महिला एवं बाल विकास के लिए अनेक प्रयास किए हैं। किन्तु खेद का विषय यह है कि अभी भी महिलाओं एवं बच्चों का एक बड़ा वर्ग इनमें से अधिकतर सेवाओं से वंचित है तथा इनके विकास के लिए अभी भी बहुत कुछ करना बाकि है।

(5) भाषाई मुद्दा :-

यदि हम भारतीय प्रशासन और सामाजिक-सांस्क तिक सन्दर्भ में अन्तःक्रिया की प्रक्रिया पर नजर डालें तो भाषाई मुद्दा प्रमुख रूप से उभर कर सामने आता है। भारत एक बहु-भाषी देश है। जहां पर अनेकों भाषाएं बोली जाती हैं इनमें से कई भाषाएं तो बहुत अधिक विकसित भी हैं। इन भाषाओं का इतना विकसित होना हमारी एक प्रमुख सांस्क तिक धरोहर है और हमारी परिपक्व तथा विकसित संस्क ति का एक प्रमुख लक्षण भी है। परन्तु इसका एक नकारात्मक पहलू है और वह है भाषाई विवाद। विभिन्न भाषांए बोलने वाले लोग स्वयं को अन्य भाषाएं बोलने वालों से श्रेष्ठ अनुभव करते हैं। केवल इतना ही नहीं समस्या राष्ट्रीय भाषा के सन्दर्भ में भी है। यद्यपि हिन्दी को हम राष्ट्रीय भाषा मानते हैं। तथापि जब भी इस भाषा को पूरे देश में लागू करने का प्रयास किया जाता हैं, तभी या तो भाषाई आधार पर दंगे होते हैं या फिर इस निर्णय के विरूद्ध अनेक बार आत्मदाह की कोशिशें भी की गयी हैं। वास्तव में हिन्दी को राष्ट्र भाषा स्वीकार करने में दक्षिण के राज्य, जिनकी अपनी भाषाएं काफी विकसित हो चुकी हैं, को विशेष आपति होती है। परन्तु इसके साथ ही यह भी खेद का विषय है कि संविधान के लागू होने के पश्चात् पांच से अधिक दशको का समय बीत जाने के उपरान्त भी हम राष्ट्रीय भाषा को नहीं अपना सके हैं। भाषा भारत के सन्दर्भ में काफी संवेदनशील मुद्दा है अतः प्रशासन के लिए यह आवश्यक है कि वह बातचीत के द्धारा सद्भावनापूर्ण वातावरण तैयार राष्ट्रीय करके भाषा सम्बन्धी विवाद को सुलझाए।

(6) अल्पसंख्यकों की समस्याएं:-

भारत विभिन्न सन्ततियों, पंथों, धर्मो का देश है। विश्व की शायद ही कोई प्रजाति हो जिससे सम्बन्धित लोग भारत में निवास न करते हों । इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह स्थिति भारत की सम द्ध संस्क ति की द्योतक है। परन्तु यहां पर इस प्रकार अनेक प्रजातियों का निवास करना एक समस्या को जन्म देता है और वह है अल्पसंख्यकों तथा बहुसंख्यकों के बीच आपसी सौहार्दपूर्ण वातावरण का अभाव। आपसी मन-मुटाव अनेकों बार बड़े-झगड़ों एंव दंगों का रूप धारण कर लेते हैं जिससे कि अनेक निर्दोष लोगों की जाने जाती हैं, उनकी सम्पति लुट जाती है, उनके घर उजड़ जाते हैं।

यद्यपि भारतीय प्रशासन ने इस समस्या को सुलझाने के लिए अनेक प्रयास किए है तथापि अभी तक कोई सर्वमान्य हल नहीं निकल पाया है । वास्तव में अल्पसंख्यकों तथा बहुसंख्यको के मध्य संसाधनों के बंटवारे के सम्बन्ध में विवाद रहता है और इस विवाद का कुछ असामाजिक तत्व लाभ उठाते हैं और इनके बहकावे मे आकर सामान्यतः सद्भावनापूर्ण रहने वाले लोग एक दूसरे के शत्रु बन जाते है। अतः प्रशासन को इस समस्या की जड़ को समाप्त करना चाहिए अर्थात् संसाधनों का उचित बंटवारा। यह एक बड़ी विडंबना है कि भारत जैसे भौतिक संसाधनों के मामाले में सम द्ध देश में बड़े स्तर पर गरीबी और बेरोजगारी पाई जाती है। और बहुसंख्यक लोग अपनी इन समस्याओं (गरीबी और बेरोजगारी)के लिए कई बार अल्पसंख्यकों को उतरदायी मानकर अपना क्रोध उनके ऊपर उतारते हैं जिसके परिणामस्वरूप आपसी फूट पड़ती है इसलिए प्रशासन को चाहिए कि इन समस्याओं के ऊपर ध्यान केन्द्रित कर इनका समाधान निकाले। यदि ये समस्याएं समाप्त हो जाती हैं। तो भारत की अल्पसंख्यकों की समस्या सहित अनेक अन्य समस्याएं स्वतः ही हल हो जांएगी।

(7) क्षेत्रीयवाद की समस्याः-

क्षेत्रीयवाद की समस्या के मूल में विभिन्न क्षेत्रों की न्यायोचित समस्याओं (Justified Problems) को लम्बे समय तक नजरअन्दाज करना। यदि हम भारत के सन्दर्भ मे देखें तो पाते हैं कि यह विशाल देश है जिसमें विभिन्न भौगोलिक क्षेत्र पाए जाते हैं तथा प्रत्येक की सामाजिक-सांस्क तिक परिस्थितियां भिन्न हैं। परन्तु प्रशासन इन भिन्नताओं की उपेक्षा करके सब क्षेत्रों के विकास के लिए समान (Uniform) नीतियां बनाता है। इससे विभिन्न क्षेत्रों की समस्याएं अनसुलझी रहने के साथ-साथ संसाधनों का भी दुरूपयोग होता है। विभिन्न क्षेत्रों की लम्बित माँगों की जब इस प्रकार बार-बार उपेक्षा की जाती है तो उस क्षेत्र के लोग उग्र रूप धारण कर लेते हैं जो कई बार उग्रवाद (Terrorism) में भी परिवर्तित हो जाता है। पंजाब, जम्मू कश्मीर, तमिलनाडू आन्ध्रप्रदेश, असम, नागालैण्ड़ आदि राज्यों में उग्रवाद का उदय इस का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

अतः प्रशासन के लिए आवश्यक है कि वह विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओं के हल के लिए तथा वहां के लोगों की समस्याओं को सुलझाने के लिए एकरूप (Uniform) नीतियां न अपनाकर परिस्थितियोंनुसार नीतियों में परिवर्तन करे ताकि लोगों में निराशा न पनपे।

(8) साम्प्रदायिकता की समस्याः-

भारत में विभिन्न धर्मो के लोग निवास करते हैं। अतः विभिन्न सांस्क तिक विविधताओं के साथ-साथ यहां पर अनेक साम्प्रदायिक विविधताएं भी पाई जाती हैं जो कि हमारी सांस्क तिक परिपक्वता का सूचक हैं। परन्तु पिछली सदी के अन्तिम दो दशकों में धार्मिक असहनशीलता की समस्या काफी गम्भीर हो गई है और अनेक अवसरों तथा स्थनों पर यह उग्र रूप भी धारण कर लेती है। वास्तव में अल्पसंख्यकों की समस्या की तरह साम्प्रदायिकता की समस्या के मूल में भी बेरोजगारी तथा गरीबी जैसी आर्थिक समस्याएं प्रतीत होती है। अतः आवश्यक है कि इस समस्या के समाधान के लिए भी प्रशासन के पहले आर्थिक विकास पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए तथा साथ ही धार्मिक भावनाओं को भड़काने वाले असामाजिक तत्वों के साथ सख्ती से निपटना चाहिए।

Chapter - 13

नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि का विकास प्रशासन पर प्रभाव

(Influence of the Social Background of Bureaucracy on Development Administration)

पिछले कुछ दशकों में विकसित एंव विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि के सम्बन्ध में किए गए अध्ययनों से स्पष्ट है कि किसी देश की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि, उस देश के प्रशासन पर गहरा प्रभाव डालती है। विकसित देशों की नौकरशाही के सन्दर्भ में काफी विद्वानों के द्वारा इस सम्बन्ध में अध्ययन किए गए है। 1954 में बोटोमोर (Bottomore) के द्वारा फ्रांस में उच्च लोक सेवकों के सम्बन्ध में एक अध्ययन प्रकाशित किया गया, इसके पश्चात् 1955 में कैलशल (Kelsall) ने ब्रिटेन के उच्च लोक सेवकों तथा 1963 में वार्नर (Warner) एंव उसके साथियों द्वारा 1963 में अमेरिका के उच्च लोक सेवकों के सम्बन्ध में अध्ययन किए गए।

विकासशील देशों के सम्बन्ध में भी उच्च लोक सेवकों की प ष्ठभूमि व विकास प्रशासन पर इसके प्रभाव को जानने की कोशिश कुछ विद्वानों द्वारा की गई। जैसे कि भारत में वी. सुबरामन्यम् (V. Subramaniam) के द्वारा 1971 में Social Background of India's Administrators नामक पुस्तक प्रकाशित की गई। इसके अतिरिक्त एल.पी. सिंह एंव एस.एन.सिंह के द्वारा भी भारतीय प्रशासकीय सेवाओं की सामाजिक प ष्ठभूमि के सन्दर्भ में शोधकार्य किया गया। सन् 1986 में डेविड सी. पोटर के द्वारा India's Political Administrators 1919-1983 नामक पुस्तक प्रकाशित की गई जिसमें भारतीय लोक सेवाएं एंव भारतीय प्रशासकीय सेवाओं की सामाजिक प ष्ठभूमि का वर्णन किया गया है। ऐसे ही अध्ययन अन्य विकासशील देशों में भी विभिन्न विद्वानों के द्वारा किए गए। इन अध्ययनों के आधार पर हम इन विकासशील देशों की नौकरशाही की प ष्ठभूमि से सम्बन्धित कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर नजर डाल सकते हैं। इसके लिए इन देशों की नौकरशाही की प ष्ठभूमि के महत्वपूर्ण तत्वों पर प्रकाश डालना आवश्यक है।

विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि के तल
Components of Social Background of Bureaucracy in Developing Counttries

विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि के मूलभूत तत्व निम्नलिखित हैं-

1. पिता का व्यवसाय

(Occupation of Father)

विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि के अध्ययनों से स्पष्ट है कि इन देशों के अधिकतर उच्च लोक सेवक Professional Middle Class से सम्बन्ध रखते हैं। इन लोक सेवकों के पिता या सरंक्षक उच्च लोकसेवक , मिलिट्री अफसर, वकील, डाक्टर , यूनिवर्सिटी लैक्चरर, business executive आदि व्यवसायों के साथ प्रायः जुड़े होते है। हांलाकि पिछले कुछ वर्षो में farming family खेतीधर किसान परिवारों से आने वाले लोक सेवकों का अनुपात बढ़ा है। लेकिन फिर भी लगभग 70 प्रतिशत लोक सेवक अब भी Professional Middle Class से आते हैं।

2. शिक्षा

(Education) :–

शोध अध्ययनों से यह भी स्पष्ट है कि इन देशों की उच्च लोक सेवाओं में स्थान पाने वाले अधिकतर Candidates ने शिक्षा Exclusive स्कूलों एंव कालेजों से ग्रहण की है। "Exclusive Schools and Colleges" का तात्पर्य ऐस शिक्षण स्थानों से है जो ज्यादा फीस वसूलते हैं और जहाँ केवल अमीर व उच्च श्रेणी से सम्बन्धित परिवारों के बच्चे की शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। ऐसे स्कूल व कॉलेजों में गरीब बच्चों के लिए शिक्षण प्राप्त करना कठिन एंव असम्भव कार्य है। इन शिक्षण संस्थानों में Medium of Instruction केवल अंग्रेजी ही होता है।

3. निवासस्थान

(Residence)

शोधकर्ताओं द्वारा इन देशों की नौकरशाही में स्थान प्राप्त करने वाले अधिकतर Candidates का निवास स्थान शहरी इलाके ही पाए गए। अर्थात् उच्च लोक सेवाओं में नियुक्त किए गए अधिकतर लोग शहरों से ही सम्बन्ध रखते पाए गए। हांलाकि हाल ही के कुछ वर्षो में ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले प्रार्थियों (Candidates) का अनुपात इन देशों की उच्च लोक सेवाओं में बढ़ा है लेकिन Overall Scenario जस का तस ही बना हुआ है।

4. जाति

(Cast)

शोध अध्ययनों से यह भी स्पष्ट है कि विकासशील देशों की उच्च लोक सेवाओं में नियुक्ति पाने वाले अधिकतर Candidates उस देश की उच्च जातियों से सम्बन्ध रखते है। इसका कारण यह भी है कि निम्न जातियों से सम्बन्धित परिवार गरीब होने के कारण अपने बच्चों का उच्च स्तर की शिक्षा दिलाने में असमर्थ होते हैं। इसके साथ-साथ ये लोग अपने बच्चों को Exclusive Schools and Colleges में भी नहीं भेज पाते। हांलाकि इस भेदभाव को दूर करने हेतु भारत जैसे देशों के संविधान में निम्न श्रेणियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है। लेकिन एक लम्बे, समय तक इन श्रेणियों के प्रार्थी (Candidates) प्रतियोगी परीक्षा में उतनी अच्छी Performance नहीं दिखा पाते थे। हांलाकि इन श्रेणियों से सम्बन्धित Candidates के लिए Coaching देने का प्रावधान भी किया गया है लेकिन अब भी इन श्रेणियों के वास्तविक रूप से गरीब Comdidats की प्रतिशत मात्रा अपेक्षाक त बहुत कम है। इसका कारण यह है कि इन आरक्षित श्रेणियों में भी Creamy Layer उभर कर आने से वास्तव में गरीब लोगों को आरक्षण का लाभ नहीं मिल पाता।

5 धर्म

(Religion) :–

इन देशों की उच्च स्तर की नौकरशाही में हांलाकि सभी धर्मो के लोगों को समान अवसर प्राप्त हैं

लेकिन इन लोक सेवाओं में कुछ ही धर्मो से सम्बन्धित लोगों का बाहुल्य पाया जाता है। उदाहरण के तौर पर भारत में मुस्लिम समुदाय के लोगों का उच्च लोक सेवाओं में बहुत कम प्रतिनिधित्व पाया जाता है जबकि हिन्दू व सिक्ख समुदाय के लोगों का बाहुल्य पाया जाता है।

6. लिंग

(Gender) :–

विकासशील देशों की उच्च नौकरशाही में पुरूषों की बजाय औरतों का प्रतिनिधित्व काफी कम पाया जाता है। हांलाकि पिछले कुछ वर्षो में इन देशों की उच्च लोक सेवाओं में औरतों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है लेकिन औरतों की जनसंख्या , कुल जनसंख्या का आधा भाग होने के कारण , इनका प्रतिनिधित्व उच्च लोक सेवाओं में अब भी काफी कम है।

नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि का विकास प्रशासन पर प्रभाव

Influence of Social Background of Bureaucracy on Development Administration

विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि के उपरोक्त वर्णित तत्वों से स्पष्ट है कि इन देशों की उच्च लोक सेवाओं में नियुक्ति अधिकतर उन्हीं लोगों की होती है जो शहरों में निवास करते हैं, Professional Middle Class से सम्बन्ध रखते हैं, उच्च वर्ग या जाति से सम्बन्धित हैं। इसके साथ-साथ इन्होनें "Exclusive Schools and Colleges" से शिक्षा प्राप्त की है। इस प्रकार इन देशों की नौकरशाही पूर्ण समाज का प्रतिनिधित्व न करके, समाज के 10-12 प्रतिशत वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। इसी कारण इन देशों की नौकरशाही, विकास प्रशासन को गहनतम रूप से प्रभावित करती है। इन देशों की नौकरशाही पूर्ण समाज की प्रतिनिधि ने होने के कारण, विकास प्रशासन को निम्न ढ़ंग से प्रभावित करती हैं।

1. सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में पूर्ण समझ का अभाव

(Inadequate Understanding of Social Problems)

विकासशील देशों में विकास प्रशासन समाज की विभिन्न समस्याएं जैसे कि गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, भूखमरी आदि को दूर करने में प्रयासरत है।इसका मुख्य उद्देश्य इन समस्याओं के कारणों का पता लगाकर, इनकी तह तक पहुंचाना है ताकि इनका हर सम्भव निदान ढूंढ़ा जा सके। लेकिन इन देशों की नौकरशाही जो न केवल नीति निर्माण से जुड़ी हुई है बल्कि इसके लागू करने में भी अहमभूत भूमिका अदा करती है, को इन समस्याओं के बारे में पूर्ण समझ व जानकारी नहीं है। इस जानकारी व समझ के अभाव का मुख्य कारण इन देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि का समाज के विभिन्न वर्गो की सामाजिक प ष्ठभूमि से अन्तर है। नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि का यह अन्तर, इन देशों की सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में बेहतर नीतियों के विकास में बाधक है। अतः इन देशों में व्याप्त विभिन्न समस्याओं के उन्मूलन में विकास प्रशासन की भूमिका आधी अधूरी ही रही है।

2. प्रशासनिक कार्यवाही में जन सहभागिता को सुनिश्चित करने में कठिनाई

(Difficulty in ensuring the People's participation in administrative working)

प्रशासनिक अधिकारियों एंव आम जनता की सामाजिक प ष्ठभूमि अलग होने के कारण विकासशील देशों में नौकरशाही के मूल्य जन साधारण के मूल्यों से मेल नहीं खाते। इसी कारण इन देशों के प्रशासन एंव जनता के बीच दूरी देखने को मिलती है जिसके कारण प्रशासनिक कार्यवाही में आज भी जन-सहभागिता का अभाव देखने को मिलता है। इन देशों में विकास प्रशासन द्वारा संचालित

विभिन्न कार्यक्रम एंव योजनाओं के निर्माण एंव लागू करने के स्तर पर पर्याप्त जन सहयोग न मिलने के कारण असफलता का मुँह देखना पड़ा है। विकासात्मक कार्यक्रमों एंव नीतियों की सफलता प्रशासनिक कार्यवाही में जनसहभागिता को सुनिश्चित करने के साथ सीधे तौर पर जुड़ी हुई है। लेकिन नौकरशाही की प ष्ठभूमि जन साधारण से अलग होने के कारण , आज तक विकास प्रशासन की कार्यवाही में जन सहभागिता को सुनिश्चित नहीं किया जा सका हैं

3. उच्च एंव निम्न वर्ग की नौकरशाही में समायोजन सम्बन्धी समस्या

(Problem of adjustment between the Members of higher and lower Bureaucracy)

प्रशासन में उच्च स्तर की नौकरशाही नीति निर्माण से सम्बन्धित है जबकि निम्न स्तर की नौकरशाही, इन नीतियों के क्रियान्वयन से सम्बन्ध रखती है। लेकिन इन दोनों स्तरों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि भी अलग-अलग होने के कारण, इन दोनों के Status एंव Culture में अन्तर पाया जाता है जिसके कारण निम्न स्तर की नौकरशाही में उच्च स्तर की नौकरशाही के प्रति ईर्ष्या, द्वेष एंव असुरक्षा की भावना पैदा हो जाती है। ये एक दूसरे पर आरोप -प्रत्यारोप लगाते हैं जैसे कि निम्न स्तर की नौकरशाही का मानना है कि नीतियां ठीक ढ़ंग से नहीं बनाई जाती जबकि उच्च स्तर की नौकरशाही का मानना है कि नीतियां सही ढ़ंग से लागू नहीं की जाती हैं। इस प्रकार विकास प्रशासन में इन दोनों स्तरों की नौकरशाही की प ष्ठभूमि में अन्तर होने के कारण समायोजन Adjustment की गम्भीर समस्या पाई जाती है तथा इन दोनों में आपसी तालमेल का अभाव होने से विकास प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस कारण भी विकास प्रशासन अपने विकासात्मक कार्यक्रमों एंव नीतियों के उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में असफल रहा है।

4. प्रशासन की Feed back प्रक्रिया पर प्रभाव

(Influence on the Feedback Process of Adminitstration)

विकास प्रशासन के लिए यह अत्याधिक आवश्यक है कि जब नए विकास कार्यक्रम एंव नीतियाँ तैयार किए जाएं तो पूर्व में संचालित विकास कार्यक्रमों सम्बन्धी Feedback ध्यान में रखी जाए। इस सम्बन्ध में यह जानना आवश्यक है कि वे कार्यक्रम किस विकास तक सफल हुए और अगर असफल हुए तो उनकी असफलता के पीछे क्या कारण थे? लेकिन प्रशासनिक अधिकारियों की प ष्ठभूमि जन साधारण से अलग होने के कारण दोनों में दूरी बनी रहती है। इस दूरी के कारण नौकरशाही एंव जनता में सम्पर्क बहुत कम होता है जिसके परिणामस्वरूप विकास प्रशासन को सही व पूर्ण Feed back अपने विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के विषय में नहीं मिल पाती। इस Feed back के अभाव में विकास प्रशासन ऐसे विकास कार्यक्रम एंव नीतियों को तैयार नहीं कर पाता जो जन आवश्यकताओं के अनुरूप हों। अतः विकास प्रशासन द्वारा चलाए जाने वाले नए-नए विकास कार्यक्रम भी अप्रभावी बन जाते हैं।

5. प्रशासन एंव जनता के बीच की दूरी को बढ़ावा

(Leads to Creating gap between Administration & the Common People)

विकास प्रशासन की सफलता विकास कार्यक्रमों में अधिकाधिक जनसहभागिता पर निर्भर करती है और इसके लिए प्रशासन एंव जनता में दूरी नहीं होनी चाहिए। लेकिन इन देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि जन साधारण से अलग होने के कारण आम जनता में एक भय की भावना घर कर जाती है तथा उनके दिल में प्रशासनिक अधिकारियों से डर सा पैदा हो जाता है जिसके कारण वे अपनी समस्याओं के समाधान को लेकर प्रशासनिक अधिकारियों के सामने जाने से कतराते हैं।

इसके साथ-साथ नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि आम जनता से अलग होने के कारण जनता एंव प्रशासन के मध्य भाषा की समस्या भी उत्पन्न हो जाती है। आम जनता ऐसी भाषा जो प्रशासनिक अधिकारी समझ सकें बोलने में कठिनाई महसूस करती है जिसके कारण अधिकारीगण उनकी समस्याओं को समझ नहीं पाते और उनका यथोचित समाधान नहीं निकाल पाते हैं। इस प्रकार

प्रशासन जनसाधारण से विमुख हो जाता है और इन दोनों में दूरी लगातार बढ़ती रहती है और जनता से बढ़ती हुई दूरी विकास प्रशासन को स्थिल बन देती है।

6. नौकरशाही में Superiority की भावना का विकास

(Development of a feeling of superiority among the Bureaucracy)

समाज में उच्च मध्यम वर्ग से जुड़े परिवारों के बच्चे और उपर से इन बच्चों की Exclusive Sschools and Colleges से शिक्षा , इनमें superiority की भावना को जन्म देती है क्योंकि ये बच्चे खाते-पीते घरानों से सम्बन्ध रखते हैं। जब ये बच्चे नौकरशाही का हिस्सा बन जाते हैं तो भी यही Superiority की भावना , इनकी आम लोगों से अलग सामाजिक प ष्ठभूमि होने के कारण इनमें बनी रहती है। इसके कारण इनके सुख-दुख (Joys & Sufferings) समाज के व्यक्ति से मेल नहीं खाते। इसीलिए समाज में विभिन्न समस्याओं से ग्रसित लोगों की शिकायतों को दूर करने में प्रशासनिक अधिकारी अपने आप को विमुख से पाते हैं।

इसके साथ-साथ Superiority की यह भावना इन लोगों में घमण्ड को जन्म देती है। जो विकास प्रशासन की सफल कार्यवाही के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा है। इन देशों की नौकरशाही में इनकी सामाजिक प ष्ठभूमि के कारण उत्पन्न हुई इस ढ़ंग की भावनाएं विकास प्रशासन के लिए खतरनाक सिद्ध हुई हैं क्योंकि नौकरशाही की ये भावनाएं विकास कार्यक्रमों एंव नीतियों के लक्ष्यों की प्राप्ति में घातक भूमिका निभाती हैं।

7. गरीब लोगों के प्रति सहानुभूति का अभाव

(Lack of Empathy for the Poor)

विकास प्रशासन का मुख्य उद्देश्य गरीब वर्गो के लिए विकास कार्यक्रमों का सचांलन व क्रियान्वयन करके उनके जीवन स्तर में गुणात्मक परिर्वतन लाना है। लेकिन प्रशासनिक अधिकारियों के लालन-पालन एंव शिक्षा में जनसाधारण से अन्तर होने के कारण ये अधिकारी अपने आपको समाज के गरीब तबकों से अलग-थलग पाते हैं। इसका कारण यह भी है कि इन लोगों को शायद ही कभी गांव में रहने या जाने का मौका मिला हो, जहां समाज के अधिकतर लोग रहते हैं। इसी कारण इन अधिकारियों को समाज के विभिन्न वर्गो से सम्बन्धित गरीब लोगों की जीवन शैली, रहन-सहन का स्तर एंव उनसे जुड़ी समस्याओं के विषय में बहुत कम जानकारी होती है। अतः इन अधिकारियों में समाज के गरीब लोगों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं होती हांलाकि इन लोगों का कल्याण विकास प्रशासन की एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है। परिणामस्वरूप इन देशों की नौकरशाही गरीब लोगों के कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों एंव योजनाओं में किसी प्रकार की रूचि नहीं दिखा पाती।

8. शहरी एंव Professional Middle Class के प्रति पक्षपाती रवैया

(Biased Attitude towards Urban and Profssional Middle Class)

विकास प्रशासन का लक्ष्य समाज के सब वर्गो के कल्याण की प्राप्ति है। लेकिन विकासशील देशों की नौकरशाही की सामाजिक प ष्ठभूमि जनसाधारण से अलग होने के कारण विकासात्मक नीतियों में ग्रामीण समस्याओं की तरफ कम ध्यान दिया जाता है। इसके अतिरिक्त इन नीतियों में शहरों एंव Professional Middle class की समस्याओं पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इन देशों की नौकरशाही की कार्यवाही में यह पक्षपाती रवैयाइसकी सामाजिक प ष्ठभूमि का ही परिणाम है।

Chapter - 14
प्रतिनिधि नौकरशाही
(Representative Bureaucracy)

आधुनिक प्रजातान्त्रिक युग, में विभिन्न विद्वानों के द्वारा, प्रशासन में नौकरशाही की जिम्मेदारी को सुनिश्चित करने की आवश्यकता पर अत्यधिक बल दिया जाता है। हालांकि एक प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में प्रशासन की कार्यवाही पर अंकुश लगाने में विधानपालिका, न्यायपालिका, राजनैतिक पाटियां, दबाव समूह, जनमत एवं प्रेस आदि एक अहमभूत भूमिका निभाते हैं। लेकिन ऐसा महसूस किया जात है कि नौकरशाही पर नियन्त्रण करने सम्बन्धी ये संस्थागत तरीके हमेशा प्रभावशाली नहीं होते। इस सन्दर्भ में 'प्रतिनिधि नौकरशाही' का तरीका कुछ विद्वानों के द्वारा सुझाया गया है। पूर्व वर्णित नियन्त्रण के तरीके बाह्य-नियन्त्रण को प्रदर्शित करते है जबकि 'प्रतिनिधि नौकरशाही' की अवधारणा आन्तिरक नियन्त्रण को दर्शाती है। यह अवधारणा नौकरशाही की ऐसी बनावट पर दबाव डालती है जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग का प्रतिनिधित्व हो और यह सब वर्गो के प्रति उत्तरदायी रह सके।

इस सम्बन्ध में सबसे पहल व्यक्तव्य डोनाल्ड किंग्सले (Donald Kingsley) ने 1944 में दिया था। उसक मत था कि नौकरशाही की बनावट में समाज के उभरे हुए वर्गो का आधिपत्य होने के कारण स्थायित्व की प्राप्ति कठिन है। इसके लिए नौकरशाही में समाज के सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व आवश्यक है ताकि सामाजिक सन्तुलन बनाया जा सके। अमेरिका में डेविड लेविटेन (David Levitan) नामक विद्वान ने 'प्रतिनिधि नौकरशाही' की आवश्यकता के सम्बन्ध में काफी अधिक वकालत (Advocacy) की है। भारत में इस अवधारण के समर्थक वी. सुबरामन्यम् है। नौकरशाही की इस अवधारणा के तहत समाज के अल्पसंख्यक वर्गो को नौकरशाही में 'active represention' दिए जाने पर बल दिया गया है। आज भी भारत जैसे अनेक विकासशील देशों की नौकरशाही में अल्पसंख्यक वर्ग के प्रतिनिधित्व की समस्या की तरफ विद्वानों का ध्यान आकर्षित करने की आवश्यकता है। इन वर्गो का नौकरशाही में यह प्रतिनिधित्व Passive व Eemotional न होकर Active होना चाहिए।

अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition)

साधारण तौर पर प्रतिनिधि नौकरशाही एक ऐसी नौकरशाही है जिसमें समाज में विद्यमान प्रत्येक जाति, वर्ग, समुदाय एवं धर्म के लोगों का उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व पाया जाता है।

एस. एन. झा के अनुसार - प्रतिनिधि नौकरशाही का सिद्धान्त इस बात पर जोर डालता है कि नौकरशाही की सामाजिक आर्थिक बनावट समाज के समस्त रूप से मिलती हो तथा समाज के प्रत्येक समूह व वर्ग का नौकरशाही के अन्दर स्वयं का Spokesman होना चाहिए ताकि समूह में स्वार्थो (Self Interests) की रक्षा की जा सके।

प्रतिनिधि नौकरशाही की मुख्य विशेषताएं
(Salient Features of Representative Bureaucracy)

प्रतिनिधि नौकरशाही की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं —

1. प्रतिनिधि नौकरशाही सामाजिक समता की अवधारणा से जुड़ी हुई है। इस सम्बन्ध में यह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि एक वास्तविक प्रजातन्त्र को लोक सेवाओं में लिंग, जाति, धर्म आदि के आधार पर पूर्ण प्रतिनिधित्व होना चाहिए ताकि एक उत्तरदायी लोकनीति तैयार की जा सके।
2. प्रतिनिधि नौकरशाही भर्ती की संरक्षण प्रणाली (Patronage System) से मेल खाती है जबकि मेरिट प्रणाली की

   विरोधाभाषी है क्योंकि मेरिट प्रणाली में लोगों को योग्यता के आधार पर चयनित किया जाता है।
3. प्रतिनिधि नौकरशाही में लोक सेवकों को समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता है न कि तटस्थ एवं निष्पक्ष लोक सेवकों के रूप में।
4. प्रतिनिधि नौकरशाही इस मान्यता पर आधारित है कि सरकारी तन्त्र के प्रत्येक स्तर पर रोजगार में प्रत्येक अल्पसंख्यक वर्ग का प्रतिनिधित्व उस वर्ग की समग्र में कुल जनसंख्या के अनुपात में होगा।
5. प्रतिनिधि नौकरशाही इस सिद्धान्त पर आधारित है कि नौकरशाही जनता को न केवल जन सेवाएं देने कि लिए हैं बल्कि उसी जनता को नौकरियां एवं आर्थिक लाभ प्रदान करना भी इसका काम है।

प्रतिनिधि नौकरशाही का महत्व
(Importance of Representative Bureaucracy)

प्रतिनिधि नौकरशाही के महत्व पर प्रकाश निम्न ढ़ंग से डाला जा सकता है।-

1. सामाजिक समस्याओं की पूर्ण समझ
(Complete Understanding of Social Problems)

प्रतिनिधि नौकरशाही क्योंकि समाज के प्रत्येक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है इसलिए समाज में व्याप्त प्रत्येक वर्ग से सम्बन्धित समस्या की इसे पूर्ण समझ होती है जिसके आधार पर यह यथोचित नीतियों का निर्माण करके उन समस्यओं का आसानी से समाधान निकाल सकती है।

2. जनसहयोग को बढ़ावा
(Promotes People's participation)

प्रतिनिधि नौकरशाही जनता का विश्वास जीतने में एक कारगर कदम और इस प्रकार यह प्रशासनिक कार्यवाही में जनसहभागिता को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रत्येक वर्ग से सम्बन्धित होने के कारण विकासात्मक कार्यक्रमों एवं नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में यह जनता की भागीदारी को बढ़ाने में सक्ष्म है।

3. प्रशासन में बेहतर Feedback तन्त्र को बढ़ावा
(To Promote better Feedback Mechanism in Administration)

नए विकासात्मक नीतियों एवं कार्यक्रमों के सफलता पूर्वक निर्माण हेतू, पूर्व में विभिन्न वर्गों के विकास के सम्बन्ध में चलाए गए कार्यक्रमों का पूर्ण विवरण (Feedback) प्रशासनिक अधिकारियों के लिए अति

आवश्यक होते हैं। प्रतिनिधि नौकरशाही समाज के विभिन्न वर्गो के साथ जन सर्म्पक स्थापित करके इस ढ़ंग की Feedback प्राप्त करने में अहम भूमिका निभा सकती है। इस प्रकार यह प्रशासन में बेहतर Feedback तन्त्र को बढ़ावा देती है।

4. उच्च लोक सेवाओं के सामाजिक-आर्थिक आधार को विस्त त करना
(To Expand the Socio-Economic Basic of Higher Civil Services)

प्रतिनिधि नौकरशाही में समाज के सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व होने के कारण उच्च लोक सेवाओं में स्थान पाने वाले candidates का दायरा Professional Middle Class, Exclusive Schools and Colleges एवं शहरों तक ही सीमित न होकर काफी अधिक विस्त त हो जाता है क्योंकि प्रतिनिधि नौकरशाही में गांव व शहरों में निवास करने वाले सभी वर्गो के लोगों को उनकी समग्र में जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व दिया जाता है।

5. विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन को प्रोत्साहन
(To Promote the Sucessful implementation of Develpment Programmes)

प्रतिनिधि नौकरशाही में क्योंकि समाज के सभी वर्गो कें लोगों का उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व है इसी कारण यह विकास प्रशासन द्वारा विभिन्न वर्गो के लिए संचालित कार्यक्रमों में अपने-अपने वर्ग के लोगों को बढ़चढ़ कर भाग लेने के लिए प्रोत्साहित कर सकती है। जिससे उन कार्यक्रमों के उद्देश्यों की सफलतापूर्वक प्राप्ति की जा सकती है।

6. Social Cleavages को दूर करने में सहायक
(Helpful in Integrating the Social Cleavages)

प्रतिनिधि नौकरशाही समाज के विभिन्न वर्गो के बीच उत्पन्न खाईयों (Cleavages) को खत्म करने में काफी हद तक सहायक है। ये खाईयां विभिन्न वर्गो के मध्य नौकरशाही में उनके उचित प्रतिनिधित्व के न होने के कारण उत्पन्न हो जाती है। नौकरशाही में उचित प्रतिनिधित्व न होने के कारण विभिन्न वर्गो के लोगों में अपने-अपने स्वार्थो की पूर्ति को लेकर भय का वातावरण उत्पन्न हो जाता है। लेकिन प्रतिनिधि नौकरशाही सभी वर्गो को उचित प्रतिनिधित्व देकर इन सभी शंकाओं को दूर करके समाज के एकीकरण में अहमभूत भूमिका निभाती है।

7. प्रशासन एवं जनता की दूरी को कम करना
(To bridge up the gap between Administration and Common Masses)

प्रतिनिधि नौकरशाही में समाज के सभी वर्गो का उचित प्रतिनिधित्व होने के कारण ऐसी नौकरशाही प्रशासन में सभी लोगों का विश्वास जीतने में काफी हद तक सहायक है। जनसाधारण का प्रशासन में विश्वास पैदा होना, उनकी प्रशासन में भागीदारी का प्रतीक होता है। इस प्रकार जनता की प्रशासनिक कार्य प्रणाली में बढ़ती हुई भागीदारी, इन दोनों के बीच की दूरी को कम कर देती है।

8. प्रशासनिक तन्त्र को स्थायित्व प्रदान करना
(To Facilitate Stability to the Administration System)

प्रतिनिधि नौकरशाही क्योंकि समाज के सब वर्गो का प्रतिनिधित्व करती है, इसलिए यह समाज के विभिन्न वर्गो की प्रशासन से शिकायतों को दूर करने में कारगर भूमिका निभा सकती है। इस प्रकार ऐसी नौकरशाही समाज के विभिन्न वर्गो की नाराजगी को दूर करने में अहमभूत कदम है। यह प्रशासन के अन्दर जनसाधारण का विश्वास बनाए रखने में काफी हद तक सहायक है। इस कारण यह प्रशासनिक तन्त्र को जड़ों को मजबूती प्रदान करके इसे स्थायित्व प्रदान करने की कोशिश करती है।

नौकरशाही में अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान करने की तरीके
(Ways of Making Bureaucracy More Representative)

नौकरशाही को अधिक जन प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं -

1. शिक्षा को अधिक से अधिक बढ़ावा
(Wide Spread of Education):–

समाज में शिक्षा को अधिकाधिक बढ़ावा देकर नौकरशाही को अधिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया जा सकता है। समाज का अगर प्रत्येक वर्ग शिक्षित होगा तभी उसकी entry को नौकरशाही में सुनिश्चित किया जा सकता है। भारत जैसे विकासशील देशों में आज भी अनपढ़ता की समस्या मुख्य रूप से बनी हुई है। इस समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं -

(i) अधिक से अधिक स्कूल खोलकर

(ii) शिक्षा को सस्ता बनाकर

(iii) व्यवसायी शिक्षा प्रदान करके

(iv) दोपहर का भोजन प्रदान करके

(v) गरीब बच्चों को पुस्तकें व वर्दी मुफ्त प्रदान करके

(vi) प्रत्येक स्कूल में पूर्ण मात्रा में अध्यापक उपलब्ध कराके

(vii) पढ़ाने के तरीकों में सुधार करके इत्यादि।

इस प्रकार शिक्षा के प्रसार हेतु इन सभी तरीकों का इस्तेमाल करके शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं को समाज के प्रत्येक व्यक्ति तक पहुंचाया जा सकता है।

2. भर्ती के तरीकों में सुधार
(Improvement in the Methods of Recruitment)

आजकल भारतीय प्रशासनिक सेवाओं, भारतीय पुलिस सेवाओं, भारतीय विदेश सेवओं आदि में भर्ती लिखित परीक्षा के

आधार पर की जाती है तथा उसके पश्चात् साक्षात्कार लिया जाता है। लेकिन केवल परीक्षां एवं साक्षात्कार के माध्यम से ही व्यक्ति की सभी योग्यताओं का परीक्षण नहीं हो पाता। डेविड सी. पोटर के अनुसार कुछ लोग Cramming के आधार पर ही लिखित परीक्षा में सफल हो जाते है। इस ढंग की Cramming पर बल को कम करने हेतु हाल ही में Objective type test की शूरूआत की गई। हालांकि इसके बाद भी भर्ती प्रणाली में सुधार की आवश्यकता है

हार्वड मनोवैज्ञानिक प्रो. होर्वाड गार्डनर के अनुसार बुद्धिमता (Intelligence) सात ढ़ंग की होती है - (i) Linguistic (2) Logical Mathematical (3) Spatial (4) Bodily - kinaesthetic, (5) Musical (6) Knowledge of Self (7) Knowledge of others.

विभिन्न प्रकार की Jobs के लिए अलग-अलग प्रकार की बुद्धिमता की आवश्यकता होती क्यांकि भिन्न-भिन्न Jobs की आवश्यकताएं भी भिन्न-भिन्न होती हैं।

साक्षात्कार को Personality test के रूप में देखा जा सकता है। हालांकि Military की तरह अब तक भी Personality tests को वैज्ञानिक ढ़ंग से लोक सेवाओं में लागू नहीं किया जा सका है। प्रार्थियों

(Candidates) का वैज्ञानिक ढ़ंग से चयन, न केवल नौकरी की आवश्यकता के अनुरूप प्रार्थी के चयन में मदद करता है बल्कि नौकरशाही के आधार को भी ज्यादा विस्त त बनाता है। विभिन्न योगताएं समाज के भिन्न-भिन्न वर्गो में बंटी हुई होने के कारण उन्हें Various Test apply करके खोजा जा सकता है। इसलिए अगर हम Essay writing के अतिरिक्त प्रार्थी की अलग-अलग योग्यताओं की खोज करें तो हम jobs की आवश्यकताओं के अनुरूप समाज के विभिन्न Social Background के लोग इन सेवाओं के लिए मिल सकते हैं जो नौकरशाही को अधिक से अधिक प्रतिनिधि प्रदान करने में मदद करेगा।

Chapter - 15

तटस्थ बनाम प्रतिबद्ध नौकरशाही

(Neutral Versus Committed Bureaucracy)

गैर-लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं (जैसे कि राजशाही या सैनिक शासन) में सरकार का निर्वाचन नहीं होता और एक ही सरकार (तथा सामान्यतः उसकी नीतियों भी) सतत् रूप से तब तक चलती रहती हैं जब तक कि शासन के मुखिया का निधन न हो जाये या सरकार को अपदस्थ न कर दिया जाए। अतः ऐसी व्यवस्था में नौकरशाही की तटस्थता अर्थहीन एंव औचित्यहीन हो जाती है और नौकरशाही से शासक के प्रति पूर्ण प्रतिबद्धता की अपेक्षा की जाती है। इसके विपरीत एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था में निर्वाचन के द्वारा दलीय आधार पर सरकार का गठन किया जाता है तथा एक निश्चित अवधि के बाद होने वाले चुनावों में यदि सतारूढ़ दल हार जाए तो दूसरा या दूसरे राजनैतिक दल वैकल्पिक सरकार का गठन करते हैं। इसलिए एक लोकतान्त्रिक देश में नौकरशाही की तटस्थता एंव प्रतिबद्धता का मुद्दा अहम् हो जाता है। इसलिए तटस्थता एंव प्रतिबद्धता (नौकरशाही के सन्दर्भ में) का अर्थ समझना एंव इन विषयों पर चर्चा करना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

तटस्थता

तटस्थता का अभिप्राय है विभिन्न पक्षों के प्रति समभाव रखना या अपक्षपात तरीके (Impartial or Unbiased) से कार्य करना। अर्थात् किसी भी पक्ष के प्रति विशेष रूझान (Special Leaning) न दिखाना। नौकरशाही के सन्दर्भ में तटस्थता का तात्पर्य है किसी वर्ग-विशेष (सामाजिक, सांस्क तिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि) के प्रति कोई रूझान प्रदर्शित किए बिना अपने प्रशासकीय दायित्वों का निर्वाह करना। परन्तु तटस्थता का तात्पर्य उदासीनता नहीं है अर्थात तटस्थता एक नकारात्मक अवधारणा नहीं है अपितु एक सकारात्मक अवधारणा है जिसमें नौकरशाही से बिना किसी भेदभाव के नीति को लागू करने की दिशा में सक्रिय रूप से कार्य करना अपेक्षित है। यदि नौकरशाही तटस्थ न होकर किसी वर्ग-विशेष के प्रति रूझान दिखाती है तो यह घातक हो सकता है क्योंकि नौकरशाही लम्बे अनुभव, स्थाई पद, गोपनीय सूचनाओं तक पहुंच तथा व्यवसायिक होने के कारण न नीति-क्रियान्वयन में बल्कि नीति-निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारत जैसे विकासशील देशों में कमजोर राजनीतिक नेत त्व के कारण नौकरशाही और भी अधिक शक्तिशाली हो जाती है। फलस्वरूप नौकरशाही का तटस्थ होना अति आवश्यक है। नौकरशाही को विभिन्न राजनीतिक दलों, वर्गो, जातियों, धर्मो, क्षेत्रीयताओं, भाषाओं आदि के प्रति तटस्थ रहना चाहिए।

(1) राजनैतिक दलों के बीच तटस्थताः-

सभी गैर-साम्यवादी लोकतान्त्रिक देशों में एक से अधिक राजनैतिक दल पाये जाते हैं। ये सभी राजनैतिक दल किसी विशेष विचारधारा पर आधारित होते हैं तथा लोकतान्त्रिक पद्धति (निर्वाचन) के द्वारा सत्ता में आने का प्रयास करते हैं। इसलिए एक निश्चित अवधि के बाद चुनाव सभी लोकतान्त्रिक देशों की प्रमुख विशेषता है चुनाव में पहले सभी राजनैतिक दल अपने घोषणा पत्र

जारी करते हैं। जिसमें कि सत्तारूढ़ होने की स्थिति में उस दल के द्वारा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, तकनीकी, विदेश आदि क्षेत्रों में अपनाई जाने वाली नीतियों का वर्णन होता है। जनता इन घोषणा पत्रों का तुलनात्मक

अध्ययन करने के बाद अपनी पसन्द के राजनीतिक दल को विजयी बनाती है। विजयी होने वाले राजनीतिक दल का घोषणापत्र जनादेश बन जाता है जिसे उस सत्तारूढ़ दल को लागू करना होता है। अपनी इन नीतियों को लागू करने के लिए सत्तारूढ़ दल के पास नौकरशाही रूपी यन्त्र होता है। जिसकी सहायता से वह दल अपने घोषणा -पत्र में सम्मिलित नीतियों को कार्यरूप प्रदान करता है। यदि नौकरशाही तटस्थ नहीं होगी तथा किसी विशेष राजनीतिक दल के प्रति रूझान रखेगी तो वह चुनावों के पश्चात् सत्तारूढ़ होने वाले दूसरे राजनीतिक दल की नीतियों के निर्माण तथा क्रियान्वयन में पक्षपात रहित तरीके से कार्य नहीं करेगी। इससे सत्तारूढ़ अपने चुनाव घोषणापत्र में उल्लिखित नीतियों को प्रभावी रूप में कार्यान्वित नहीं कर पाएगा और असफल हो जाएगा। फलतः उसका दोष न होने के बावजूद वह राजनैतिक दल अगले चुनावों में सत्ता से बाहर हो जाएगा। यह जनता असफल होने वाले उस राजनीतिक दल तथा लोकतन्त्र सभी के साथ धोखा होगा।

(2) वर्गों के मध्य तटस्थताः-

सभी देशों में अनेक वर्ग विद्यमान रहते हैं। उदाहरण के तौर पर भारत में औद्योगिक , मजदूर , क षक, मध्यम, निम्न, उच्च इत्यादि अनेक वर्ग पाए जाते है वर्ग सदैव ही आर्थिक आधारों पर बंटे होते हैं अर्थात् समान आर्थिक हितों वाले लोग किसी एक वर्ग से सम्बद्ध होते हैं। क्योंकि इन वर्गो के आर्थिक हित भिन्न होते हैं अतः इन वर्गो के आर्थिक हितों में विषमता भी होती है तथा उनमें अक्सर विवाद (Conflict) भी होता है। इसके साथ-साथ ये सभी अपने-अपने हितों की रक्षा के लिए सत्तारूढ़ दल पर सदैव दबाव बनाते रहते हैं। दूसरी ओर सरकार तथा प्रशासन से यह अपेक्षा की जाती है कि वे विभिन्न वर्गो की उचित तर्कसंगत एंव न्यायपूर्ण माँगों का समावेश अपनी नीतियों में करें। परन्तु विभिन्न विवादपूर्ण माँगों के मध्य उचित एंव अनुचित का निर्धारण कई बार कठिन हो जाता है। उदाहरण के तौर पर क षक वर्ग सरकार पर फसलों के खरीद मूल्य (Prourement Prices) में व द्धि के लिए दबाव डालता है जबकि दूसरी ओर उद्योगपति इसे कम से कम रखने के लिए सरकार पर दबाव डालते हैं क्योंकि खाद्यान्नों के मूल्य बढ़ने से उनकी उत्पादन लागत बढ़ जाती है जिससे उन्हें या तो अपने उत्पादों के मूल्यों में व द्धि जैसा अप्रिय निर्णय लेना पड़ता है अथवा अपने लाभ का हिस्सा कम करना पड़ता है। इन परिस्थितियों में तटस्थ प्रशासन के लिए भी उचित निर्णय लेना कठिन हो जाता है। परन्तु यदि प्रशासन तटस्थापूर्ण तरीके से कार्य नहीं करता तो इसके परिणाम बहुत गंभीर होते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि एक साथ विभिन्न वर्गो को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट कर पाना संभव नहीं होता परन्तु यदि प्रशासन तटस्थापूर्ण रवैया अपनाता है तो विभिन्न वर्गो के बीच संघर्ष (Conflict) सीमित रहेगा। परन्तु यदि प्रशासन तटस्थ नहीं रहता और किसी वर्ग हो यह एहसास होता है कि उसके साथ अन्याय हुआ है तो वह वर्ग संघर्ष की राह पर चल पड़ता है। अतः उद्योगपतियों तथा श्रमिकों के बीच संघर्ष का परिणाम अनेकों बार हड़ताल और तालाबन्दी निकलता है जो कई बार हिसंक रूप भी धारण कर लेता है। इससे इन दोनों वर्गो के साथ-साथ उत्पादन गिरने से पूरे राष्ट्र को भी हानि उठानी पड़ती है। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि नौकरशाही विभिन्न वर्गो के बीच तटस्थतापूर्ण तरीके से कार्य करे।

(3) जातियों के बीच तटस्थताः-

जाति भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है और भारतीय समाज अनेक जातियों में बंटा हुआ है। इनमें से कुछ जातियाँ अन्य जातियों से पिछड़ी हुई हैं। विकास की प्रक्रिया में बाकि समाज से पीछे रह गई इन जातियों को तीन वर्गो में बांटा जाता है-अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित

जनजातियाँ तथा अन्य पिछड़े वर्ग। समाज के इन पिछड़े वर्गो की स्थिति से हमारे संविधान निर्माता भी परिचित थे और इसीलिए उन्होनें इन वर्गो के विकास के लिए संविधान में भी प्रावधान किए। साथ ही अनेक कानूनी प्रावधान भी इन वर्गो को समाज की मुख्य धारा में जोड़ने के लिए किए गए।

अब यह आवश्यक है कि प्रशासन न केवल विभिन्न जातियों के प्रति समान द ष्टिकोण अपनाये और तटस्थ रहे अपितु विशेष वर्गो के विकास व उत्थान के लिए संवैधानिक प्रावधानों तथा कानूनी उपचारों (Legal Measures) को भी बिना किसी भेदभाव के लागू करे।

(4) विभिन्न धर्मो के प्रति तटस्थताः-

जहाँ जाति भारतीय समाज की विशिष्ट इकाई है वहीं धर्म सभी देशों में विद्यमान पाया जाता है । एक देश में वास करने वाले विभिन्न धर्मो के लोगों तथा अनुयायिओं के प्रति भी तटस्थता की भावना रखना उस देश के प्रशासन के लिए आवश्यक माना जाता है। यदि प्रशासन विभिन्न धर्मो के बीच तटस्थता की भावना नहीं रखता तो इससे धार्मिक असहिष्णुता की भावना पैदा होती है। साथ ही जिस धर्म के लोग स्वंय को उपेक्षित समझते हैं, में कई बार धार्मिक उन्माद भड़क उठता है जो कई अवसरों पर साम्प्रदायिक दंगों का रूप भी धारण कर लेता है। भारत में समय-समय पर साम्प्रदायिक दंगें इसका ज्वंलत उदाहरण हैं। इस प्रकार की घटनांए किसी भी देश के लिए बहुत दुखद एंव पीड़ादायक होती हैं। अतः प्रशासन के लिए यह आवश्यक है कि वह विभिन्न धर्मो के बीच तटस्थता का भाव रखे।

(5) क्षेत्रीयताओं के बीच तटस्थताः-

क्षेत्रीयता सामान्यतः असमान भौगोलिक परिस्थितियों की देन होती है। भौगोलिक परिस्थितियों के कारण देश के कुछ भाग अन्यों की अपेक्षा कम विकसित होते हैं। देश के अविकसित भागों में संसाधनों की कमी के कारण इन क्षेत्रों से पलायन कर लोग देश के विकसित भागों में जा कर आजविका कमाते हैं। दूसरे, इन क्षेत्रीय असंतुलनों को दूर करने की नीति के अर्न्तगत सरकार विकसित भागों से करों के रूप में संग्रहित करके धन को भौगोलिक रूप से पिछड़े भागों में निवेश करती जिससे कि इन भागों का विकास हो सके। इस कारण विकसित भागों में रहने वाले लोगों के प्रति कटुता की भावना देखने को मिलती है। इसलिए प्रशासन से यह अपेक्षा की जाती है कि वह विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के बीच तटस्थता का भाव रखे अन्यथा विभिन्न क्षेत्रीय भागों में निवास करने वाले लोगों के बीच कटुता की यह भावना उग्र रूप भी धारण कर सकती है।

(6) विभिन्न भाषाओं के बीच तटस्थताः-

भारत जैसे बहुभाषी देशों में भाषा के आधार पर भी तटस्थ रहना प्रशासन के लिए आवश्यक हो जाता है। अर्थात् विभिन्न भाषाएं बोलने वाले लोगों के बीच किसी भी प्रकार का भेदभाव न करना। भाषाई आधार पर भारत में काफी विवाद है तथा स्थिति इतनी नाजुक है कि जब भी प्रशासन ने राष्ट्रीय भाषा(हिन्दी) को सम्पूर्ण भारत में अपनाने का प्रयास किया है , तभी दक्षिण भारत के अहिन्दी भाषी राज्यों में इसके विरूद्ध आन्दोलन हुए हैं तथा प्रशासन को अपना विचार त्यागना पड़ा है। ऐसी परिस्थितियों में यदि प्रशासन भाषाई आधार पर तटस्थता की भावना नहीं रखता तो इसके परिणाम घातक हो सकते हैं।

प्रतिबद्धताः- प्रतिबद्धता का तात्पर्य है निष्ठावान होना। अतः प्रतिबद्ध नौकरशाही का अर्थ है नौकरशाही का अपने प्रशासकीय उत्तरदायित्वों का निष्ठापूर्वक निर्वाह करना। प्रतिबद्ध नौकरशाही को दो अर्थो- नकारात्मक तथा सकारात्मक में समझा जाता है। नकारात्मक रूप में प्रतिबद्ध नौकरशाही का अर्थ है किसी विशेष व्यक्ति, राजनैतिक दल या समाज के किसी विशेष वर्ग के प्रति निष्ठावान होना। जबकि सकरात्मक रूप में प्रतिबद्ध नौकरशाही का अर्थ है अपने प्रशासकीय उत्तरदायित्वों का निष्ठापूर्वक निर्वाह करना तथा जो भी नीतियाँ राजनीतिक स्तर पर बनाई जाती

हैं उन्हें पूरी निष्ठा के साथ कार्यन्वित करना। निश्चित तौर पर प्रतिबद्ध नौकरशाही का नकारात्मक स्वरूप पूर्णतः अंवाछनीय है जबकि सकारात्मक रूप में यह सदैव ही पूर्णतः वांछनीय है। जो लेखक प्रतिबद्ध नौकरशाही की आलोचना करते हैं। वास्तव में वे इसके नकरात्मक स्वरूप की आलोचना करते हैं।सन् 1969 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमति इन्दिरा गाँधी के नौकरशाही से प्रतिबद्धता की माँग करने पर उठा विवाद भी वास्तव में प्रतिबद्धता को नकारात्मक अर्थ में समझने के कारण ही था। अतः इसमें कोई सन्देह नहीं कि नौकरशाही को सकारात्मक रूप में प्रतिबद्ध होना चाहिए। परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि नौकरशाही को किस के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहि। इस प्रश्न के उत्तर में हम यह कह सकते हैं कि सामान्यतः यह अपेक्षा की जाती है कि नौकरशाही को देश के संविधान मानवीय मूल्यों, राष्ट्रीय उद्देश्यों , राजनैतिक कार्यपालिका के द्वारा बनाई गई नीतियों, अपने व्यवसाय (Profession) प्राक तिक न्याय के सिद्धान्त के प्रति निष्ठावान होना चाहिए। इन सभी का विस्त त वर्णन नीचे दिया जा रहा है:-

(1) संविधान के प्रति प्रतिबद्धताः-

एक देश का संविधान मौलिक कानूनों का वह संग्रह है जिसके द्वारा उस देश का शासन संचालित होता है। संविधान के द्वारा ही सरकार के स्वरूप तथा कार्यक्षेत्र का निर्धारण होता है तथा विभिन्न पदाधिकारियों के कर्त्तव्यों का बोध होता है। इसके साथ ही नागरिक भी अपने अधिकार तथा कर्त्तव्य संविधान से ही प्राप्त करते हैं। अतः यह आवश्यक है एक देश के सभी नागरिकों की संविधान में पूर्ण निष्ठा हो तथा वे सभी उसके प्रति सर्मपित हों। संविधान को अक्षरशः लागू करने के लिए वचनबद्ध हों।

(2) राष्ट्रीय उद्देश्यों के प्रति प्रतिबद्धताः-

सभी देशों के अपने कुछ आधारभूत राष्ट्रीय उद्देश्य (National Goals) होते हैं। आवश्यकतानुसार समय -समय पर इन उद्देश्यों में परिर्वतन भी होता रहता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करना हर नागरिक का कर्त्तव्य होता है। संभवतः राष्ट्रीय उद्देश्यों को निर्धारित करने वाला फ्रांस पहला देश था जब वहाँ 1789 की क्रान्ति के समय ही क्रान्तिकारियों ने तीन राष्ट्रीय लक्ष्य -स्वतन्त्रता, समानता तथा बन्धुत्व (Libetry, Equality and Fraternity) निर्धारित किए। इसी प्रकार भारत में दो राष्ट्रीय लक्ष्य सामाजिक- आर्थिक विकास एंव राष्ट्रीय अखण्डता (Social Economic Development and National integration) निर्धारित किए गए हैं। नौकरशाही सहित सभी नागरिकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे इनके वचनबद्ध होगें।

(3) नीतियों के प्रति प्रतिबद्धताः-

उच्च नौकरशाही मन्त्रियों की सलाहकार के रूप में भी कार्य करती है। अतः नीति-निर्माण प्रक्रिया में आवश्यक आँकड़े एवं तथ्य उपलब्ध करवाने के साथ-साथ विभिन्न विकल्पों के गुणों एंव अवगुणों के बारे में मन्त्री को जानकारी देना भी नौकरशाही का कर्त्तव्य है। इसका कारण यह है कि नौकरशाही अपने लम्बे अनुभव तथा व्यवसायिक होने के कारण इस स्थिति में होती है कि वह विभिन्न प्रशासकीय मामलों में सही जानकारी रखते है कि जबकि मन्त्री अव्यवसायिक होते हैं तथा उनकी नियुक्ति के लिए कोई योग्यताएं भी निर्धारित नहीं होती है। साथ ही अधिकतर मन्त्रियों को अनुभव भी नहीं होता और विभिन्न प्रशासकीय मामलों के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिए समय का अभाव होता है क्योंकि अनेक राजनैतिक उत्तरदायित्वों की भी पूर्ति करनी होती है। इसलिए कोई भी निर्णय लेने में मन्त्रिगण नौकरशाही की सलाह लेते हैं। यद्यपि मन्त्रियों के लिए आवश्यक नहीं कि वह नौकरशही द्वारा दी गई सलाह को स्वीकार करें। नीतियों के क्षेत्र में नौकरशाही का कार्य तो वास्तव में नीतियों के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में है न कि नीतियों के निर्माण के सम्बन्ध में। इसलिए जो भी नीतिगत निर्णय राजनीतिक स्तर पर लिए गए हैं (भले ही उन नीतियों में उनके द्धारा दिए गए परामर्श का समावेश हुआ अथवा नहीं) उन्हें निष्ठापूर्वक लागू करना

नौकरशाही का परम कर्त्तव्य है। यदि लोक सेवक"सरकार की किसी नीति से असहमत हैं, अथवा यदि वह समझता है कि सरकार की नीति देश के लिए अहितकर है, तो उस स्थिति में उसको या तो नीति को स्वीकार न करने के अपराध का दण्ड पाने के लिए तैयार रहना चाहिए (जैसे स्थानान्तरण, असुविधाजनक पद पर नियुक्ति अथवा पदोन्नति का न दिया जाना) और या उसे अपने व्यक्तिगत सम्मान की रक्षा के लिए पद से त्यागपत्र देना चाहिए।"

तात्पर्य यह है कि नौकरशाही को राजनीतिक स्तर पर निर्धारित की गई नीति के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए।

(4) प्राक तिक न्याय के सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्धताः-

प्राक तिक न्याय के कुछ सर्वमान्य सिद्धान्त हैं। उदाहरणार्थ, प्राक तिक न्याय का एक प्रमुख सिद्धान्त यह है कि एक व्यक्ति का पक्ष सुने बिना उसके बारे में कोई भी निर्णय नहीं किया जाना चाहिए। अर्थात् किसी भी व्यक्ति को अपना पक्ष रखने की पूरी स्वतन्त्रता प्रदान की जानी चाहिए। नौकरशाही के लिए यह भी आवश्यक है कि वह प्राक तिक न्याय के सिद्धान्तों के प्रति वचनबद्ध रहे।

5) मानव मूल्यों के प्रति वचनबद्धताः-

सभी मानव समाज कुछ मूल्यों को मानकर चलते हैं तो उनके प्रति निष्ठा प्रकट करते हैं। सच्चाई, ईमानदारी, दयालुता साहस इत्यादि कुछ ऐसे मानवीय मूल्य हैं जो कि सार्वभौमिक रूप से मान्य हैं। किसी भी व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है हर परिस्थिति में वह इन मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठावान रहे। नौकरशाही से भी यह आशा की जाती है कि वह अपने प्रशासकीय उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में इन मानवीय मूल्यों को महत्व दें।

(6) अपने व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धताः-

वर्तमान युग विशिष्टीकरण का युग है । अतः लोक प्रशासन में प्रशासकों के अतिरिक्त ज्ञान की अनेक विशिष्ट शाखाओं से लोगों को भर्ती किया जाता है। इनमें से कुछ प्रमुख हैं-डॉक्टर , इन्जिनीयर, अध्यापक, कम्प्यूटर विशेषज्ञ, अधिवक्ता, वैज्ञानिक, प्रबन्धक, एकाउन्टैन्ट इत्यादि। इन सभी विशेषज्ञों के लिए आवश्यक है कि वह अपने व्यवसाय के क्षेत्र में हो रही

आधुनिक एंव नवीनतम खोजों के बारे में पूरी जानकारी रखें तथा अपने ज्ञान में सतत् रूप सें व द्धि करते रहें। उदाहरणार्थ कम्प्यूटर विशेषज्ञ के लिए यह आवश्यक है कि वह कम्प्यूटर के क्षेत्र में हो रहे नए आविष्कारों के बारे में पूरी जानकारी रखे। इस प्रकार एक नौकरशाह के रूप में हर विशेषज्ञ से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्ध रहे।

Chapter - 16
नीति-निर्माण एंव नीति को लागू करने में नौकरशाही की भूमिका
(Role of Bureaucracy in Policy-Making and Implementation)

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् राज्य की प्रक ति में मौलिक बदलाव आया। अब राज्य ने 'पुलिस राज्य' के स्थान पर 'कल्याणकारी राज्य' का रूप धारण किया जिसके फलस्वरूप सब लोगों के कल्याण की जिम्मेदारी अब राज्य पर आ गई राज्य की यह जिम्मेदारी विकासशील देशों के सन्दर्भ में और भी बढ़ गई क्योंकि ये देश एक लम्बे समय तक साम्राज्यवादी शक्तियों के शोषण का शिकार रहने के कारण अनेक समस्याएं जैसे कि गरीबी, बेरोजगारी, भूखमरी , अनपढ़ता , भ्रष्टाचार, स्वास्थय सम्बन्धी समस्याओं आदि से ग्रसित रहे थे। इसके साथ-साथ स्वतन्त्रता के पश्चात् विकास करना इन राष्ट्रों की मुख्य आवश्यकता बन गई। अतः विकास सम्बन्धी कार्य भी अब इन देशों में राज्य की जिम्मेदारी बन गई। इन सब जिम्मेदारियों को निभाने के लिए राज्य को बहुत सारी नीतियाँ बनानी पड़ती है। सवैंधानिक तौर पर नीति का निर्माण सम्प्रभु द्वारा किया जाता है जो प्रजातान्त्रिक देश में लोग होते हैं। लोगों की सम्प्रभु शक्तियां उनके प्रतिनिधियों के माध्यम से

विधानपालिका या संसद में निहित होती हैं । इस प्रकार नीति निर्माण का कार्य संसद की जिम्मेदारी है। लेकिन नीति निर्माण के कार्य में नौकरशाही भी एक अहमभूत भूमिका निभाती है क्योंकि विधानपालिका मोटे रूप में नीतियां तैयार करती है जबकि उन्हें Specific रूप नौकरशाही द्वारा प्रदान किया जाता है।

हालांकि लोक प्रशासन के इतिहास में नीति निर्माण के सम्बन्ध में नौकरशाही की भूमिका आरम्भ से ही विरोधाभाषी रही है। वुडरो विलसन द्वारा लिखित लेख 'The Study of Administration ' में नौकरशाही की नीति निर्माण में भूमिका को पूर्ण रूप से नकारा गया है और Pre-World War II era में यह विचार अपनी चरम सीमा पर था। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् शोधकार्य एंव अनुभव के आधार पर नौकरशाही की भूमिका को स्वीकारा गया है तथा यह पाया गया कि "Essence of Public Administration is policty formulation".

आज यह तथ्य सर्वविदित है कि नौकरशाही प्रत्येक प्रजातान्त्रिक देश चाहे वह विकसित है या विकासशील, में न केवल नीति लागू करने में बल्कि नीति निर्माण में भी अहमभूत भूमिका निभाती है।

नौकरशाही नीति निर्माण क्यों करती है?
(Why Bureaucracy Formulates Public Policies?)

अब प्रश्न उठता है कि नौकरशाही नीति निर्माण में अपनी भूमिका क्यों निभाती है? इस प्रश्न के जवाब में निम्नलिखित में कारणों का वर्णन अनिवार्य हैः-

1. संवैधानिक उत्तरदायित्व
(Constitutional Obligation)

नीति निर्माण व कानून बनाने की प्रक्रिया में राजनैतिक कार्यपालिका की मदद करना नौकरशाही की संवैधानिक जिम्मेदारी है। नीति सम्बन्धी विभिन्न विकल्पों के सन्दर्भ में नौकरशाही कार्यपालिका को सलाह देती है। लेकिन राजनैतिक कार्यपालिका एंव विधायक या सांसद दोनों layman होने के कारण नौकरशाही की भूमिका अहमभूत बन जाती क्योंकि जब Draft Policy Resolutions तैयार किये जाते हैं तो नौकरशाही लोक नीति के 'तत्वों (Contents) के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस प्रकार संवैधानिक दायित्व के रूप में नौकरशाही नीति के तत्वों का निर्धारण करके इसके कार्यक्षेत्र को स्पष्ट करती है तथा इसे वास्तविक स्वरूप प्रदान करने में अपनी भूमिका निभाती है।

2. प्रदत्त व्यवस्थापन
(Delegated Legislation)

आधुनिक समय में राज्य की प्रक ति कल्याणकारी होने के कारण इसके कार्यो में अत्याधिक व द्धि हुई है। इसके साथ -साथ प्रशासन का स्वरूप 'विकास प्रशासन' होने के कारण विकास की सारी जिम्मेदारी प्रशासन की बन गई। इससे राज्य की

विधान व नीति निर्माण सम्बन्धी गतिविधियां अत्याधिक बढ़ी। हांलाकि विधानपालिका के पास समय का अभाव होने के कारण इन बढ़ी हुई गतिविधियों को efficient ढ़ंग से पूरा करना काफी कठिन हो गया। इस सम्बन्ध में ऐसा विचार है कि अगर विधानपालिका वर्ष के 365 दिनों में लगातार 24 घण्टे कार्य करे तब भी इसके कानून-निर्माण के कार्य का पूरा करना कठिन है।

इसके अतिरिक्त लोक नीतियों एंव Laws की विषय -वस्तु में तकनीकी जटिलता होने के कारण तथा विधायको का layman होने के कारण , उन्हें इन तकनीकी के जटिलताओं के सम्बन्ध में बहुत कम ज्ञान होता है। अतः वे विधायनी कार्यो को efficient ढ़ंग से पूरा करने में असमर्थ पाते हैं। उपरोक्त कारणों से प्रदत्त व्यवस्था की आधुनिक युग में आवश्यकता काफी अधिक बढ़ गई है।

आजकल संसद कानूनों एंव नीतियो का खाका मौटे तौर पर तैयार करती है और उसकी बारिकियां प्रशासन के द्वारा पूर्ण की जाती है। इस प्रकार प्रशासन नीति-निर्माण कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कानून एंव लोक नीतियों की बारिकियाँ, संसद के द्वारा पारित Broad framework, के तहत तैयार करना ही प्रदत्त व्यवस्थापन कहलाता है । प्रदत्त व्यवस्थापन ने प्रशासन की भूमिका को नीति निर्माण में आवश्यक एंव अहमभूत बना दिया है।

3. ज्ञान एंव अनुभव
(Knowledge and Experience)

नीति-निर्माण कार्य एक उलझी हुई प्रक्रिया है और उसे तैयार करने के लिए उसके प्रत्येक पहलू से सम्बन्धित ज्ञान एंव क्षेत्रीय अनुभव की आवश्यकता होती है। लेकिन संवैधानिक रूप से अधिक त नीति-निर्माता नौसखिए होने के कारण उनके पास इस ढ़ंग के ज्ञान एंव अनुभव की कमी पाई जाती है। उनमें न तो विभिन्न नीति विकल्पों के Pros and Cons को समझने की सामर्थ्य होती है और न ही पूर्व में लागू की गई नीतियों में उत्पन्न हुई समस्याओं का क्षेत्रीय अनुभव इसके साथ -साथ उनका चुनाव बहुत ही कम समय के लिए होता है जिसके कारण वे नीति निर्माण कार्य जो कि एक वैज्ञानिक एंव निरन्तर प्रक्रिया है, के निर्माण में पूर्ण रूप से सक्ष्म नहीं हो पाते।

इसके विपरीत नौकरशाही को 'सूचनाओं के भण्डार' (Repository of Information) के नाम से जाना जाता है क्योंकि इसके पास अत्याधिक ज्ञान एंव विभिन्न क्षेत्रों का लम्बे समय का अनुभव होता है। इसके फलस्वरूप नौकरशाही को विभिन्न नीति विकल्पों के Pros & Cons को समझने की तथा प्रत्येक विकल्प के सम्बन्ध में वितिय एंव प्रशासकीय कठिनाई की समझ होती है। इसके अतिरिक्त

पूर्व में लागू की गई नीतियों के सम्बन्ध में वे काफी कठिनाईयां उठा चुके होते हैं, उन नीतियों से प्रभावित सामाजिक समूहों का सामना कर चुके होते हैं और नीति-सम्बन्धी समस्याओं को हल करने में नए तरीकों का इस्तेमाल कर चुके होते हैं। इसी कारण राजनैतिक कार्यपालिका के पास नीति निर्माण कार्य में नौकरशाही पर विश्वास करने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं होता।

4. जटिल विषयवस्तु

(Complicated Policy Matter)

विज्ञान एंव तकनीकी के विकास एंव प्रशासन एंव प्रबन्ध में चातुर्य (Technical skills) के विकास एंव उनके आधुनिक जीवन में अत्याधिक प्रयोग के कारण, नीति निर्माण की विषय -वस्तु में काफी अधिक जटिलता उत्पन्न हुई है। आज नीति निर्माण एक जटिल एंव उलझी हुई प्रक्रिया है। इसके साथ-साथ सभी क्षेत्रों में अधिकाधिक विशेषीकरण की बढ़ती हुई मांग ने नीति-निर्माण की जटिलता को और अधिक बढ़ा दिया है।

आज संवैधानिक रूप से अधिक त राजनैतिक कार्यपालिका तो क्या, सामान्यज्ञ प्रशासक भी विशेषीक त क्षेत्रों के लिए नीति निर्माण कार्यो में असहाय महसूस करते हैं। इसके लिए विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों की सेवांए ली जाती हैं। यही कारण है कि आज लोक प्रशासन के क्षेत्र में विशेषज्ञों की भूमिका अत्याधिक बढ़ गई है।

5. स्थायित्व

(Permanance)

संवैधानिक नीति-निर्माताओं की तुलना में लोक सेवकों को उनके आफिस में स्थायित्व का लाभ भी प्राप्त है। राजनैतिक कार्यपालिका सत्ता में आती-जाती रहती है लेकिन लोक सेवक आरम्भ से ही अपने पद पद बने रहते है। लोक सेवकों के इस स्थायित्व के कारण ही उन्हें लम्बे अनुभव एंव विभिन्न क्षेत्रों में विस्त त ज्ञान का लाभ प्राप्त होता है जो नीति निर्माण कार्य के लिए आधारभूत होता है। मन्त्रियों के पास इस ढ़ंग के ज्ञान एंव अनुभव का अभाव रहता है। इसके साथ-साथ मन्त्रियों के पास नीति-निर्माण के अतिरिक्त और भी काफी जिम्मेदारियाँ होने के कारण वे अधिक समय नीति निर्माण के कार्य पर नहीं लगा पाते। इन कारणों से नौकरशाही की भूमिका नीति-निर्माण कार्य में और भी अधिक बढ़ जाती है।

नीति निर्माण में नौकरशाही की भूमिका

(Role of Bureaucracy in Policy Formulation)

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि नौकरशाही नीति -निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेकिन इसके साथ-साथ यह जानना भी आवश्यक है कि यह नीति-निर्माण प्रक्रिया में अपनी भूमिका कैसे निभाती है और इसके लिए क्या तौर तरीके अपनाती है? नौकरशाही की नीति-निर्माण में भूमिका का विस्त त विवरण निम्नलिखित तीन पहलुओं की मदद से किया जा सकता है-

1. Informative Role सूचनात्मक भूमिका।
2. Suggestive Role सुझावात्मक भूमिका।
3. Analytical Role विश्लेषणात्मक भूमिका।

1. सूचनात्मक भूमिका

(Informative Role)

नीति-निर्माण के सम्बन्ध में नौकरशाही बहुत सारी सूचनांए प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नौकरशाही निम्नलिखित ढ़ंग से अपनी सूचनात्मक भूमिका नीति निर्माण में निभाती है:-

(अ) संचार के साधन के रूप में (Bureaucracy as a Channel of Communication)

नौकरशाही जनता व सरकार के मध्य संचार के साधन के रूप में कार्य करती है। नौकरशाही सरकार की नीतियों एंव कार्यक्रमों के सन्दर्भ में बहुत सारी जानकारी जनता तक पहुंचाती है और जनता सरकार से क्या चाहती है, उनकी आवश्यकताएं, इच्छांए एंव प्रतिक्रियाएं सरकार तक पंहुचाती है। हांलाकि तकनीकी रूप से एक प्रजातन्त्रिक राष्ट्र में यह कार्य जनप्रतिनिधियों द्वारा किया जाना चाहिए। लेकिन आज विशेषतौर पर विकासशील राष्ट्रों में यह भूमिका विधानपालिका की बजाय नौकरशाही बेहतर ढंग से निभाती है। उदाहरण के तौर पर अगर किसान अपनी किसी समस्या जैसे कि उचित सिंचाई सम्बन्धी सुविधा की कमी ओलाव ष्टि आदि के कारण फसल खराब होना, फर्टीलाइर्जस पैस्टीसाइडस एंव बीज आदि का उपलब्ध न होना, के सन्दर्भ में वे अपनी शिकायत सम्बन्धित जिला अधिकारी या जिला उपायुक्त को देते हैं जो उनकी शिकायत को सरकार तक पहुंचाते हैं। नौकरशाही इन समस्याओं के समाधान हेतू बजट व पंचवर्षीय योजनाओं में अधिक Funds allocate करने का प्रस्ताव सरकार को देते हैं। इस प्रकार नौकरशाही एक संचार के साधन के रूप में लोगों की आवश्यकताओं एंव जरूरतों को नीति प्रस्तावों के रूप में परिवर्तित करने में कारगर भूमिका निभाती है। नौकरशाही की यह भूमिका विकासशील देशों में सशक्त दबाव समूहों एंव राजनैतिक पार्टियों के अभाव में और भी अधिक बढ़ जाती है।

(ब) Feedback के स्त्रोत के रूप में (Bureaucracy as a Source of Feedback)

नीति-निर्माण कार्य एक वैज्ञानिक प्रक्रिया होने के कारण तथ्यों पर आधरित है। दूसरे शब्दों में नीति निर्माण करते समय पूर्व लागू की गई नीतियों के परिणामों, उनकी सफलता एंव असफलता के कारणों तथा उनके सन्दर्भ में लाभार्थियों की प्रतिक्रियाओं के बारे में जानना आवश्यक है। ये सब जानकारी Feedback की प्रक्रिया के माध्यम से ही सम्भव है। नई सफल नीति का निर्माण Effective feedbak पर ही आधारित है।

लेकिन अब प्रश्न उठता है कि Eeffective feedback कहाँ से प्राप्त होगी? इस प्रश्न का उत्तर है नौकरशाही से क्योंकि नौकरशाही का कार्यकाल लम्बा होने के कारण यह राजनेताओं की अपेक्षा अधिक अनुभवी होती है। दूसरा नौकरशाही अलग-अलग स्थानों पर विभिन्न पदों पर कार्य करती है जिससे उन्हे विभिन्न क्षेत्रों का विशेषीक त ज्ञान प्राप्त होता है। इस प्रकार नौकरशाही नई नीतियों निर्माण के समय विभिन्न नीतियों की सफलता एंव असफलता के सन्दर्भ में Effective feedback देने में कारगर भूमिका निभाती है।

(स) सूचनाओं के भण्डार के रूप में (Bureaucracy as the store-house of Information)

नीति निर्माण का कार्य जटिल प्रक ति का होने के कारण इसमें बहुत सारी सूचनाओं एंव आंकड़ों की आवश्यकता पड़ती है। ये आँकड़ें एंव सूचनाएं नीति-निर्माताओं को नौकरशाही के द्वारा ही प्रदान किए जाते हैं क्योंकि नौकरशाही सूचनाओं के Store house के रूप में कार्य करती है। नौकरशाही के पास विभिन्न क्षेत्रों में लागू की गई अलग-अलग नीतियों के सन्दर्भ में आई समस्याओं की पूर्ण जानकारी होती है और यह जानकारी नयी नीतियों के विकास में अत्याधिक आवश्यक होती है। इस प्रकारें नौकरशाही'Repository of Information' होने के कारण नीति-निर्माण में अहमभूत भूमिका निभाती है और संवैधानिक नीति-निर्माताओं के पास नौकरशाही द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं पर विश्वास करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं होता।

(द) Secret Information तक पहुंच (Access to secret Information)

नीति निर्माण कार्य में कुछ गुप्त व रहस्मयी सूचनाओं की भी आवश्यकता होती है जो रिकार्ड व फाइलों में बन्द होती हैं । आज से पहले लागू की गई विभिन्न नीतियों के सम्बन्ध में फाइलें एंव रिकार्ड नौकरशाही के कब्जे में होता है। नौकरशाही की मदद के बिना इस रिकार्ड की जानकारी काफी कठिन

है। अतः गुप्त सूचनाओं की जानकारी नीतियों से सम्बन्धित फाइलों एंव रिकार्ड की प्राप्ति के लिए नौकरशाही को विश्वास में लेना अति आवश्यक है। इस प्रकार नौकरशाही की पहुंच गुप्त सूचनाओं एंव पुराने रिकार्ड तक होने के कारण, यह नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

2. सुझावात्मक भूमिका

(Suggestive Role)

नौकरशाही के पास विस्त त ज्ञान एंव क्षेत्रीय अनुभव होने के कारण यह नीति निर्माण कार्य में एक अहमभूत सुझावात्मक भूमिका भी अदा करती है। नौकरशाही को सचिवालय के स्तर पर सरकार के 'Think-tank' के रूप में जाना जाता है। देश के समझ खड़ी विभिन्न समस्याओं एंव मुद्दों की पूर्ण समझ होने के कारण नौकरशाही नीतियों के निर्माण के सम्बन्ध में समय महत्वपूर्ण सुझाव दे सकती है। नौकरशाही नीति निर्माण में अपनी सुझावात्मक भूमिका निम्न ढ़ंग से अदा कर सकती है।

(क) विस्त त ज्ञान एंव अनुभव (Wide Knowledge and Experience)

नीति-निर्माण का कार्य सरल नहीं है, इसके लिए विस्त त ज्ञान एंव अनुभव की आवश्यकता होती है।संवैधानिक नीति निर्माताओं के स्तर पर प्रायः इस ज्ञान एंव अनुभव की कमी पाई जाती है जिसके कारण उन्हें नौकरशाही की मदद लेनी पड़ती है। नौकरशाह क्योंकि विभिन्न क्षेत्रों में अनेक पदों पर कार्य कर चुके होते हैं और उनका कार्यकाल भी लम्बा होता है इसलिए उनका ज्ञान एंव क्षेत्रीय अनुभव अत्याधिक विस्त त होता है जिसके कारण वे सरकार के नीति-निर्माण कार्य में महत्वपूर्ण सलाह दे सकते हैं। हांलाकि नीति-निर्माताओं के लिए यह सलाह मानना आवश्यक नहीं है फिर भी उन्हें नौकरशाही के द्वारा सलाह पर ही निर्भर करना पड़ता है।

(b) तकनीकी ज्ञान (Technical Knowledge) Bureacracy as group of Technical Advisers)

नीति-निर्माण प्रक्रिया वैज्ञानिक होने के कारण इसमें बहुत सारी तकनीकी बारिकियां भी सम्मिलित होती हैं जिन्हें तकनीकी विशेषज्ञों की सलाह के आधार पर ही सुलझाया जाता है। नीति निर्माण में केवल ऐसे निर्णय -'क्या करना हैं? और 'कैसे करना है' ही सम्मिलित नहीं होते बल्कि यह राज्य की 'Will' (इच्छा) को Laws and Rules के रूप में प्रदर्शित करती है। विभिन्न क्षेत्रों के लिए ऐसे Laws & Rules बनाने के लिए सम्बन्धित क्षेत्र जैसे कि क षि, स्वास्थ्य, शिक्षा महत्त्वपूर्ण के विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार नीति निर्माण में सलाह देकर विशेषज्ञ आदि भूमिका निभाते है। बाद में इनकी सलाह पर तैयार किए गए Policy Drafts की मन्त्री व अन्य विधायकगण जांच व परीक्षण करते है तथा कोई फेरबदल करना चाहें तो कर सकते हैं। लेकिन इनके स्तर पर तकनीकी ज्ञान न होने के कारण ये तकनीकी बारिकियों को नहीं समझ पाते और विशेषज्ञों के द्वारा दी गई सलाह पर ही निर्भर करते हैं। उदाहरण के तौर पर क षि क्षेत्र को आरम्भ से ही सरल व्यसाय माना जाता है। लेकिन आज क षि विज्ञान का अत्याधिक विकास होने के कारण क षि सम्बन्धी सभी नीतियाँ क षि विशेषज्ञों की मदद से ही तैयार की जाती हैं। इसी प्रकार दूसरे क्षेत्र जैसे कि शिक्षा, स्वास्थ्य , रसोजगार पर्यावरण , उद्योग परिवार कल्याण, बाल विकास आदि के सम्बन्ध में नीतियां तैयार करते समय प्रत्येक क्षेत्र के विशेषज्ञों की सलाह ली जाती है।

(ग) स्थायित्व (Permanence)

नौकरशाह सरकार के स्थाई कर्मचारी होते हैं और इनका कार्यकाल रिटार्यमैन्ट तक होने के कारण काफी लम्बा होता है इस कार्यकाल के दौरान इन्हें अनेक क्षेत्रों में अलग- अलग जिम्मेदारियां निभानी पड़ती हैं। विभिन्न क्षेत्रों में अपनी जिम्मेदारियों को निभाते समय इन्हें बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसलिए ये काफी अनुभवी हो जाते हैं। इन्हें विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ी समस्याओं का

बारिकी से ज्ञान हो जाता है जो नीति निर्धारकों के लिए अत्याधिक आवश्यक है अतः वे नीति निर्माण के समय नौकरशाही के इन अनुभवी लोगों से न केवल सलाह लेते हैं बल्कि इस पर अमल भी करते हैं। इस प्रकार नौकरशाही का लम्बे समय का अनुभव होने के कारण यह एक महत्वपूर्ण सुझावात्मक भूमिका अदा करती है।

(घ) नौकरशाही एक निष्पक्ष सलाहकार के रूप में (Bureaucracy as an Impartial or a neutral Adviser)

औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व राज्य का व्यक्ति के मामलों में बहुत कम हस्तक्षेप होने के कारण समाज के एक छोटे से वर्ग (पूंजीपति वर्ग) के द्वारा सर्वहारा वर्ग का शोषण किया जाता था। लेकिन औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् राज्य के द्वारा सामाजिक समता के माध्यम से समाज के विभिन्न अंगों में सन्तुलन स्थापित करने सम्बन्धी जिम्मेदारी दी गई। राज्य का मुख्य कार्य विभिन्न वर्गों के मतभेद खत्म करके उनका विकास करना बन गई। इसके लिए राज्य के द्वारा विभिन्न प्रकार की नीतियों का विकास अनिवार्य हो गया। लेकिन इन नीतियों के विकास में एक निष्पक्ष सलाहकार की भूमिका जो नौकरशाही के द्वारा अदा की गई, अति आवश्यक बन गई। इस प्रकार नौकरशाही विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित नीतियों के निर्माण में आज भी एक निष्पक्ष सलाहकार की भूमिका निभाती है।

इसके अतिरिक्त राजनेता सत्ता में आते रहते हैं लेकिन नौकरशाही अपने पद पर बनी रहती है और बिना किसी भेदभाव के यह अपनी सलाह सत्ता में विराजमान राजनेताओं को देती है। इस प्रकार नौकरशाही विभिन्न सामाजिक वर्गों एंव विभिन्न राजनैतिक पार्टियों के बीच एक निष्पक्ष सलाकार के रूप में कार्य करती है।

3. विश्लेषणात्मक भूमिका

(Analytical Role)

हांलाकि नीतियों के विश्लेषण का कार्य नौकरशाही का नहीं होता लेकिन विकासशील देशों में नीति निर्माण के समय महत्वपूर्ण विश्लेषात्मक भूमिका अदा की जाती है। अपनी यह भूमिका निम्न ढ़ंग से निभाती है-

(क) नीति सम्बन्धी मुद्दों का विश्लेषण (Analysis of policy issues)

नीति निर्माण कार्य कुछ अहमभूत सामाजिक समस्याओं को सामने रखकर शुरू किया जाता है। इन समस्याओं का चुनाव प्राथमिकताओं के आधार पर किया जाता है क्योंकि समाज में अनेक समस्यांए है। और सब का समाधान एक साथ नहीं किया जा सकता। इसलिए नीति-निर्माण के सम्बन्ध में प्राथमिताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ नीतिगत मुद्दों का चुनाव किया जाता है। इसके पश्चात् इन मुद्दों के सम्बन्ध में पूर्ण समझ पैदा की जाती है ताकि समस्या का सही ढ़ंग से समाधान निकाला जा सके। इसके बाद इन मुद्दों के Pros & Cons के आधार पर विश्लेषण करके यह सुनिश्चित किया जाता है कि क्या इनके

आधार पर कारगर नीतियां तैयार की जा सकती हैं या नहीं? इस पूरे प्रकरण में नौकरशाही एक अहमभूत भूमिका निभाती है।

(ख) नीति प्रस्तावों की प्रासंगिकता सम्बन्धी विश्लेषण (Analysis of Policy proposels with regard to their viability)

नीतिगत मुद्दों के निर्धारण के पश्चात् नीति निर्माता, नीति निर्माण के समय बहुत सारे नीति प्रस्ताव तैयार करते हैं जिनकी प्रांसगिकता की जांच नौकरशाही के द्वारा की जाती है। नौकरशाही इनकी जांच Cost-benefit analysis के आधार पर करती है। नौकरशाही प्रत्येक नीति प्रस्ताव के सम्बन्ध में यह जांचने की कोशिश करती है कि उसके भविष्य में क्या लाभ होगें, उसमें कितने भौतिक एंव मानवीय संसाधनों की आवश्यकता होगी और क्या यह जन-आवश्कताओं के अनुरूप होगा या नहीं, इससे

कितने लाभर्थियों को फायदा पहुंच सकेगा आदि। इस प्रकार नीति सम्बन्धी प्रस्तावों की प्रासंगिता के विश्लेषण में नौकरशाही काफी अहमभूत भूमिका निभाती है।

(ग) नीति प्रस्तावों का संवैधानिक प्रावधानों के सम्बन्ध में विश्लेषण (Analysis of Policy proposals in terms of Constitutional Provisions)

नीति सम्बन्धी प्रस्तावों की प्रासंगिकता की जाचं के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि वे संवैधानिक प्रावधानों, संसद के द्वारा तैयार किए गए कानूनों एंव दूसरे कायदे कानूनों का उल्लंघन न करते हों। इन प्रस्तावों की संवैधानिक प्रावधानों एंव अन्य कायदे कानूनों के साथ अनुरूपता अत्याधिक आवश्यक है। इन प्रस्तावों के सम्बन्ध में इस ढ़ंग के विश्लेषण में भी नौकरशाही अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नीति क्रियान्वयन में नौकरशाही की भूमिका
Role of Bureaucracy in Policy Implementation)

नीति क्रियान्वयन , नीति चक्र का महत्वपूर्ण चरण है। नीति के तैयार होने के बाद, अगला चरण नीति क्रियान्वयन ही होता है जो सबसे अहमभूत चरण कहा जाता है क्योंकि इससे पहले केवल सैद्धान्तिक पक्ष जैसे कि 'क्या करना है?' और कैसे करना है?' पर ही दबाव डाला जाता है। लेकिन नीति के क्रियान्वयन के समय सैद्धान्तिक पक्ष को वास्तविक सच्चाईयों से रूबरू होना पड़ता है। इसके साथ-साथ नीति कितनी भी अच्छी क्यों न बनाई जाए लेकिन अगर इसका क्रियान्वयन सही नहीं है तो यह वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर सकती।

नीति-क्रियान्वयन में नौकरशाही एक अहमभूत भूमिका निभाती है। हांलाकि इस सम्बन्ध में नौकरशाही 'Sole Implementor' न होकर 'Chief-Implementor' की भूमिका निभाती है। इस स्तर पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि नौकरशाही नीति-क्रियान्वयन में Arbitrary ढ़ंग से कार्य नहीं कर सकती बल्कि यह राजनैतिक कार्यपालिका, विधानपालिका एंव न्यायपालिका जिसके प्रति यह उत्तरदायी है, से नीति क्रियान्वयन के सन्दर्भ में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से आवश्यक दिशा-निर्देशन प्राप्त करती है। हांलाकि इसके पश्चात् भी नौकरशाही के पास नीति क्रियान्वयन में discretionary ढ़ंग से कार्य करने का काफी scope बच जाता है।

नौकरशाही नीति -क्रियान्वयन में निम्नलिखित भूमिका निभाती है-

नीति सम्बन्धी उद्देश्यों की स्पष्टता (Clarification of the goals & objectives underlying the policy)

नीति के उद्देश्यों की स्पष्टता, उनकी सफलतापूर्वक प्राप्ति के लिए अति आवश्यक है क्योंकि अगर किसी नीति के उद्देश्यों में ही अस्पष्टता है तो उन्हें प्राप्त करना असम्भव कार्य है। नौकरशाही प्रत्येक नीति की statement एंव इसके उद्देश्यों को नीति क्रियान्वयन के समय न केवल समझने की कोशिश करती है बल्कि किसी भी प्रकार के confusion एंव अस्पष्टता को दूर करने में अहम भूमिका निभाती है। इसके बाद नीति उद्देश्यों को operational targets में translate करके उनका Cost -benefit technique की मदद से विश्लेषण करती है। इन operational targets की प्राप्ति के लिए प्राथमिकताओं का निर्धारण भी नौकरशाही के द्वारा किया जाता है।

2. लक्षित समूह एंव क्षेत्र का निर्धारण
(Idenitification of target groups & areas)

नीति के क्रियान्वयन से पहले लक्षित समूह एंव क्षेत्र का निर्धारण करना जरूरी है। नीति किस क्षेत्र एंव किन लक्षित समूहों को मध्यनजर रखकर तैयार की गई है? इससे कौन-कौन लोग लाभन्वित होगें?

इसके लाभ किन-किन लोगों को पहुंचाने है? आदि की पूर्ण समझ पैदा करना अनिवार्य है। यह समझ नीति क्रियान्वन में most suitable streategy अपनाने में कारगर सिद्ध होती है। विभिन्न क्षेत्रों के लक्षित समूहों की पहचान करने में नौकरशाही अद्वितीय भूमिका निभाती है। इसके अतिरिक्त नौकरशाही इन लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप नीति क्रियान्वयन में प्राथमिताओं का भी निश्चित करती है।

3. मानवीय एंव भौतिक संसाधनों की सूची तैयार करना और उनका बँटवारा करना
(Enlistment of the requisite human and Material Resources their allocation)

नीति क्रियान्वयन में मानवीय एंव भौतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है उन्हें operational targets की प्राप्ति हेतू विभिन्न क्षेत्रों में allocate किया जाता है ताकि नीति सम्बन्धी उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके । इस सम्बन्ध में नौकरशाही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है यह उपलब्ध मानवीय एंव भौतिक संसाधनों की सूची तैयार करती है और उन्हें आवश्यकतानुसार अलग-अलग क्षेत्रों में बाँटती है। नीतिगत उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आधारभूत आवश्यकताओं (Infra-structural requirements) की पूर्ति की जाती है।

4. मानवीय शक्ति को प्रशिक्षण
(Education and Training to Manpower)

नीति क्रियान्वयन की सफलता के लिए प्रशिक्षित मानवीयशक्ति का होना अत्याधिक आवश्यक है क्योंकि अगर मानवीय शक्ति प्रशिक्षित नहीं होगी तो उनके स्तर पर नीति के उद्देश्यों की पूर्ण समझ एंव तकनीकी-चातुर्य व कौशल का अभाव होगा। ऐसी स्थिति में नीति-उद्देश्यों की प्राप्ति कठिन होगी। इसके लिए मानवीय शक्ति को नीति-उद्देश्यों के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी देना आवश्यक है। इसके साथ-साथ उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रयुक्त होने वाली तकनीकों के सम्बन्ध में प्रशिक्षण देना भी अनिवार्य है ताकि मानवीय शक्ति में चातुर्य एंव कौशल का विकास किया जा सके। इस दिशा में भी नौकरशाही अहमभूत भूमिका निभाती है।

5. जनसहभागिता सुनिश्चित करना
(Ensuring people's participation)

नीति सम्बन्धी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए नीति क्रियान्वयन में जन सहभागिता का होना अति आवश्यक है । लेकिन जनसहभागिता के लिए जन-जागरूकता आवश्यक है और जन-जागरूकता के लिए यह जरूरी है कि लोगों को नीति के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी दी जाए तथा उन्हें नीति के उद्देश्यों से अवगत करवाया जाए , उन्हें नीति से होने वाले लाभों की जानकारी दी जाए, उन्हें बताया जाए कि नीति की आवश्यकता क्यों पड़ी? और वे नीति के क्रियान्वयन में अपनी भूमिका कैसे निभा सकते है? ये सब बातें लोगों की भागीदार को नीति-क्रियान्वयन में सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है । नौकरशाही इन सब बातों की जानकारी लोगों केा देकर नीति-क्रियान्वयन में उनकी सहभागिता को सुनिश्चित करने की कोशिश करती है।

6. राजनैतिक दिशा-निर्देशन एवं सलाह प्राप्त करना
(Seeking Political Direction and guidence)

नौकरशाही नीति-क्रियान्वयन के लिए राजनैतिक कार्यपालिका के प्रति उत्तरदायी है। अतः यह राजनैतिक दिशा-निर्देशन के अनुरूप ही कार्य करती है। नीति -क्रियान्वयन में राजनैतिक दिशा-निर्देशन अत्याधिक आवश्यक है ताकि नौकरशाही मनचाहे ढ़ंग से कार्य न करें। नौकरशाही को समय-समय पर राजनैतिक कार्यपालिका के द्वारा दिशा-निर्देशन एंव सलाह दी जाता है ताकि नीति को सही ढ़ंग से क्रियान्वित किया जा सके।

7. समन्वय एंव पर्यवेक्षण बनाए रखना
(Maintain Coordination and Supervision)

नीति-क्रियान्वयन में समन्वय एंव पर्यवेक्षण की अत्याधिक आवश्यकता होती है। अगर Implementing agencies के मध्य समन्वय की कमी है तो नीति उद्देश्यों की प्राप्ति कठिन कार्य है। इसके अतिरिक्त इन Agencies पर नजर लगाए रखना भी अत्याधिक आवश्यक है क्योंकि पर्याप्त पर्यवेक्षण के अभाव में ये agencies अपनी शक्तियों का दुरूपयोग कर सकती हैं। अतः नौकरशाही विभिन्न operational targets को क्रियान्वित करने से सम्बन्धी इकाईयों के सम्बन्ध में आवश्यक समन्वय एंव पर्यवेक्षण बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

8. अनावश्यक राजनैतिक एंव सामाजिक हस्तक्षेप को रोकना
Resisting the unnecessary Political & Social Interference

नीति क्रियान्वयन में भी प्रकार का अनावश्यक राजनैतिक एंव सामाजिक हस्तक्षेप, नीति उद्देश्यों की प्राप्ति में प्रतिकूल प्रभाव डालता है। लेकिन नौकरशाही इस तरह के किसी भी हस्तक्षेप को रोकने में अहम भूमिका निभाती है।

Chapter - 17
राजनीतिज्ञ -नौकरशाही सम्बन्ध
(Relationship of Bureaucrats and Politicians)

एक स्वतन्त्र अध्ययन विषय के रूप में लोक प्रशासन के जनक माने जाने वाले वुडरो विल्सन ने 1887 में एक लेख लिखा जिसका शीर्षक " The Study of Administration" था। अन्य बातों क अतिरिक्त इस लेख के द्धारा उन्होंने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि नीति-निर्माण राजनीतिज्ञों का कार्य है जबकि उनका (नीतियों का) क्रियान्वयन लोक प्रशासन के अधिकार क्षेत्र के अर्न्तगत आता है। इसी तर्क के आधार पर वुडरो विल्सन ने राजनीति शास्त्र से अलग लोक प्रशासन को एक स्वतन्त्र अध्ययन विषय के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। परन्तु लोक प्रशासन के अनेक विद्धानों ने उनके इस कथन को चुनौती देते हुए कहा कि लोक प्रशासन नीति निर्माण में अहम् भूमिका निभाता है। वास्तव में लोक प्रशासन के चिन्तकों एवं विद्धानों ने यह सिद्ध कर दिया है। कि वुडरो विल्सन का कथन तर्कहीन है तथा सभी देशों (लोकतान्त्रिक) देशों में नौकरशाही नीति क्रियान्वयन के साथ नीति निर्माण में भी सक्रिय भूमिका निभाती है। इसीलिए पॉल एच० एपल्बी का यह कथन "नीति-निर्माण प्रशासन का सार है" (Essense of Administration is policy Formulation) अधिक प्रचलित है।

इसके साथ ही हमें वुडरों विल्सन के कथन के दूसरे भाग (नीतियों का क्रियान्वयन लोक प्रशासन के अधिकारी क्षेत्र के अर्न्तगत आता है) का भी विश्लेषण करने की आवश्यकता हैं । इस कथन से यह प्रतीत होता है कि नीतियों के क्रियान्वयन में राजनीतिज्ञों का कोई हस्तक्षेप नहीं होता। "परन्तु यह सोचना गलत है कि नीतियों के कार्यान्वयन के क्षेत्र में मन्त्री कुछ नहीं करते। अतः नीति-निर्माण तथा नीति क्रियान्वयन क्रमशः राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाहों का अनन्य विशेषाधिकार (Exclusive Privilege) नहीं है जिसमें कि कोई भी अपनी सीमा नहीं लाँघ सकता। अपितु दोनों ही (राजनेता तथा नौकरशाह) नीति निर्माण और नीति क्रियान्वयन के कार्य को आपसी सहयोग के द्धारा सम्पन्न करते हैं। परिणामस्वरूप हम कह सकते हैं कि नीति लोक-प्रशासन का वह विषय या भाग है जहाँ राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाहों से मिलकर या घनिष्ठता पूर्वक कार्य करना अपेक्षित है।

राजनीति-नौकरशाही सम्बन्धों के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिज्ञों की श्रेणी में हम सामान्यतः दो वर्गो का सम्मिलित करते हैं। पहला व्यवस्थापिका के सदस्य तथा दूसरा अस्थाई या राजनैतिक कार्यपालिका के सदस्य अर्थात् तथा मन्त्रिगण। तदनुसार,राजनीति -नौकरशाही सम्बन्धों को दो भागों में विभाजित किया जाता हैः-

(1) व्यवस्थापिका -नौकरशाही सम्बन्ध

(2) कार्यपालिका- नौकरशाही सम्बन्ध

व्यवस्थापिका एक जन-प्रतिनिधि संस्था है अर्थात् यह लोगों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनती है। अतः व्यवस्थापिका का यह कर्त्तव्य है कि लोगों कि हितों की रक्षा करे। यदि कार्यपालिका लोगों के हितों अनदेखी करे या उनके हितों के विरूद्ध कार्य करे तो उस पर अकुंश लगाना भी व्यवस्थापिका

का कार्य है। इन दोनों उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यवस्थापिका के पास कई प्रकार के अधिकार सुरक्षित किए गऐ है। अतः कानून एंव नियमों का स्वीक ति प्रदान करना, बजट को स्वीक ति प्रदान करना, कार्यपालिका के विरूद्ध अविश्वास या महाभियोग का प्रस्ताव लाना, कार्यपालिका के विभिन्न प्रकार के प्रस्तावों पर वाद-विवाद करना, लेख परीक्षण करना, एंव विभिन्न प्रकार की स्थाई एंव अस्थाई संसदीय समितियाँ गठित करना आदि कुछ ऐसे यन्त्र है जो कि व्यवस्थापिका के कार्यपालिका पर नियन्त्रण के ससंदीय एंव अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की व्यवस्थाओं में लगभग समान रूप से प्रभावी होते हैं। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उपरोक्त सभी व्यवस्थापिका के केवल राजनैतिक कार्यपालिका पर नियन्त्रण के माध्यम है न कि स्थाई कार्यपालिका या प्रशासन पर। वास्तव में व्यवस्थापिका का प्रशासन पर प्रत्यक्ष रूप से कोई नियन्त्रण नहीं होता। वह (व्यवस्थापिका) केवल परोक्ष रूप से (राजनैतिक कार्यपालिका के माध्यम से) प्रशासन पर नियन्त्रण रखती है। अतः व्यवस्थापिका के प्रशासन पर नियन्त्रण या उसके (प्रशासन के) साथ सम्बन्ध को भी अन्ततः राजनैतिक कार्यपालिका के प्रशासन पर नियन्त्रण के रूप में देखा जा सकता है। इसलिए हम राजनीति-नौकरशाही सम्बन्ध को कार्यपालिका/मन्त्री-प्रशासन/नौकरशाही सम्बन्ध के रूप में सम्बोधित कर सकते हैं और इसी रूप में इनकी व्याख्या कर सकते हैं। सुविधा की द ष्टि से मन्त्रि-नौकरशाही सम्बन्धों का अध्ययन दो स्तरों-नीति -निर्माण तथा नीति क्रियान्वयन पर किया जा सकता है।

(I) नीति-निर्माण के सन्दर्भ में राजनीति -नौकरशाही सम्बन्धः-

नीति -निर्माण एक प्रक्रिया है जिसमें अनेक चरण आते हैं। हम यह देखते हैं कि राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाहों के बीच में सम्बन्ध नीति-निर्माण के प्रत्येक चरण में स्थापित होते हैं। नीति निर्माण के विभिन्न चरणों में राजनीतिज्ञ-नौकरशाहों के बीच सम्बन्धों का वर्णन नीचे दिया जा रहा हैः

(1) जनआकांक्षाओं की जानकारीः-

यद्यपि नीति के अनेक स्त्रोत हैं परन्तु इनमें सबसे प्रमुख स्त्रोत जनआकांक्षाए हैं। किसी भी देश में बनने वाली नीतियों में में से अधिकतर जनआंकाक्षाओं पर आधरित होती हैं। परन्तु जनआकांक्षाओं से यह तात्पर्य नहीं है कि सभी लोगों की आकांक्षाओं एंव इच्छाओं पर आधरित व उनकी पूर्ति हेतू नीतियाँ निर्मित की जायेंगी। वस्तुतः समाज में अनेक वर्ग होते हैं और ये सभी वर्ग सामान्यतः किसी-न-किसी हित समूह (Interest Groups) से जुड़े होते हैं। मजदूर संगठन, व्यापार संघ, क षक संगठन, डॉक्टर संघ, वकील संघ आदि हित समुहों के कुछ सामान्य स्वरूप होते है। ये सभी हित समूह सरकार पर सततः रूप से यह दबाव बनाने का प्रयास करते रहते हैं कि उनकी माँगों का सरकार की नीतियों में अधिकाधिक समावेश हो। सामान्यतः ये हित समूह राजनैतिक दलों पर दबाव बनाते हैं परन्तु इसके साथ-साथ ये उच्च नौकरशाही (Higher Bureaueracy) जो कि नीति-निर्माण में भाग लेती है। पर भी अपनी माँगें मनवाने के लिए दबाव डालते रहते है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हित समूह राजनीतिक दलों तथा नौकरशाहों दोनों पर ही अपनी माँगें मनवाने तथा उनका नीतियों में समावेश करवाने के लिए दबाव बनाते रहते हैं। अतः जन आकांक्षाओं की जानकारी प्राप्त करने में राजनीतिज्ञ तथा नौकरशाही दोनों ही अहम् भूमिका अदा करते हैं और इस प्रकार नीति-निर्माण की प्रक्रिया में दोनों एक दूसरे के साथ मिलकर कार्य करते हैं।

यहां यह ध्यान देते योग्य बात है कि जहाँ विकसित देशों में जनआकांक्षाओं की जानकारी प्राप्त करने में राजनीतिज्ञ अधिक सक्रिय भूमिका निभाते हैं वहीं दूसरी ओर भारत जैसे विकासशील देशों में नौकरशाही अधिक सक्रिय भूमिका निभाती है। उदाहरणतः भारत के सन्दर्भ में यदि क षक वर्ग को फसलों खरीद मूल्य में व द्धि सम्बन्धी प्रस्ताव या अन्य कोई भी प्रस्ताव केन्द्रीय सरकार तक पहुँचाना होगा तो सामान्यतः वह इस प्रकार का ज्ञापन जिलाधीश को देना अधिक पंसद करते हैं न कि अपने क्षेत्र के विधायक या सांसद को।

(2) सूचना, तथ्यों एंव अभिलेखों की उपलब्धताः-

लोक नीति एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है तथा इसके तीन प्रमुख चरण हैं - नीति-निर्माण, नीति क्रियान्वयन और नीति मूल्यांकन। ये तीनों चरण एक दूसरे पर क्रमिक (cyclic) रूप में निर्भर है। अतः भूतकाल में निर्मित विभिन्न लोक नीतियों के परिणाम क्या रहे इन सबके बारे में सूचनाएं तथा तथ्य फाइलों में अभिलेखों के रूप में प्रशासन के पास सुरक्षित रहती है। इसके साथ ही किसी भी नीति के निर्माण के समय अनेक सम्बन्धित तथ्यों, आँकड़ो एंव सूचनाओं की आवश्यकता होती है और वह सब भी प्रशासन के द्वारा ही उपलब्ध करवाई जाती है । उदाहरण के तौर पर भारत में यदि जनजातियों के विकास के सम्बन्ध में नीति बनाई जाती है तो इसके लिए विभिन्न तथ्यों एंव सूचनाओं की आवश्यकता होती है। जैसे किः-

(i) क्या भूतकाल में इस प्रकार का कोई नीतिगत प्रयास किया गया?

(ii) यदि नहीं, तो इसका क्या कारण था?

(iii) यदि हाँ, तो उसके क्या परिणाम निकले? अर्थात् वह सफल रहा या असफल?

(iv) यदि असफल रहा, तो उसके क्या कारण थे?

(v) भारत में कौन-सी विभिन्न जनजातियाँ वास करती हैं?

(vi) इनमें से कौन-कौन सी जनजातियाँ किन-किन स्थानों पर निवास करती हैं। तथा वे केन्द्रित रूप में रहती हैं (Concentrated)अथवा बिखरी हुई (Scattered) हैं?

(vii) इनमें से कौन-कौन सी जनजातियाँ उग्रंपथी हैं तथा कौन-सी नरमंपथी ?

(viii) इनमें से कौन-कौन सी जनजातियाँ घूमंतू हैं?

(ix) विभिन्न जनजातियों में साक्षरता दर क्या है।

(x) इन जनजातियों की अर्थव्यवस्था किस प्रकार की हैं? आदि।

परन्तु उपरोक्त सभी सूचनाएं और आँकड़े प्रशासन के पास अभिलेखों के रूप में सुरक्षित होते हैं। ये तथ्य राजनीतिज्ञों के पास उपलब्ध नहीं होते और यदि होते भी हैं तो पूरे नहीं होते है तथा उनकी विश्वसनीयता पर भी प्रश्नचिन्ह रहता है। अतः नीति-निर्माण के समय राजनीति-प्रशासन के बीच सूचनाएं उपलब्ध करवाने के सन्दर्भ में भी सम्बन्ध स्थापित होता है और उनके बीच अन्तःक्रिया का अवसर आता है।

(1) तकनीकी ज्ञान की उपलब्धताः-

लोक नीति के दो पहलू होते हैं- क्या (What)क्या और कैसे (How)। जिस विषय या पहलू पर लोक-नीति बनाई जाती है। (अर्थात् लोक-नीति की विषय-वस्तु) उसे लोक-नीति का '**क्या**' कहा जाता है तथा लोक-नीति में निहित उद्देश्यों को जिस विधि से प्राप्त किया जाऐगा उसे लोक-नीति का 'कैसे' कहा जाता है।"लोक-नीति की विषय-वस्तु क्या होगी तथा यह किस वर्ग को प्रभावित करेगी" (अर्थात् लोक-नीति का 'क्या') का निर्णय सामान्यतः राजनीतिक कार्यपालिका के द्वारा किया जाता है जबकि "लोक-नीति में निहित उद्देश्यों को किस प्रकार प्राप्त किया जायेगा" (अर्थात लोक-नीति का 'कैसे') का निर्णय नौकरशाही में विशेषज्ञों के द्धारा किया जाता है। अतः स्वास्थय नीति, शिक्षा, नीति, विदेश नीति, आणविक नीति, सुरक्षा नीति आदि में निहित उद्देश्यों को किस प्रकार प्राप्त किया जाऐगा , के निर्णय में क्रमशः डॉक्टर शिक्षक वर्ग , विदेश नीति विशेषज्ञ, सुरक्षा विशेषज्ञ अहम् भूमिका अदा करते हैं।

अनेकों अवसरों पर विशेषज्ञ लोक-नीति की उद्देश्य निर्धारण प्रक्रिया को भी प्रभावित करते हैं तथा राजनीतिज्ञों(जों कि अव्यवसायी (Amateur) होते हैं, को विशेषज्ञों के द्धारा उनके तकनीकी ज्ञान के आधार पर दिए जाने परामर्श के कारण नीति-प्रस्तावों के उद्देश्यों में परिर्वतन के लिए भी विवश

होना पड़ता है। इसी कारण लोक नीति के बढ़ते महत्व के साथ ही विशेषज्ञों की भूमिका में परिर्वतन हो रहा है तथा वे प्रशासन में अधिक महत्वपूर्ण होते जा रहें है।

साधारणतः विशेषज्ञों के द्धारा नीति-प्रस्तावों की व्यवहारिकता का अध्ययन (Feasiblity or Viability Study)और तकनीकी -आर्थिक (Techno-Economics Analysis) एंव सामाजिक -आर्थिक -लागत- लाभ (Social Cost Benefit Analysis) विश्लेषण किया जाता हैं।

(4) **नीति और कानून का प्रारूप तैयार करनाः-**

किसी भी नीति या कानून के निर्माण से पहले उस विषय पर मन्त्रिमण्डल की बैठक में चर्चा की जाती है। यदि मंत्रिमण्डल के द्वारा उस प्रस्ताव को स्वीक ति मिल जाती है। तो सम्बन्धित मन्त्रालय के सहयोग से विधि मन्त्रालय (Law Minister) के द्वारा प्रस्तावित नीति या कानून का प्रारूप तैयार किया जाता है। तत्पश्चात् उस नीति प्रस्ताव को उस विषय के विशेषज्ञों , सम्बन्धित विभागाध्यक्ष (प्रशासकीय) और सम्बन्धित मन्त्रि के द्वारा अन्तिम स्वरूप प्रदान किया जाता है। इसके बाद इसे दोबारा मन्त्रिमण्डल की बैठक में विचारार्थ रखा जाता है। जब उस नीति प्रस्ताव को मन्त्रिमण्डल की स्वीक ति (संशोधनों के बाद या बिना संशोधन के) मिल जाती है तब उस प्रस्ताव को संसद की बैठक में प्रस्तुत किया जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी नीति -प्रस्ताव या प्रस्तावित कानून का प्रारूप तैयार करनें में भी नौकरशाही तथा राजनीतिक कार्यपालिका परस्पर सहयोग से कार्य करते हैं। नीति अथवा कानूनी प्रस्तावों के प्रारूप तैयार करने में नौकरशाही की भूमिका इस बात से स्पष्ट हो जाती है कि कुछ हद तक लोक -नीति की सफलता या असफलता उन कानूनों, जिनके द्वारा इसे लागू किया जाता है, के प्रारूप में प्रयुक्त वैधानिक शब्दावली पर निर्भर करती है। भारत के सन्दर्भ में हम पाते हैं कि कुछ नीतियाँ केवल इसीलिए सफल नहीं हो पाई क्योंकि इनमें प्रयुक्त शब्दों को सुपरिभाषित नहीं किया गया था। उदाहरणार्थ, भूमि सुधार कार्यक्रम की असफलता का एक प्रमुख कारण उन कानूनों, जो कि भूमि सुधार नीति को कार्यन्वित करने के लिए बनाए गए थें, में कमियाँ पाई गयी। राष्ट्रीय क षि आयोग (National Commission on Agriculture) ने इस प्रकार का आशय प्रकट करते हुए कहा कि ये वैधानिक उपाय त्रुटियों से परिपूर्ण थे तथा इनका लाभ उठाकर बड़े जमींदारों ने भूमि सुधार कानूनों व कार्यक्रम को निरस्त कर दिया।

(5) **परामर्शदाता की भूमिकाः-**

उच्च नौकरशाही राजनैतिक कार्यपालिका या सम्बन्धित मन्त्रि के परामर्शदाता के रूप में भी कार्य करती है। वास्तव में राजनैतिक कार्यपालिका को परामर्श देना उच्च नौकरशाही का एक प्रमुख कर्त्तव्य है तथा नौकरशाही से किसी भी अधिकारिक (Official) विषय पर परामर्श प्राप्त करना राजनैतिक कार्यपालिका का प्रमुख अधिकार है। यह परामर्श किसी नीतिगत निर्णय, किसी महत्वपूर्ण प्रशासनिक निर्णय अथवा प्रतिदिन के प्रशासनिक कार्यो से सम्बन्धित है। नौकरशाही के द्वारा दिए गए परामर्श को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि उच्च नौकरशाही को कार्य का लम्बा अनुभव होता हैं। इसलिए वह सम्बन्धित विषय में विशिष्टता ग्रहण कर लेते हैं। इसके विपरीत मन्त्रिगण गैर-व्यवसायिक (Amateur) होते हैं तथा अधिकतर गैर-अनुभवी होते हैं। नौकरशाही के परामर्श के महत्व को इस बात से समझा जा सकता है कि यद्यपि लोक नीति को 'क्या' अर्थात् उसकी विषय-वस्तु का निर्धारण राजनैतिक स्तर पर होता है तथापि कई अवसरों पर नौकरशाह अपने लम्बे अनुभव के आधार पर राजनैतिक कार्यपालिका को परामर्श देकर इसे (लोक-नीति के 'क्या') भी प्रभावित करते हैं।

(6) **धन आंबटित करनाः-**

किसी भी नीति को कार्यन्वित करने अथवा अन्य किसी भी प्रशासनिक निर्णय को लागू करने के लिए

धन की आवश्यकता होती है तथा विभिन्न मदों को धन आंबटित करने का कार्य बजट के माध्यम से किया जाता है। आने वाले वित्तिय वर्ष में अपने विभाग की गतिविधियों के सम्बन्ध में प्रारम्भिक अनुमान प्रशासनिक अधिकारियों ारा सम्बन्धित मन्त्रि के निर्देशन में तैयार किए जाते हैं। तत्पश्चात् इन प्रारम्भिक अनुमानों को वित्त मन्त्रालय के पास भेजा जाता है जो सभी विभागों से प्राप्त होने वाले अनुमानों को आने वाले वित्तिय वर्ष में होने वाली) आय को ध्यान में रखते हुए (वित्त मन्त्रि की सलाह से) इन प्रारम्भिक अनुमानों में आवश्यक कटौती करके बजट के रूप में तैयार करता है। इस बजट को मन्त्रिमण्डल की बैठक में स्वीक ति के बाद संसद में पेश किया जाता हैं । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि बजट निर्माण की पूरी प्रक्रिया के अर्न्तगत राजनीतिज्ञों एंव नौकरशाहों के बीच गहन सम्बन्ध स्थापित होता है।

(II) **नीति -कार्यान्वयन के सन्दर्भ में राजनीतिज्ञ-नौकरशाह सम्बन्ध**

जहाँ नीति-निर्माण राजनीतिज्ञों का कार्यक्षेत्र समझा जाता है वहीं नीति क्रियान्वयन प्रशासकीय अधिकारियों का कार्य माना जाता हैं परन्तु जिस प्रकार नीति-निर्माण में नौकरशाही राजनीतिज्ञों की सहायता करती है उसी प्रकार नीति लागू करने समय नौकरशाही राजनीतिज्ञों के निर्देशन में कार्य करती है। अतः नीति -निर्माण के साथ-साथ नीति क्रियान्वयन में भी दोनों के बीच (राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाहों) गहन सम्बन्ध स्थापित होता है। नीति-क्रियान्वयन प्रक्रिया में राजनीतिज्ञों एंव नौकरशाहों के सम्बन्धों का वर्णन नीचे दिया जा रहा हैः-

(1) **नियम -निर्माणः-**

व्यवस्थापिका कानूनों को केवल सामान्य रूप में पारित करती है न कि विस्त त रूप में। अर्थात् व्यवस्थापिका के द्वारा कानूनों का केवल प्रारूप पारित किया जाता है तथा उसके विस्त त प्रावधान कार्यपालिका के द्धारा तैयार करने के लिए छोड़ दिए जाते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि कानून-निर्माण का कार्य दो स्तरों पर होता है-व्यवस्थापिका के स्तर पर तथा कार्यपालिका के स्तर पर। व्यवस्थापिका के स्तर पर कानून-निर्माण की प्रक्रिया को व्यवस्थापन कहा जाता है वहीं कार्यपालिका के द्वारा कानून-निर्माण की प्रक्रिया को नियम-निर्माण (Rule-Making) की संज्ञा दी जाती है। नियम निर्माण को हम प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated or Subordinate Legislation) भी कहते हैं। यद्यपि कार्यपालिका शाखा के द्धारा कानून-निर्माण का कार्य लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों के विपरीत है तथापि यह नितान्त आवश्यक हैं । वास्तव में यह एक आवश्यक बुराई है। लॉर्ड हीबर्ट ने इसे (New Despotism) की संज्ञा देते हुए कहा है कि आधुनिक लोकतान्त्रिक व्यवस्थाएं इससे बच नहीं सकती।

परन्तु ध्यान देने योग्य बात यह कि जहाँ व्यवस्थापिका के द्वारा व्यवस्थापन का कार्य कार्यपालिका को प्रदत्त किया जाता है तथापि इस प्रक्रिया में अधिकतर योगदान नौकरशाही के द्वारा दिया जाता है। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि राजनीतिज्ञ अथवा मन्त्रि इस कार्य से पूर्णतः भिन्न रहते हैं। वास्तव में प्रदत्त व्यवस्थापन या नियम-निर्माण में मन्त्रि की भागीदारी उसके अपने अनुभव तथा रूचि पर निर्भर करती है। परन्तु इतना अवश्य है कि नियम-निर्माण की प्रक्रिया राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाहों के बीच सम्बन्ध स्थापित होने का एक अन्य अवसर प्रदान करती है।

(2) **प्रशासकीय सरंचना का निर्धारणः-**

नीति लागू करने की प्रक्रिया में प्रशासकीय संरचना का निर्धारण एक आवश्यक एंव महत्वपूर्ण कार्य है। अर्थात् यह निर्धारित करना आवश्यक है कि क्या वर्तमान प्रशासकीय संरचना नीति क्रियान्वित करने हेतू पर्याप्त है या इसमें कोई परिर्वतन करने की आवश्यकता है। अनेकों अवसरों पर प्रभावपूर्ण नीति क्रियान्वयन के लिए किसी सर्वथा नई संरचना का गठन करने की आवश्यकता पड़ती है। जब कोई नई सरंचना (प्रशासकीय) गठित करनी हो तो उसके स्वरूप का निर्धारण करना भी आवश्यक

होता हैं। इस साथ ही नई सरंचनाओं में प्रशासनिक पदाधिकारों की नियुक्ति सम्बन्धी निर्णय भी लिए जाते हैं। ये सभी निर्णय सम्बन्धित मन्त्रि तथा उच्च प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा मिलकर लिए जाते हैं।

(3) **निरीक्षण एंव पर्यवेक्षणः-**

नीति तथा कानूनों को लागू करने की वास्तविक जिम्मेदारी सम्बन्धित विभाग के निचले स्तर या क्षेत्रीय पदाधिकारियों (Lower or Field Officials) की होती हैं । उदाहरण के तौर पर यदि सरकार द्धारा कानून पारित करके किसी दावा का उत्पादन तथा विपणन निषेध कर दिया जाए तो उस दावा के उत्पादन तथा विपणन पर प्रतिबन्ध लगाना (Excise &Taxation Department के निरीक्षकों (Inspectors) का कार्य हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि इन निरीक्षकों के द्वारा कार्य अभीष्ट रूप से किया जा रहा है, समय-समय पर उनके कार्यो का पर्यवेक्षण विभाग के उच्च अधिकारी करते रहते हैं। पर्यवेक्षण का यह कार्य लिखित एंव मौखिक दोनों ही प्रकार से सम्पन्न किया जाता हैं। यद्यपि सामान्यतः पर्यवेक्षण का कार्य विभाग के उच्च प्रशासकीय पदाधिकारियों द्वारा सम्पन्न किया जाता है तथापि सम्बन्धित मन्त्रि भी पर्यवेक्षण में रूचि लेते हैं तथा कई बार स्वंय भी पर्यवेक्षण करते हैं।

(4) **समन्वय स्थापित करनाः-**

किसी भी कार्य को प्रभावपूर्ण तरीके से सम्पन्न करने तथा संशाधनों के यथोचित उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि कार्य के विभिन्न भागों में प्रभावी समन्वय स्थापित किया जाए। जैसा कि मैरी पारकार फोलेट ने कहा है कि समन्वय हर स्तर पर स्थापित किया जाना आवश्यक है, नीति के नीति विभिन्न भागों में मन्त्रिमण्डल, मन्त्रि,उच्च तथा मध्यम स्तर की नौकरशाही सभी के द्वारा स्थापित किया जाता है। मध्यम स्तर की नौकरशाही निचले स्तर के अधिकारियों और कर्मचारियों तथा उच्च स्तर की नौकरशाही मध्यम स्तर के अधिकारियों के कार्यो के बीच समन्वय स्थापित करती हैं । जबकि मन्त्रि के द्धारा समान स्तर (Rank) के दो या दो से अधिक उच्च स्तर के पदाधिकारियों के कार्यो के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है।

कुछ नीतियाँ ऐसी होती हैं जिनका कार्यक्षेत्र एक से अधिक विभाग या मन्त्रालय होते हैं। यदि हम अपने पिछले उदाहरण (किसी दवा के उत्पादन तथा विपणन पर प्रतिबन्ध लगाने) की नीति की चर्चा करें तो हम पाते हैं कि इस कानून को लागू करने के लिए Excise & Taxation Department को Police Department के साथ समन्वय स्थापित करना होगा। परन्तु क्योंकि यहाँ दो समान विभागों के बीच समन्वय स्थापित किया जाना है अतः किसी उच्च सत्ता को उन दोनों के बीच समन्वय स्थापित करना होगा, जो कि वर्तमान सन्दर्भ में मन्त्रिमण्डल है।

(5) **मूल्यांकनः-**

किसी भी नीति का मूल्यांकन अति आवश्यक हैं । मूल्यांकन के अभाव में हमें यह ज्ञात नहीं हो पाएगा कि हम अपने प्रयास में कितना सफल हुए और कितना असफल। सफलता तथा असफलता के आँकड़े तथा तथ्य भविष्य में बनाई जाने वाली नीतियों के लिए न केवल लाभदायक होते हैं अपितु आवश्यक भी हैं। सभी नीतियों, योजनाओं एंव कार्यक्रमों का मूल्यांकन सर्वप्रथम विभाग के ज्येष्ठ अधिकारियों के द्वारा किया जाता है परन्तु मूल्यांकन के पश्चात् प्रतिवेदन सम्बन्धित मन्त्री के समक्ष भी पेश किया जाता हैं। इसके साथ-साथ अनेक बाह्य एजेन्सियों के द्धारा भी नीतियों, कार्यक्रमों तथा योजनाओं का मूल्यांकन किया जाता हैं। इनमें योजना आयोग, नियन्त्रक एंव महालेखापरीक्षक, संसद की प्राक्कलन समिति आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार मूल्यांकन भी राजनीतिज्ञों तथा नौकरशाही के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का एक अन्य अवसर प्रदान करता है।

Chapter - 18
लोक नीतिः निर्माण एंव क्रियान्वन
(Public Policy- Formulation and Implementation)

लोक नीतियाँ उतनी ही पुरानी है जितनी की सरकार या राज्य की अवधारणा चाहे सरकार का कोई भी रूप क्यों न रहा हों, इसके द्वारा लोगों की विभिन्न समस्याएं एंव माँगों को ध्यान में रखते हुए नीतियां बनाई और लागू की जाती रही हैं। पाल एच. एपेल्वी(Paul H.Apple by) का मानना है कि "लोक प्रशासन का सार नीति निर्माण है।" प्रत्येक कार्य की पूर्ति हेतू नीति की आवश्यकता होती है। प्रत्येक प्रशासनिक प्रबन्ध की पूर्व शर्त नीति है। किसी भी राष्ट्र के निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में लोक नीतियों की अहमभूत आवश्यकता है। प्रत्येक संगठन चाहे वह निजी है या सरकारी, अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतू नीति-निर्धारण का कार्य करता है। इनकी आवश्यकता विकसित एंव विकासशील दोनों में ही है।

लेकिन विकासशील देशों का प्रशासन, 'विकास-प्रशासन' होने के कारण, समाज के विभिन्न वर्गों का विकास एवं कल्याण इसका महत्वपूर्ण पहलू बन गया। इस सम्बन्ध में विकास सम्बन्धी लोक नीतियों का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है । इन देशों में सरकारी संस्थाओं एंव सरकारी अधिकारियों द्वारा लोक नीतियों का विकास एंव निर्माण लोक हित को मध्यनजर रख कर किया जाता है। इन देशों में लोक नीति के कार्य क्षेत्र मे द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अत्याधिक विकास हुआ है। इन देशों के मुख्य उद्देश्य राष्ट्र का निर्माण एंव सामाजिक-आर्थिक विकास है जिनकी प्राप्ति हेतू यहाँ अनेकानेक नीतियां बनाई एंव लागू की जाती है।

लोक नीति की अवधारणा
(Concept of Public Policy)

लोक नीति से मिलती जुलती बहुत सारी अवधारणाएं जैसे कि निर्णय, नियोजन, उद्देश्य, कानून, रीति रिवाज आदि है तथा कोई भी व्यक्ति इसे, इन Connotations के साथ मिलाने की गलती कर सकता है। लेकिन यह नहीं भूल जाना चाहिए कि ये सभी Connotations हांलाकि लोक नीति के साथ गहनतमत रूप से जुड़ी हुई हैं लेकिन इन सबमें बहुत सारा अन्तर पाया जाता है। लोकनीति के अर्थ को जानने से पूर्व इन सभी अवधारणाओं को समझना अति आवश्यक है।

नीति बहुत सारे निर्णयों का संगठित रूप है लेकिन प्रत्येक निर्णय नीति नहीं है । इस प्रकार यह निर्णय से काफी विस्त त अवधारणा है। दूसरे शब्दों में नीति एक रस्सी की भांति है जिस पर निर्णय एक गांठ के रूप में है। नीति और उद्देश्य का सम्बन्ध वही है जो साधन व साध्य (Means and Ends) का है। वास्तव में नीति साध्य (Goal) की प्राप्ति की दिशा में साधन (Means) है। नीति, नियम से भी भिन्न है। नीतियाँ गतिशील (synamic) एंव Flexible (लोचशील) होती हैं जबकि Rule (नियम) कठोर तथा विशिष्ट होते हैं।

नीति, रीति-रिवाज से भी भिन्न है। नीति जानूझकर (Concious) किए गए प्रयासों का परिणाम है जबकि रीति रिवाज स्वंय विकसित होते हैं। नीति का प्रभाव सदैव धनात्मक होता है। रीति रिवाज का प्रभाव ऋणात्मक भी हो सकता है।

नीति नियोजन से भी अलग होती है। नीति एक broad Framework (ब हत दायरा) प्रदान करती है जिसके तहत विभिन्न योजनाओं का निर्माण किया जाता है। जबकि नियोजन policy frame में laid down किए गए उद्देश्यों की प्राप्ति हेतू Targets(लक्ष्यों) का निर्धारण एंव संसाधनों के बटंवारे की प्रक्रिया है।

लोक नीति का अर्थ एंव परिभाषा (Meaning and Definition of Public Policy)

साधारण शब्दों में लोक नीति का अर्थ सरकार के द्वारा राष्ट्र हित में निर्धारित किए गए लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में 'क्या करना है और "कैसे करना हैं सम्बन्धी निर्णय लेना ही, लोक नीति है।

मार्शल डिमॉक के अनुसार-"यह सचेतन रूप से स्वीक त आचरण की संहिता है जो प्रशासनिक निर्णयों का दिशा-निर्देश करती है।"[1]

टैरी के अनुसार,"नीति उस कार्रवाई की शाब्दिक, लिखित या बिहित बुनियादी मार्गदर्शक है, जिसे प्रबन्धक अपनाता है तथा जिसका अनुगमन करता है।"

लोकनीति की विशेषताएं (Characterstics of Public Policy)

लोकनीति की निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं:-

1. **गतिशीलता (Dynamism)**

नीति कोई स्थायी एंव स्थिर वस्तु नहीं हैं बल्कि इसमें गतिशीलता पाई जाती है। परिवर्तित परिस्थितियों एंव बदलते परिवेश के अनुसार, नीतियों के निर्धारण में भी बदलाव आ जाता है। नीतियों का निर्धारण वास्तव में जन आवश्यकताओं एंव परिवर्तित समय की मांग के अनुसार ही किया जाता है।

2. **सामूहिक प्रयास का परिणाम (Outcome of Collective efforts)**

लोक नीतियाँ किसी व्यक्ति विशेष के प्रयास का फल ने होकर सदैव ही बहुत से व्यक्तियों के सामूहिक प्रयास का फल होती हैं। यह सरकार के उन सभी कर्मचारियों जो एक विशेष क्षेत्र से जुड़े है, के सामूहिक प्रयास का परिणाम होती हैं।

3. **कानूनी आधार (Legal Sanctity)**

लोक नीतियाँ प्राधिकारिक होती हैं क्योंकि इनका आधार कानूनी (Legal) होता है। इनके पीछे कानूनी स्वीक ति (Legal Sanctity) होने के कारण ये अपनी प्रक ति में बाध्यकारी (Binding) होती हैं तथा समाज का परिभाषित दिशाओं में मार्गदर्शन करती हैं। इनका विकास संवैधानिक प्रावधानों के अर्न्तगत ही किया जाता है।

4. **सकारात्मक एंव नकारात्मक (Positive as well as Negative)**

लोक नीति स्वरूप में सकारात्मक या नकारात्मक दोनों ही हो सकती है। सकारात्मक रूप में, किसी प्रश्न या समस्या को हल करने की दिशा में सरकार की कार्यवाही को प्रदर्शित करती है जबकि नकारात्मक रूप में किसी मामले के सम्बन्ध में कोई कार्यवाही न करने सम्बन्धी निर्णय को दर्शाती है।

5. **भविष्योन्मुख (Futuristic Orientation)**

लोक नीतियां भविष्योन्मुख होती हैं क्योंकि इनके निर्माण के समय भविष्य की अनिश्चितता, शकां, अनुमान आदि को साथ-साथ लेकर चला जाता है ताकि भविष्य में आने वाली अद श्य एंव अस्पष्ट

समस्याओं का समाधान निकाला जा सके।

6. **उद्देश्योन्मुख (Goal-oreinted)**

लोक नीतियाँ उद्देश्योन्मुख भी होती हैं। इनके माध्यम से सरकार विभिन्न क्षेत्रों में निर्धारित किए गए उद्देश्यों की प्राप्ति का प्रयास करती हैं।

नीति -निर्धारण के स्त्रोत (Sources Policy Formulation)

नीति निर्धारण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जो कि वास्तविक तथ्यों तथा सूचनाओं पर आधारित होती है। ये सूचनाएं नीति सम्बन्धी समस्या के विभिन्न पहलुओं से विभिन्न एजेन्सियों के द्वारा एकत्रित किए जाते हैं। नीति निर्धारण से सम्बन्धित स्त्रोतों को मुख्यतः दो भागों में बाँटा जा सकता है-Documentary and Empirical Documentary स्त्रोत वे होते हैं जो किसी Document जैसे कि विभिन्न विभागों के सामायिक रिर्पोट, कमीशन एंव कमेटियों की रिर्पोट, विभागों का रिकार्ड से सम्बन्धित हैं आदि। इस स्त्रोत से द्वितीयक (Secondary) आंकड़े प्राप्त किए जाते हैं। दूसरी तरफ Empirical स्त्रोत वे होते हैं जिनसे प्राथमिक (Primary) आँकड़े एकत्रित किए जाते हैं तथा ये विभिन्न तकनीकों जैसे कि प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, पर्यवेक्षण आदि के माध्यम से सीधे उस समस्या से जुड़े लोगों से प्राप्त किए जाते हैं। साधारण तौर पर नीति निर्धारण के स्त्रोतों का निम्नलिखित चार भागों में बांटा जा सकता है-

1. **प्रशासनिक रिर्पोट एंव रिकार्ड (Administrative Reports and Records)**

प्रशासनिक रिर्पोट एंव रिकार्ड, नीति निर्धारण का सबसे मुख्य स्त्रोत है। प्रत्येक विभाग की क्षेत्रीय इकाईयाँ अपनी कार्यवाही एंव गतिविधियों के सम्बन्ध में सामयिक एंव वार्षिक (Periodie & annual) रिर्पोट भेजते है। ये रिर्पोट विभाग द्वारा अभिलेख के रूप में रिकार्ड की जाती हैं। नीति निर्माण के समय विभिन्न अभिकरणों जैसे कि केन्द्रीय सांख्कीय संगठन (Central Statistical organisation), राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (Naional Sample Survey), सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो (Bureau of Public Enterprises) आदि के द्वारा विभिन्न विभागों से सूचनांए एकत्रित की जाती हैं ताकि नीति सम्बन्धी मुख्य तथ्यों की प्राप्ति हो सके। ये अभिकरण केन्द्र एंव राज्य सरकारों के द्वारा सांख्यिकी (Statistics) एकत्रित करने के लिए स्थापित किए जाते हैं।

2. **बाह्य साधन (External Sources)**

प्रशासनिक रिर्पोट एंव रिकार्ड के पूरक के रूप में बाह्य साधनों की मदद ली जाती है क्योंकि यह नीति-निर्धारण के मामले में अपर्याप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त विभागीय रिर्पोट एंव आँकड़े एक पक्षीय हो सकते हैं और उनमें औपचरिकता (Formalism) पाई जा सकती है।

इसी कारण प्रशासन आँकडों के एकत्रिकरण में बाह्य साधनों का सहारा भी लेता हैं। तथा इसके लिए प्रशासन विभिन्न व्यावसायिक संस्थाओं, श्रम संघों, वाणिज्य चैम्बरों, एंव जन साधारण से सम्पर्क स्थापित करके आम जनता की राय को जानने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार की सूचनाएं प्रशासन के द्वारा Mass-media एंव लोक सम्पर्क विभाग के माध्यम से सीधे जनसाधारण का साक्षात्कार करके प्राप्त की जाती हैं। ये सूचनाएं जो लोगों की , प्रतिक्रियाओं, टिप्पणियों एंव observation के रूप में प्राप्त होती हैं, वे नीति निर्माताओं के लिए अत्याधिक महत्वपूर्ण होती हैं।

3. **शोध एंव अध्ययन (Research study)**

समाज के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में बहुत सारे सरकारी एंव गैर सरकारी संगठन शोध एंव अध्ययन का कार्य करके अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करते है जो नीति निर्माण के स्त्रोत के महत्वपूर्ण रूप में अपनाए जाते हैं। ऐसे संगठनों में भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, भारतीय सामाजिक विज्ञान शोध परिषद्, कैबिनट सचिवालय में O&M Divison, इण्डियन स्कूल ऑफ इकॉनोमिक्स इण्डियन

काऊँसिल आफ सोसल साइंस रिसर्च, इण्डियन काऊसिल आफ एग्रीकल्चर रिसर्च आदि प्रमुख है। ये नीति निर्धारण के लिए बहुत सारे उपयोगी तथ्य उपलब्ध करवाते हैं।

इसके अतिरिक्त बहुत सारे तकनीकी संस्थान जैसे कि इण्डियन इन्स्टीटयूट आफॅ टैक्नोलोजी, ऐटोमिक एन्जीं कमीशन, इण्डिन सपेस रिसर्च आर्गेनाइजेशन आदि शोध निष्कर्षो के आधार पर नीति निर्माण कार्य में तकनीकी सूचनाएं प्रदान करते हैं।

कमीशन एंव कमेटियों की रिर्पोट (Reports of the Comissions and Committees)

सरकार समय-समय पर विभिन्न विशेषीक त क्षेत्रों में विशेष छानबीन हेतू अनेकों कमीशन एंव कमेटियों का गठन करती है। इनके सदस्य सम्बन्धित क्षेत्र के विशेषज्ञ होते हैं। इनका मुख्य कार्य सरकारी एंव गैर-सरकारी साक्ष्यों की जाँच करके आँकड़े एवं तथ्य जुटाना है। जिनके आधार पर ये अपनी रिर्पोट तैयार करके सरकार को भेजते है। ये नीति निर्माण का Empirical स्त्रोत होने के कारण नीति निर्माण प्रक्रिया में अत्याधिक सहायक होता है। भारत में अनेकों आयोग एंव कमेटियाँ से कि प्रशासकीय सुधार आयोग, केन्द्रीय वेतन आयोग, कोठारी आयोग, सान्तानाम कमेटी, ग्रामीण-शहरी सम्बन्धी कमेटी आदि स्थापित किए गए और इनके द्वारा दी गई सिफारिशों को नीति निर्धारण का आधार बनाया जाता।

नीति निर्माण के माडल (Models of Public Policy Making)

प्रत्येक सामाजिक पहलु को अलग -अलग द ष्टिकोण से देखा जाता है और उसकी व्याख्या भी अलग-अलग दी सकती है। लोक नीति को भी अलग-अलग द ष्टिकोण से देखा जा सकता है। इन सभी द ष्टिकोणों की व्याख्या जरूरी नहीं एक दूसरे से पूर्ण रूप से भिन्न हो बल्कि इन सबमें Overlapping हो सकती है। लोक नीति के साहित्य में इन अलग -अलग द ष्टिकोणों को लोक नीति के Models के रूप में देखा जाता है।

नीति निर्माण के स्तर पर Nicholas Henry ने इन Models को दो अलग-अलग द ष्टिकोणों से देखा है -प्रक्रिया आधारित माडल एंव output आधारित माडल (Model of Public policy as a process and as an output) प्रथम श्रेणी में आने वाले माडल अपनी प्रक ति में prescriptive होने के बजाय Decriptive होते है। इन माडलों में मुख्य दबाव इस बात पर दिया जाता है कि लोकनीति का विकास कैसे हुआ। दूसरे शब्दों में नीति के विकास में कौन-कौन सी forces ने काम किया। इस श्रेणी में मुख्य रूप से Elite mass माडल, Groups माडल, System माडल तथा Institutional माडल आते है।

दूसरी श्रेणी में नीति निर्माण के माडल अपनी प्रक ति में Descriprtive की बजाय ज्यादा normative एंव Prescriptive होते है। इनका मुख्य Concern बेहतर नीतियां बनाने के उद्देश्य से लोक नीति निर्माण के तरीकों को कैसे सुधारा जा सकता हैं। इस श्रेणी में Incremental एंव Rational माडल आते हैं। इनका वर्णन निम्नलिखित है-

(A) Models of Public Policy Making as a Process

नीति निर्माण के Process based Models निम्न प्रकार से हैः-

1 श्रेष्ठ जन मॉडल (Elite Mass Model)

साधारण तौर पर ऐसी मान्यता है कि लोक नीति जनमत को प्रदर्शित करती है और यह जनसाधारण की आवश्यकताओं की पूर्ति की दिशा में महत्वपूर्ण साधन है। लेकिन यह मात्र एक कहावत प्रतीत होती है और वास्तविक सच्चाई से काफी दूर है। Elite Model के अनुसार आम व्यक्ति को सरकार की नीतियों के विषय में बहुत कम जानकारी होती है और न ही वह ज्यादा ध्यान दे पाता कि नीति बनाने से पहले सरकार के स्तर पर क्या होता है। वास्तव में नीति निर्माण में उनका प्रतिनिधित्व समाज व

देश के कुलीन अभिजात वर्ग के द्वारा किया जाता है। अतः लोकनीतियों का निर्धारण आम जनता की इच्छाओं के अनुसार न होकर कुलीन अभिजातवर्गीय समुदाय की इच्छा के अनुसार किया जाता है। यह वर्ग राजनीति के क्षेत्र में काफी प्रभावशाली होता है। तथा प्रशासन पर इनका अत्याधिक दबाव रहता है।

इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से लोक नीति लोक-इच्छा की अभिव्यक्ति है लेकिन व्यवहार में इसका निर्धारण समाज के अभिजात वर्ग की इच्छानुसार किया जाता है।

2. **हित -समूह मॉडल (Interest Group Model)**

समाज विभिन्न हित-समूहों की अन्तः क्रियाओं का एक जाल (Web) है जिसमें प्रत्येक हित समूह अपने स्वार्थो की प्राप्ति की दिशा में प्रयासरत रहता है। ये हित-समूह समाज में अपनी अपनी स्थिति को मजबूत बनाने तथा अपने-अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतू लोक नीतियों को प्रभावित करते हैं। ये समूह लोक नीतियों का अपने उद्देश्यों के अनुसार बनवाने के लिए सरकार पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से दबाव डालने का प्रयास करते हैं। प्रत्येक हित-समूह का दबाव सरकार पर अलग -अलग पड़ता है। जिन हित समूहों का दबाव अधिक होता है नीतियों का निर्धारण भी उनके पक्ष में होता है जिससे सम्बन्धित नीति का उन्हें अधिकाधिक लाभ पहुंचता है। असफल हित-समूह की माँगें ज्यों की त्यों रह जाती है।

इस प्रकार हित-समूह माडल नीति निर्धारण में समाज के विभिन्न हित-समूहों के आपसी संघर्षो को अभिव्यक्त एंव प्रदर्शित करता है।

3. **संस्थावादी मॉडल (Institutional Model)**

नीति निर्धारण के प्रक्रिया आधारित माडलों में संस्थावादी माडल अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस माडल के अनुसार लोक नीतियाँ सरकारी संस्थाओं एंव संरचनाओं से ही उत्पन्न होती हैं और यही सरंचनाएं उन्हें अन्तिम रूप प्रदान करती हैं। वास्तव में एक नीति तभी सार्वजनिक हो पाती है जब इसे सरकारी संस्थाएं अधिक त तौर पर मान्यता देती हैं, और इसे लागू करती हैं। इस प्रकार लोक नीतियों का निर्धारण एंव क्रियान्वयन सरकारी संस्थाओं द्वारा किया जाता है।

सरकारी सरंचनाएँ अपने-आप में भी लोक नीतियों का ही परिणाम (output) होती है। लोक नीतियों के माध्यम से ही इन्हें स्थापित किया जाता है, इन्हें खत्म किया जाता है और इनमें बदलते हुए वातावरण के अनुरूप बदलाव लाया जाता है। इस सम्बन्ध में भारत एंव रूस में लाए जा रहे संस्थागत परिर्वतन को ज्वलन्त उदाहरण के रूप में देखा जा सकता हैं।

4. **व्यवस्था सम्बन्धी मॉडल (System Model)**

लोक नीतियों के निर्धारण की दिशा में Systems माडल भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस माडल के अनुसार लोक नीति या नीति सम्बन्धी निर्णय राजनैतिक व्यवस्था (Political System) की Output हैं। यह माडल Information theory की अवधारणाओं (जैसे कि Feedback, Input & output) पर आधारित है और नीति निर्माण प्रक्रिया को चक्रीय (cyclic) मानती है। यह माडल इस बात पर बल देता है कि राजनैतिक व्यवस्था पर्यावरण का अभिन्न अंग है और इसके साथ लगातार अन्तःक्रिया करता है। पर्यावरण में उत्पन्न होने वाली Forces राजनैतिक व्यवस्था का प्रभावित करती है और इन्हें 'Input' के रूप में देखा जाता है। व्यवस्था (System) के Input की ये forces माँगों एंव समर्थन के रूप में होती हैं। राजनैतिक व्यवस्था (जो विभिन्न ढ़ांचों एंव प्रक्रियाओं का समूह है) authoritative रूप में कार्य करता हैं और नीति निर्धारण में समाज के विभिन्न मांगों को मूल्य प्रदान (value allocation) करता है। जिसे 'Output' के रूप में देखा जाता है। इस माडल के अनुसार लोक नीति राजनीतिक प्रणाली की उपज के रूप में आभिव्यक्त होती है।

ख) Output **आधारित मॉडल (Models of policy Making as an output)**

नीति निर्माण के Output पर आधारित माडल निम्न प्रकार हैं-

(1) **व द्धि का मॉडल (Incremental Model)**

नीति - निर्माण का यह माडल लोक नीति को पिछली सरकारों से जारी गतिविधियों में ही बढ़ोतरी करने का पक्षधर है। इस माडल के अनुसार सरकार पहले से ही चले आ रहे नियम, नीतियाँ एंव अन्य कार्यक्रमों में बदलते हुए समय एंव परिस्थितियों की माँग के अनुसार, फेरबदल संशोधन, परिवर्द्धन एंव बढ़ोतरी की जानी चाहिए। यह माडल लोक नीतियो में आमूल-चूल परिर्वतन की बजाय Slow and gradual परिर्वतन के विचार को मानता है। इस माडल में परम्परागत अनुभवों को आधार बनाकर वर्तमान एंव भविष्य सम्बन्धी समस्याओं को Handle करने के लिए नई नीतियों का सूत्रपात किया जाता है। ये नई नीतियाँ बदलते समय की माँग को पूरा करने के लिए पहले से ही मौजूद नीतियों में व द्धि मात्र होती हैं। लोक प्रशासन के शब्दकोष में इस माडल की निम्नलिखित Stages का वर्णन किया गया है।

1. समस्या की पहचान करना (Identify the problem)

2. ऐसी समस्याएं भूतकाल में कैसे handle की गई हैं, की जाँच करना (Investigate how similar problem, have been handled in the past)

3. इस समस्या के समाधान हेतू कुछ विकल्पों का विश्लेषण एंव मूल्यांकन(Analyse and evaluate a few solutions that appear to be plausible)

4. एक ऐसे विकल्प का चुनाव करना जो पहले से मौजूद प्रक्रियाओं एंव संस्थाओं में परिर्वतन लाए बगैर समस्या के समाधान में योगदान दे (Choose one that makes some Contribution to solving the problem without drastically altering existing process and institutions).

इस माडल की मुख्य कमी यह है कि यह अपने द ष्टिकोण में Conservative एंव Status quoist है। Yehezkel Dror

ने भी इस माडल की काफी आलोचना की है। उसके अनुसार "जब भूतकालीन नीतियों के परिणाम असन्तोषजनक हों तो वे परिणाम भविष्य में कुछ करने के सम्बन्ध में बहुत कम महत्व रखते हैं। उनमें केवल तुच्छ व द्धि मूलक परिर्वतन कर देने से बेहतर फलों की प्राप्ति नहीं हो सकती है।" इन आलोचनाओं के बावजूद भी इस माडल की नीति निर्माण के कार्य में अत्याधिक महत्ता है।

2. **बुद्धिवादी मॉडल (The Rational Model)**

नीति निर्माण का बुद्धिवादी माडल एक बहुत ही Comprehensive,तार्किक एंव वैज्ञानिक माडल है। इसके अनुसार लोक नीति का निर्धारण तर्कपूर्ण एंव बुद्धिमतापूर्ण होना चाहिए। इसीकारण यह माडल, समस्या के सभी सम्भव विकल्पों को Consider करता है, तथा उनका वैज्ञानिक एंव तुलनात्मक नजरिए से विश्लेषण करता है, और इस विश्लेषण के आधार पर एक सही विकल्प का चुनाव करता है। यह माडल नीति निर्माण प्रक्रिया को अत्याधिक objective, scientific एंव value -neutral बनाने का प्रयास करता है। लोक प्रशासन के शब्दकोष के अनुसार एक Rational लोक नीति के निर्माण में निम्नलिखित steps होते हैं-

1. सभी नीति सम्बन्धी विकल्पों की पहचान करना

(Identification of all policy alternatives)

2. प्रत्येक विकल्प के परिणामों को forecast करना

(Forecasting the Consequences of each alternative)

3. विभिन्न विकल्पों के परिणामों की नीति के उद्देश्यों के साथ तुलना करना

(Comparing the Consequences in relationship with goals)

4. सही एंव उपयोगी विकल्प का चुनाव करना (Choosing the best alternative)

एक Rational नीति के निर्माण की कुछ पूर्व शर्ते हैं। प्रथम, इसके लिए सामाजिक मूल्यों की पर्याप्त समझ का होना अति आवश्यक है। दूसरा, विभिन्न विकल्पों के सन्दर्भ में आँकड़ो एंव सूचनाओं की उपलब्धता आवश्यक है। तीसरा, संगठन में एक निश्चित निर्णय निर्माण व्यवस्था का होना आवश्यक है जिसमें इतनी क्षमता हो कि वह सम्बन्धित आँकड़ों की पहचान कर सकें, उनका सही ढ़ंग से विश्लेषण कर सके तथा प्रत्येक विकल्प के परिणामों को fortell कर सके।

हांलाकि इस माडल में अनेक कठिनाइयाँ हैं तथा आलोचकों का मत है कि यह आदर्शवादी माडल होने के कारण वास्तविक जगत से बहुत दूर है।

नीति निर्माण प्रक्रिया (Policy Making process)

नीति निर्माण प्रक्रिया एक अत्याधिक जटिल एंव विस्त त प्रक्रिया है क्योंकि यह काफी stages से होकर गुजरती है। नीति निर्माण के स्तर पर निम्नलिखित चरण अपनाए जाते हैं-

1. समस्या की पहचान करना तथा समझना (Idenitification and Comprehension of the Problems)

प्रत्येक नीति का निर्धारण किसी सामाजिक समस्या या कुछ समस्याओं के समाधान हेतू किया जाता है जो नीति की विषय वस्तु का आधार होता है इसलिए नीति-निर्माण प्रक्रिया का पहला चरण, सामाजिक स्तर पर समस्या की पहचान करना है। नीति निर्माण को आधार प्रदान करने वाली सामाजिक समस्या का चयन प्राथमिकता के आधार पर किया जाता है क्योंकि समाज में अनेकानेक समस्याएं व्याप्त हैं जिन्हें सरकार की Immediate attention की आवश्यकता होती है। लेकिन सभी समस्याओं का हल एक ही समय निकाल पाना असम्भव है। इसलिए समस्या का चयन संसाधनों की उपलब्धता तथा विभिन्न समस्याओं के समाधान निकालने सम्बन्धी Urgency को मध्यनजर रखते हुए प्राथमिकताओं के आधार पर किया जाता है।

लेकिन यह चरण, समस्या की पहचान के साथ खत्म नहीं होता बल्कि इसमें समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण समझ पैदा करना भी सम्मिलित का है ताकि समस्या का सही समाधान निकाला जा सके। इसलिए समस्या को वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर अधिकाधिक precise एंव clear terms में परिभाषित करना आवश्यक है। यह चरण नीति निर्माण प्रक्रिया का सबसे महत्वपूर्ण चरण माना जाता है क्योंकि अगर समस्या का चयन वैज्ञानिक ढ़ंग से न किया जाए या इसे पूर्ण रूप से समझा न जाए, तो इसके समाधान के सभी प्रयास व्यर्थ होंगें।

2. नीति सम्बन्धी विकल्पों का विकास (Developing the policy Alternatives)

नीति निर्माण प्रक्रिया का दूसरा चरण समस्या के उचित समाधान हेतू विभिन्न नीति सम्बन्धी विकल्पों के विकास करनें से जुड़ा है। यह चरण इस सिद्धान्त पर कार्य करता है कि किसी भी समस्या के समाधान हेतू अनेक विकल्प हो सकते हैं जिनमें से सर्वोतम विकल्प का चुनाव आवश्यक है। इस चरण की महत्ता इस बात में निहित होती है कि अगर समस्या के समाधान हेतू सभी या मुख्य सम्भावित विकल्पों का विकास न किया गया तो नीति-निर्माताओं की सर्वोत्तम विकल्प के चुनाव सम्बन्धी Choice restrict हो सकती है और समस्या का हल सही तरीके से नहीं निकाला जा सकता। इसीकरण समस्या के समाधान सम्बन्धी सभी विकल्पों के विकास हेतू नीति निर्माताओं के स्तर पर व्यापक समझ, गहन अध्ययन दूरदर्शिता एंव समस्या से सम्बन्धित सामाजिक उलझनों के सम्बन्ध में व्यापक ज्ञान का होना अत्यन्त अनिवार्य है।

3. विभिन्न नीति सम्बन्धी विकल्पों का मूल्यांकन एंव सर्वोतम का चुनाव (Evaulation of various policy alternatives and Selection of the Best one)

नीति सम्बन्धी विभिन्न विकल्पों के विकास के पश्चात् नीति निर्माता, इनका Input-output Relationship एंव Cost benefit Anaysis आदि के आधार पर मूल्यांकन करते हैं और इन सब विकल्पों के Pros and Cons के आधार पर तुलना करके सर्वोतम विकल्प का चुनाव करते हैं। इस के दौरान नीति निर्माता काफी सर्तकता एंव सावधानी से कार्य करते हैं क्योंकि प्रत्येक विकल्प के अपने गुण वे दोष होते हैं। कोई विकल्प मितव्ययी परन्तु अधिक समय लेने वाला होता है तो प्राप्ति में विकल्प अधिक खर्चीला होता है परन्तु दीर्घकालीन उद्देश्यों की प्राप्ति में विकल्प अधिक सहायक होता है कोई विकल्प सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होता है तो कोई विशिष्ठ उद्देश्यों की प्राप्ति में। कोई विकल्प अधिक लाभ देने वाला होता है तो कोई अधिक जोखिम वाला। इस प्रकार नीति निर्माताओं के लिए सर्वोतम विकल्प का चुनाव करना काफी कठिन कार्य होता है। इसके मुख्य रूप से तीन कारण हैं। प्रथम, नीति-निर्माताओं के पास समस्या के समाधान हेतू इसकी उत्पति , विभिन्न आयामों, समाज के विभिन्न वर्गों के समस्या की सम्बन्ध में समझ आदि के सन्दर्भ में पूर्ण जानकारी का अभाव पाया जाता है। लेकिन समस्या से सम्बन्धित एक भी प्रश्न का उत्तर न मिलने की दिशा में विभिन्न विकल्पों का विकास एंव उनके परिणामों के विषय में forecast करना कठिन कार्य है। दूसरा किसी भी सामाजिक समस्या की Material terms में व्याख्या करना आसाना नहीं है इसलिए विभिन्न नीति सम्बन्धी विकल्पों का तुलनात्मक विश्लेषण करना कठिन कार्य है। तीसरा, मानवीय व्यवहार Rational न होने के कारण, नीति निर्माताओं की किसी Situation के सम्बन्ध में भविष्यवाणी भी गलत हो सकती है।

4. वाद-विवाद (Debate and Discussion)

नीति निर्माण प्रक्रिया के चौथे चरण में, नीति सम्बन्धी चयनित सर्वोतम विकल्प पर जनसाधारण की राय लेने के लिए वाद-विवाद के लिए खुली छूट दी जाती है। इस चरण में पर सर्वोतम विकल्प के परिणामों (Pros and cons) को शिक्षित वर्ग, दबाव समूह लाभर्थियों एंव प्रैस (Media) आदि स्तरों पर बहस का मुद्दा बनाया जाता है और उनके सुझावों एंव प्रतिक्रियाओं को नीति निर्माण हेतू आमन्त्रित किया जाता है।

विभिन्न स्त्रोतों से प्राप्त टिप्पणियों, प्रतिक्रियाओं एंव सुझावों की उनकी गुणवत्ता के आधार पर नीति के प्राथमिक ड्राफ्ट में सम्मिलित करके नीति का अन्तिम ड्राफ्ट तैयार किया जाता है तथा इसे विधानपालिका की सहमति के लिए भेजा जाता है।

5. विधायिका की स्वीक ति (Approval of Parliament Legistatures)/Policy Enactment)

नीति निर्माण का यह अन्तिम चरण है। इसमें नीति के अन्तिम ड्राफ्ट को विधानपालिका के सम्मुख पेश किया जाता है ताकि इसे Legal Sanctity मिल सके। प्रत्येक प्रजातान्त्रिक देश में नीति सम्बन्धी प्रस्तावों को Authoritative आधार प्रदान करने के लिए सरकार के विधायनी अंग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उदाहरण के तौर पर भारत में केन्द्र स्तर पर संसद तथा राज्यों के स्तर पर विधानपालिका की स्वीक ति नीति निर्माण के लिए आवश्यक होती है। भारतीय संसद में नीति सम्बन्धी प्रस्ताव Legal आधार प्राप्त करने से पहले Three readings से होकर गुजरता है।

नीति निर्माता (Policy Makers)

साधारणतया नीति निर्माण में बहुत सारे लोग भाग लेते हैं। मुख्यतः इन्हें दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है सरकारी एंव गैर सरकारी। सरकारी नीति निर्माता वे होते हैं जिन्हें नीति निर्धारण का औपचारिक एंव वैधानिक अधिकार प्राप्त होता है। इस श्रेणी में विधानमण्डल, कार्यपालिका, प्रशासनिक इकाईयों

एंव न्यायपालिका को सम्मिलित किया जाता है। इसके अतिरिक्त कुछ गैर-सरकारी एजेन्सियाँ जैसे कि राजनैतिक पार्टियाँ , दबाव समूह एंव प्रेस (mass-media) आदि भी नीति निर्माण की प्रक्रिया में अहमभूत भूमिका निभाते हैं। हांलाकि सरकारी नीति निर्माताओं की तरह इनके पास नीति निर्धारण का औपचारिक एंव वैधानिक अधिकार नहीं होता लेकिन फिर भी ये गैर-सरकारी एजेन्सियाँ सरकार को नीति के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण सुझाव प्रदान करते हैं और सरकार के द्वारा लोक नीतियों को रूप प्रदान करते समय अच्छा खासा प्रभाव डालते है। सरकार भी इनके द्वारा दिए गए सुझावों को नकार नहीं पाती है।

सरकारी नीति -निर्माता (Official Policy Makers)

सरकारी नीति निर्माताओं का संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार है

1. **विधानमण्डल (Legislature)**

नीति निर्माण का कार्य औपचारिक रूप से विधानमण्डल का होता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि यह नीति निर्माण सम्बन्धी निर्णय लेने में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र है। नीति निर्माण प्रक्रिया में विधानमण्डल की भूमिका अलग-अलग राजनैतिक व्यवस्थाओं में भिन्न भिन्न है। अमेरिका जैसी अध्यक्षीय शासन प्रणाली में विधानमण्डल (American Congress)की नीतियों के सन्दर्भ में पहलकदमी (Initiation of Policies) करने सम्बन्धी भूमिका काफी अधिक है। अमेरिका में शक्ति प थक्करण (Seperation of power)के सिद्धान्त के कारण Congrees अक्सर नीति-निर्माण सम्बन्धी मामलों में स्वाधीन एंव अन्तिम निर्णय लेती है। संयुक्त राज्य की कांग्रेस में स्थायी समिति को प्रस्तावित विधि निर्माण पर चरम प्राधिकार प्राप्त है और वह सदन के सदस्यों के बहुमत के विरोध में भी कार्य कर सकती है। कराधान, नागरिक अधिकार, कल्याण और श्रम सम्बन्धी मामलों पर नीतियों के प्रमुख भाग का निर्माण कांग्रेस द्वारा किया जाता है।

दूसरी तरफ संसदीय शासन प्रणाली में नीति सम्बन्धी प्रस्तावों की पहलकदमी कार्यपालिका की तरफ से होती है और विधानमण्डल उन प्रस्तावों पर केवल बहस करके अपनी सहमति दे देती है। यहां पर संसद, अमेरिकन कांग्रेस की तरह नीति निर्माण में अधिक स्वायत एंव स्वतन्त्र नहीं है। ब्रिटिश तथा भारतीय संसद इसके उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त कम्युनिस्ट राष्ट्रों में विधानमण्डल की भूमिका नीति निर्माण में संसदीय शासन प्रणाली वाले राष्ट्रों से भी कम है। इसका उदाहरण चीन है। "अतः स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि तानाशाही देशों की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक देशों में दिए जाने वाले नीति निर्णय में विधानमण्डल अधिक महत्वपूर्ण होते हैं; और प्रजातान्त्रिक पद्धति में , विधानमण्डलों को नीति निर्माण में संसदीय पद्धति (भारत) की अपेक्षा अध यक्षीय पद्धति (संयुक्त राज्य अमेरिका) में अधिक स्वाधीनता प्राप्त होती है।

2. **कार्यपालिका (Executive)**

आज का युग कार्यपालिका केन्द्रित' युग कहलाता है। आधुनिक समय में Politics-administration dichotomy जिसके अनुसार नीति निर्माण का कार्य विधानपालिका का है तथा नीति क्रियान्वयन सम्बन्धी कार्य कार्यपालिका का है, गलत सिद्ध हुई है। फलस्वरूप लगभग सभी आधुनिक सरकारों की कार्यपालिका न केवल नीति के क्रियान्वयन में बल्कि नीति निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संसदीय शासन प्रणाली में राजनैतिक कार्यपालिका, विधानपालिका का अहम भूत अंग होने के कारण, नीति निर्माण के कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। "संसदीय पद्धति वाले देशों में सभी नीतियों का मन्त्रिमण्डल का अनुमोदन प्राप्त करना पड़ता है और संसद में सभी महत्वपूर्ण नियम सरकार के मन्त्रियों द्वारा ही प्रस्तुत किए जाते हैं।"[7]

आज सभी देशों , चाहे वे विकसित हों या विकासशील, में कार्यपालिका की नीति निर्माण कार्य में अहम् भूमिका है। हांलाकि विकासशील देशों में इसकी भूमिका अधिक पाई जाती है। इसका यह कारण

है कि इन देशों में प्रायः मजबूत अधिकारी तन्त्रीय आधार नहीं होता और कार्यपालिका नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है क्योंकि सरकार के हाथों में शक्ति का केन्द्रीकरण अधिक होता है और विधानमण्डल के प्रति उसकी जबावदेही कम होती है।

3. **प्रशासनिक अभिकरण (Administratrative Agencies)**

लोक प्रशासन के इतिहास में आरम्भ से ही प्रशासनिक अभिकरणों एंव प्रशासकों की भूमिका द्वन्द का विषय रही है जो प्रोफेसर वुडरो विलसन द्वारा उठाई गई Politics-Administration Dichotomy का परिणाम था। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् शोधकार्य एंव अनुभव के आधार पर प्रशासनिक अभिकरणों की भूमिका को न केवल स्वीकारा गया बल्कि इस बात पर भी बल दिया गया कि "Essence of Publice administration is policy-making."

आज प्रत्येक प्रजातन्त्रिक देश चाहे वह विकसित है या विकासशील सभी में प्रशासनिक अभिकरण नीति निर्माण प्रक्रिया महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लगभग सभी देशों में आज प्रशासन में एंव राजनीति नीति निर्माण कार्य में काफी हद तक घुल मिल गए हैं। प्रशासनिक अधिकारी अनेक कारणों से नीति निर्माण प्रक्रिया में अहम भूमिका निभाते हैं। प्रथम, विज्ञान एंव तकनीकी के क्षेत्र में अत्याधिक विकास के कारण नीति निर्माण सम्बन्धी विषय-वस्तु अत्यन्त जटिल प्रक ति की बन गई है जिसे राजनेताओं के लिए समझ पाना अत्यन्त कठिन है अतः उन्हें प्रशासकों पर निर्भर रहना पड़ता है। द्वितीय, प्रशासनिक अधिकारियों के पास अत्याधिक ज्ञान एवं विभिन्न क्षेत्रों का लम्बे समय का अनुभव होता है जो नीति निर्माण के लिए आवश्यक है अतः प्रशासनिक अधिकारियों पर विश्वास करने के अतिरिक्त राजनेताओं के पास कोई रास्ता नहीं होता। तीसरा, आधुनिक युग में विभिन्न कारणों से प्राप्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) की tendency को काफी अधिक बढ़ावा मिला है जिसके फलस्वरूप आजकल संसद कानूनों एंव नीतियों को मौटे तौर पर एक खाका तैयार करती है और इसकी बारिकियों को पूरा करने के लिए प्रशासन पर छोड़ा जाता है । उपरोक्त कारणों से प्रशासनिक अभिकरणों की भूमिका नीति निर्माण प्रक्रिया में अत्याधिक बढ़ गई है।

4. **न्यायपालिका (Judiciary)**

नीति-निर्माण प्रक्रिया में न्यायपालिका भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। एक प्रजातान्त्रिक देश में राजनैतिक व्यवस्था की सफलता, उसकी स्वतन्त्र एंव निष्पक्ष न्यायपालिका पर निर्भर करती है। उदाहरण के तौर पर भारत में न्यापालिका संविधान की सरंक्षक होने के कारण, नागरिकों के अधिकारों एंव स्वतन्त्रताओं को सुरक्षित रखने में अहम भूमिका निभाती है। नागरिकों के मौलिक अधिकार जो संविधान के Basic Structure के अंग हैं, के संरक्षण का मुख्य साधन न्यायपालिका है। ऐसा करने के लिए न्यायपालिका न केवल विधानपालिका एंव कार्यपालिका द्वारा तैयार की गई नीतियों का पुर्नवालोकन करती है बल्कि अगर नीतियाँ गलत साबित हो तेा वैकल्पिक नीतियों के सम्बन्ध में दिशा-निर्देशन प्रदान करती हैं। न्यायपालिका की न्यायिक समीक्षा की यह शक्ति(Power of Judical Review) इसे अन्य नीति निर्माता एजेन्सियों एंव संस्थाओं की तुलना में एक Unique स्थान प्रदान करती है। बुनियादी तौर से, न्यायिक समीक्षा, विधायी एंव कार्यकारी शाखाओं की कार्रवाइयों की संवैधानिकता का निर्धारण करने और यदि इस प्रकार की कार्रवाइयाँ संवैधानिक उपबन्धों के विपरीत हों तो उन्हें रद और शुन्य (Null & Void) घोषित करने की शक्ति, न्यायालय के पास हैं। भारत जैसे देशों में न्यायपालिका की न्यायिक समीक्षा की शक्ति नीति निर्माण में इसकी भूमिका को अत्यन्त महत्वपूर्ण बना देती है।

गैर-सरकारी नीति निर्माता (Non-Official Policy Makers)

सरकारी नीति निर्माताओं के साथ -साथ कुछ गैर सरकारी एजेन्सियाँ जैसे कि राजनैतिक पार्टियाँ, दबाव समूह, तथा प्रेस आदि भी नीति-निर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये एजेन्सियाँ सरकार को न केवल मूल्यवान सुझाव ही देती हैं बल्कि लोक नीतियों को अन्तिम रूप

देने में सरकार की कार्यवाही को काफी हद तक प्रभावित करते हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार से है-

1. **दबाव समूह (Pressure Groups)**

एक दबाव समूह वह संगठन है जिसका एक औपचारिक ढ़ांचा होता है और जिसका उद्देश्य सामूहिक होता है। ये समूह ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं जो सरकारी संस्थाओं, अधिकारियों एंव लोक नीतियों को प्रभावित करते हैं। ये समूह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतू विभिन्न राजनैतिक गतिविधियाँ करते हैं ताकि लोक नीति को प्रभावित किया जा सके। प्रत्येक देश में अनेकानेक दबाव समूह पाए जाते हैं। विभिन्न देशों में समूह की शक्ति और वैधता विभिन्न प्रकार की होती है जो इस बात पर निर्भर करती है कि देश प्रजातान्त्रिक है या तानाशाही, विकसित है या विकासशील।

विकसित देशों में दबाव समूहों की संख्या, विकासशील देशों की अपेक्षा काफी अधिक है। अमेरिका, जापान, जर्मनी आदि में इनकी संख्या भारत, पाकिस्तान एंव बंगलादेश की तुलना में काफी अधिक है। विकसित देशों में इनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सूचनाएं एंव आँकड़े विकासशील देशों की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय होते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि विकासशील देशों में दबाव समूहों की मानसिकता संकुचित होती है और इनमें दूरदर्शिता का अभाव पाया जाता है।

दबाव समूह नीति निर्माण प्रक्रिया में काफी मददगार साबित होते हैं क्योंकि वे नीति निर्माताओं को नीति सम्बन्धी मुद्दों पर अपने-अपने विचार, भिन्न-भिन्न द ष्टिकोणों से पेश करते हैं। इस प्रकार ये सरकारी नीतियों निर्माताओं न केवल समस्या के सम्बन्ध में बल्कि इसके समाधानों के बारे में भी व्यापक समझ उत्पन्न करने में मदद करते हैं। इस प्रकार समाज में जितने अधिक दबाव समूह होगें, उतने ही नीति निर्माताओं के लिए अधिक लाभदायक होगें।

दूसरी तरफ दबाव समूहों की इस आधार पर भी आलोचना भी की जाती है कि ये अपने उद्देश्यों को मनवाने हेतू सरकार की नीति निर्माण प्रक्रिया पर अनावश्यक दबाव डालते है और इसे हद काफी तक प्रभावित भी करते हैं। दबाव समूहों का नीति सम्बन्धी निर्णयों पर प्रभाव बहुत सारे कारकों जैसे कि इनकी अधिक सदस्य संख्या, इनके मौद्रिक एंव अन्य संसाधन , इनके नेत त्व का चातुर्य, इनका समाज में दर्जा आदि पर निर्भर करता है।

2. **राजनैतिक पार्टिया (Political Parties)**

राजनैतिक पार्टी वह ग्रुप समूह है जो वैधानिक तरीके से राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने की कोशिश करता है और जिसकी अपनी एक विचारधारा होती है। यह ऐसे लोगों का एक निकाय है जो National interest को बढ़ावा देने के लिए साथ मिलाकर कार्य करते हैं। दबाव समूह जो किसी निहित स्वार्थ तक सीमित होते हैं, की अपेक्षा राजनैतिक पार्टियों के पास अनेक मुद्दें होते हैं।`आधुनिक समाजों में सामान्यतया, राजनीतिक दल हित समूहीकरण (Interest Aggregation) का कार्य करते हैं, अर्थात् वे हितों की विशिष्ट मांग को सामान्य नीति विकल्पों में रूपांतरित करने का प्रयत्न करते हैं। हित समूहीकरण की प्रक्रिया, भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न है और यह दलों की संख्या से प्रभावित होती हैं।

ऐसे देश जहाँ केवल दो पार्टियाँ ही पाई जाती हैं जैसे कि अमेरिका एवं इंग्लैण्ड, में प्रत्येक पार्टी अधिकाधिक हित संकलन का प्रयास करती हैं। लेकिन बहुदलीय प्रणाली में, प्रत्येक पार्टी का Mass Base काफी कम हो जाता है और अधिक प्रतिस्पर्दा होने के कारण हित-समूहीकण की सम्भावना कम हो जाती है। एकल पार्टी प्रणाली जैसे कि चीन में हित समूहीकरण का प्रश्न ही नहीं खड़ा होता है। संसदीय शासन प्रणाली में बहुमत प्राप्त करने वाली पार्टी सरकार बनाती है और चुनावी Manifesto के अनुरूप नीतियों का निर्माण करती है।

"संयुक्त राज्य अमेरिका की अध्यक्षीय प्रणाली में विधानमण्डल सदस्य प्रायः अपनी दलीय नीति के

अनुसार मतदान करते हैं। वहां जिस दल का कांग्रेस पर नियन्त्रण होता है, उसके पास ही महत्वपूर्ण नीतिक निहितार्थ होते हैं।

राजनैतिक पार्टियाँ नीति सम्बन्धी विकल्पों की उत्पत्ति में अहमभूत भूमिका निभाती हैं। इसका कारण यह है कि इन पार्टियों का जनाधार होता है और ये आम जनता के सीधे सम्पर्क में आते हैं। परिणामस्वरूप ये जनता की समस्याओं एंव आवश्यकताओं के बारे में पूर्ण रूप से परिचित होते हैं। ये समाज के विभिन्न वर्गो की नीति सम्बन्धी मुद्दों पर राय जानने की कोशिश करते हैं तथा इस राय के अनुसार नीति प्रस्तावों को तैयार करने में सरकार की मदद करते हैं।

3. **प्रेस (Mass Media)**

प्रेस नीति निर्माण कार्य पर गहरा प्रभाव डालती हैं। विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं तथा इलैक्ट्रॉनिक मीडिया से जुड़े सम्पादक एंव पत्रकार नीति निर्माण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रेस दो ढ़ंग से कार्य करती है। प्रथम, यह सरकार के प्रयासों के सन्दर्भ में जनसाधारण की जानकारी को बढ़ावा देती है। समाचार पत्र, पत्रिकाओं, सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन आदि की मदद से, किसी विशेष समस्या के सम्बन्ध में, यह सरकार के द्वारा की गई घोषणाओं एंव वायदों, विधानपालिका के वाद-विवाद, महत्वपूर्ण व्यक्तियों के भाषण, विभिन्न राजनैतिक पार्टियों एंव दबाव समूहों की क्रियाएं एंव प्रतिक्रियाएं आदि लोगों के समक्ष पेश करती है।

दूसरा, प्रेस नीति निर्माण के समय नीति सम्बन्धी प्रस्तावों के अनुकूल तथा प्रतिकूल द ष्टिकोण पैदा करके लोकमत का स जन करती है जो नई नीतियों के निर्माण के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस प्रकार प्रेस नीति निर्माण सम्बन्धी विषयों पर जनता का रूख जानने की कोशिश करती है जो नीति निर्माताओं के लिए अति आवश्यक होता है।

(नीति क्रियान्वन)

(Policy Implementation)

जब नीति औपचोरिक रूप से तैयार हो जाती है अर्थात् इसे संसद की स्वीक ति मिल जाती है तो अगला चरण नीति क्रियान्वयन का होता है यह चरण नीति चक्र का सबसे महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। क्योंकि इस चरण से पहले केवल 'क्या करना है' तथा 'कैसे करना है' जैसी सैद्धान्तिक गणना ही की जाती हैं। लेकिन नीति क्रियान्वयन के स्तर पर हमें वास्तविक सच्चाईयों (Hard reatilies) से रूबरू होना पड़ता है। इस स्तर पर 'क्या हो सकता है' और 'क्या नहीं हो सकता है' की खोज की जाती है। इसके साथ-साथ नीति चाहे कितनी ही अच्छी प्रकार से क्यों न तैयार की गई हो, अगर इसका क्रियान्वयन faulty है तो यह अपने वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर सकती। Louis, koeing ने इसे नीति प्रक्रिया का Great Achilles Heel' कहा है।

सरकार का सबसे महत्वपूर्ण कार्य नीति का सफल क्रियान्वयन है, न कि कितने मानवीय एंव भौतिक संसाधन लगाए जा रहें हैं। इसका कारण यह है कि नीति के faulty क्रियान्वयन के परिणाम भयावह हो सकते हैं। इससे सरकार का अस्तित्व भी खतरे में पड़ सकता है। क्रियान्वयन के समय सरकार को परस्पर विरोधी समस्याओं का भी सामना करना पड़ सकता है। नीति के faulty या असफल क्रियान्वयन के कारण सरकार चाहकर भी बहुत सारी समस्याओं का समाधान नहीं निकाल पाती जिससे इसे जन साधारण के सरकार के प्रति असन्तोष को झेलना पड़ता है। इस प्रकार नीति क्रियान्वयन , नीति चक्र का अहमभूत हिस्सा है।

नीति के क्रियान्वयन की प्रक्रिया में बहुत सारी एजेन्सियाँ सम्मिलित हैं। क्रियान्वयन में इन एजेन्सियों में तालमेल का होना अति आवश्यक है वरना इसका प्रतिकूल प्रभाव नीति क्रियान्वयन की प्रक्रिया पर पड़ता है। इन एजेन्सियों में सबसे महत्वपूर्ण एजेन्सी नौकरशाही है जो नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। नौकरशाही के अतिरिक्त दूसरी सरकारी एंव गैर सरकारी एजेन्सियाँ

जैसे कि भी राजनैतिक कार्यपालिका, संसद, न्यायपालिका, स्वंय सेवी संगठन, दबाव समूह, प्रेस, नागरिक आदि भी नीति क्रियान्वयन की प्रक्रिया में अपनी- अपनी भूमिका निभाते हैं।

नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया (Policy Implementation Process)

नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है तथा इसमें बहुत सारे चरण सम्मिलित हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार है-

1. **कार्यक्रम एंव परियोजनाएं तैयार करना (Formulation of Programmes & Projects)**

नीति को Effective ढ़ंग से लागू करने के लिए, इसे कुछ कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं में विभक्त किया जाता है। इन कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं कों पंचवर्षीय एंव वार्षिक योजनाओं की मदद से लागू किया जाता है क्योंकि इनकी अवधि एक वर्ष या इससे अधिक हो सकती है। योजना एक सामान्य ढ़ाँचा है जिसमें विभिन्न कार्यक्रम एंव परियोजनाएं विकसित होती हैं। प्रत्येक नीति को कुछ कार्यक्रमों में विभाजित किया जाता है तथा प्रत्येक कार्यक्रम को कुछ परियोजनाओं में ताकि उपलब्ध सीमित संसाधनों को किसी निश्चित दिशा में प्रवाहित किया जा सके। इन परियोजनाओं को कुछ events एंव activities में विभक्त किया जाता है ताकि परियोजना के उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।

नीति सम्बन्धी समस्या की प्रक ति एंव गम्भीरता तथा उपलब्ध संसाधनों को ध्यान रखते हुए कार्यक्रम तैयार किए जाते हैं। ये कार्यक्रम बड़े या छोटे दर्जे के हो सकते हैं। नीति सम्बन्धी विभिन्न कार्यक्रम एंव परियोजना सामान्य तौर पर प्रशासकीय सीढ़ी के ऊपरी स्तर पर प्रशासकों के द्वारा अपने Political bosses के साथ मिलकर तैयार किए जाते हैं। प्रत्येक परियोजना के तहत कुछ events की श्र खंला तथा प्रत्येक events के तहत कुछ गतिविधियों की श्र खंला तैयार की जाती है। उदाहरण के तौर पर बाल कल्याण सम्बन्धी नीति को लागू करने के लिए Integrated Child Development Service (ICDS) कार्यक्रम तैयार किया गया। ICDS के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए बहुत सारी परियोजनाएँ 'Anganwadis', 'Balwadis', एंव Craches आदि का बाल विकास की दिशा में निर्माण किया गया। इसी प्रकार नई शिक्षा नीति के तहत नवोदय विद्यालय ' सम्बन्धी कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों के Gifted children के लिए तैयार किए गए। इस कार्यक्रम से सम्बन्धित विभिन्न परियोजनाएं एंव गतिविधियाँ, इन विद्यालयों के इर्द-गिर्द घूमती हैं।

2.**परियोजना नियोजन (Project Planning or Designing)**

नीति क्रियान्वयन की दूसरी stage परियोजना नियोजन की है। यहाँ पर परियोजना नियोजन तथा आर्थिक नियोजन में अन्तर स्पष्ट करना आवश्यक है। आर्थिक नियोजन का तात्पर्य अर्थव्यवस्था के विभिन्न Sectors में संसाधनों के बंटवारे से है जबकि परियोजना नियोजन, एक परियोजना जैसे कि वन संरक्षण Adult Literacy ,व क्षारोपण आदि, को लागू करने के सम्बन्ध में प्रशासनिक नियोजन करने से है। नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया में, परियोजना नियोजन, एक महत्वपूर्ण phase है जो कुछ एक दूसरे के साथ जुड़े steps से मिलकर बना है। उदाहरण के तौर पर लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान करने के लिए अस्पताल की स्थापना करना, एक परियोजना हो सकती है। इस परियोजना के नियोजन हेतू सबसे पहले Field Survey किया जाता है ताकि इससे सम्बन्धित आवश्यक सूचनाएं एंव आँकड़े एकत्रित किए जा सकें। अस्पाताल के लिए जगह का चुनाव करते समय अनेक बातों का ध्यान रखा जाता है। इसके लिए जनसंख्या की Concentration, आस-पास के अस्पातालों से दूरी, बिमारी वाले क्षेत्र (Disease Prone Area) भूमि का उपजाऊपन, पीने योग्य पानी की उपलब्धता आदि। इसके अतिरिक्त अस्पताल के लिए चयनित जगह रेल एंव रोड़ (Rail-road-traffic) के साथ जुड़ा हो।

उपरोक्त सूचनाओं एंव आंकड़ों की प्राप्ति के पश्चात् Cost-benefit तकनीक के आधार पर विश्लेषण करके परियोजना स्थापित करने की विभिन्न जगहों (sites)का तुलनात्मक अध्ययन करके परियोजना की feasibility या practicability की जांच की जाती है। अस्पताल की जगह का चुनाव करने के बाद, भूमि की कीमत का अनुमान , तथा उस पर निर्माण किए जाने वाली Building की cost का अनुमान लगाया जाता है। इसके साथ-साथ अस्पताल के लिए furniture ,आवश्यक equipments एंव सेवीवर्ग की जरूरत आदि के खर्च सम्बन्धी अनुमानित खाके तैयार किए जाते हैं। इस प्रकार के विश्लेषण एंव अनुमान तैयार करने के लिए विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। इन सब आधारों पर, परियोजना के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव तैयार किया जाता है और इसे ऊपरी स्तर की एजेन्सियों जैसे कि नियोजन एंव वित्त मन्त्रालय की जांच एंव सहमति के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

3. **योजना एंव बजट तैयार करना (Preparation of Plan and Budgeting)**

आधुनिक राज्य कल्याणकारी राज्य होने के कारण इसे नागरिकों के कल्याण हेतू अनेक कार्य करने पड़ते हैं। इसी कारण आज राज्य की जिम्मेदारियाँ अत्याधिक बढ़ गई हैं। लेकिन प्रत्येक अर्थव्यवस्था विशेषतौर पर विकासशील देशों में समस्याओं की तुलना में इनके समाधान हेतू संसाधनों की कमी पाई जाती है। भारत जैसे विकासशील देश को सीमित संसाधनों से ही इनके सामने खड़ी अनेकानेक समस्याओं का समाधान निकालना होता है। ऐसी परिस्थिति में, बहुत सारे देशों ने नियोजित विकास की प्रणाली को अपनाया। भारत में भी इस सम्बन्ध में पंचवर्षीय योजनाओं को अपनाया गया। इस प्रकार पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से अर्थव्यवस्था के विभिन्न सैक्टरों को संसाधनों का बँटवारा किया जाता है। इन योजनाओं में प्राथमिकताओं के आधार पर बड़े-बड़े कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं का प्रावधान किया जाता हैं।

प्रत्येक वर्ष प्रत्येक विभाग के कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं के लिए संसाधनों विस्त त बंटवारा वार्षिक बजट के द्वारा किया जाता है। बजट की प्रक्रिया में संसाधनों का बंटवारा भी प्राथमिकता के आधार पर किया जाता है तथा मुख्य कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं के लिए ही धन दिया जाता है। चुनाव की इस प्रक्रिया में कार्यक्रमों का मूल्यांकन तुलना के आधार पर किया जाता है तथा प्रत्येक कार्यक्रम में परियोजनाओं का मूल्यांकन भी तुलनात्मक ढ़ंग से किया जाता है। इस चुनाव के साथ-साथ, प्रत्येक परियोजना के खर्च के प्रत्येक मद की गहन जाँच पड़ताल की जाती है। नियोजन एंव बजट सम्बन्धी ये कार्य नियोजन आयोग, नियोजन मन्त्रालय एंव वित्त मन्त्रालय द्वारा की जाती है। प्राथमिकताओं के निर्धारण तथा नियोजन एंव बजट तैयार करने में क्योंकि अधिक चातुर्य की आवश्यकता होती है इसलिए यह कार्य नौकरशाहों एंव प्रशासकों के द्वारा, मन्त्रियों के पर्यवेक्षण, दिशा-निर्देशन एंव नियन्त्रण में किया जाता है।

अन्त, में तैयार की गई योजना एंव बजट के लिए संसद की सहमति की आवश्यकता होती है क्योंकि संसद नियोजन एंव बजट में प्रयोग किए जाने वाले धन की सरंक्षक है।

4. **परियोजना को लागू करना (Exectution of the Project)**

नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया की अन्तिम Stage परियोजना के लागू करने सम्बन्धी है। इस परियोजना को कुछ Activites के माध्यम से लागू किया जाता है। अगर परियोजना एक अस्पताल के निर्माण सम्बन्धी है तो इस में पहला step भूमि अधिग्रहण (Acquire) करना तथा बिल्डिंग का निर्माण करना है। इसके बाद , इस बिल्डिंग को furnish करने सम्बन्धी stage आती है जिसमें furniture, electriciy, water supply, sewerage आदि की व्यवस्था करना है। तीसरा step डाक्टर एंव स्टाफ के अन्य सदस्यों की भर्ती करने सम्बन्धी है। यह स्टाफ अन्य अस्पतालों से Deputation पर भी लाया जा

सकता है। फिर लैबोरेटरियों के लिए आवश्यक equipment भी खरीदे जाते हैं ताकि विभिन्न टेस्ट किए जा सकें। उपरोक्त सभी गतिविधियां पूरी करने के लिए विशेषीक त एंव अनुभवी लोक सेवकों की आवश्यकता होती है। बिल्डिंग निर्माण का कार्य Public works Department के इंजिनियरों की जिम्मेदारी होती है। इन सभी आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद स्वास्थ्य विभाग डाक्टरों का प्रबन्ध करता है। इस प्रकार किसी कार्यक्रम के तहत संचालित विभिन्न परियोजनाओं को लागू करने के लिए विभिन्न विभागों के लोक सेवक समन्वित ढ़ंग से कार्य करते हैं। ऐसे समन्वय को सुनिश्चित करने के लिए तथा विभिन्न परियोजनाओं को एक निश्चित समय में लागू करने के लिए, परियोजना के क्रियान्वयन के विभिन्न स्तरों पर कार्यरत कर्मचारी अपने उपरोक्त अधिकारियों को अपनी उपलब्धियों के विषय में समय-समय पर अपनी रिर्पोट सौंपते हैं। इन रिर्पोटों की जांच पड़ताल करके उच्च स्तरीय अधिकारी परियोजना के क्रियान्वयन पर अपना नियन्त्रण स्थापित करते हैं।

यहां यह विचारणीय है कि कुछ गतिविधियों को पूरा करने से एक परियोजना लागू हो जाती है और कुछ परियोजनाओं को पूरा करने से एक कार्यक्रम। इसी प्रकार कुछ कार्यक्रमों को पूरा करने से सम्पूर्ण नीति क्रियान्वित हो जाती है।

नीति क्रियान्वयन में समस्याएं (Problem Areas in Policy Implementation)

लोक नीति के क्रियान्वयन में सामान्यतः निम्नलिखित समस्याएं सामने आती हैं-

1. जनसहभागिता की कमी (Lack of People's participation)

नीति के क्रियान्वयन के स्तर पर प्रायः जन सहभागिता का अभाव पाया जाता है जो , नीति क्रियान्वयन की सबसे गम्भीर समस्या है। जनता की support के बिना सरकारा द्वारा लोक नीतियों को सफलतापूर्वक लागू करना असम्भव कार्य है। भारत में 1960 के दौरान जन सहयोग के अभाव में द्वितीय पंचवर्षीय योजना बुरी तरह असफल हुई। उसके बाद से हांलाकि भारत सरकार के द्वारा नीति क्रियान्वयन में जन सहभागिता को सुनिश्चित करने के सन्दर्भ में बहुत सारे प्रयास किए गए लेकिन इस सम्बन्ध में आज भी यह समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। भारत में आज भी विभिन्न नीतियों से सम्बन्धित कार्यक्रम एंव परियोजनाओं को पर्याप्त जनसहभागिता के अभाव में असफलता का मुँह देखना पड़ता है। आज नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया में जनसहभागिता की अत्याधिक आवश्यकता है और सरकार को इस दिशा में हर सम्भव प्रयास करना चाहिए।

2. पर्याप्त संसाधनों की उपलब्धता का अभाव

(Lack of availability of Sufficient Resources)

खासतौर पर विकासशील देशों में सरकार के स्तर पर नीतियों के क्रियान्वयन हेतू पर्याप्त संसाधनों का अभाव पाया जाता है जो नीति क्रियान्वयन की सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। ये संसाधन, मानवीय एंव भौतिक दोनों ही प्रकार के होते हैं। विकासशील देशों में नीति सम्बन्धी विभिन्न कार्यक्रमों एंव परियोजनाओं का निर्माण एंव क्रियान्वयन करने के लिए दोनों ही प्रकार के मानवीय एंव भौतिक संसाधनों का अभाव देखने को मिलता है जिसके फलस्वरूप विभिन्न योजनाएं एंव कार्यक्रम सफल नहीं हो पाते।

3. Policy Statement में अस्पष्टता (Unclarity and vagueness in the policy statement)

नीति क्रियान्वयन की अन्य समस्या Policy statementमें अस्पष्टता से जुड़ी है। आमतौर पर नीति की statement में या नीतिगत उद्देश्यों में कोई न कोई vagueness रह ही जाती है जो नीति क्रियान्वयन

के स्तर पर उद्देश्यों की प्राप्ति में अनेक तरह की समस्याओं को जन्म देती है। इसलिए नीति की statement एंव उद्देश्यों का स्पष्ट होना अति आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उच्च अधिकारियों द्वारा नीति क्रियान्वयन के दौरान निम्न स्तर पर कुछ दिशा-निर्देश भी जारी किए जाते हैं लेकिन अक्सर उनमें भी स्पष्टता का अभाव देखने को मिलता है। कई बार उनसे यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि field officers को 'क्या करना है', कितने समय में करना है, 'कैस करना है' आदि। ऐसे प्रश्न अगर Unanswered रह जाएं तो नीति को effective ढ़ंग से क्रियान्वित करना आसान नहीं होता।

4. **राजनैतिक दबाव सम्बन्धी समस्या (Problem of Political Pressure)**

नीति क्रियान्वयन की अन्य समस्या Policy Implementors पर राजनैतिक दबाव से जुड़ी समस्या है। राजनेता जन प्रतिनिधि होने के कारण आने अपने क्षेत्र के मतदाताओं को नीति के अधिकाधिक लाभ दिलवाने का प्रयास करते हैं। इस कार्य के लिए वे Policy Implementors पर राजनैतिक दबाव बनाने की कोशिश करते हैं। इस प्रकार का राजनैतिक दबाव नीति क्रियान्वयन प्रक्रिया को प्रभावित करता है।

Chapter - 19
विकास सम्बन्धी नियोजन
(Development Planning)

आधुनिक युग नियोजन का युग है। हाल ही में इसकी आवश्यकता विश्व के लगभग सभी देशों के द्वारा महसूस की गई है। लेकिन इसकी सबसे अधिक आवश्यकता, विकासशील देश, जो कि द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् विश्व के मानचित्र पर उभर कर आए, में महसूस की गई क्योंकि ये देश एक लम्बे समय तक साम्राज्यवादी शक्तियों के शोषण के शिकार रहे। आजादी के समय ये देश अनेक समस्याएं जैसे कि गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, सामाजिक एवं आर्थिक विषमताएं, अशिक्षा, स्वास्थ्य एवं जनसंख्या सम्बन्धी समस्या आदि से ग्रसित थे। ये समस्याएं एक दूसरे से सम्बन्धित थी तथा इनके निवारण हेतू नियोजन को अपनाना अत्याधिक आवश्यक बन गया। इसके साथ-साथ विकास करना भी इन देशों की अहमभूत आवश्यकता थी। इन देशों के प्रशासन, जिसे 'विकास प्रशासन'^की संज्ञा दी जाती है, का मुख्य लक्ष्य इनकी समस्याओं का समाधान करके, इन देशों में विकास कार्यों को बढ़ावा देना बन गया। इसे सीमित संसाधनों में तथा निश्चित समय में अधिकाधिक विकास लक्ष्यों की प्राप्ति करनी थी। इस सम्बन्ध में इन देशों में नियोजन की आवश्यकता को व्यापक रूप में स्वीकारा गया। इसे सभी समस्याओं एवं विकास प्रशासन के लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में संजीवनी माना गया।

अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition):–

साधारण शब्दों में, नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सीमित संसधानों में पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतू भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में किए जाने वाले कार्यो में से सर्वोत्तम विकल्प का चुनाव करने का निर्णय लेना है।

मिलेट के अनुसार, "प्रशासकीय प्रयत्न के उद्देश्यों को निश्चित करने तथा उनको प्राप्त करने के लिए उपयुक्त साधनों की प्राकल्पना करने वाली प्रक्रिया ही नियोजन है।

प्रो. अमरेश के अनुसारए "नियोजन उन भावी कार्यक्रमों के चयन एवं विकास की विधि है जिसके द्वारा एक स्पष्ट लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है।

सेक्लर-हडसन के अनुसार, "नियोजन भावी कार्य के लिए आधार की रूपरेखा बनाने की प्रक्रिया है।

हेनरी फेयोल के अनुसार, "नियोजन का अर्थ है 'पूर्व द ष्टि' (Pre-vision) जिससे अभिप्राय : है आगे की ओर देखना जिससे यह पता चल जाए कि क्या-क्या काम किया जाना है।

नियोजन की प्रक ति (Nature of Planning)

नियोजन की प्रक ति के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें कही जा सकती हैं -

1. नियोजन एक सतत प्रक्रिया है।

(Planning is a Contineous Process) –

नियोजन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है क्योंकि इसकी आवश्यकता प्रशासन में नीतियों के उद्देश्यों के निर्धारण से लेकर उनकी प्राप्ति तक बनी रहती है। हालांकि इसे समयावधि में बाँटा जा सकता है जैसे कि भारत में पंचवर्षीय योजनाओं का अपनाया जाना। लेकिन एक पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति के साथ ही दूसरी पंचवर्षीय योजना के उद्देश्य निर्धारित कर लिए जाते है। इस प्रकार नियोजन प्रक्रिया चलती रहती है और कभी नहीं रुकती।

2. नियोजन एक बौद्धिक क्रिया है।

(Planning is an Intellectual Process):–

नियोजन एक निरन्तर प्रक्रिया ही नहीं बल्कि यह एक बौद्धिक क्रिया भी है। योजनाएं विवेकपूर्ण एवं रचानात्मक चिन्तन के आधार पर तैयार की जाती है। वस्तुतः नियोजन में निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति की दिशा में विभिन्न वैकल्पिक नीतियों, कार्य पद्धतियों एवं कार्यक्रमों में से सर्वोत्तम का चयन करना होता है जिसके लिए पर्याप्त ज्ञान, अनुभव, विवेकशीलता एवं चिन्तन की आवश्यकता होती है।

3. गतिशील एवं लोचशील प्रक्रिया

(Dynamic and Flexible Process)

नियोजन एक गतिशील एवं लोचशील प्रक्रिया है। नियोजन का कार्य स दढ़ क्रियाशील प्रक ति का है इसमें समय तथा परिस्थितिओं के अनुरूप परिवर्तन होते रहते है। ऐसा कहा जाता है कि वह योजना, जिसे बदला न जा सके, एक अच्छी योजना नहीं होती। योजना में गतिशीलता के साथ-साथ लोचशीलता भी अनिवार्य है। योजना जितनी लचीली होगी, उतना ही उसका क्रियात्मक मूल्य बढ़ेगा। नियोजन में इतनी लोचशीलता होनी चाहिए कि किसी भी अवसर या घटना के अनुरूप वह अपने आपको परिवर्तित कर सके।

4. व्यापक एवं संगठित

(Comprehensive and Integrated)

नियोजन की प्रक ति का विश्लेषण करते हुए यह सहज ही कहा जा सकता है कि नियोजन एक व्यापक एवं संगठित कार्य है। इसकी आवश्यकता प्रत्येक क्षेत्र में होती है - चाहे वह सामाजिक संस्था हो या धार्मिक, व्यावसयिक हो या राजनैतिक, छोटी या बड़ी यही नहीं, नियोजन कार्य प्रशासन के शीर्ष के साथ-साथ अन्य स्तरों पर भी सम्पन्न किया जाता है। नियोजन के तहत विभिन्न कार्य योजनाएं एवं कार्यक्रम संगठित रूप में तैयार की जाती हैं क्योंकि इसका उद्देश्य बहुर्मुखी होता है।

5. लक्ष्य प्राप्ति में योगदान

(Contributes in Goal achievement)

नियोजन का मुख्य उद्देश्य उपक्रम के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में योगदान देना होता है। इसलिए यह केवल नीतियों, कार्यविधियों एवं कार्यक्रमों का ही निर्माण नहीं करता, बल्कि उनके कार्यान्वयन के लिए भी भरसक प्रयत्न करता है ताकि निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

6. सर्वप्रथम एवं सर्वोपरि कार्य

(Planning is the first and foremost function of Administration)

नियोजन प्रशासन का सर्वप्रथम एवं सर्वोपरि कार्य है क्योंकि नियोजन के अभाव में प्रशासन के अन्य कार्यो जैसे कि नियन्त्रण, पर्यवेक्षण, समन्वय, निदेशन आदि की कोई उपयोगिता नहीं होती। इसका

यह अर्थ नहीं है कि प्रशासन में अन्य कार्यो का महत्प नहीं है बल्कि महत्व की द ष्टि से ये सब कार्य नियोजन के बराबर हैं परन्तु नियोजन इन सबसे पहले जन्म लेता है और बाद में अन्य कार्य अस्तित्व में आते हैं। परिणामस्वरूप नियोजन सर्वप्रथम एवं सर्वोपरि कार्य बन जाता है।

नियोजन के प्रकार
(Types of Planning)–

नियोजन की प्रक्रिया किसी एक उद्देश्य की पूर्ति वाली न होकर वैकल्पिक उद्देश्यों की पूर्ति वाली होती है। इसी प्रकार नियोजन विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में भी अपनाया जाता है। कार्य की प्रक ति, उद्देश्य, समय एवं परिस्थिति क्षेत्र की भिन्नता के कारण नियोजन के प्रकार भी भिन्न-भिन्न हो सकते है। नियोजन के प्रमुख प्रकारों का वर्णन निम्नलिखित है-

1. भौतिक एवं वित्तीय नियोजन

(Physical and Financial Planning)–

नियोजन प्रक्रिया के भौतिक रूप के अन्तर्गत योजना के लक्ष्यों का निर्धारण भौतिक वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन के रूप में किया जाता है। इस नियोजन में सरकार संसाधनों को अपने अधि ाकार में लेकर योजना के अनुरूप उसक उपयोग करने में समर्थ होती है। राशनिंग व लाइसेंस भौतिक नियोजन के उपकरण हैं।

वित्तीय नियोजन का सम्बन्ध नियोजन की उस तकनीक से होता है जिसमें साधनों का विभाजन मुद्रा के रूप में होता है। इसके उपकरण भौतिक स्वरूप के होते हैं।

भौतिक एवं वित्तीय नियोजन में बहुत अधिक मौलिक अन्तर नहीं है। किसी भी देश की भौतिक योजना को मुद्रा में व्यक्त करना पड़ता है और वित्तीय योजना का सम्बन्ध अन्ततः भौतिक वस्तुओं और साधनों से होता है। सामान्यतः भौतिक नियोजन उन राष्ट्रों के लिए उपयोगी है जहां विकास का स्तर नीचा है जबकि वित्तीय आयोजन वित्तीय द ष्टि से सुद ढ़ राष्ट्रों के लिए उपयोगी है।

2. अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन नियोजन

(Short-term and long term planning)

नियोजन प्रक्रिया में प्रयुक्त समयावधि के आधार पर नियोजन को अल्पकालीन व दीर्घकालीन नियोजन में बाँटा जा सकता है। अल्पकालीन नियोजन का निर्माण दीर्घकालीन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतू किया जाता है। इसकी समयावधि बहुत कम होती है। अल्पकालीन योजना को वार्षिक नियोजन भी कहा जाता है। इसमें लम्बे चौड़े स्तर पर सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की अपेक्षा नहीं की जाती। अल्पकालीन नियोजन ऐसे कार्यो के सम्बन्ध में किया जाता है जो अल्पावधि में पूरे करने होते हैं।

दीर्घकालीन नियोजन को समयावधि लम्बी होती है। यह 20-25 वर्ष भी हो सकती है। इसमें दीर्घकालीक लक्ष्यों का निर्धारण करके आवश्यक सामाजिक, संस्थागत एवं सरंचनात्मक परिवर्तन लाने के प्रयास किए जाते हैं। यह Perspective Planning (द ष्टि नियोजन) से सम्बन्धित होता है।

3. व्यापक एवं आंशिक नियोजन

(Comprehensive and Partial Planning)

नियोजन का यह वर्गीकरण योजना के कार्य क्षेत्र के आधार पर किया जाता हैं। व्यापक नियोजन में आर्थिक जीवन के विविध क्रियाकलापों एवं क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाता है जबकि आंशिक नियोजन में कुछ विशिष्ट समस्याओं और क्षेत्रों का ही समावेश किया जाता है।

4. एकस्तरीय एवं बहुस्तरीय नियोजन

(Single-level and Multi level Planning)

नियोजन प्रादेशिक अथवा क्षेत्रीय सीमा के आधार पर दो ढंग - एक स्तरीय व बहुस्तरीय, का हो सकता है। एकस्तरीय नियोजन वह है जिसमें एक ही राजनीतिक, प्रशासनिक व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश के लिए नियोजन किया जाता है।

बहुस्तरीय नियोजन वह है जिसमें योजनाओ का निर्माण विभिन्न प्रादेशिक सीमाओं के अन्दर अलग-अलग किया जाता है। इसके अन्तर्गत योजनाएं राज्य, जनपद एवं विकास खण्ड आदि के स्तर पर बनाई जाती हैं।

5. ओदशात्मक एवं सांकेतिक नियोजन

(Imparative and Indicative Planning)

नियोजन के संगठनात्मक द ष्टिकोण से दो रूप हैं - आदेशात्मक एवं सांकेतिक नियोजन। आदेशात्मक नियोजन वह है जिसमें संव द्धि का प्रेरणास्त्रोत और आधार अर्थव्यवस्था का सार्वजनिक क्षेत्र होता है। इसमें उत्पादन के संसाधनों पर राज्य का स्वामित्व होता है तथा उत्पाद की समस्त अवस्थाएँ एव वितरण प्रणाली सरकार द्वारा नियन्त्रित होती है।

इसके विपरीत सांकेतिक नियोजन वह है जिसमें संव द्धि का प्रेरणास्त्रोत और आधार निजी क्षेत्र होता है। इस नियोजन के तहत सरकार निजी क्षेत्र को स्पष्ट आदेश न देकर केवल उनकी कार्य दिशा एवं कार्य पद्धति के प्रति संकेत करती है।

नियोजन के उद्देश्य
(Objectives of Planning)

विकास प्रशासन के लिए नियोजन अत्याधिक आवश्यक है। विकासशील देशों में नियोजन का मुख्य उद्देश्य चहुमुखी विकास करना है। नियोजन उपलब्ध सीमित संसाधनों का अधिकाधिक प्रयोग करके राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देता है। राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में नियोजन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नियोजन के मुख्य उद्देश्यों का वर्णन निम्न प्रकार से है -

1. आर्थिक विषमता कम करना

(Reducing Economic Inequality)

नियोजन का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता को कम करना है। आर्थिक विषमता का अभिप्रायः धन एवं सम्पति कुछ ही लोगों के हाथों में केन्द्रिक त होने से है। यदि ऐसा होगा तो समाज के विभिन्न वर्गो में संघर्ष होगा तथा सामाजिक तनाव में बढ़ोतरी होगी। नियोजित विकास प्रक्रिया, निषेधात्मक उपाय अपनाकर एकाधिकारी प्रव त्तियों पर अंकुश लगाती है। इसके साथ-साथ प्रगतिशील करारोपण (Progressive Taxation) द्वारा तथा धनात्मक उपायों से गरीब लोगों के कल्याण हेतू विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन करके विषमताओं को कम करने का प्रयास करती है।

2. संतुलित क्षेत्रीय विकास

(Balanced Regional Development)

विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था में प्रायः क्षेत्रीय विकास स्तर पर आसमानता देखने को मिलती है। इन अर्थव्यवस्थाओं में कुछ क्षेत्र अधिक विकसित हो जाते हैं। तथा कुछ भाग पिछे रह जाते है। इस असामनता के लिए कुछ क्षेत्रीय या आकस्मिक कारक उत्तरदायी हो सकते हैं। इस क्षेत्रीय असमानता को दूर करने हेतू नियोजित विकास प्रक्रिया अपनाई जाती है। इसके तहत पिछड़े क्षेत्रों

के विकास के सम्बन्ध में विशेष कार्यक्रम चलाए जाते हैं ताकि संतुलित क्षेत्रीय विकास सम्भव हो सके।

3. राष्ट्रीय संसाधनों का उचित प्रयोग

(Optimum Utilization of National Resources)

विकासशील देशों में प्रशासन के पास सीमित संसाधन पाए जाते हैं और इसे इन्ही संसाधनों से ही राष्ट्रीय विकास करना होता है। इसके लिए उपलब्ध संसाधनों का उचित प्रयोग अनिवार्य है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतू इन देशों में नियोजित विकास प्रक्रिया अपनाई जाती है। इसके साथ नियोजन का उद्देश्य राष्ट्रीय आय की व द्धि करके लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना भी है।

5. पूर्ण रोजगार

(Full Employment)

पूर्ण रोजगार से अभिप्रायः एक ऐसी सामाजिक स्थिति से है जहां बेकारी न के बराबर हो या जहां श्रमिकों की मांग सप्लाई से अधिक हो। दूसरे शब्दों में, जहां बेरोजगारी कम से कम हो और बहुत ही कम समय के लिए हो। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि पूर्ण रोजगार में बेरोजगारी बिल्कुल नहीं होती बल्कि इसमें भी बेरोजगारी के कुछ अंश पाए जाते हैं। विकासशील देशों में नियोजित विकास प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य पूर्ण रोजगार उपलब्ध कराकर बेरोजगारी की समस्या का समाधान निकालना है।

6. आत्म निर्भरता

(Self-Reliance)–

आत्म-निर्भरता से अभिप्रायः स्वालम्बी बनने से है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि कोई देश विदेशी सामान, टैक्नालोजी एवं पूंजी का इस्तेमाल ही न करे। आधुनिक युग में प्रत्येक देश किसी न किसी रूप में एक-दूसरे पर निर्भर है। यदि एक देश विदेशी सहायता को परिपूरक के रूप में प्रयोग करता है तो आत्म निर्भरता बनी रहेगी। लेकिन अगर एक देश दैनिक उपयोग की वस्तुओं खाद्य सामग्री आदि के लिए विदेशों पर निर्भर करता है तो आत्मनिर्भर नहीं कहा जा सकता। नियोजन का उद्देश्य अर्थव्यवस्था की तीव्र विकास की गति प्रदान करके आत्मनिर्भरता के निकट पहुँचाना होता है ताकि राष्ट्र ज्यादातर पूंजीगत एवं उपभोक्ता वस्तुओं का स्वयं उत्पादन कर सके।

7. सामाजिक कल्याण

(Social Welfare) –

नियोजन का अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य समाज के विभिन्न वर्गों का कल्याण करना है। इसके लिए प्रशासन के द्वारा अनुसूचित जाति एवं जनजाति, अल्पसंख्क वर्ग, पिछड़ा वर्ग, महिलाओं एवं बच्चों के कल्याण हेतू अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम नियोजन के माध्यम से बनाए जाते हैं। इसके साथ-2 कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा के लिए अनेक कार्यक्रम जैसे कि पैन्सन, बीमाँ, शिक्षा, आवास और आश्रितों को रोजगार प्रदान करना आदि चलाए जाते हैं।

Chapter - 20

नियोजन प्रक्रिया; निर्माण क्रियान्वन एवं मूल्यांकन

(Planning Process: Formulation Implementation and Evaluation)

ऐतिहासिक प ष्ठभूमि
(Historical Perspective)

भारत में नियोजन को हांलाकि आजादी के बाद ही संगठित रूप में अपनाया गया लेकिन देश की उन्नति एंव विकास के सम्बन्ध में नियोजन को अपनाने के पक्ष में आजादी से पहले भी कई विचार उत्पन्न हो चुके थे। सर्वप्रथम श्री एम0 विश्वेशरैया ने 1934 में अपनी लोकप्रिय पुस्तक 'इकोनोमी फॉर इण्डिया' (Planned Economy for India) प्रकाशित की जो भारत के आर्थिक विकास के सम्बन्ध में योजना की प्रथम रूपरेखा थी। वास्तव में एम0 विश्वेशरैया को भारत में नियोजन का सूत्रधार माना जाता है। उसके पश्चात् 1938 में कांग्रेस पार्टी द्वारा पं0 जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में राष्ट्रीय नियोजन समिति (National Planning Committee) की स्थापना की तथा इसकी अनेक उप समितियाँ बनाई गई जो उस समय वर्तमान में योजना आयोग के कार्यकारी दल (Working groups) की तरह कार्य करती थी। लेकिन दूसरे विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप यह समिति अपने कार्य ठीक प्रकार से न कर सकी।

कांग्रेस पार्टी की नियोजन के सम्बन्ध में दिलचस्पी का प्रभाव अन्य पार्टियों एंव समाज के विभिन्न वर्गों पर भी पड़ा । यहां तक कि उद्योगपति भी इस प्रभाव से अछूते नहीं रहे। लोगों के बढ़ते दबाव के परिणामस्वरूप अंग्रेज सरकार ने 1944 में नियोजन एंव विकास आयोग (Planning and Development Commission) की स्थापना की और प्रान्तीय सरकारों को अपनी योजनाएं तैयार करने का आदेश दिया। इसके अतिरिक्त इसी वर्ष (1944) में तीन प्राइवेट योजना बम्बई योजना ,जन योजना एंव गांधी योजना , अलग-अलग द ष्टिकोणों के साथ प्रकाशित हुई। बम्बई योजना(Bombay Plan) आठ उद्योगपतियों जिनमें जी. आर. डी. टाटा, जी. डी, बिरला तथा श्रीराम के नाम उल्लेखनीय थे, ने तैयार की। 'जन योजना'(Peoples Plan), श्री एम.एन. राय तथा उनके रैडीकल दल द्वारा तैयार की गई और गांधी योजना (Gandhi Plan) श्रीमन्नारायण (Shriman Narayan) ने तैयार की। ये तीनों योजनाएं देश की राजनैतिक स्थिति के कारण व्यवहारिक रूप में परिवर्तित नहीं की जा सकी। 1946 में अन्तरिम सरकार द्वारा एक सलाहकार नियोजन बोर्ड (Advisory Planning Board) की स्थापना की गई। श्री K.C. Neogy इसके अध्यक्ष बनाए गए। इस बोर्ड का मुख्य उद्देश्य आर्थिक नीतियों का निर्धारण करना था। दिसम्बर 1946 में इसने योजना आयोग की स्थापना के सन्दर्भ में अपने सुझाव दिए। इसकी सिफारिशों के मध्यनजर 15 मार्च 1950

को योजना आयोग का गठन किया गया तथा देश की जर्जर अर्थव्यवस्था के पुर्ननिर्माण तथा तीव्र गति से आर्थिक विकास प्राप्ति हेतू जवाहर लाल नेहरू के नेत त्व में पंचवर्षीय योजनाओं को चलाने का निर्णय लिया गया।

भारत में नियोजन प्रक्रिया

(Planning Process in India)

नियोजन प्रक्रिया एक जटिल एंव गम्भीर प्रक्रिया हैं। इसकी मुख्यतः निम्नलिखित तीन stages हैं-

1. योजना निर्माण (Plan Formulation)
2. योजना क्रियान्वयन (Plan Implementation)
3. योजना मूल्यांकन (Plan Evaluation)

1. योजना निर्माण (Plan Formulation)

भारत में योजना का निर्माण केन्द्र , राज्य एंव जिला स्तर पर किया जाता है जिसका वर्णन इस प्रकार है -

(i) केन्द्रीय नियोजन

(National Planning)

भारत में नियोजन समवर्ती सूची का विषय होने के कारण केन्द्र एंव राज्य दोनों ही योजना निर्माण का कार्य करते हैं। केन्द्र बड़े-बड़े उद्योग , रेलवे , बन्दरगाह, राष्ट्रीय राजमार्ग , जलयान संचार, मुद्रा मौलिक एंव राजस्व या कर नीति आदि राष्ट्रीय स्तर के विषयों के सम्बन्ध में नियोजन करता है जबकि राज्य क षि, सिंचाई ,सड़क, यातायात छोटी बन्दरगाह आदि राज्य स्तर के विषयों के सम्बन्ध में नियोजन करता है। केन्द्र राज्य के नियोजन को राष्ट्र के नियोजन के साथ भी समन्वित करता है। केन्द्र सरकार राष्ट्रीय नियोजन के सम्बन्ध में पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण करती है जिसमें केन्द्र, केन्द्र शासित प्रदेशों, राज्य सरकारों एंव प्राइवेट सैक्टर विशेषतौर पर Corporate Sector के लिए नियोजन एंव सम्भावित मदद का विवरण होता है। ये योजनाएं वार्षिक योजनाओं (Annual Plans) की मदद से लागू की जाती हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं की निर्माण-प्रक्रिया

(Formulation of Five year Plans)

पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माण की प्रक्रिया काफी Time Consuming होने के कारण, इसके लागू करने से 2 या 3 वर्ष पहले शुरू की जाती है। इनके निर्माण के समय, पिछली योजना की उपलब्धियों का Appraisal, उपलब्ध संसाधनों का मूल्यांकन, मुख्य वर्तमान समस्याओं की पहचान तथा भविष्य में growth हेतू क्या नीतियां एंव तौर तरीके अपनाए जा सकते हैं आदि का विश्लेषण किया जाता है। इस कार्य में बहुत सारी एजेन्सियां जैसे कि योजना आयोग, राष्ट्रीय विकास परिषद, केन्द्र एंव राज्यों के मन्त्रालय, प्राइवेट सैक्टर के प्रतिनिधि, संसद शोध संस्थान, प्रेस आदि अपनी प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

भारत में पंचवर्षीय योजना निर्माण प्रक्रिया में निम्नलिखित 5 चरण सम्मिलित हैं-

Approach Paper तैयार करना

(Preparation of approach paper)

राष्ट्रीय उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए योजना आयोग के द्वारा पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में Perspective targeting की जाती है। इसके लिए अर्थव्यवस्था का पुर्नावलोकन एंव संसाधनों की उपलब्धता के सम्बन्ध में बहुत सारे अध्ययन किए जाते हैं जिनकी मदद से कुछ निष्कर्ष निकाले

जाते हैं जो अगली पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में General Approach के विकास में कारगर भूमिका निभाते हैं। इन निष्कर्षो के आधार पर एक 'Approach Paper' तैयार किया जाता है जिसमें अर्थव्यवस्था की दर एंव योजना की अन्य प्राथमिकताओं एंव उद्देश्यों को दर्शाया जाता है। इसके पश्चात् यह मंत्री परिषद तथा राष्ट्रीय विकास परिषद के पास अन्तिम मंजूरी के लिए भेजा जाता है। यह Approach paper पंचवर्षीय योजना निर्माण में एक Basic guiding framework के रूप में कार्य करता है।

2. Draft Memorandum तैयार करना

(Preparation of Draft Memorandum)

राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा मंजूर प्रस्तावित विकास की दर के परिप्रेक्ष्य में योजना का Draft Memorandum तैयार किया जाता है। केन्द्र के प्रत्येक महत्वपूर्ण सैक्टर के लिए योजनाएं, योजना आयोग एंव केन्द्रीय मन्त्रालयों में गठित किए गए अनेक केन्द्रीय कार्यकारी समूहों (Central Working groups) के द्वारा तैयार की जाती हैं। ये कार्यकारी समूह विशेषज्ञों, अर्थशास्त्रियों, मंत्रालय के सम्बन्धित officials and non offcials एंव मन्त्रालय, योजना आयोग व वित मन्त्रालय के प्रतिनिधि आदि से मिलकर बने होते हैं। ये प्रत्येक सैक्टर की आवश्यकताओं एंव उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखते हुए सम्बन्धित सैक्टर के लिए Guidelines तैयार करते हैं। इसके साथ-साथ राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेशों की योजनाएं उनसे सम्बन्धित नियोजन विभागों के द्वारा तैयार की जाती हैं। योजना आयोग राज्य एंव केन्द्र शासित प्रदेशों की सरकारों से भी उनकी Perpective plan के ढ़ांचे के सम्बन्ध में आवश्यक विवरण प्राप्त करता है।

कार्यकारी समूहों के द्वारा प्रत्येक सैक्टर के लिए तैयार की गई Guidelines एंव राज्य और केन्द्रशासित प्रदेशों की सरकारों से प्राप्त Prospective Plan सम्बन्धी विवरण के आधार पर योजना आयोग Draft Memorandum तैयार करता है जिसमें योजना की मुख्य विशेषताओं को दर्शाया जाता है। इसके पश्चात् इसे मंत्रीमण्डल एंव राष्ट्रीय विकास परिषद के पास मंजूरी के लिए भेजा जाता है।

3. पंचवर्षीय योजना का Draft तैयार करना

(Preparation of a Draft Five-year Plan)

योजना आयोग द्वारा तैयार किए गए प्रतिवेदन प्रारूप (Draft Memorandum) पर राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा की गई विवेचना व टिप्पणियों को ध्यान में रखकर पंचवर्षीय योजना का प्रारूप तैयार किया जाता है। पंचवर्षीय योजना के इस

Draft outline (रूपरेखा का प्रारूप) में विभिन्न क्षेत्रों के कार्यक्रमों की विभिन्न विशेषताओं का समावेश तथा उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में अपनायी जाने वाली मुख्य नीतियों को इसमें सम्मिलित किया जाता है। केन्द्र एंव राज्य सरकारें Draft की इस रूप रेखा पर Seminars एंव Discussions का आयोजन करती हैं। केन्द्रीय मंत्रालय एंव राज्य सरकारें इस सम्बन्ध में अपनी राय व्यक्त करत हैं। इसके पश्चात् इसे राष्ट्रीय विकास समिति के सामने प्रस्तुत किया जाता है। संसद सदस्यों की एक अनौपचारिक सलाहकार समिति एंव समूची संसद भी इस पद विचार करती है।

4. पंचवर्षीय योजनाएं की अन्तिम रिर्पोट तैयार करना

(Preparation of the final report on the Five-years Plan)

योजना निर्माण की चौथी stage का सम्बन्ध पंचवर्षीय योजना की अन्तिम रिर्पोट तैयार करने से है योजना आयोग सम्बन्धित केन्द्रीय मन्त्रालयों के साथ Meeting करके विभिन्न Sectoral plans के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करता है। यह विचार विमर्श अनुमानित संसाधनों में उनके Targets की प्राप्ति की दिशा में किए जाते हैं। योजना आयोग राज्य सरकारों के प्रतिनिधियों और उसके बाद मुख्य

मन्त्रियों के साथ मिलकर राज्य योजनाओं के सम्बन्ध में संसाधनों की उपलब्धता के बारे में अनुमान लगाता है तथा अतिरिक्त संसाधनों के हस्तांतरण के सम्बन्ध में उपाय सुझाता है।

राज्य तथा संघीय मन्त्रालयों द्वारा अपनी-अपनी योजनाएं योजना आयोग के सम्मुख प्रस्तुत करने के बाद विभिन्न योजनाओं, कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं को एकीक त योजना में गूँथ कर, पंचवर्षीय योजना की अन्तिम रिर्पोट तैयार की जाती है। इसके पश्चात् इसे प्रकाशित कर दिया जाता है और यह लोक चर्चा का विषय बन जाता है। प्रेस, राजनीतिक दल,व्यापार मण्डल, वाणिज्य संगठन तथा विभिन्न दबाव समूह इस पर अपनी-अपनी टिप्पणियाँ देने में स्वतन्त्र होते हैं।

5. योजना का अन्तिम प्रारूप तैयार करना

(Prepartion of Final Plan Document)

योजना आयोग विभिन्न वर्गो से प्राप्त विविध टिप्पणियों पर व्यापक विचार-विमर्श के पश्चात् एक प्रपत्र जारी करता है जिसमें योजना की मुख्य विशेषताएं समस्याएं नीति-निर्देश एंव नीति कार्यक्रम सम्मिलित होते हैं यह प्रपत्र मंत्री परिषद के सामने विचारार्थ रखा जाता है। इसके पश्चात् योजना का अन्तिम प्रारूप तैयार किया जाता है जो प्रपत्र के निष्कर्षो पर आधारित होता है। इस प्रारूप पर तब कैबिनेट की सहमति ली जाती है। अब इसे राष्ट्रीय विकास समिति के पास भेजा जाता है जो अपनी सहमति बिना संशोधन किए या कुछ संशोधन के साथ दे देती है। राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा स्वीकार किए जाने के पश्चात् इसे प्रधानमन्त्री द्वारा संसद में पेश किया जाता है संसद विचार-विमर्श के पश्चात् योजना को अपनी स्वीक ति देती है।

राज्य नियोजन
(State Planning)

प्रत्येक राज्य में अपनी योजनाओं के निर्माण हेतू एक नियोजन एजेन्सी एंव नियोयन प्रक्रिया पाई जाती है। राज्य स्तर पर योजना का निर्माण योजना आयोग से प्राप्त मुख्य Guidelines तथा राज्य की मन्त्रिपरिषद से प्राप्त General directives की देख रेख में किया जाता है। राज्य स्तरीय योजनाओं में प्रत्येक सैक्टर, जिला एंव ब्लाक स्तर पर नियोजन का सविस्तार विवरण दिया जाता है। इनमें राज्य स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का अनुमान लगाया जाता है तथा अतिरिक्त संसाधन जुटाने के लिए तरीके सुझाए जाते हैं। प्रायः राज्य स्तरीय नियोजन को योजना आयोग के साथ सविस्तार discuss किया जाता है ताकि नियोजन सम्बन्धी उद्देश्यों की उपलब्ध संसाधनों में प्राप्ति की जा सके जिससे विकास प्रक्रिया की Consistency को secure किया जा सके।

आरम्भ से ही राज्य स्तर पर योजना निर्माण के लिए राज्य नियोजन विभाग होता है। राज्य स्तर पर योजना आयोग जैसी कोई भी संस्था न होने के कारण योजना आयोग के द्वारा आरम्भ से ऐसी ही संस्था की आवश्यकता महसूस की गई। 1962 में योजना आयोग द्वारा इस सम्बन्ध में सिफारिश भी की गई। राज्य स्तर पर नियोजन के सम्बन्ध में ऐसे Experts निकाय की लम्बे समय तक अनदेखी न की जा सकी और 1972 में योजना आयोग ने राज्य नियोजन तन्त्र को सुद ढ़ बनाने की दिशा में Guidelines जारी की और प्रत्येक राज्य में नियोजन के शिखर बिन्दु पर राज्य योजना बोर्ड (State Planning Boards) की स्थापना के सम्बन्ध में सुझाव दिए। परिणामस्वरूप कुछ राज्य के द्वारा इन बोर्डो (SPBS) की स्थापना योजना कार्यक्रमों एंव स्कीमों के निर्माण, पुर्नावलोकन एंव मूल्यांकन के सम्बन्ध में की गई। 1988 में परिणामस्वरूप सरकारिया कमीशन (Sarkaria Commission) की रिर्पोट में यह Point out किया गया कि राज्य नियोजन बोर्डो की स्थापना लगभग सभी राज्यों द्वारा कर दी गई हैं। लेकिन नियोजन का कार्य आज भी राज्य नियोजन विभाग द्वारा किया जाता है। ये बोर्ड नियोजन सम्बन्धी मामलों में नियोजन विभाग की मदद करते हैं तथा तकनीकी प्रक ति के कार्यो का निष्पादन करते हैं। इन बोर्डो को राज्य स्तर पर पूर्ण एंव सही मायने में Status and Authority की

प्राप्ति नहीं हो पाई हैं । सरकारिया कमीशन ने इन्हें योजना आयोग की तर्ज पर दर्जा दिए जाने की सिफारिश भी की।

हांलाकि आज भी राज्य स्तर पर योजना निर्माण की Machiney एकरूप नहीं है क्योंकि कुछ राज्यों में यह अकेले योजना विभाग द्वारा की जाती है। जबकि कुछ राज्यों में दोनों ही इसमें भाग लेते हैं।

राज्य स्तर पर योजना निर्माण में राज्य नियोजन विभाग (State Planning Department) एक अहमभूत भूमिका निभाता है। यह सीधे तौर पर मुख्यमंत्री या राज्य मन्त्री के तहत कार्य करता है। यह विभाग योजना आयोग एंव राज्य के अन्य विभागों के मध्य योजक (Link) का कार्य करता है। यह विभिन्न विभागों के विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को समन्वित करके पूरे राज्य के लिए विकास योजनाओं का निर्माण करता है। योजना बोर्ड विभाग केन्द्र में योजना आयोग की तरह विशेषीक त कार्यकारी समूहों (Specialised working groups) की स्थापना करते हैं जो राज्य की अर्थव्यवस्था, विभिन्न विभागों के प्रस्तावों एंव नियोजन सम्बन्धी अन्य पहलुओं की जांच करते हैं। ये कार्यकारी समूह एंव योजना आयोग के views पर भी विचार-विमर्श करते हैं। इसके पश्चात् ये समूह अपने निष्कर्ष (findings) राज्य योजना बोर्ड विभाग को सौंपते हैं। तब ये बोर्ड विभाग इन निष्कर्षो, योजना आयोग से प्राप्त Guidelines एंव राज्य मन्त्रिपरिषद से प्राप्त Directives (दिशा-निर्देशन) के आधार पर राज्य सम्बन्धी योजना तैयार करते हैं। इसके पश्चात् यह योजना मन्त्रि परिषद के सम्मुख पेश की जाती है। मन्त्रि परिषद की सहमति के बाद इसे राज्य विधानपालिका की सहमति के लिए भेजा जाता है।

जिला स्तरीय नियोजन
(District Planning)

राज्य स्तर के नीचे 1992 के 74वें संविधान संशोधन से पहले, जिला स्तर पर कुछ ही राज्यों में जिला नियोजन समितियाँ (District Planning Commitees-DPCs) पाई जाती थी। लेकिन 74 वें संविधान संशोधन के पश्चात् विकेन्द्रिक त नियोजन हेतू इन समितियाँ का गठन प्रत्येक राज्य के लिए आवश्यक हो गया हैं। आज प्रत्येक राज्य में जिला-नियोजन समितियाँ पाई जाती हैं जो गांव,ब्लाक एंव जिला पर नियोजन के लिए उत्तरदायी हैं। इस स्तर पर नियोजन विभिन्न विभागों के विकास अधिकारियों एंव बहुत सारे गैर-अधिकारी प्रतिनिधियों के द्वारा मिलकर किया जाता है। जिला विकास अधिकारी जिला स्तरीय नियोजन व ब्लाक विकास अधिकागण ब्लाक स्तरीय नियोजन तैयार करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ये अधिकारीगण अपने-अपने स्तर पर संसाधनों एंव आश्यकताओं का मूल्यांकन करते है और उनके अनुरूप विभिन्न कार्यक्रम एंव कार्ययोजनाएं, जिला एंव खण्ड के विकास हेतू तैयार करते हैं।

योजना क्रियान्वयन
(Plan Implementation)

योजना क्रियान्वयन, नियोजन प्रक्रिया का एक आवश्यक एंव महत्वपूर्ण अंग है। योजना चाहे कितनी भी अच्छी क्यों न हो लेकिन अगर इसका क्रियान्वयन में सावधानी न बरती जाए तो यह सफल नहीं हो सकती। अतः योजना की सफलता, उसके सही ढ़ंग से क्रियान्वित किए जाने से सम्बन्धित है। योजनाओं के लागू करने में अनेक कार्यकारी संस्थाओं का हाथ होता है। केन्द्रीय, राज्य मन्त्रालय एंव विभाग, स्थानीय एंव क्षेत्रीय संस्थाएँ , नागरिक एंव उनका सहयोग आदि इनके प्रभावशाली ढ़ंग से क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी होते हैं।

संसद की मंजूरी के बाद, योजना का अन्तिम रूप (Final Plan) केन्द्रीय मन्त्रालयों एंव राज्य सरकारों को भेज दी जाती हैं। योजना के क्रियान्वयन की प्रक्रिया केन्द्रीय वित मन्त्रालय एंव राज्य वित विभागों के द्वारा सम्बन्धित केन्द्रीय मन्त्रालयों एंव राज्य विभागों को योजना लागू करने के सम्बन्ध में पैसा

दिए जाने के साथ आरम्भ हो जाती है। इसके लिए योजना के क्रियान्वयन के प्रत्येक स्तर पर Political elities, नौकरशाही एंव नागारिकों का पूर्ण सहयोग एंव प्रतिबद्धता Commitment की आवश्यकता होती है।

भारत में हांलाकि योजनाएं पंचवर्षीय आधार पर बनाई जाती हैं परन्तु उन्हें क्रियान्वित वार्षिक आध ाार पर ही किया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि पंचवर्षीय योजनाओं को पूर्ण रूप से एक साथ लागू नहीं किया जा सकता। अतः इन्हें प्रभावशाली ढ़ंग से लागू करने के लिए वार्षिक योजनाओं में बांटा जाता है। इन वार्षिक योजनाओं के सम्बन्ध में आवश्यक प्रावधान करके इन्हें लागू किया जाता हैं। भारत में क्योंकि वित वर्ष 1 अप्रैल से आरम्भ होता है, इसलिए वार्षिक योजनाओं पर कार्य पूर्व वर्ष के सितम्बर माह में ही कार्य आरम्भ हो जाता है। योजना आयोग, केन्द्रीय मन्त्रालयों एंव राज्य सरकारों को वार्षिक योजनाओं के मुख्य उद्देश्य एंव सहयोग राशि के रूप में सम्भावित सहायता (Quantum of assitance they may expect) को Indicate करता है। केन्द्र एंव राज्य सरकारें अपनी वार्षिक योजनाओं का ड्राफ्ट प्रस्तावित करती हैं जिसमें उनसे सम्बन्धित योजना से जुड़े विभिन्न पहलुओं का वर्णन किया जाता हैं । केन्द्रीय मन्त्रालयों एंव राज्य सरकारों के ये Draft प्रत्येक वर्ष नवम्बर, दिसम्बर में होने वाली केन्द्र एंव राज्य सरकारों की केबिनेट की बैठकों (Cabinet Meetings) में Discuss किए जाते है व उन्हें फरवरी माह में अन्तिम रूप दिया जाता है और इसके पश्चात् इन्हें बजट के साथ एकीक त (Intergrate) कर दिया जाता है। केन्द्र एंव राज्य सरकारों का बजट उनकी वार्षिक योजनाओं पर ही निर्भर करता है।

इस प्रकार बजट के साथ Integrate करके वार्षिक योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है और वार्षिक योजनाओं की मदद से पंचवर्षीय योजनाओं के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। इन योजनाओं के लिए संघीय एंव राज्य सरकार उत्तरदायी होती हैं। इनके क्रियान्वयन में योजना आयोग का प्रत्यक्षतः कोई दायित्व नहीं होता। फिर भी , कार्यक्रमों के सम्पादन के लिए आयोग के परामर्शदाता होते हैं जो राज्यों का दौरा करते हैं, निरन्तर हो रही प्रगति का अनुमान लगाते हैं और कार्यक्रमों को अग्रसारित करने के लिए आवश्यक सिफारिशें करते हैं। जनता को योजना से परिचित कराने और उसके परिपालन में लोक सहयोग को प्रोत्साहन देने के लिए आयोग ने सूचना तथा प्रकाशन का कार्य भी अपने हाथों में ले रखा है।

नियोजन प्रक्रिया का यह भाग सबसे महत्वपूर्ण अंग होने के बावजूद भारत में इसकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है˙ इसमें प्रशासकीय अकुशलता, जटिल व दोषपूर्ण कार्यविधि तथा समन्वय का अभाव पाया जाता हैं। अतः भारत में यह काफी कमजोर अंग माना जाता है। जिसके परिणामस्वरूप लगभग सभी पंचवर्षीय योजनाएँ अपने लक्ष्यों की पूर्ण रूप से प्राप्ति में असमर्थ रही।

3. योजना का मूल्यांकन

(Plan Evaluation)

योजना का मूल्यांकन करना नियोजन प्रक्रिया का अन्तिम स्तर है। इसमें तीन बातों की जांच की जाती है-

1. योजना के प्रभाव का मूल्यांकन

(Evaluation of Plan Impacts)

जिन लक्षित समूहों या क्षेत्र के लिए योजना व इसके कार्यक्रम तैयार किए गए थे, उन पर इसका कैसा प्रभाव पड़ा? इसके क्रियान्वयन से लक्षित वर्ग लाभन्वित हुआ या उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा आदि के सम्बन्ध में जानकारी हासिल करके योजना के प्रभाव का मूल्यांकन किया जाता है। इस जानकारी के लिए Survey Research या लाभर्थियों से आंकड़े इकट्ठे किए जाते हैं।

2. उद्देश्य प्राप्ति सम्बन्धी मूल्यांकन

(Evaluating the Goal-realisation)

इस प्रकार का मूल्यांकन योजनाओं एंव कार्यक्रमों को उनके उद्देश्यों के सम्मुख रखकर उनकी प्राप्ति सम्बन्धी मूल्यांकन किया जाता है। इस सम्बन्ध में योजना के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की तुलना वास्तव में प्राप्त उद्देश्यों के साथ की जाती है और यह पता लगाने की कोशिश की जाती है कि योजना कहाँ तक अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल रही।

3. योजना की सफलता तथा असफलता के कारणों का मूल्यांकन

(Evaluation of Reasons responsible for success & failure of Plan)

योजना के उद्देश्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में उन कारणों एंव तत्वों का भी पता लगाया जाता है जो योजना की सफलता व असफलता के लिए जिम्मेदार हैं। इन तत्वों एंव कारणों का ज्ञान अगली योजना के निर्माण के समय अत्याधिक आवश्यक है। योजना की उन खामियों एंव कमियों को जानने का प्रयास किया जाता है जो योजना की सफलता में बाधक रही।

उपरोक्त विषयों के सम्बन्ध में योजना आयोग समय-समय पर योजना के प्रत्येक स्तर की प्रगति का मूल्यांकन करता है तथा योजना को सफल बनाने की दिशा में नीति में संशोधन तथा अन्य उपायों के सन्दर्भ में सिफारिश करता है। आयोग यह मूल्यांकन (1) विशिष्ट रूप से चुनी हुई परियोजनओं के मासिक, प्रतिवेदनों , योजना के कार्य संचालन के विषय में तिमाही समीक्षाओं, केन्द्रीय मन्त्रालयों तथा राज्य सरकारों से प्राप्त वार्षिक प्रगति प्रतिवेदनों, (2) परामर्शदाता (कार्यक्रम प्रशासन सम्बन्धी) के द्वारा , जो साल भर अपने अधीन राज्यों में दौरा करते हैं और अधिक महत्वपूर्ण परियोजनाओं का विशेष ध्यान रखते हुए विकास कार्यक्रमों के कार्यचालन के निकटता से किए जाने वाले अध्ययन, और (3) योजना की परियोजनाओं के लिए बनी समिति के द्वारा करता हैं। इसके अतिरिक्त कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन (Programme Evaluation Organisation) जिसकी स्थापना सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के सम्बन्ध में सन् 1952 में की गई थी , भी योजना के प्रभावशाली मूल्यांकन में अहमभूत भूमिका निभाता है। 1960 में इसके कार्यक्षेत्र में व द्धि करके इसे समस्त ग्रामीण विकास सम्बन्धी योजना कार्यक्रमों का मूल्यांकन करने का जिम्मा सौंपा गया। इसका मुख्यालय दिल्ली में है तथा इसके विभिन्न क्षेत्रीय कार्यालय एंव प्रोजैक्ट मूल्यांकन इकाईयाँ देश के विभिन्न भागों में कार्यरत हैं।

भारत में उपरोक्त व्यवस्था के होते हुए भी मूल्यांकन का कार्य सन्तोषप्रद नहीं है। इस दिशा में बहुत सारे सुधारों की आवश्यकता है। हांलाकि प्रशासकीय सुधार आयोग ने बहुत सारे सुझाव इस सम्बन्ध में सुझाए हैं लेकिन उन पर अभी तक पूर्णरूप से अमल करना बाकि है।

Chapter - 21

केन्द्र,राज्य एवं जिला स्तर पर नियोजन तन्त्र

(Machinery For Planning at Central, State and District Level)

पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण एक जटिल एंव Time Consuming प्रक्रिया है। इसमें केन्द्र, राज्य एंव जिला स्तर पर बहुत नियोजन अभिकरण सम्मिलित हैं जिनका विस्त त वर्णन निम्न प्रकार है-

1. राष्ट्रीय नियोजन तन्त्र

(National Planning Machinery)

राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य तौर से योजना आयोग एंव राष्ट्रीय विकास परिषद्, नियोजन तन्त्र के प्रमुख अभिकरण हैं। पंचवर्षीय योजनाओं के निर्माण में ये महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनका वर्णन निम्नलिखित है-

(i) योजना आयोग (Planning Commission)

स्वतन्त्रता के पश्चात् देश की स्थिति एंव सलाहकारा नियोजन बोर्ड की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक विकास को गति प्रदान करने के सम्बन्ध ा में 15 मार्च ,1950 को योजना आयोग की स्थापना की। इसकी स्थापना संसद के कानून की बजाय मन्त्रिमण्डल के एक प्रस्ताव द्वारा की गई। यहां यह उल्लेखनीय है कि योजना आयोग वित आयोग की तरह संवैधानिक या वैधानिक निकाय न होकर सलाहकार निकाय है। इसीलिए इसे कार्यकारी उत्तरदायित्व की बजाय सलाह देने का कार्य सौंपा गया है।

रचना (Composition)

योजना आयोग का संरचनात्मक ढ़ांचा आरम्भ से ही एकरूप नहीं रहा। इसके सदस्यों की संख्या समय-समय पर बदलती गई। इसकी सदस्य संख्या के सम्बन्ध में कोई निश्चित कानून नहीं है। 1971 से पहले योजना आयोग एक स्वतन्त्र निकाय के रूप में कार्य करता था लेकिन इस वर्ष एक स्वतन्त्र योजना मन्त्रालय की स्थापना की गई तथा योजना मन्त्रालय को एक विभाग का रूप दे दिया गया जिसके कारण इसका स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त हो गया। इसका अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होता है। जो इसकी सभी बैठकों(Meetings)की अध्यक्षता करता है। योजना आयोग के अध्यक्ष के रूप में प्रधानमन्त्री नीति सम्बन्धी महत्वपूर्ण मुद्दों पर आवश्यक दिशा-निर्देशन देता है। वह योजना आयोग के क्रियान्वयन सम्बन्धी निर्णयों पर नजर रखता है तथा राष्ट्रीय विकास परिषद्, मन्त्रि परिषद एंव संसद के बीच योजना निर्माण में समन्वय का कार्य करता है। प्रधानमन्त्री के अतिरिक्त, इसके सदस्यों अधिकांश संख्या इसके मन्त्रियों की होने के कारण इसे सर्वोपरि मन्त्रिमण्डल (Super Cabinet)का दर्जा दिया जाता हैं । हांलाकि प्रशासकीय सुधार आयोग (Administration Reform

Commission)ने योजना आयोग की इस रचना में संशोधन करके सुधार करने का सुझाव दिया था। प्रशासकीय सुधार आयोग के अनुसार प्रधानमन्त्री एंव किसी भी मन्त्री को इसके अध्यक्ष या उपाध्यक्ष पद पर नियुक्त नहीं करना चाहिए। हांलाकि प्रधानमन्त्री एंव वितमन्त्री को इसके कार्यक्रमों की पूर्ण सूचना हो और वे जब चाहें इसकी बैठकों में उपस्थित हो सकते हैं। लेकिन प्रधानमन्त्री जब भी उपस्थित होगा वह इसके अध्यक्ष पद पर आसीन होगा।

इस सम्बन्ध में भारत सरकार ने यह निर्णय लिया कि प्रधानमन्त्री एंव वित्त मन्त्री यथावत् योजना आयोग के अध्यक्ष एंव सदस्य के रूप में कार्य करेगें तथा दूसरे केन्द्रीय मन्त्रियों को औपचारिक रूप में आयोग के सदस्य के रूप में नियुक्त नहीं किया जाएगा। लेकिन प्रधानमन्त्री जब चाहें किसी भी मन्त्रि को आयोग की बैठकों में भाग लेने के लिए निमन्त्रित कर सकता है।

परन्तु समय-समय पर योजना आयोग की बनावट में बदलाव आते रहे और योजना आयोग के उपाध्यक्ष पद पर तथा केन्द्रीय मन्त्रियों की इसके सदस्य के रूप में नियुक्ति के सम्बन्ध में कोई विशेष परम्परा नहीं बन पाई। इसके उपाध्यक्ष पर पर कभी किसी मन्त्री को तो कभी किसी विशेषज्ञ को नियुक्त किया जाता हैं। इसका उपाध्यक्ष , आयोग के Technical and administrative head के रूप में कार्य करता है। उसकी नियुक्ति केबिनेट के द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए की जाती है। अगर वह संसद या केबिनेट का सदस्य नहीं है तो उसका दर्जा केबिनेट मन्त्रि के समान होता है। यह केबिनेट की सभी बैठकों में भाग ले सकता है परन्तु वोट नहीं डाल सकता है। वह योजना की Draft Plan तैयार करने तथा इस पर सरकार की सहमति लेने के लिए जिम्मेदार है। हाल में योजना आयोग की बनावट निम्न प्रकार हैं-

1.	अध्यक्ष(Chairman)	:	प्रधानमन्त्री (Prime Minister)
2.	उपाध्यक्ष(Deputy chairman) (usually a whole -Time Member)	:	आमतौर पर पूर्णकालिक सदस्य
3.	दो-तीन अंशकालिक सदस्य(केबिन मन्त्री) (Two Three time Members (Union cabinet Ministers)	:	वित मन्त्री,क षि मन्त्री इत्यादि
4.	एक योजना मन्त्रालय का राजनैतिक मुखिया One political head of the Ministry of Planning	:	Minister of State for Planning (Ex-officio Member)
5.	छः से नौ पूर्ण कालिक सदस्य Six to Nine whole time Members	:	तकनीकी विषय विशेषज्ञ(Technical /Subject Experts)
6.	Member-Secretary cadre / specialist(Not Member)	:	A Senior officers of the IAS

आन्तरिक ढ़ांचा
(Internal Structure)

प्रारम्भ में नियोजन आयोग आन्तरिक ढ़ांचे के शीर्ष पर केबिनेट सचिव (Cabinet Secretary) होता

था, परन्तु इसके कार्यो में व द्धि होने के फलस्वरूप एक प थक् सचिव की नियुक्ति की गई। इसकी सहायता के लिए संयुक्त सचिव, उच्च सचिव तथा अनेक ज्येष्ठ एंव कनिष्ठ अधिकारी होते है। योजना आयोग का आन्तरिक ढ़ांचा तीन प्रमुख अंगों में विभक्त है-

1. कार्यक्रम परामर्शदाता

(Programme Advisers)

योजना आयोग के इस अंग में 4 कार्यक्रम परामर्शदाता होते हैं। ये ज्येष्ठ अधिकारी होते हैं तथा इनका स्तर Additional Secretary के बराबर होता है। ये योजना आयोग एंव विभिन्न राज्यों के मध्य सम्पर्क (link) का कार्य करते हैं। ये विभिन्न राज्यों में विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की समीक्षा करते हैं और योजना आयोग को विभिन्न राज्यों से प्राप्त प्रस्तावों के सम्बन्ध में सलाह देते हैं। इन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से सम्बन्धित सार्वजनिक सहयोग तथा प्रशासन के सम्बन्ध में उठने वाली समस्याओं के बारे में भी सलाह देते हैं।

2. सामान्य सचिवालय

(General Secretariat)

योजना आयोग का यह अंग अपनी Housekeeping Branches की सेवाएं प्रदा करके नीति निर्माण कार्य में मदद करता है। इसकी 4 शाखाएं है-1. प्रशासकीय (Administrative Branch) 2. नियोजन समन्वय शाखा (Plan Co-ordination Branch),3. सामान्य समन्वय शाखा (General Co-ordination Branch) ,4. सूचना एंव प्रकाशन शाखा (information and Publicity Branch) सामान्य सचिवालय विभिन्न प्रकार के मुद्दे जो Establishment , Accounts (लेखा), सामान्य प्रशासन, vigilance एंव योजना आयोग के सेवीवर्ग की प्रशिक्षण सम्बन्धी आवश्यकता से जुड़े होते हैं, से सम्बन्ध रखता है। इसके अधिकारी गण भारतीय प्रशासकीय सेवाओं, भारतीय लेखा -परिक्षण एंव लेखा सेवा , केन्द्रीय सचिवालय सेवा आदि से लिए जाते हैं।

3. तकनीकी सम्भाग

(Technical Divisions)

योजना आयोग के आन्तरिक ढ़ांचे का तीसरा प्रमुख अंग तकनीकी सम्भाग हैं। ये आयोग की योजनाओं के निर्माण के सम्बन्ध में अनुसन्धान, परीक्षण, तथा तकनीकी विषयों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। (i) सामान्य सभ्भाग (General Division) (ii) विषय सम्भाग (Subject Division) सामान्य सम्भाग नियोजन के आर्थिक तथा सामाजिक पहलु एंव इससे जुड़ी समस्याओं से सम्बन्धित होते हैं। जबकि विषय सम्भाग अर्थव्यवस्था के विशेष क्षेत्रों जैसे कि सिंचाई, शक्ति, खाद्य , क षि, शिक्षा, ग ह निर्माण आदि से सम्बन्धित होते हैं। इन सम्भागों के मुख्य अधिकारी प्रायः विशेषज्ञ होते हैं, जिन्हें चीफ (Chief) या निर्देशक के नाम से जाना जाता है। योजना आयोग में 11 सामान्य तथा 16 विषय सम्भाग हैं। इनके अधिकारीगण भारतीय आर्थिक सेवाएं , भारतीय सांख्यिकी सेवाएं एंव अन्य तकनीकी सेवाओं से लिए जाते हैं।-इनका वर्णन निम्न प्रकार है-

I सामान्य सम्भाग (General Division)-

(i) विकास नीति सम्भाग (Development Policy Division),

(ii) वित्तिय संसाधन सम्भाग (Financial Resources Division),

(iii) अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्भाग (International Economics Division),

(iv) श्रम, रोजगार एंव मानव शक्ति सम्भाग (Labour,Employment and Manpower Division),

(v) राष्ट्रीय सूचना केन्द्र; योजना भवन इकाई (National Informatics centre, Yozana Bhavan Unit),

(vi) **नियोजन स्वरूप सम्भाग** (Perpective Planning Division),

(vii) **योजना समन्वय सम्भाग** (Plan coordination Division),

(viii) **प्रोजैक्ट निरीक्षण एंव प्रबन्ध सम्भाग** (Project Appraisal and Management Division),

(ix) **सामाजिक एंव आर्थिक अनुसंधान इकाई** (Social and Economic Research unit),

(x) **राज्य नियोजन सम्भाग** (State Plan Division (Including Multi -level Planning, Boarder Area Development programme Hill Area Development and North Eastern Region(NER)and,

(xi) **सांख्यशास्त्र एंव सर्वे सम्भाग** (Statistics and Surveys Division),

II विषय सम्भाग (Subject Division)

(i) **क षि सम्भाग** (Agricultural Division),

(ii) **पिछड़ा वर्ग सम्भाग** (Backward Class Division),

(iii) **संचार एंव सूचना सम्भाग** (Communication and Information Division),

(iv) **शिक्षा सम्भाग** (Education Division),

(v) **पर्यावरण एंव वन सम्भाग** (Enviornment and Forests Division),

(vi) **स्वास्थ्य एंव परिवार कल्याण सम्भाग** (Health and Family welfare Division),

(vii) **ग ह निर्माण, नगरीय विकास एंव जल सप्लाई सम्भाग** (Housing urban Development and water supply Division),

(viii) **उद्योग एंव खनिज सम्भाग** (Industrial and Mineral Division),

(ix) **सिंचाई एंव कमांड क्षेत्र विकास सम्भाग** (Irrigation and Commnad Area Development Division),

(x) **शक्ति एवं ऊर्जा** (Power and Energy Division Including Rural Energy, Non-Conventional Energy Sources and Energy policy cell),

(xi) **ग्रामीण विकास सम्भाग** (Rural Development Division),

(xii) **विज्ञान एंव तकनीकी सम्भाग** (Science and Technology Division),

(xiii) **सामाजिक कल्याण एंव पौष्टिक आहार सम्भाग** (Social welfare and Nutrition Division),

(xiv) **परिवहन सम्भाग** (Transport Division),

(xv) **ग्राम एंव लघु उद्योग सम्भाग** (Village and Small Industries Division),

(xvi) **पश्चिमी घाट सचिवालय** (Western Ghats Secretarial),

योजना आयोग तथा उसके विभिन्न विभागों एंव उप-विभागों के अतिरिक्त अनेक अन्य संस्थाएं भी है जो योजनाओं के निर्माण और उनके क्रियान्वयन से सम्बन्धित हैं जैसे कि राष्ट्रीय नियोजन परिषद् (National Planning Council),**मन्त्रणा दल** (Advisory Bodies), **अनुसंन्धान प्रोग्राम कमेटी** (Research Programme Commitee), **कार्यकारी दल** (Working Groups), **मूल्यांकन समितियाँ** (Evaluation Committees) **आदि।**

योजना आयोग के कार्य
(Functions of Planning Commission)

योजना आयोग निम्नलिखित कार्य करता है-

1. साधनों का अनुमान एंव उनमें अभिव द्धि

(Assessing and Augmenting Resources)

साधनों का अनुमान लगाना एंव उनमें अभिव द्धि का प्रत्यन्त करना योजना आयोग का प्रमुख कार्य है। यह देश के भौतिक पूंजीगत तथा मानवीय साधनों का सर्वेक्षण एंव अनुमान लगाता है तथा देश की आवश्यकताओं को समक्ष रखते हुए ऐसे संसाधनों के विकास की सम्भावना का पता लगाता है, जिनका देश में अभाव हो।

2. योजना निर्माण

(Plan Formulation)

देश के संसाधनों का प्रभावशाली एंव सन्तुलित (Most effective and balanced) उपयोग करने के लिए योजना आयोग योजना निर्माण का कार्य करता है।

3 योजना क्रियान्वयन के विभिन्न स्तरों को परिभाषित करना

(Defining Implementation stages)

योजना आयोग योजना की प्राथमिकताओं (Priorities) को निर्धारित करके नियोजन के क्रियान्वयन हेतू विभिन्न स्तरों

(Stages) को परिभाषित करता है और प्रत्येक Stage के लिए साधनों के उचित बंटवारे का सुझाव देता है।

4. Plan Exceution सम्बन्धी आवश्यकताओं को इंगित करना

(Indicating Requisites of Plan execution)

योजना आयोग उन बाधाओं एंव तत्वों को भी इंगित करता है जो आर्थिक विकास को retard (कम) करते हैं तथा देश की सामाजिक एंव राजनैतिक स्थिति को मध्यनजर रखते हुए योजना के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में स्वस्थ वातावरण उत्पन्न करने के लिए परिस्थतियों का निर्धारण करता है।

5. योजना क्रियान्वयन तन्त्र का निर्धारण

(Determining execution Machinery)

योजना आयोग योजना के प्रत्येक स्तर (Stage) को सफलतापूर्वक क्रिर्यान्वित करने के लिए आवश्यक प्रशासनिक यन्त्र की प्रक ति निश्चित करता है।

6. योजना की प्रगति का मूल्यांकन

(Appraisal of Plan Progress)

योजना आयोग योजना की प्रत्येक अवस्था के क्रियान्वयन की प्रगति का समय-समय पर मूल्यांकन करता है तथा ऐसे उपायों एंव नीति सम्बन्धी संशोधनों का सुझाव देता है जो ऐसे मूल्यांकन के परिणामस्वरूप नजर आते हैं।

7. सुझाव एंव दिशा-निर्देशन

(Advice and Direction)

योजना आयोग का अन्य कार्य केन्द्र एंव राज्य सरकारों को प्रचलित आर्थिक परिस्थितियों में सामाजिक-आर्थिक योजनाओं के प्रभावशाली ढ़ंग से निर्माण, क्रियान्वयन एंव मूल्यांकन के सम्बन्ध में सुझाव एंव दिशा-निर्देशन देने सम्बन्धी है।

राष्ट्रीय विकास परिषद
National Develpment Council

भारत में राष्ट्रीय विकास परिषद नियोजन सम्बन्धी मामलों में सबसे उच्च स्तरीय निकाय है। पंचवर्षीय योजना की Broad approach ,ड्राफ्ट मैमोरण्डम (Draft Memorandum)जो योजना की मुख्य विशेषताओं को दर्शाता है, योजना की ड्राफ्ट रूपरेखा, तथा अन्तिम ड्राफ्ट आदि को राष्ट्रीय विकास परिषद के सामने विचार-विमर्श के लिए रखा जाता है। यह परिषद चाहे तो Draft Plan में संशोधन भी कर सकती है। इसके बाद यह अपनी सहमति देती है। वर्ष में इसकी दो बैठकें होती हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद की महत्ता भारत जैसे संघात्मक राज्य में अत्याधिक आवश्यक है क्योंकि यहां पर प्रशासकीय एंव विकास सम्बन्धी योजनाओं की सफलता के लिए केन्द्र एंव राज्यों में पूर्ण सहयोग का होना अनिवार्य है। सबसे पहले 1946 में K.C. Neyogi की अध्यक्षता में गठित Advisory Planning Board ने ऐसी सलाहकार संस्था के गठन का सुझाव दिया। इसके पश्चात् योजना आयोग ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के ड्राफ्ट (1951-56) में राष्ट्रीय विकास परिषद जैसे निकाय की स्थापना पर बल दिया जिससे समय-समय पर भारत का प्रधानमन्त्री तथा राज्यों के मुख्यमन्त्री योजना एंव इसके विभिन्न पहलुओं का मूल्यांकन कर सकें। फलस्वरूप कैबिनेट सचिवालय द्वारा जारी एक प्रस्ताव के तहत 6 अगस्त 1952 को राष्ट्रीय विकास परिषद की स्थापना की गई। प्रशासकीय सुधार आयोग के द्वारा 1967 में दिए गए सुझावों के आधार पर राष्ट्रीय विकास परिषद का पुर्नगठन किया गया तथा इसके कार्यो को परिभाषित किया गया।

रचना

(Composition)

राष्ट्रीय विकास परिषद का अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होता है। केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल के सभी मन्त्री, सभी राज्यों के मुख्यमन्त्री एंव सभी केन्द्र शासित प्रदेशों के Lt. Governments and S.Administrators तथा योजना आयोग के सभी सदस्य आदि, इसके सदस्य होते हैं। योजना आयोग का सचिव, राष्ट्रीय विकास परिषद के भी सचिव के रूप में कार्य करता है। आमतौर, पर साल में इसकी दो बैठकें होती हैं। योजना आयोग, इस परिषद को सभी प्रकार की प्रशासनिक एंव अन्य सहायता प्रदान करता है।

राष्ट्रीय विकास परिषद के कार्य (Functions of Nationa Development Council)

राष्ट्रीय विकास परिषद निम्नलिखित कार्य करती है-

1. राष्ट्रीय योजना के निर्माण के सम्बन्ध में Guidelines निश्चित करना,
2. योजना आयोग द्वारा तैयार की गई, राष्ट्रीय योजना पर विचार करना,
3. योजना के क्रियान्वयन हेतू संसाधनों कीं assessment करना तथा उन्हें बढ़ाने की दिशा में उपाय सुझाना।
4. राष्ट्रीय विकास को प्रभावित करने वाले सामाजिक और आर्थिक नीति-सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करना,
5. समय-समय योजना की कार्यवाही का पुर्नवलोकन करना तथा राष्ट्रीय योजना के निर्धारित उद्देश्यों एंव लक्ष्यों की प्राप्ति के सम्बन्ध में सुझाव देना।

राष्ट्रीय विकास परिषद भी योजना आयोग की तरह संवैधानिक या वैधानिक निकाय न होकर केन्द्रीयमन्त्रिमण्डल की स ष्टि है। परन्तु इसकी सिफारिशें केन्द्रीय एंव राज्यों सरकारों द्वारा मान ली जाती हैं। इसके कार्यो की प्रक ति का विश्लेषण करने से स्पष्ट है कि यह उन सभी बहुमुखी कार्यो

का निष्पादन करती है, जिन्हें योजनाओं के निर्माण तथा उनके कार्यान्वयन के लिए जरूरी समझा जाता है। यह संघीय सरकार, योजना आयोग राज्य सरकारों के बीच कड़ी का कार्य करती है। यह न केवल योजनाओं की नीतियों एंव कार्यक्रमों को ही समन्वित करती है बल्कि राष्ट्रीय महत्व के अन्य महत्वपूर्ण विषयों के समन्वय में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है।

यह योजना आयोग की तरह सलाहकारी निकाय है। इसकी सिफारिशें बन्धनकारी नहीं है। लेकिन वास्तविक व्यवहार में इसकी सिफारिशें मान ली जाती हैं और इसी कारण यह उच्च श्रेणी की नीति निर्मात्री निकाय बन गई है। कुछ लोगों का आरोप है कि इसने सत्ता हड़प ली है और यह उच्चतर मन्त्रिमण्डल के रूप में कार्य करती है।

राज्य स्तर पर नियोजन तन्त्र
(Planning Machinery at State Level)

राज्य स्तर पर योजनाओं के निर्माण हेतू एक नियोजन तन्त्र पाया जाता है। इस सम्बन्ध में प्रत्येक राज्य में एक नियोजन विभाग (Planning Department) की स्थापना की गई। लेकिन राज्य नियोजन तन्त्र को सुद ढ़ आधार प्रदान करने हेतू 1972 में प्रत्येक राज्य में नियोजन के शिखर बिन्दु पर राज्य योजना बोर्ड़ो (State Planning Departments)की स्थापना करने के सम्बन्ध में सुझाव दिया। परिणामस्वरूप, आज लगभग सभी राज्यों में योजना व इसके कार्यक्रमों के निर्माण , पुर्नवलोकन एंव मूल्यांकन के लिए राज्य नियोजन बोर्ड पाए जाते हैं। इस प्रकार राज्य स्तर पर नियोजन तन्त्र राज्य नियोजन बोर्ड एंव राज्य नियोजन विभाग से मिलकर बना हैं।

I राज्य नियोजन बोर्ड
(State Planning Board)

राज्य स्तर पर योजनाओं के निर्माण में राज्य नियोजन बोर्ड अहमभूत भूमिका निभाते हैं। ये राज्य सम्बन्धी पंचवर्षीय एंव वार्षिक योजनाओं के निर्माण में राज्य सरकार की मदद करते हैं। इसके साथ ये बोर्ड राज्य सरकार को क्षेत्रीय विभिन्नता दूर करने के लिए आवश्यक नीतियाँ एंव कार्यक्रमों को तैयार करने की दिशा में सुझाव देते हैं।

रचना (Composition)

राज्य नियोजन बोर्डो की रचना प्रत्येक राज्य में एक रूप नहीं है। प्रत्येक राज्य में प्रायः इसका अध्यक्ष मुख्य मन्त्री होता है। इसका उपाध्यक्ष वितमन्त्री योजना मन्त्री होता है। इनके अतिरिक्त कुछ पदाधिकारी तथा कुछ गैर पदाधिकारी इसके सदस्य होते हैं, जिन्हें विशेषज्ञता एंव अनुभव के आधार पर चुना जाता है। आमतौर पर मुख्य सचिव, वित्त सचिव, योजना सचिव, क षि एंव शक्ति सचिव, मुख्य मन्त्री का मुख्य सचिव आदि इसके पदाधिकारी सदस्य होते हैं। साधारणतय इसकी बनावट निम्न प्रकार की होती है-

अध्यक्ष (Chairman)	.	मुख्यमन्त्रीChief Minister)
उपाध्यक्ष (Deputy Chairman)	.	वित्त नियोजन मन्त्री(Finance and Planning Minister)
मुख्य सचिव (Chief Secretary)	.	सदस्य (Members)
मुख्यमन्त्री का मुख्य सचिव (Prinipal Secretary to chief Minister)	.	सदस्य (Members)
वित आयुक्त तथा नियोजन सचिव		सदस्य (Members)

(वित, उद्योग एंव समाज कल्याण विभाग) (Financial Commissioners & Secretaries of Planning Finance, Industries & Social welfare Deptts)	
विकास , पंचायत एंव क षि विभाग के आयुक्त एंव सचिव (Commissioners & Secretaries of Deveoplment and Agriculture Deptl)	सदस्य (Members)
नियोजन सचिव (Secretary Planning)	Members Secretary
गैर पदाधिकारी सदस्य (Non-official Members)	5-6 (Mostly subject experts as full or part time Members)

राज्य नियोजन बोर्ड के आन्तरिक ढ़ांचे में कुछ सम्भाग पाए जाते हैं। प्रत्येक सम्भाग का मुखिया एक Director/Subject specialist होता है। इन सम्भागों का स्टाफ तकनीकी रूप से कुशल होता है।

राज्य योजना बोर्ड के कार्य
(Functions of State Planning Boards)

आरम्भ में राज्य योजना बोर्डो के कार्यो में काफी अधिक अस्पष्टता थी लेकिन बाद में प्रशासकीय सुधार आयोग ने इन बोर्डो के कार्य के सम्बन्ध में सुझाव दिए। आज ये बोर्ड निम्नलिखित कार्य करते है-

1. राज्य के संसाधनों का अनुमान तथा उनका सन्तुलित ढ़ंग से प्रयोग
(Assessment of State Resources and their balanced utilization)

राज्य योजना बोर्ड राज्य के भौतिक, वित्तीय तथा मानवीय संसाधनों का मूल्यांकन करता है और राज्य की आवश्यकताओं को समक्ष रखते हुए इन संसाधनों का सन्तुलित ढ़ंग से प्रयोग करने के लिए योजनाएं तैयार करता है।

2. प्राथमिकताओं का निर्धारण
(To determine Plan prioritiers)

राज्य नियोजन बोर्ड राज्य योजना के अर्न्तगत अल्प कालीन एंव दीर्घकालीन प्राथमिकताओं (Priorities) को निश्चित करता है।

3. जिला अधिकारियों को सहायता प्रदान करना
(Assistance to District Authorities)

राज्य नियोजन बोर्ड जिला स्तर के अधिकारियों को विकास सम्बन्धी योजनाओं के निर्माण में सहायता प्रदान करता है तथा इन्हें राज्य योजनाओं के साथ समन्वित करता हैं।

4. योजना की प्रगति का पुर्नावलोकन
(Review the Plan Progress)

राज्य नियोजन बोर्ड राज्य योजना के विभिन्न कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की प्रगति का पुर्नावलोकन करता है और उनमें आवश्यकता अनुसार परिर्वतन के लिए सुझाव देता है।

5. राज्य नियोजन बोर्ड ऐसे तत्वों की जांच करता है जो आर्थिक व सामाजिक विकास की गति को धीमा करते हैं और राज्य योजनाओं को सफल बनाने के लिए विभिन्न Conditions निर्धारित करता है।

6. कोई अन्य विषय जिसके बारे में राज्य सरकार इसे सम्बोधित करे, उसके बारे में यह सुझाव देता है।

राज्य नियोजन विभाग
(State Planning Department)

राज्य योजना विभाग, राज्य स्तरीय नियोजन तन्त्र का अहमभूत अंग है। प्रत्येक राज्य में एक full fledge योजना विभाग होता है। राजनैतिक रूप से इसका मुखिया मुख्यमन्त्री या कैबिनेट मन्त्री मुख्य होता है तथा प्रशासनिक रूप से इसका मुखिया सचिव/मुख्य होता है। इस विभाग के तहत कार्यरत स्टाफ की संख्या विभिन्न राज्यों में अलग-अलग है। इस विभाग का नियोजन सम्बन्धी कार्य लोक सेवकों (IAS & State Civil Servants) तथा तकनीकी रूप से experts एंव सहायक स्टाफ के द्वारा पूरा किया जाता है। नियोजन विभाग का कार्य विभिन्न सम्भागों में बंटा होता है और आमतौर पर प्रत्येक सम्भाग का Incharge एक उप-सचिव होता है। इन सम्भागों की संख्या, वे विषय जिनसे ये सम्बन्धित हैं और प्रत्येक सम्भाग में कर्मचारियों की संख्या विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है। लगभग सभी राज्यों में योजना निर्माण से सम्बन्धित सम्भाग पाया जाता है। इसी प्रकार बहुत सारे राज्यों में क षि , वित, मूल्यांकन, पर्यवेक्षण, manpower appraisal and employment आदि से सम्बन्धित सम्भाग पाए जाते हैं। कुछ राज्यों में क्षेत्रीय एंव जिला स्तरीय नियोजन सम्बन्धी सम्भाग भी पाए जाते हैं। परन्तु विभिन्न राज्यों के नियोजन विभागों की कार्यवाही में बहुत कम समानता पाई जाती है।

कार्य (Functions)

राज्य नियोजन विभाग निम्नलिखित कार्य करता है-

1. राज्य नियोजन विभाग, राज्य सम्बन्धी योजनाओं को कैबिनेट एंव विधानपालिका के सामने रखता है।
2. यह विभाग योजना आयोग, विभिन्न केन्द्रीय कार्यकारी समूहों एंव राज्य के अन्य विभागों के मध्य Liaism (सम्पर्क) का कार्य करता है।
3. राज्य नियोजन विभाग, योजना आयोग के साथ विचार-विमर्श करके पंचवर्षीय तथा वार्षिक योजनाओं को तैयार करना, पर्यवेक्षण तथा उनके मूल्यांकन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

3. जिला स्तरीय नियोजन तन्त्र
(District Planning Machinary)

जिला स्तर पर नियोजन सम्बन्धी कार्यक्रमों की ओर पहली बार 1954 में ध्यान दिया गया। इस समय योजना आयोग ने राज्य सरकारों को क षि उत्पादन, ग्रामीण उद्योग तथा सहकारिता के सम्बन्ध ा में स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप योजना बनाने का निमन्त्रण दिया । इसके पश्चात् विभिन्न समितियों के द्वारा भी समय-समय पर जिला स्तरीय नियोजन को बढ़ावा देने के सम्बन्ध में सुझाव दिया गया। प्रशासकीय सुधार आयोग की योजना सम्बन्धी अध्ययन समिति ने जिला स्तरीय नियोजन के लिए विस्त त संगठन की व्यवस्था करने तथा इसके द्वारा राज्य योजना बोर्ड से सम्पर्क बनाए रखने सम्बन्धी सुझाव दिया। हांलाकि ये सुझाव काफी राज्यों के द्वारा अपनाए भी गए।

हाल ही में भारत सरकार द्वारा 74 वें संविधान संशोधन के (Article 243 ZD) तहत प्रत्येक राज्य में जिला स्तर पर District-Planning Committee जिला नियोजन समितियों का गठन आवश्यक बना दिया गया। इन समितियों के 4/5 सदस्यों का चयन जिला स्तरीय पंचायतों के तथा जिले की म्यूनिसिपल कमेटियों के चयनित सदस्य , अपने में से करेंगे। इन सदस्यों का चयन जिले की ग्रामीण एंव शहरी जनसंख्या के अनुपात में होगा। इन समितियों के कार्य तथा इनके अध्यक्ष के चुनाव का तरीका राज्य विधानपालिका कानून बनाकर निर्धारित करेगी। कुछ राज्यों में आज भी जिला आयुक्त इसका अध्यक्ष होता है। अध्यक्ष के अतिरिक्त इसके कुछ सरकारी एंव गैर-सरकारी सदस्य होते हैं।

कार्य (Functions)

हांलाकि जिला नियोजन समिति के कार्य प्रत्येक राज्य की विधानपालिका के द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। आमतौर पर ये समितियाँ निम्नलिखित कार्य करती हैं-

1. जिला स्तर पर Long-term pesspective plan तैयार करना और जन आवश्कताओं एक स्थानीय प्राथमिकताओं के आधार पर जिले के नियोजित विकास के सम्बन्ध में एक streategy का विकास करना।
2. प्रत्येक वर्ष के आरम्भ होने से पहले प्राथमिकताओं के आधार पर जिले के स्तर पर विकास कार्यक्रमों की सूची, Plan fund व राज्य ग्रामीण विकास बोर्ड से उपलब्ध संसाधनों व समाज-सहयोग (Community Contribution) को ध्यान में रखते हुए योजनाए तैयार करना।
3. जिला स्तरीय कार्यक्रमों एंव योजनाओं के बेहतर ढ़ंग से क्रियान्वयन हेतू उचित तौर तरीके अपनाना।
4. जिला स्तर की योजनाओं के क्रियान्वयन की प्रगति का मूल्यांकन करना
5. पंचायत एंव स्थानीय निकायों को योजना सम्बन्धी विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में बढ़-चढ़ कर भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना ताकि जिला स्तर पर विकास कार्यक्रमों में जन-सहभागिता को सुनिश्चित किया जा सके।
6. आवश्यकता अनुसार राज्य योजना बोर्ड को सुझाव तथा सहायता देना।

जिला स्तर पर योजनाएं जिला अधिकारी द्वारा अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों तथा ग्रामीण स्थानीय संस्थाओं की सहायता से कार्यन्वित करवाई जाती हैं। इसमें खण्ड एंव ग्राम स्तर के अधिकारीगण भाग लेते हैं। परन्तु ऐसा प्रायः माना जाता है कि जिला स्तर पर नियोजन कार्य सकुशल ढ़ंग से नहीं हो पाता। इसके लिए इस स्तर पर कार्यरत अधिकारीगण में प्रतिबद्धता (Commitment) का विकास करना अत्याधिक अनिवार्य है।

Chapter - 22
प्रोग्राम एवं प्रोजैक्टः निर्माण एंव क्रियान्वन
(Formulation and Implementation of Programmes and Projects)

कार्यक्रम एवं परियोजना निरूपण (formulation) पश्चिमी देशों की देन है। राष्ट्रीय या निगमात्मक नियोजन (National or Corporate plans) को प्रभावपूर्ण रूप से लागू करने की दिशा में कार्यक्रम एवं परियोजना निर्माण एवं क्रियान्वयन के महत्व को में सर्वप्रथम पश्चिम के विकसित देशों में अनुभव किया गया। पश्चिमी देशों में भी इस अवधारणा का प्रयोग पहले निजि क्षेत्र के उद्यमों में उत्पादकता एवं कार्यकुशलता बढ़ाने के उद्देश्य से आरम्भ हुआ तथा उसके पश्चात् वहाँ के लोक प्रशासन में इसे लागू किया गया। विकासशील देशों में यह एक नवीन अवधारणा है। इन देशों में इस अवधारणा का प्रचलन द्वितीय विश्व के बाद हुआ। वास्तव में विकासशील देशों में भी मुख्यतः उन्हीं देशों में यह अवधारणा अधिक प्रचलित हुई जो पश्चिम के विकसित देशों के सहयोगी थे तथा उनके काफी निकट थे।

भारत में इस अवधारणा का प्रयोग सर्वप्रथम ग्रामीण विकास हेतु राष्ट्रीयता महात्मा गाँधी के जन्मदिन पर सन् 1952 में संचालित सामुदायिक विकास कार्यक्रम (Community Development Programme) – CDP) के कार्यान्वयन के साथ हुआ। ग्रामीण विकास की दिशा में सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा (National Extension Service – NES) - जिसका सूत्रपात सामुदायिक विकास कार्यक्रम के आरम्भ के ठीक एक वर्ष पश्चात् 2 अक्तूबर 1953 को हुआ - के प्रभावपूर्ण क्रियान्वयन के लिए इन दोनों कार्यक्रमों को अनेकों छोटी-छोटी परियोजनाओं में विभाजित किया गया भारतीय प्रशासन के द्वारा इसी प्रकार का एक अन्य प्रयास भारत सरकार द्वारा सन् 1974 में बनाई गई बाल नीति (Policy on Children) को कार्यान्वित करने के लिए समेकित बाल विकास सेवाएं (Integrated Child Development Services – (ICDS) तथा बाल विकास परियोजनाओं (Child Develpment Projects – CQDP) का निरूपण या निर्माण करके किया गया।

क्योंकि परियोजनाएँ किसी भी योजना (राष्ट्रीय अथवा निगमात्मक) को कार्यान्वित करने का प्रभावशाली माध्यम हैं अतः योजना तथा परियोजना में गहन सम्बन्ध होता है। वास्तव में योजना को प्रभावी तरीके से लागू करने के लिए उसे अनेक उर्ध्वाधर अथवा लम्बवत् (Vertical) भागों में विभक्त किया जाता है तथा इसे Project Family Tree की संज्ञा दी जाती है। सर्वप्रथम योजना (Plan) को कार्यक्रमों (Prorammes) में विभाजित किया जाता है। कार्यक्रमों को परियोजनाओं (Projects) में विभक्त किया जाता है। परियोजनाओं को Work Package में तथा Work Package को Task में बाँटा जाता हैं। अन्त में Task को Activity में विभाजित किया जाता है। इस प्रकार योजना को लागू करने के लिए उसे बहुत से छोटे-छोटे भागों में विभक्त किया जाता है ताकि पूरी योजना को समय

1. Borrowed from *Project Management* by Choudhary, p. 3.

पर तथा बजट राशि में क्रियान्वित किया जा सके। Project Family Tree का नमूना निम्नाकित होता है -

Project Family Trees से स्पष्ट हो जाता है कि किसी भी योजना को सर्वप्रथम कार्यक्रमों (Programmes) में विभाजित किया जाता है तथा प्रत्येक कार्यक्रम को परियोजनाओं के माध्यम से लागू किया जाता है। अतः हम पहले कार्यक्रम का विस्तार पूर्वक वर्णन करेंगे तथा उसके पश्चात् परियोजनाओं का अध्ययन करेंगे।

Plan	National or Corporate Plan with Targets for Growth
↓	
Programme	Health programme, Rural Development Programme, Educational Programme, Space Research Programme etc.
↓	
Project	Power Plants, Hospitals, Schools, Irrigational Projects etc.
Work Package	Water Supply & Distribution Package, Power Supply and Distribution Package etc.
↓	
Task	Award of Water Supply Contract, Construction of Foundations etc.
↓	
Activitity	Excavation, Laying of Cables, Preparation of Drawings, Preparation of Specifications etc.

कार्यक्रम क्या है ? (What is Programme) - 'कार्यक्रम' शब्द का प्रयोग अनेक अर्थो में किया जाता है। शब्दकोष के अनुसार कार्यक्रम का अर्थ है : "ऐसी योजना या कार्य-सूची जिसका पालन किया जाता है।" **डेनिस्टन** के अनुसार, "कार्यक्रम एक या अधिक समस्याओं को समाप्त करने या कम करने के लिए संगठित प्रतिक्रिया है। इस प्रतिक्रिया में से एक या अधिक उद्देश्य, एक या अधिक गतिविधियों का निष्पादन तथा साधनों का व्यय सम्मिलित है।" संयुक्त राष्ट्र संघ के एक प्रशासन में प्रो. एग्बर्ट और ब्राईज़ ने कार्यक्रम की परिभाषा एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए समय तथा स्थान में सीमित एक संगठित सामाजिक गतिविधि के रूप में की है। इसमें प्रायः परियोजनाओं का एक अन्तः सम्बन्धित समूह होता है और सामान्यतः एक या एक से अधिक संगठनों तथा गतिविधियों तक सीमित होता है। समस्या का समाधान करने की द ष्टि से कार्यक्रम एक या एक से अधिक समस्याओं को कम करने या उन्हें समाप्त करने के लिए संगठित प्रतिक्रिया है।

कार्यक्रम का प्राय परियोजनाओं में विभाजित किया जाता है ताकि उपलब्ध संसाधनों को किसी निश्चित दिशा की ओर प्रवाहित किया जा सके। इसके अतिरिक्त परियोजनाओं द्वारा मूल संरचनाओं में परिवर्तन किये बिना संगठनात्मक तथा प्रशासकीय मामलों में नवीनता लायी जा सकती है। कोई भी नवीनता लाने वाली परियोजना पहुँच तथा कार्य-क्षेत्र के सम्बन्ध में कार्यक्रम में सीमित होती है। यदि इन समस्त परियोजनाओं को आपस में जोड़ दिया जाये और यदि एक दूसरे के लिए पोषण बन जायें तो इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ेगा। परन्तु यह ध्यान रखने योग्य है कि कार्यक्रम कुछ परियोजनाओं के योग से अधिक होता है। किसी देश की समस्त परियोजनाओं को गिन लेने और उनको जोड़ लेने से वे उस देश के विकास कार्यक्रम के समान नहीं हो जायेंगे।

कार्यक्रम नियोजन

(Plan Programme)

किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र या सामाजिक वर्ग और एक निश्चित समय के लिए उद्देश्यों गतिविधियों तथा साधनों का विशेष विवरण कार्यक्रम नियोजन की प्रक्रिया को बेहतर ढंग से सम्पन्न करने के लिए कार्यक्रम नियोजन में सम्मिलित किया जाता है।

कार्यक्रम नियोजन को समझने के लिए उद्देश्य और गतिविधि का अर्थ जानना आवश्यक है। उद्देश्य लोगों या पर्यावरण की वह स्थिति है जिसे कोई उत्तरदायी कार्यक्रम बनाने वाला व्यक्ति प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझा जाता है। अनुवर्ती मूल्यांकन (subseuqent) के लिए किसी उद्देश्य के विवरण में इन बातों का विशेष विवरण होना चाहिए : (i) क्या प्राप्त की जाने वाली स्थिति की प्रक ति; (ii) परिमाण (extent) प्राप्त की जाने वाली स्थिति; (iii) कौन लोगों का वह विशेष समूह या पर्यावरण का वह विशेष भाग जिसमें प्राप्ति वांछित है; (iv) कहाँ कार्यक्रम का भौगोलिक क्षेत्र; और (v) कब वांछित स्थिति या अवस्था। उद्देश्य तीन प्रकार के होते हैं - मूलभूत उद्देश्य, कार्यक्रम का उद्देश्य और उप-उद्देश्य। मूलभूत उद्देश्य वह अवस्था है जो कार्यक्रम के लिए जिम्मेदार लोगों की मूल्य-प्रणाली के अुनसार इसी अवस्था के अन्तर्गत तथा इसी से वांछित है। कार्यक्रम उद्देश्य उस विशेष स्थिति या अवस्था का विवरण है जो कार्यक्रम को पूर्ण करने के लिए किये गये कुल प्रयत्नों का फल हो। उप-उद्देश्य वह उद्देश्य है जिसे कार्यक्रम का उद्देश्य प्राप्त करने के पहले प्राप्त होना चाहिए। प्रायः कार्यक्रमों में अनेक उप-उद्देश्य होते है। सभी उप-उद्देश्य समय में एक दूसरे के साथ तथा कार्यक्रम के उद्देश्य से सम्बन्धित होते हैं। गतिविधि वह कार्य है जो किसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए कार्यक्रम कर्मचारी तथा उपकरण करते हैं। 'गतिविधि' शब्द का जिस प्रकार हम प्रयोग करते हैं उसका अर्थ कोई काम की निश्चित मात्रा या क्षेत्र नहीं है।

गतिविधि-उद्देश्य में अन्तर - गतिविधि है गति से चलना और उद्देश्य है निर्धारित लक्ष्य पर पहुँचना। गतिविधियों पर कार्यक्रम, समय तथा साधन खर्च होते हैं जबकि उद्देश्य पर नहीं।

उद्देश्य तथा गतिविधि के अन्तर को प्रयोग के तर्क और कार्यक्रम योजना के तर्क की आपसी अनुरूपता से स्पष्ट किया जा सकता है। प्रयोग में खोज करने वाला यह देखता है कि कार्यकारण सम्बन्ध दिखाया जा सकता है या नहीं। यह प्रयोग वस्तुओं (कारण) के एक समूह पर कुछ क्रियाएँ करता है और पूर्व घोषणा करता है कि इसका यह विशेष परिणाम (कार्य) होगा या नहीं। प्रायोगिक क्रियाविधि अपेक्षित परिणाम के साथ एक अनुमान द्वारा जुड़ी होती है। अनुमान का 'यदि' - 'तो' के रूप में विवरण किया जा सकता है अर्थात् यदि (क) उपचार किया जायेगा तो (ख) परिणाम होगा। कार्यक्रम नियोजन का तर्क प्रयोग के तर्क के समानान्तर होता है। आवश्यकताओं या समस्याओं की पहचान तथा विश्लेषण के पश्चात् कार्यक्रम उद्देश्य निश्चित कर लिया जाता है और उसकी प्राप्ति के लिए की जाने वाली गतिविधियों के सम्बन्ध में निर्णय किया जाता है। कोई भी कार्यक्रम उद्देश्य प्रयोग करने वाले के परिणाम या कार्य के समानान्तर होता है और कार्यक्रम गतिविधियों प्रायोगिक क्रियाविधि या कार्य के समानान्तर होती है। योजनाकार अनुमान लगाता है कि निश्चित विधि या गतिविधियों द्वारा निश्चित उद्देश्य प्राप्त किया जा सकता है। यदि कोई निश्चित गतिविधि की जाती है तो वांछित उद्देश्य की प्राप्ति हो सकती है। इस अनुमान को केवल मूल्यांकन द्वारा ही परखा जा सकता है।

गतिविधि के निष्पादन की सहायता करने के लिए क्रामिक विधि, सामग्री तथा सुविधाएँ उपलब्ध है। गतिविधियों जैसे साधनों की व्याख्या विशिष्टता के विभिन्न स्तरों द्वारा की जा सकती है। प्रारम्भ में इसमें सम्मिलित हैं आर्थिक विकास की ऐतिहासिक प्रव त्तियों का विश्लेषण और, जिसे हम कह सकते हैं वर्तमान स्थिति का निरूपण। यह विश्लेषण अर्थव्यवस्था में हुए परिवर्तनों तथा उनके कारणों को प्रकट करता है और इसी के साथ ही भविष्य में होने वाले विकास के मूल्यांकन को सम्भव बनाता

है। इसमें हमेशा यह माना जाता है कि विभिन्न कारणों का एक जैसा परिणाम होता है। इससे विकास के दौरान सम्भव संरचनात्मक परिवर्तनों की प्रक ति परिणाम प्रकट होंगे और यह उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक वित्त, संस्थागत ढाँचे तथा आर्थिक नीति के साथ जुड़ी हुई समस्याओं की श्र ंखला को सामने लाता है। किसी कार्यक्रम के उद्देश्यों का विवरण देने के बाद इन उद्देश्यों की प्राप्ति से पूर्व होने वाली परिस्थितियों का विवरण भी देना पड़ता है। इनमें से प्रत्येक परिस्थिति उप-उद्देश्य है।

अगले कदम में उन वैकल्पिक गतिविधियों की पहचान करना है जो उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रभावकारी हो सकती हैं। प्रत्येक विकल्प पर होने वाले अनुमानित खर्च तथा उसकी प्रभाविकता पर पूरी तरह विचार किया जाता है। अन्त में, कार्यक्रम की उपयुक्तता, पर्याप्तता तथा क्षमता के अनुमान के रूप में सर्वोत्तम विकल्प का चुनाव किया जाता है। उद्देश्यों तथा गतिविधियों के चयन के लिए प्रचलित पहुँच में सम्मिलित हैं - कार्यक्रम नियोजन, बजट तैयार करना, लागत लाभ का विश्लेषण तथा खोज की कार्रवाई।

कार्यक्रम बनाने का अन्तिम पड़ाव है चुनी हुई गतिविधियों की मदद के लिए साधनों का निर्धारण। कार्यक्रम प्रबन्धन तथा इसको कार्यान्वित करने के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न उठते हैं - प्रबन्धन का स्थान कहाँ केन्द्रित हो क्षेत्रीय हो स्थानीय हो या गुँथा हुआ हो ? इस प्रकार किसी कार्यक्रम की तैयारी तथा स्थापना के लिए एक बहुपक्षीय जटिल निर्णयकारी प्रक्रिया की आवश्यकता है। इसके संचालन के लिए निरन्तर नियोजन का स्वाभाव नवपरिवर्तनकारी होता है।

कार्यक्रम का संरचित करना

(Implementaton of Programme)

कार्यक्रम हो निम्न पाँच चरणों में संरचित किया जाता है :

1. प्रथम तैयारी का चरण है। इसमें समस्याओं की पहचान की जाती है और कार्यक्रम बनाने की तैयारी की जाती है।
2. दूसरे चरण में साथियों को सामान्य क्षमता का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसमें निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है।
   - (i) संचार और साक्षात्कार दक्षता;
   - (ii) प्रणाली विश्लेषण और गणितीय उपकरण ;
   - (iii) संक्रियात्मक शोध सम्बन्धी मूल तत्व ;
   - (iv) आर्थिक भविष्यवाणी और जोखिम का निर्धारण ;
   - (v) मूल्य प्रणाली ;
   - (vi) लागत लाभ विश्लेषण ;
3. तीसरे चरण में समस्या का समाधान और इससे सम्बन्धित समस्त सहायता प्रदान करना।
4. समस्त लोग समस्याओं से निपटने के सुझाव प्रस्तुत करेंगे और आपसी विचार-विमर्श करेंगे।
5. उपर्युक्त चर्चा के आधार पर लिये गये निर्णयों को लागू करना।

अच्छे कार्यक्रम की विशेषता

(Features of Programmes)

एक अच्छे कार्यक्रम में नयी प्रायोगिक पहुँच, नयी अन्तद ष्टियों का विनियोग और नवपरिवर्तनकारी तत्व होते हैं। कार्यक्रम तथा परियोजनाओं पर संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रकाश में किसी अच्छे कार्यक्रम के लिए निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख किया है :

1. एक स्पष्ट, सुव्यक्त अनुभव लक्ष्य;
2. लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उत्क ष्ट साधनों का निर्धारण;
3. उस लक्ष्य को सर्वाधिक प्रभावकारी रूप में प्राप्त करने के लिए अनुकूल नीतियों और सम्बन्धित परियोजनाओं का एक सेट;
4. अपेक्षित लागतों तथा कार्यक्रमों में अपेक्षित लाभों के परिणाम का माप;
5. चल रही अन्य गतिविधियों तथा कार्यक्रमों के साथ सम्बन्ध;
6. कार्यक्रम संचालन के लिए आवश्यक कर्मचारी वर्ग तथा वित्त आदि का परिणाम।

कार्यक्रमों के प्रकार
(Kinds of Programme)

कार्यक्रम को मुख्य तीन प्रकारों में बाँटा जा सकता है :

(i) तकनीकी-आर्थिक कार्यक्रम, जिसका उद्देश्य होता है लाभ;

(ii) सामाजिक रूप से निर्देशित कार्यक्रम, जिसका उद्देश्य होता है सेवा;

(iii) पहचान-निर्देशित कार्यक्रम, जिसका लक्ष्य होता है सम्मान।

तकनीकी-आर्थिक कार्यक्रमों में नव-प्रवर्तक तत्व की भूमिका कार्यक्रम संगठन के लिए मुख्य होती है। माध्यमों, लोगों तथा आय के साधनों को एकत्र करने के लिए सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग के लिए कार्यक्रम को चलाया जाता है। उनका लक्ष्य होता है बुद्धिसंगत प्रस्तुति एवं लाभ। कार्यक्रम में श्रेष्ठ कार्यकुशलता, तकनीकी ज्ञान तथा कर्मचारियों के श्रेष्ठ टीम का होना आवश्यक है। सामाजिक रूप से निर्देशित कार्यक्रमों में स्वयंसेकों तथा स्वेच्छाचारी समूहों द्वारा प्रस्तावित कर्मचारियों के समर्पित समूह सेवाएँ प्रदान करते हैं। वे उनकी सेवाओं की विशेषता पर तथा लाभ प्राप्त करने वाले समूहों, परिवारों तथा व्यक्तियों के पारस्परिक सम्बन्धों पर निर्भर करते हैं। पहचान-निर्देशित कार्यक्रमों में संगठनात्मक पहचान पर जोर देने वालों तथा राजनैतिक बिम्ब पर बल देने वालों में अन्तर किया जा सकता है। जहाँ तक संगठनात्मक आत्म-पहचान का सम्बन्ध है अधिकतर संगठनों और विशेष रूप से स्वयंसेवी संगठनों को अपने सदस्यों की रूचि बनाये रखने के लिए, नये सदस्यों का आकर्षित करने के लिए एवं अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए गतिविधियों की आवश्यकता रहती है।

समस्याएँ
(Problems)

कार्यक्रम के कुशल तथा प्रभावशाली प्रबन्ध के मार्ग में समस्याओं का आना स्वाभाविक है। सर्वप्रथम, अपर्याप्त प्रशासकीय नियोजन का होना है। हमारे पास प्रशासकीय और परिचालक योजनाओं को तैयार करने वाली नियोजनकारी अभिकरणों का संगठित क्षेत्र नहीं है। कार्यक्रम के संचालन के लिए अपेक्षित विभिन्न प्रकार के निवेशों का कोई स्पष्ट अनुमान नहीं है, अपेक्षित मानव शक्ति, सामग्री, धन आदि की कमी है। द्वितीय, सरकारी कर्मचारियों में पायी जाने वाली कार्यकुशलता विकास कार्यक्रमों में पायी जाने वाली जटिल प्रबन्धकीय कार्यो को हाथ में लेने के लिए पर्याप्त नहीं है। वर्तमान सेवीवर्ग की सामान्य दिशा 'कार्यकारी' प्रकार के कार्य की ओर है, अर्थात् निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति करने की अपेक्षा प्रशासन की कानूनी आवश्यकताओं को पूरा करना होता है। अतः आज योग्य, दक्ष, विशिष्ट, तकनीकी तथा प्रबन्ध की द ष्टि से कार्यक्षम कर्मचारियों की आवश्यकता है। उपर्युक्त कर्मचारी, नीति तथा कार्यक्रम न होने के कारण परम्परागत कर्मचारी नवीन कार्य में लगा दिये जाते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कर्मचारी तर्कसंगत कार्यकुशलता के साथ अपने उत्तरदायित्वों को पूर्ण नहीं कर पाते है। तीसरे, कार्यविधि सम्बन्धी त्रुटियों का होना है। प्रचलित वित्तीय तथा प्रशासकीय नियमों और विनियमों के सम्बन्ध में पायी जाने वाली कठिनाइया हैं। इस कार्य की प्रक्रिया का प्रशासन

की कुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। आवश्यकता इस बात की है कि नियम और विनियम इस तरीके से बनाये जाने चाहिए कि वे कार्यक्रमों का कुशलता से संचालन करने के लिए प्रबन्धकीय कर्मचारियों की सहायता करें जिससे वे कार्यक्रमों को पूर्ण कर सकें। चौथी समस्या परिचालन से सम्बन्धित है। इसमें समन्वय की समस्या जटिल है। हमारी प्रशासकीय प्रणाली में कार्यक्रम के प्रबन्ध के लिए एक से अधिक विभाग लगे होने के कारण यह समस्या और जटिल हो गयी है। समन्वय के बिना सुचारू रूप से कार्य करना सम्भव नहीं है। इसके अभाव में विभिन्न विभाग विभिन्न दिशाओं में कार्यक्रम को खींचते हैं और असन्तोषजनक निष्पादन के लिए जवाबदेही तय करना असम्भव है। पाँचवाँ, वर्तमान में विद्यमान निरीक्षण का तरीका अनियमित और विफल सिद्ध हुआ है। न तो उच्चतर कर्मचारी अधीन स्तरों के संचालनों का नियमित, निष्पक्ष निरीक्षण करते हैं और न ही कार्य के निष्पादन की सूचना तथा नियमित मूल्यांकन प्रणाली हीं है। छठे, यह देखा गया है कि इन विकास कार्यक्रमों को व्यवहार में लाने के लिए आवश्यक पूर्ति तथा निवेश के लिए अपर्याप्त योजना होती है। पूर्ति से सम्बन्धित कुछ समस्याएँ कार्यक्रम विभागों के नियन्त्रण से परे होती हैं परन्तु यह प्रायः देखा गया है कि वह विस्त त रूप से अपनी पूर्ति तथा निवेश की आवश्यकताओं का अनुमान नहीं लगाते। साथ में वे न ही इन पूर्तियों की योजना इस प्रकार बनाते हैं कि कार्यक्रम कार्य-सूची के अनुसार चले।

कार्यक्रम समय के नव-परिवर्तनकारी घटक के साथ परिवर्तनशील उद्देश्यों की उपज होते हैं और साथ ही परिवर्तनशील के प्रेरक होते हैं। वह संगठनात्मक सुधारों और नवीकरण की ओर ले जाते हैं। समय की तेजी से बदलती हुई स्थिति के फलस्वरूप सभी प्रकार के कार्यक्रम सामने आ रहे हैं। कार्यक्रम सामयिक होने चाहिए तथा सरकार के साथ-साथ गैर-सरकारी संस्थाओं को भी अपनी सीमा के दायरे में रहकर ही कार्यक्रम बनाने चाहिए। कार्यक्रमों का उचित मूल्यांकन उनकी सफलता के लिए आवश्यक है। प्राथमिकता का क्रम स्थापित करने या चालू कार्यक्रम में सुधार करने की द ष्टि से किसी विशेष मूल्य-पैमाने के अनुसार अन्य कार्यक्रमों के साथ कार्यक्रम का मूल्य निर्धारण करना चाहिए तथा उसकी उनसे तुलना की जानी चाहिए। साथ में कार्यक्रम की कार्यकुशलता और प्रभाविकता का मूल्यांकन करने के लिए विशेष उपाय, प्रत्येक उप-उद्देश्य तथा कार्यक्रम उद्देश्य स्थापित किये जाते हैं उनमें सें प्रत्येक की प्राप्ति के सम्बन्ध में खोज की रूपरेखा के स्वीक त सिद्धान्तों के अनुसार आँकड़े व्यवस्थित रूप से एकत्र किये जाते हैं। आँकड़ों के विभिन्न प्रकारों से प्राप्त होने वाले निष्कर्षो को लागू किये जाने वाले कार्यक्रमों को योजना के लिए प्रयोग किया जाता है।

परियोजना
(Projects)

अक्सर कार्यक्रमों को परियोजनाओं की सहायता से लागू किया जाता है। परन्तु कई बार इन दोनों के सम्बन्ध में भ्रम पैदा हो जाता है। अतः इन दोनों में भेद करना आवश्यक हो जाता है। कार्यक्रम निश्चित समय सीमा में नहीं बंधा होता जबकि परियोजना एक निश्चित समयावधि में कार्यान्वित की जानी होती है। वास्तव में निश्चित समय सीमा परियोजना की एक प्रमुख विशेषता होती है। दूसरे कार्यक्रम का कार्यक्षेत्र तथा परिसीमाएँ भी परियोजना की तरह सुपरिभाषित नहीं होती।

परियोजना का अर्थ (Meaning of Project)

परियोजना एक निश्चित आदि व अन्त वाली वह गतिविधि है जो किसी या किन्हीं विशिष्ट उद्देश्य या उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बनाई जाती है। परियोजना किसी विशेष भौगोलिक इकाई में कार्यान्वित की जाती है और एक विशिष्ट जनसमूह को लाभान्वित करती है। इसके साथ ही परियोजना को एक विशेष सत्ता या प्राधिकारी (Authority) के द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। परियोजना न तो कोई भौतिक वस्तु (Physical Object) है और न ही कोई अन्तिम उद्देश्य। वास्तव में यह किसी अन्य बड़े उद्देश्य की दिशा में गतिविधि मात्र हैं। क्योंकि परियोजना किसी लक्ष्य (mission) की प्राप्ति के लिए बनाई तथा लागू की जाती है इसलिए उस लक्ष्य की प्राप्ति के साथ ही

समाप्त या सम्पन्न भी हो जाती है। अतः कोई भी परियोजना इन दो बिन्दओं के बीच जीवित रहती है और इन दोनों बिन्दुओं के बीच के समय को परियोजना का जीवन काल (Project Life Cycle) कहा जाता है।

परियोजना निवेश, नीति कार्यवाही, और संस्थागत तथा अन्य कार्यवाही का एक विवेचित (Discrete) पैकेज है जो विशिष्ट विकास ध्येय को निर्धारित समय में प्राप्त करना चाहता है। एक अन्य विद्वान ने परियोजना को परिभाषित करते हुए लिखा है कि परियोजना समान उद्देश्य या लक्ष्य वाली अपूर्व, संयुक्त तथा संबद्ध गतिविधियों का वह अनुक्रम है जिसे एक विशिष्ट समयावधि तथा बजट राशि में और मापदण्डों के अनुरूप सम्पन्न किया जाना होता है। (A project is a sequence of unique complex and connected activies having one goal or purpose and that be completed by a specific time, within budget, and according to specification) अमेरिका के Project Management Institute के अनुसार परियोजना मानवीय तथा मानवीय संसाधनों का वह संयोग है जिनका एक विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति हेतु एक अस्थाई संगठन में गठजोड़ किया गया है (A project is a combination of huma and non-human resources pooled together in a temporary organisation to achieve a specific purpose).

परियोजना की विशेषताएँ (Characterstics of a Project)

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम परियोजना की कुछ सामान्य विशेषताओं का वर्णन कर सकते हैं :-

(1) परियोजना का एक विशिष्ट उद्देश्य होता है।

(2) परियोजना एक विशिष्ट समयावधि में सम्पन्न की जाती है।

(3) परियोजना एक विशिष्ट भौगोलिक इकाई में लागू की जाती है।

(4) परियोजना कुछ अर्न्तनिर्भर (interdependent) परन्तु एकल (individual) चरणों, जिन्हें Tasks कहते है, से मिलकर बनती है।

(5) परियोजनाएं गत्यात्मक (Dynamic) होती है और उनके आगे बढ़ने, परिवर्तित होने तथा व्यवहार करने के सम्बन्ध में कोई पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता।

(6) परियोजना में कुछ संसाधनों तथा मानव, धन, मशीन, वस्तुओं (Material), पूँजी आदि का प्रयोग होता है।

(7) परियोजना को मापदण्डों के अनुरूप लागू किया जाता है।

(8) सामान्यतः परियोजना को एक टीम के द्वारा लागू किया जाता है।

परियोजना के विभिन्न चरण (Variours Stages of a Project)

सभी परियोजनाएँ प्रायः निम्नलिखित पाँच चरणों से गुजरती हैं :-

(1) वैचारिक या पहचान चरण (Conception or Identification Phase)

(2) निर्माण चरण (Formulation Phase)

(3) नियोजन एवं संगठन चरण (Planning and Organisation Phase)

(4) क्रियान्वयन चरण (Implementation Phase)

(5) मूल्यांकन चरण (Evaluation Phase)

यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से किसी भी परियोजना के उपरोक्त चरणों सें क्रमानुसार होकर गुजरना चाहिए परन्तु यथार्थ में सदा ऐसा नहीं होता। न केवल किन्हीं भी विभिन्न दो चरणों में अतिराव या दोहराव (overlapping) पाया जाता है अपितु कई परिस्थितियों में इन सभी चरणों का कार्य एक साथ

(Simultaneously) चलता है। कई बार इन चरणों का यह दोहराव परियोजना की समयावधि को कम करने हेतु जान-बूझकर (Deliberately) किया जाता है परन्तु सामान्य परिस्थितियों में उपरोक्त चरणों को क्रमानुसार अपनाया जाना ही श्रेयस्कर समझा जाता है। इन चरणों का विस्त त विवरण नीचे दिया गया है:-

(1) वैचारिक या पहचान चरण :-

सभी परियोजनाओं का प्रथम चरण उनके बारे में विचार की उत्पत्ति है। परियोजना योजनाओं को लागू करने का एक प्रभावशाली माध्यम है। इसीलिए विभिन्न देशों में निजि प्रशासन के साथ-साथ लोक प्रशासन में भी परियोजना निर्माण का प्रचलन बढ़ रहा है। परन्तु हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि परियोजना योजनाओं को लागू करने का एक मात्र नहीं अपितु अनेकों माध्यमों में से केवल एक साधन है। इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि हर योजना को लागू करने हेतु परियोजनाओं का निर्माण किया जाए और इसलिए किस योजना के किस भाग के कार्यान्वयन के लिए कौन-सी परियोजना बनाई जानी चाहिए, इस सम्बन्ध में (परियोजना के) विचार की उत्पत्ति परियोजना प्रबन्ध का प्रथम चरण है।

परियोजना या परियोजनाओं की पहल विभागों, लोक निगमों, मण्डलों, आयोगों, संस्थानों द्वारा की जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन, विश्व बैंक, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम आदि के बाहरी दबाव अथवा आन्तरिक राजनीतिक दलों, विधायिका आदि के दबाव के फलस्वरूप सरकार नवीन परियोजना स्थापित करती है।

विकासशील देशों के अधिकांश संगठनों और विभागों में पहल और नवीन प्रक्रिया अपनाने की कमी है। इसके कुछ कारण हैं। प्रथम, यहाँ के संगठन और विभाग दैनिक कार्यों में अधिक व्यस्त रहते हैं। दूसरे, परियोजना की स्थापना के लिए वित्तीय संसाधनों की कमी का होना है। तीसरे, परियोजना को चलाने के लिए प्रशिक्षित सेवीवर्ग और अन्य साधनों की कमी होना है। चौथे, विकास योजना प्रक्रिया के लिए स्वस्थ वातावरण का अभाव है।

किसी भी स्थिति में परियोजना के लिए यह आश्वासन होना चाहिए कि तकनीकी और संस्थागत समाधान की व्यवस्था होगी और उचित नीतियों को स्वीकार किया जायेगा। भारत में परियोजनाओं की पहचान आँकड़ों की उपलब्धि के आधार पर की जाती है। इसकी सूचना राज्य औद्योगिक संचालनालय, तकनीकी विकास का महानिदेशालय, राष्ट्रीय योजना आयोग, संघीय वाणिज्य मन्त्रालय, आदि द्वारा प्रदान की जाती है।

कसौटी :-

परियोजना के लिए कुछ कसौटी होती है। परियोजना देश के आर्थिक विकास के लिए उपयोगी होनी चाहिए। साथ में सरकार की निर्धारित नीति के अनूकूल होनी चाहिए। पी. एस. बाजवा (Bajwa) ने कुछ महत्वपूर्ण कसौटियों का उल्लेख किया है। कसौटियाँ निम्नलिखित हैं :

(a) **कारक तीव्रता कसौटी** (Factor Intensity Criterion)

(b) **संयत्र आकार और जटिलता कसौटी** (Plant size and Complexity Criterion)

(c) **विदेशी विनिमय लाभ कसौटी** (Foreign Exchange Benefit Criterion)

(d) **वाणिज्य लाभप्रद कसौटी** (Commercial Profitability Criterion)

(e) **राष्ट्रीय आर्थिक लाभप्रद कसौटी** (National Economic Profitability Criterion)

भारत में सार्वजनिक उपक्रम परियोजनाओं के पूंजी निवेश अनुमति केन्द्र और राज्य सरकारों में निहित हैं।

(2) परियोजना का निर्माण :-

परियोजना निर्माण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा परियोजना के वैचारिक स्तर पर विकसित किए गए परियोजना प्रस्ताव के प्रत्येक पहलू का सूक्ष्म मूल्यांकन किया जाता है जो इसे एक अन्वेषणात्मक प्रक्रिया बना देता है। इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सर्वप्रथम परियोजना के उद्देश्यों का सटीक (Precise) निर्धारण अति आवश्यक है क्योंकि यदि परियोजना के उद्देश्य ही पूर्णतः स्पष्ट नहीं होंगे तो वह परियोजना वांछित परिणाम नहीं दे पायेगी। उद्देश्यों के निर्धारण के पश्चात् परियोजना का माप का स्तर (Size) तथा स्थान (Location) के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय लिया जाता है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए परियोजना का विभिन्न कोणों से विश्लेषाणात्मक (Analytical) अध्ययन किया जाता है। इस विश्लेषणात्मक अध्ययन को निम्नांकित सात भागों में विभक्त किया जाता है :-

(i) सम्भावना विश्लेषण

(Feasibility Analysis)

सम्भावना विश्लेषण परियोजना निर्माण की पहली सीढ़ी है। इसके अन्तर्गत वैचारिक चरण पर विकसित किए गए परियोजना प्रस्ताव (Project Proposal) का सम्भावना सम्बन्धी अध्ययन किया जाता है। अर्थात यह जानने का प्रयास किया जाता है कि क्या यह प्रस्ताव सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है? इस स्तर पर परियोजना प्रस्ताव का आन्तरिक तथा बाह्य अवरोधों (Constraints) के सन्दर्भ में मूल्यांकन किया जाता है। इस मूल्यांकन के परिणाम स्वरूप तीन विकल्प उभर कर सामने आते हैं - प्रथम, परियोजना प्रस्ताव सम्भावित लगता है ; दूसरे, परियोजना प्रस्ताव असम्भाव्य प्रतीत होता है; त तीय आवश्यक तथ्यों एवं सूचनाओं के अभाव में किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुचताँ। यदि परियोजना प्रस्ताव असम्भाव्य (Not Feasible) प्रतीत होता है तो उसका वहीं परित्याग कर दिया जाता है और यदि वह सम्भावित लगता है तो उसे स्वीकार कर दूसरी प्रकार के विश्लेषण की ओर कदम बढ़ाये जाते हैं। परन्तु यदि तथ्यों एवं सूचनाओं के अभाव में किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सका हो तो सम्बन्धित आँकड़ों एवं सूचनाओं के संकलन (Collection) के और अधिक गंभीर प्रयास किए जाते हैं।

(ii) तकनीकी-आर्थिक विश्लेषण

(Techno-Economic Analysis)

परियोजना के तकनीकी-आर्थिक विश्लेषण के अन्तर्गत परियोजना के द्वारा उत्पादित वस्तुओं या सेवाओं की माँग की सम्भावनाओं का अनुमान लगाया जाता है तथा परियोजना के लिए उपयुक्त तकनीक का भी चयन किया जाता है। क्योंकि परियोजना के द्वारा कुछ वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन किया जाता है अतः उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं की बाजार में माँग सम्भावनाओं की तलाश करना आवश्यक हो जाता है। वास्तव में, उत्पादित वस्तुओं तथा सेवाओं का बाजार विश्लेषण तकनीक-आर्थिक विश्लेषण का अर्न्तनिहित (in-built or inherent) तथा अहम् भाग है। इसके अतिरिक्त परियोजना के आकार तथा उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग सम्भावनाओं के सन्दर्भ में परियोजना का तकनीकी विश्लेषण किया जाता है और यह निर्धारित किया जाता है कि किस तकनीक का उपयोग किया जाए।

(iii) परियोजना अभिकल्प एवं नेटवर्क विश्लेषण

(Project Design and Network Analysis)

अभिकल्प एवं नेटवर्क विश्लेषण के स्तर पर व्यक्तिगत गतिविधियों (Individual Activities) जिन से मिल कर परियोजना बनती है या जिनमें परियोजना को विभाजित किया जाता है, तथा उनके अर्न्तसम्बन्धों को परिभाषित करने का प्रयास किया जाता है। परियोजना के अन्तर्गत सम्पन्न की जाने वाली विभिन्न घटनाओं (Events) के श्रेणीबद्ध किया जाता है। परियोजना की विस्त त रूपरेखा

तैयार की जाती है जिनमें कि परियोजना के अन्तर्गत सम्पन्न किए जाने वाले विभिन्न गतिविधियों (Activities) घटनाओं (Events) आदि को समयावधि (Time-Period) आवँटित (Allocate) किया जाता है। यह प्रक्रिया परियोजना में प्रयुक्त होने वाले मानवीय एवं भौतिक संसाधनों (Manual & Material Inputs) के विश्लेषण की प्रक्रिया का मार्ग प्रशस्त करती है।

(iv) संसाधन विश्लेषण

(Input Analysis)

परियोजना निर्माण के संसाधन विश्लेषण के स्तर पर परियोजना के वास्तविक या भौतिक रूप में आरम्भ करने से पूर्व तथा परियोजना के आरम्भ होने के उपरान्त (During the construction of the project and during the operation of the project) जिन संसाधनों (Inputs) की आवश्यकता पड़ेगी उनका विस्त त विश्लेषण मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही द ष्टियों से किया जाता है। परियोजना निर्माण के अभिकल्प विश्लेषण के स्तर पर परियोजना को जिन Activities, Events आदि में बांटा गया था उन सभी की (संसाधनों-मानवीय तथा भौतिक दोनों ही) के सम्बन्धों में आवश्यकताओं का विस्त त मूल्यांकन किया जाता है। इसके साथ ही यह भी निर्धारित किया जाता है कि इन संसाधनों में से कौन से पुर्व-उपयोगी (Recurring Inputs) हैं तथा कौन-से गैर-पुर्न-उपयोगी (non-Recurring Inputs) हैं, इसके अतिरिक्त इन संसाधनां की उपलब्धता (Availability) सम्बन्धी विश्लेषण भी इसी स्तर पर किया जाता है। संसाधनों के उपरोक्त विश्लेषण के संदर्भ में परियोजना की सम्भाव्यता तथा व्यवहारिकता (Feasibility or Practicability) का पूर्वालोकन किया जाता है।

(v) वित्तिय विश्लेषण

(Financial Analysis)

संसाधन विश्लेषण (Inputs Analysis) की उपरोक्त प्रक्रिया के आधार पर परियोजना की कुल लागत तथा परियोजना लागू करने के विभिन्न चरणों में धन की आवश्यकता का विश्लेषण किया जाता है। वित्तिय विश्लेषण विभिन्न परियोजनाओं को जाँचनें के लिए तुलनात्मक आधार प्रदान करता है और इस प्रकार निर्णय-निर्माण प्रक्रिया (परियोजना के चयन सम्बन्धी) में सहायता प्रदान करता है। Discounted Cash Flow, Cost-Volume-Profit Relationship, Ratio Analysis आदि वित्तिय विश्लेषण की कुछ महत्वपूर्ण तकनीकें हैं।

(vi) लागत-लाभ विश्लेषण

(Cost-Benefit Analysis)

वित्तिय विश्लेषण के अन्तर्गत जहाँ केवल परियोजना से सम्बन्धित लागतों (Cost or Inputs) के सन्दर्भ में परियोजना से होने वाले लाभ या हानि का निर्धारण किया जाता है वहीं लागत-लाभ विश्लेषण के अन्तर्गत परियोजना से अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित पक्षों पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध ययन किया जाता है अर्थात् यह जानने का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न ऐसे पक्षों जो कि परियोजना से प्रत्यक्ष रूप से नहीं जुड़े हैं उन्हें परियोजना के कार्यान्वित होने पर क्या लागत या कीमत चुकानी पड़ेगी तथा उन्हें क्या लाभ अर्जित होगा? दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जहाँ वित्तिय विश्लेषण केवल परियोजना से अर्जित होने वाले लाभ हानि का विश्लेषण करता है वहीं लागत-लाभ विश्लेषण राष्ट्रीय सन्दर्भ में परियोजना की व्यवहारिकता की जाँच करता है।

(Vii) निवेश-पूर्व विश्लेषण

(Pre-Investment Analysis)

निवेश-पूर्व विश्लेषण के स्तर पर परियोजना को औपचारिक एवं अन्तिम स्वरूप प्रदान किया जाता है। उपरोक्त सभी मूल्यांकनों एवं विश्लेषणों के आधार पर प्राप्त निष्कर्षो को संचित कर एक स्पष्ट

एवं स्वच्छ तस्वीर प्राप्त की जाती है। फलतः परियोजना को इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि परियोजना प्रायोजक (Project Sponsoring), परियोजना कार्यान्वयक (Project Implementing) एवं बाह्य सहायक अभिकरण (Outside or External Assisting Agency) सभी परियोजना को अपनाने या छोड़ने (To Take up or Abandon) के सम्बन्ध में सरलतापूर्वक अन्तिक निर्णय ले सकें।

(3) परियोजना नियोजन एवं संगठन

(Planning & Organising the Project)

परियोजना निर्माण का कार्य पूरा होने के पश्चात् परियोजना के कार्यान्वयन के बारे मे विस्त त नियोजन किया जाता है तथा आवश्यक संगठन का निर्माण किया जाता है। इस चरण में सर्वप्रथम यह निर्धारण किया जाता है कि क्या परियोजना को कार्यान्वित करने के लिए वर्तमान संगठन पर्याप्त है अथवा इसमें (उपलब्ध संगठन में) कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है अथवा किसी सर्वथा नए संगठन का निर्माण करने की आवश्यकता है। संगठन के सम्बन्ध में निर्णय लेने के पश्चात् दूसरा प्रमुख कार्य पदाधिकारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में है। अर्थात क्या वर्तमान अधिकारीगण इस परियोजना को कार्यान्वित करने में पर्याप्त, सक्ष्म एवं कुशल हैं अथवा अतिरिक्त कर्मियों की सेवाओं की आवश्यकता है? यदि अतिरिक्त कर्मियों की सेवाओं की आवश्यकता है, तो इस तथ्य को घ्यान में रखते हुए कि परियोजना अवधि ा में किस समय उनकी सेवाओं की आवश्यकता पड़नी है, उनकी सेवाएँ Hire करने का प्रबन्ध करना।

तीसरे इस चरण में यह भी निर्धारित किया जाता है कि परियोजना में लगाये जाने वाले विभिन्न अधि ाकारियों का क्या उत्तरदायित्व होगा? अर्थात् परियोजना की विभिन्न Activities, Tasks तथा Events आदि को पूरा करने के सम्बन्ध में विभिन्न अधिकारियों एवं कर्मचारियों के क्या कार्य तथा कर्तव्य होंगे? इसके अतिरिक्त विभिन्न पदाधिकारियों की गतिविधियों में समन्वय लाने का कार्य भी इसी चरण में पूरा किया जाता है। पाँचवा, परियोजना के लिए भौतिक संसधान जुटाने सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय भी इसी स्तर पर लिये जाते हैं। परियोजना की प्रगति के विभिन्न चरणों को ध्यान में रखते हुए (Considering the Different Phases during the Progress of the Project) यह योजना बनाई जाती है कि किस भौतिक संसाधन (Input) की कितनी मात्रा में किस समय पर आवश्यकता पड़ेगी। इन तथ्यों के प्रकाश में वांछित भौतिक संसाधनों (Physical Inputs) की समयानुसार एवं आवश्यकतानुसार पूर्ति को सुनिश्चित किया जाता है।

(4) परियोजना का कार्यान्वयन

(Implementation of Project)

परियोजना का नियोजन एवं संगठन संम्बन्धी कार्य पूरा होने के उपरान्त अगला चरण उसके क्रियान्वयन का है। परियोजना के क्रियान्वयन का तात्पर्य है परियोजना पर स्थूल या भौतिक या मूर्त रूप में कार्य करना। इस चरण को अन्य चरणों से भली प्रकार अलग किया जा सकता है क्योंकि यह केवल परियोजना कार्यान्वयन के स्तर पर ही होता है कि लोगों को अपनी आँखों के समक्ष कुछ गतिविधि दिखाई देती है। उदाहरण के तौर पर राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (दिल्ली) में मैट्रो रेल परियोजना का वर्तमान में क्रियान्वयन चरण चल रहा है और प्रतिदिन लोगों को अपनी आँखों के सामने कुछ-न-कुछ गतिविधि दिखाई देती है। वास्तव में परियोजना कार्यान्वयन परियोजना प्रबन्ध ान का सबसे महत्वपूर्ण चरण है क्योंकि परियोजना का 80-85% कार्य इसी चरण में सम्पन्न किया जाता है। यही कारण है कि सामान्यत इस चरण को जल्दी से जल्दी आरम्भ करने की कोशिश रहती है।

परियोजना कार्यान्वयन में नेटवर्क तकनीक (Network Technique) को काफी महत्व दिया जाता है। नेटवर्क तकनीक का तात्पर्य है कि परियोजना को विभिन्न छोटी-छोटी गतिविधियों (जिन्हें हम Activities, Tasks, Events आदि कहते हैं) में बाँटा जाता है, इन सभी गतिविधियों का क्रम

(Sequence) निर्धारित किया जाता है, इन गतिविधियों के अर्न्तसम्बन्ध स्थापित किए जाते है, इन गतिविधियों को सम्पन्न करने की समय सीमा (न्यूनतम और अधिकतम) निर्धारित की जाती है तथा फिर यह सुनिश्चित किया जाता है कि प्रत्येक गतिविधि अपनी समय सीमा, धन सीमा तथा मापदण्ड़ों के अनुरूप पूरी हो। सामान्यतः परियोजना प्रबन्धन में दो नेटवर्क तकनीकें – CPM (Critical Path Method) तथा PERT (Programme Evaluation Review Technique) – प्रयोग में लाई जाती हैं।

PERT को सर्वप्रथम अमेरिकी सरकार के Polaris Fleet Ballistic मिशाइल परियोजना के नियोजन तथा कार्यक्रम निर्धारण (Planning & Scheduling) के लिए विकसित किया गया। जोखिम तथा अनिश्चितता की स्थिति में प्रयुक्त होने के लिए विकसित किए गए PERT को मुख्यतः शोध एवं विकास परियोजनाओं (Research & Development Projects), एयरोस्पेस परियोजनाओं (Aerospace Projects) तथा नई तकनीक का प्रयोग करने वाली परियोजनाओं में अधिक लाभदायक पाया गया है। इस प्रकार की परियोजनाओं में विभिन्न गतिविधियों को पूरा करने के लिए समय सीमा अत्यन्त परिवर्तनीय या अस्थिर (Variable) होती है। अतः PERT का रूझान (Orientation) 'अनुमान आधारित' परियोजनाओं (Probabilisitc Project) की ओर अधिक होता है।

दूसरी ओर CPM को 1956-57 में अमेरिका की Du Pont कम्पनी के द्वारा औद्योगिक इकाइयों में कार्यक्रम निर्धारण (Scheduling) समस्याओं के निराकरण हेतु विकास किया। CPM मुख्यतः लागत तथा समय के बीच विनिमय Trade Off से सम्बन्धित है तथा अधिकतर ऐसी परियोजनाओं में प्रयुक्त होता है जो कि पहले से विकसित और प्रयुक्त (Already developed and used) एवं स्थिर (Stable) तकनीकों का प्रयोग करती हैं और जिनमें कि तुलनात्मक रूप से जोखिम का अभाव (Relatively Risk-Free Projects) पाया जाता है। अतः CPM का रूझान (orientation) निश्चितता आधारित परियोजनाओं (Deterministic Projects) की ओर अधिक होता है।

परिवेक्षण
(Monitoring)

परिवीक्षण का प्रयोजन परियोजनाओं को समय में पूर्ण करना जिनके लिए योजना में संसाधनों की व्यवस्था की गयी है। एक अच्छी परिवीक्षण व्यवस्था का सार है, "विश्वसनीय सूचना-संचार"। परीवीक्षण के अनेक रूप होते हैं - (1) परियोजना क्रियान्वयन की भौतिक प्रगति (जैसे सिंचाई नहर, ऊर्जा योजना आदि), (ii) मूल क्षेत्र में स्थापित सार्वजनिक क्षेत्रीय इकाइयों की उत्पादन, उत्पादिता और लाभ प्राप्त की निष्पादन क्षमता, और (iii) पूँजीगत परिसम्पत्ति का रखरखाव जिससे खर्च का सुचारू सदुपयोग किया जा सके।

प्रतिवेदनों, बैठकों को समीक्षा और क्षेत्रीय निरीक्षणों द्वारा परिवीक्षण किया जाता है। लागू करने वाली इकाई का परिवीक्षण करना इसका प्रथम उत्तरदायित्व है। जब परिवीक्षण के विभिन्न स्तरों पर अतिव्यापी (Overlapping) और अधिक प्रतिवेदन होता है तब भ्रम और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में केन्द्र सरकार द्वारा समस्त केन्द्रीय क्षेत्रीय परियोजनाएँ जिनकी लागत 100 करोड़ रूपये थी एक मासिक फ्लैश रिपोर्ट (Flash Report) परिवीक्षण व्यवस्था प्रारम्भ की गयी थी। 20-सूत्री कार्यक्रम और अन्य केन्द्रीय परियोजनाओं के लिए अलग परिवीक्षण व्यवस्था थी।

कार्यक्रम क्रियान्वयन मन्त्रालय
(Programme Implementing Ministry)

1985 में एक स्वतन्त्र कार्यक्रम क्रियान्वयन मन्त्रालय की स्थापना की गयी थी। इस मन्त्रालय का कार्य केन्द्रीय क्षेत्रीय कार्यक्रमों की देखरेख करना था। इसके कार्य करने के तीन सम्भाग थे - (i) 20-सूत्रीय कार्यक्रम सम्भाग; (ii) आधारिक परिवीक्षण सम्भाग; (iii) परियोजना परिवीक्षण सम्भाग। तीनों सम्भाग अपने-अपने कार्य-क्षेत्र में परियोजना के परिवीक्षण का कार्य करते हैं।

परियोजना क्रियान्वयन की रचना कौशल
(Efficiency in Project Implementation)

योजना की सफलता कार्यक्रमों और परियोजना के कुशल एवं प्रभावशली क्रियान्वयन पर निर्भर करती है। समय पर परियोजना क्रियान्वित हो इसके लिए निरन्तर परिवीक्षण एवं मूल्यांकन करना आवश्यक है। इसे ध्यान में रखते हुए कार्यक्रम क्रियान्वयन मन्त्रालय ने क्रियान्वयन की प्रक्रिया में सुधार के लिए अग्रलिखित रचना-कौशल निर्धारित की है :

1. परियोजना प्रबन्ध की कला अभी भी शैशव स्थिति में है और उसे सन्तोषप्रद स्तर तक लाने के लिए निरन्तर प्रयास की आवश्यकता है। इसमें सुधार के लिए परियोजना परिवीक्षण सम्भाग ने सचिवों की समिति को निम्न सुझाव दिये:
   (a) परियोजना की पर्याप्त समीक्षा;
   (b) सम्बन्धित इकाइयों से विचार-विमर्श के बाद विस्त त परियोजना तैयार करना;
   (c) परियोजना की स्थापना और क्रियान्वयन के लिए आधुनिक प्रबन्ध तकनीक का उपयोग करना।
   (d) समस्त सार्वजनिक उपक्रम में स्थायी परिवीक्षण संगठन की स्थापना।
2. परियोजना प्रबन्ध में अनुशासन और क्रियान्वयन के लिए पर्ट (PER/CPM) तकनीक का उपयोग करना। इसके द्वारा परिवीक्षण सम्भाग परियोजनाओं पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है।
3. परियोजनाओं के निर्माण, क्रियान्वयन तथा कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए व्यावसायिक संस्थानों की मदद से प्रशिक्षण कार्यक्रमों की शुरूआत करना।
4. कार्यक्रम परिवीक्षण सम्भाग ने समस्याओं के समाधान और सुधार के लिए राष्ट्रीय कर्मशाला प्रारम्भ की है और पूर्ण हो चुकी परियोजनाओं का अध्ययन करके भविष्य में सुधार करने के लिए प्रयत्नशील है।

भारत में जो कार्यक्रम और परियोजनाएँ प्रारम्भ की गयी हैं उनके क्रियान्वयन में सन्तोषप्रद सफलता प्राप्त नहीं हुई है। आठवीं पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग ने इस दिशा में सुधार के लिए निम्न अनुशंसाएँ की हैं :

(i) स्थानीय स्तर पर ग्राम पंचायतों और जिला परिषदों को सशक्त बनाना।
(ii) एकीक त विकास द ष्टिकोण अपनाना।
(iii) कार्यक्रमों कें क्रियान्वयन में जनता को सम्मिलित करना।
(iv) कार्यक्रमों में लचीलापन अपनाना और पंचायतों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करना जिससे स्थानीय आवश्यकताओं और संसाधनों के अनुरूप योजना में परिवर्तन किया जा सके।
(v) स्वास्थ्य केन्द्र, विद्यालयों, जैसी अन्य स्थानीय सेवाओं का प्रबन्ध जिला परिषद और पंचायतों को सौंपना।

(vi) सक्षम ऐच्छिक इकाइयों को कार्यक्रमों में सम्मिलित करना।

(vii) योजना और क्रियान्वयन दक्षता को बढ़ाने के लिए न केवल प्रशिक्षण प्रदान करना बल्कि स्थानीय स्तर पर कार्यक्रम प्रबन्ध के ज्ञान में व द्वि करना भी आवश्यक है।

(5) मूल्यांकन
(Evaluation)

परियोजना का मूल्यांकन परियोजना प्रबन्ध का अन्तिम चरण है। किसी भी कार्यक्रम को करने के पश्चात् उसका मूल्यांकन करना आवश्यक है जिससे यह जाना जा सके कि सफलता किस अंश तक मिली है। साथ में, भविष्य में अधिक सफलता प्राप्त करने की त्रुटियों में सुधार किया जा सके। विकास योजना में राष्ट्रीय लक्ष्यों को ध्यान में रखकर परियोजना के परिणाम का मूल्यांकन करना चाहिए। इस मूल्यांकन की आवश्यकता इसलिए है कि प्राप्त अनुभव और सफलता का उपयोग उसी प्रक ति की समकालीन परियोजनाओं में किया जा सके। कुछ कमियों पर प्रकाश भी पड़ सकता है, क्योंकि परियोजनाएँ पूर्णतया नवीन तथा प्रायोगिक प्रक ति की होती हैं, उसके अन्तिम परिणाम परियोजना-निर्माताओं तथा अर्थशास्त्रियों के लिए बहुत महत्व के होते हैं। मूल्यांकन करने से कमियों की जानकारी हो जाती है जो मूल परियोजना की तैयारी में रह गयी थी और जिससे भविष्य में परियोजना के निर्माण में सहायता मिल जाती है। इसलिए समन्वित तरीके से परियोजना का क्रमबद्ध तथा समस्त द ष्टिकोणों से मूल्यांकन आवश्यक है। ऐसा इसलिए आवश्यक है ताकि परियोजना के लक्ष्यों की प्राप्ति में सफलता या असफलता, राष्ट्रीय विकास में इसके सम्पूर्ण योगदान का, लाभ या हानि का, लाभों की तुलना में प्राप्त लागत आदि का अनुमान लगाया जा सके। सही मूल्यांकन के लिए यह आवश्यक है कि परियोजना की निरन्तर देखभाल की जानी चाहिए और संरचनाओं को निरन्तर एकत्र किया जाना चाहिए और उन सूचनाओं का विश्लेषण और पुनरीक्षण का कार्य विशेषज्ञों द्वारा करना चाहिए।

Chapter - 23
विकास प्रशासन में जन-सहभागिता
(People's Participation in Development Administration)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बहुत सारे देश, जिन्हें 'विकासशील देशों' के नाम से पुकारा जाता है, विश्व के मानचित्र पर उभर कर आए। पूर्व में ये देश उपनिवेशवाद का शिकार होने के कारण, सामाजिक, आर्थिक एंव सांस्क तिक रूप से पिछड़े हुए देश थे तथा बहुत सारी समस्याएं जैसे गरीबी, भूखमरी, अशिक्षा, कुपोषण, बेरोजगारी स्वस्थ सुविधाओं का अभाव आदि समस्याओं सें घिरे हुए थे। अतः आजादी के बाद 'विकास 'इन देशों का मुख्य मुद्दा था। इन समस्याओं के समाधान हेतू इन देशों के प्रशासन ने' विकास प्रशासन का रूप धारण किया।

विकास प्रशासन द्वारा विभिन्न क्षेत्रों के विकास हेतु बहुत सारी विकास योजनाएं एंव कार्यक्रम तैयार किए गए और उनका संचालन किया गया। लेकिन इन विकास योजनाओं एंव कार्यक्रम के यथानिर्दिश व यथासम्भव परिणाम प्राप्त नहीं हुए। इनकी सहायता के लिए, इन कार्यक्रमों एवं योजनाओं में जन-सहभागिता को पूर्व शर्त के रूप में स्वीकार किया गया। इस बात पर भी बल दिया गया कि जन सहभागिता न केवल विकास कार्यक्रमों के लागू करने के स्तर पर ही आवश्यक है बल्कि इन कार्यक्रमों के बनाने के भी लोगों की भागीदार होनी चाहिए। इस प्रकार पिछले कुछ दशकों से विशेषकर 1960 के बाद जन सहभागिता का मुद्रा, विकास प्रशासन के सन्दर्भ में अत्याधिक महत्वपूर्ण बन गया हैं। लेकिन अब तक विकास प्रशासन इसके पूर्ण रूप को अपनाने में असफल रहा है।

भारत में नागरिकों की सहभागिता की प्रक ति और मात्रा पर व्यापक प्रयोग सिद्ध अध्ययनों से पता चला है कि औपनिवेशिक विरासत, सामाजिक विभिन्नता, द्ररिद्रता और निरक्षरता तथा राजनीतिक प्रक्रिया की विशेषता आदि की सभी पहलू मिलकर लोक प्रशासन में सक्रिय भाग लेने के लिए बहुत अधिक बाधा डालते हैं। विकास प्रशासन समाज के कल्याण हेतू अनेक नीतियाँ एंव कार्यक्रम बनाता है और उन्हें क्रियान्वित करता हैं। यें कार्यक्रम जनता के हितों को मध्यनजर रखकर ही तैयार किए जाते है। लेकिन इन कार्यक्रमों की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि इन कार्यक्रमों के निर्माण के समय लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए ताकि इन्हें उनकी आवश्यकता अनुरूप बनाया जा सके। अगर ये कार्यक्रम लोगों की आवश्कताओं से मेल खाते होंगे केवल तभी वे इनके सफल क्रियान्वन एंव मूल्यांकन में सहयोग कर सकेगें। अतः विकास प्रशासन की सफलता, इसके कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित किए बिना सम्भव नहीं है।

जन सहभागिता:अर्थ एंव परिभाषा
(People's Participation : Meaning & Definition)

साधारण शब्दों में जन सहभागिता का अर्थ विकास प्रशासन द्वारा विकास कार्यक्रमों एंव योजनाओं के निर्माण, क्रियान्वन एंव मूल्यांकन में प्रत्यक्ष रूप से जनता की भागीदारी को सुनिश्चित करना है।

रूमकी वासु के अनुसार, "विकास प्रक्रिया में लोगों की सहभागिता का अभिप्राय विकास प्रशासन में निर्णय लेने की विभिन्न परिस्थितियों में आम जनता और लक्षित जनता के सक्रिस सहयोग और इन कार्यो में उनके शामिल होने से हैं।

आनन्द प्रकाश अवस्थी के अनुसार, "जन सहभागिता का तात्पर्य नागरिकों का निर्णय लेने, नीति बनाने और नीति क्रियान्वन करने, प्रशासनिक प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित होना है।"[3]

जनसहभगिता की आवश्यकता
(Need of People's Participation)

विकासशील देशों मे विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों में जनसहभगिता की आवश्यकता के निम्न कारण हैं -

1. निर्माण प्रशासन में बेहतर निर्णय -निर्माण

(For taking effetive Decisions in Development Administration)

विकास प्रशासन द्वारा समाज कल्याण के सम्बन्ध में विभिन्न कार्यक्रम तैयार करते समय बहुत सारे निर्णय लिए जाते हैं। किसी कार्यक्रम के सम्बन्ध में गलत निर्णय उसकी असफलता कारण बन सकता है। अतः जनता के विभिन्न वर्गो के सम्बन्ध में बनाए जाने वाले कार्यक्रमों में उस वर्ग के लोगों की भागीदारी अति आवश्यक है ताकि वे कार्यक्रम उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाए जा सकें। अतः विकास प्रशासन के विभिन्न कार्यक्रमों की सफलता, उनसे सम्बन्धित निर्णयों में जनता की भागीदारी पर निर्भर करती है।

2. प्रशासन को पारदर्शिता लाने हेतुः-
(To ensure Transparency in Administration)

विकास प्रशासन में पारदर्शिता का होना अति आवश्यक है। पारदर्शिता का अर्थ है प्रशासन में किसी प्रकार की हेरा फेरी एंव भ्रष्ट प्रव तियों की कमी। इस ढ़ंग की पारदर्शिता के आधार पर ही विकास प्रशासन आम व्यक्ति के विश्वास को जीत सकता है लेकिन प्रशासन की विकासात्मक गतिविधियों एंव कार्यक्रमों में पारदर्शिता लाने के लिए भी जन सहयोग एंव जन सहभागिता की विकास प्रशासन के लिए अत्याधिक आवश्यकता है।

3. प्रशासन पर जन-नियन्त्रण हेतू
(To exercise control over administration)

विकास प्रशासन की सफलता के लिए प्रशासनिक गतिविधियों एंव कार्यवाही पर जन-नियन्त्रण का होना अति आवश्यक है। इस जन -नियन्त्रण के अभाव में प्रशासन के अन्दर शक्ति का दुरूपयोग एंव तानाशाही प्रव तियों का जन्म सम्भव है जो इसकी कार्यकुशलता पर बुरा प्रभाव डालती है। इस प्रकार प्रशासन की कार्यकुशलता के लिए प्रशासनिक बुराई पर अंकुश अति आवश्यक है और यह अंकुश प्रशासन में जनता की भागीदार को अधिक से अधिक बढ़ावा देकर ही सम्भव है।

4. जन समस्याओं का प्रभावी निदान :
(Effective solution of People's Problems)

जन सहभागिता के अभाव में विकास प्रशासन के द्वारा समाज के विभिन्न वर्गो की समस्याओं का प्रभावशाली ढ़ंग से समाधान सम्भव नहीं है। किसी भी जन समस्या का समाधान उस समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण समझ या जानकारी पर निर्भर करता है, जो उस समस्या से जुड़े हुए लोगों की प्रशासन में भागीदारी के आधार पर ही प्राप्त की जा सकती है। अतः जनता की विकास प्रशासन में अधिक से अधिक भागीदार जन समस्याओं को प्रभावी ढ़ंग से हल करने में कारगर सिद्ध हो सकती है।

5. विकास सम्बन्धी लाभों का समान रूप से वितरण को सुनिश्चित करने हेतू
(To ensure Equitable distribution of benefits of Development)

जन सहभागिता के अभाव में विकास प्रशासन द्वारा विभिन्न विकास कार्यक्रमों एंव योजनाओं की मदद से प्रदान किए जाने वाले लाभ केवल कुछ लोगों (विशेषकर अमीर) तक ही सीमित रह जाते हैं तथा आम व्यक्ति इनके लाभों से अछूता एंव वंचित रह जाता हैं। विकास कार्यक्रमों के लाभ प्रत्येक व्यक्ति तक पंहुच सकें, इसके लिए विकास प्रशासन में जनता की भागीदारी अति आवश्यक है और जब तक यह सुनिश्चित नहीं हो पाती तब तक गरीब लोगों को इन कार्यक्रमों का लाभ नहीं पहुंचाया जा सकता है।

6. विकास योजनाओं एंव नीतियों की सफलता क्रियान्वन हेतू:(For the successful implementation of Development plans and Polities)

किसी भी नीति एंव योजना की सफलता जन सहभागिता पर टिकी है। सरकार के नीति बनाने एंव उन्हें लागू कर देने मात्र से वे सफल नहीं होती, बल्कि उनकी सफलता तभी सम्भव है जब ऊपर से नीचे तक प्रशासन में जन सहभगिता हो। ये नीतियाँ एंव योजनाएं क्योंकि जनता के विकास हेतु बनाई गई हैं और उनमें जन सहभागिता न हो तो उनका सफल क्रियान्वन सन्देहस्पद हो जाता है। उस सूरत में उन योजनाओं के लिए अपने उद्देश्यों की प्राप्ति एक स्वप्न मात्र बनकर रह जाती है। उदाहरण के तौर पर भारत में सामुदायिक विकास योजना (CDP) की असफलता लोगों की सहभागिता की कमी के कारण ही हुई।

7. नागरिकों की बढ़ती मांगों को पूरा करने में नौकरशाही की असफलता
(Failure of Bureaucracy to fullfill citizen's Demands)

वर्तमान नौकरशाही, विकास प्रशासन के द्वारा संचालित कार्यक्रमों एंव नीतियों को जनता तक पहुंचाने तथा जनता की मांगो को पूरा करने में असफल रही है। अतः विकास भी नीतियों एंव कार्यक्रमों को सुचारू रूप से जन आवश्यकताओं के अनुरूप बनाने व आम व्यक्ति तक उन विकास कार्यक्रमों का पहुँचाने के सम्बन्ध में प्रशासन की प्रत्येक गतिविधि में जनसहयोग एंव जन-भागीदारी की आवश्यकता पड़ी।

जन सहभागिता का क्षेत्र
Scope of People 's participation:-

वैसे तो विकास प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र में जनता का सहयोग एंव भागीदारी आवश्यक है। लेकिन वे क्षेत्रे जिनमें जन-सहभागिता अत्याधिक अनिवार्य है, का वर्णन निम्न प्रकार है।

1. पर्यावरण एंव वनसम्पदा की सुरक्षा एंव विकास
(Development and Protection of Enviorment and Forest)

जनसंख्या विस्फोट के कारण वनों की कटाई बड़ी तीव्र गति से हुई है जिसके कारण वातावरण पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इसके बचाव के लिए अधिक से अधिक पेड़ लगाना एंव अवैध कटाई को रोकना अति आवश्यक है। इस कार्य में जनता का सहयोग , विकास प्रशासन के लिए अनिवार्य हो जाता है ताकि पर्यावरण को न केवल प्रदूषित होने से बचाया जा सके बल्कि बेहतर भी बनाया जा सके। इस सन्दर्भ में वन महोत्सव जैसे अवसरों पर अधिक संख्या में भाग लेकर जनता अपना सहयोग दे सकती है। इसके अतिरिक्त सुन्दरलाल बहुगुणा द्वारा चलाया गया चिपको आन्दोलन , इस सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण प्रयास कहा जा सकता है।

2. प्राक तिक आपदाओं से जूझने के लिए पूर्व तैयारी
(Disasterous Preparedness)

प्राक तिक आपदाएं जैसे कि भूकम्प , बाढ़, तूफान , महामारी आदि से भलीभांति जूझने के लिए पूर्व तैयारी करने में जनता का सहयोग प्रशासन के लिए अनिवार्य हो जाता है क्योंकि जनता स्थानीय परिवेश के सन्दर्भ में पूर्ण जानकारी रखती है। इस जानकारी के आधार पर विकास प्रशासन कुछ कार्य योजनाएं तैयार कर सकता है। ये कार्य योजनाएं किसी क्षेत्र विशेष से सम्बन्धित प्राक तिक आपदाओं से निपटने में कारगर सिद्ध हो सकती हैं। अतः ऐसी प्रभावी योजनाओं के निर्माण में जनता की भागीदार अत्याधिक आवश्यक है।

3. सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों में भागीदार
(Participation in the Programmes of social welfare)

विकास प्रशासन, समाज के विकास एंव कल्याण के सन्दर्भ में कटिबद्ध है। समाज कल्याण एंव विकास की दिशा में यह, समाज के विभिन्न वर्गों जैसे कि अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग, महिलाएं एंव बच्चों इत्यादि के सन्दर्भ में बहुत सारे विकास कार्यक्रम तैयार करता है तथा लागू करता है। ये कल्याण योजनाएं एंव कार्यक्रम वर्ग विशेष की समस्याओं को मध्यनजर रखते हुए तैयार किए जाते हैं। इन कार्यक्रमों के निर्माण एंव लागू करते समय, वर्ग विशेष के लोगों की भागीदारी अत्याधिक आवश्यक है। भारत में समाज कल्याण हेतू समाज के विभिन्न वर्गों के लिए बहुत सारे कार्यक्रम चलाए गए। परन्तु विभिन्न वर्गों की आवश्यक जन-सहभागिता उनसे सम्बन्धित कार्यक्रमों में न मिल पाने के कारण, लगभग सभी कार्यक्रम में अपने उद्देश्यों की पूर्ण प्राप्ति में असफल रहे।

4. जल संसाधनों एंव भूमि विकास कार्यक्रमों में
(Participation in Water Management & soil Conservation)

विकास प्रशासन के द्वारा जल संसाधनों के प्रबन्धन एंव भूमि के सरंक्षण हेतू काफी कार्यक्रम तैयार किए गए। इन कार्यक्रमों में पीने के पानी, सिंचाई के पानी, की व्यवस्था करना, भूमि कटाव रोकनाण उबड़ खाबड़ जमीन को समतल बनाना बंजर एवं अनुपयोगी जमीन को उपयोगी बनाना आदि सम्मिलित है। लेकिन ये कार्यक्रम लोगों की सुविधा एंव भलाई के लिए तैयार किए गए है जो उनकी प्रभावशाली भागादारी के बिना सफल होने असम्भव है। अतः इन कार्यक्रमों में जनसहभागिता आवश्यक है।

5. ग्रामीण विकास एंव गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम में भागीदारी
(Participation in Programmes of Rural Development & Poverty Allievation)

विकास प्रशासन ग्रामीण विकास एंव गांवो के स्तर पर गरीब लोगों की समस्याओं के निदान हेतू

बहुत सारे गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम तैयार करता है व उन्हें लागू करता है। ये कार्यक्रम गांव में सार्वजनिक परिसम्मतियों का विकास करके गरीब लोगों के लिए रोजगार के अवसरों के स जन से सम्बन्धित होते हैं। लेकिन इन कार्यक्रमों की सफलता, लक्षित समूह की भागीदारी के बिना सम्भव नहीं है। भारत में अब तक ऐसे बहुत सारे कार्यक्रमों के लाभ वास्तव में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों तक नहीं पहुंच पाए है।अतः प्रशासन के लिए अति आवश्यक है कि लक्षित समूह की भागीदार उनसे सम्बन्धित विकास कार्यक्रमों में सुनिश्चित की जाए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि विभिन्न क्षेत्रों में विकास प्रशासन द्वारा संचालित सभी कार्यक्रमों में जन-सहभागिता अत्याधिक अनिवार्य है। इसके अभाव में इन कार्यक्रमों का सफल क्रियान्वन एंव संचालन कठिन एंव असम्भव है।

विकास प्रशासन में जन सहभागिता के अभाव की समस्यांए (Problems of People's participation in Development Administration)

विकासशील देशों के प्रशासन में जनसहभागिता के अभाव से सम्बन्धित निम्नलिखित समस्यांए हैं।

1. राजनैतिक अनिच्छा (Lack of poilitcal will)

इन देशों के प्रशासन में जन सहभागिता की कमी का सबसे महत्वपूर्ण कारण राजनैतिक अनिच्छा सम्बन्धी है। यहां पर राजनैतिक लोग अपनी स्वार्थपरकता के कारण प्रशासन में जन-सहभागिता को पसन्द नहीं करते। जनता का बेवकूफ बनाकर सत्ता में बने रहना ही उनका मुख्य उद्देश्य होता है। इन्हीं चन्द स्वार्थो की पूर्ति हेतु वे जनता की दखल अन्दाजी राजनैतिक एंव प्रशासनिक मामालों में बढ़ाने के खिलाफ हैं।

2. जन जागरूकता का अभाव (Lack of Mass Awareness)

विकासशील देशों में अशिक्षा एंव दरिद्रता जैसी समस्याओं के अत्याधिक व्याप्त होने के कारण , बहुत सारे लोगों में प्रशासन सम्बन्धी गतिविधियां के बारे में बहुत कम जानकारी होती है। अधिकतर लोगों को समाज कल्याण के सन्दर्भ में सरकार द्वारा चलाए जा रह कार्यक्रमों की कोई जानकारी नहीं होती। इसी कारण वे इन कार्यक्रमों में हिस्सा नहीं ले पाते और उनके लाभों से वंचित रह जाते हैं। आमतौर पर इन देशों में जन-चेतना का अभाव प्रशासन में मनमानी को बढ़ावा भी देता है।

3. जन साधारण की माँगों की उपेक्षाः-

इन देशों में जन साधारण की माँगों की नौकरशाही के द्वारा अत्याधिक उपेक्षा की जाती है। यहां पर नौकरशाही यह मानकर चलती है कि वह लोकहित की सरंक्षक है और उसी के द्वारा जनहित की सही व्याख्या की जाती है। नौकरशाही के द्वारा तैयार किए कार्यक्रमों में जनता को विश्वास में नहीं लिया जाता । अतः ये कार्यक्रम जनसाधारण की माँगों एंव आवश्यकता से परे होते हैं। इसी कारण आम व्यक्ति प्रशासन की गतिविधियों एंव कार्यक्रमों में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाता।

4. कागजों की हेरा फेरी

इन देशों के प्रशासन में औपचारिकता (formalism) पर अत्याधिक बल दिया जाता है जिसके कारण नौकरशाह नियमों, विनियमों एवं प्रक्रियाओं मे उलझकर कागजों अथवा फाइलों को इधर से उधर घुमाते रहते हैं। कागज के घोड़े इधर से उधर दौड़ने की प्रक्रिया में ये नौकरशाह न तो शीघ्र

निर्णय ले पाते है और न ही जनता की भागीदारी को इन निर्णयों में सुनिश्चित कर पाते हैं।

5. नौकरशाही के द ष्टिकोण की समस्या
(Attitudinal Problem of Bureaucracy)

विकासशील देशों में जनसहभगिता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा नौकरशारी के द ष्टिकोण की समस्या है। यहां पर नौकरशाह अपने को समाज के अन्य सदस्यों से श्रेष्ठ समझते हैं और अहंकारपूर्ण व्यवहार करते हैं। आज भी वे अपने-आपको जनता के सेवक की बजाय स्वामी समझते हैं। इसी कारण वे जन-साधारण के साथ घुलना -मिलना पसन्द नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप नौकरशाहों और आम जनता के बीच दूरियाँ बढ़ती जाती हैं।

6. अपक्षपाती व्यवहार की कमी
(Lack of fair play)

प्रशासन में कार्यरत नौकरशाहों का व्यवहार काफी हद तक पक्षपात पूर्ण होता है। जन साधारण को छोटे-छोटे कार्यों की पूर्ति हेतु, इनके चक्कर काटने पड़ते हैं और पैसे भी देने पड़ते हैं जो प्रशासन में भ्रष्ट प्रव तियों को जन्म देता है। आज भ्रष्टाचार इन देशों के प्रशासन की अहमभूत बुराई बन गई है। नौकरशाही अपने पद और प्रभाव का दुरूपयोग करके अनूचित तरीके से धर्नाजन करती है। इसीकारण आज जन साधारण को प्रशासन में अपक्षपाती रवैये की कमी नजर आती है।

7. सामाजिक विविधताएं
(Social Diversities)

इन देशों के सामाजिक ढ़ांचे में कई प्रकार की विविधताएं व्याप्त पाई जाती है। ये विधिताएं धर्म जाति, भाषा व क्षेत्र आदि से सम्बन्धित हैं। ये विविधाएं समाज में आपसी लड़ाई, झगड़े दंगे फसाद आदि बुराईयों को जन्म देती हैं। प्रशासन इस प्रकार की बुराईयों को सहज ढ़ंग से लेता है लेकिन जन साध ारण इनमें इतना उलझा होता है कि वह प्रशासनिक गतिविधियों में किसी प्रकार का योगदान नहीं कर पाता।

जन सहभागिता को प्रशासन में सुनिश्चित करने के तरीके
Measures to ensure People's participation in Administration

जन सहभागिता को विकास प्रशासन की गतिविधियों में सुनिश्चित करने के सन्दर्भ में निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं-

1. जन चेतना का विकास
(Generation of Mass Awareness)

जन-साधारण विकास प्रक्रिया में अपना पूर्ण सहयोग तभी दे सकता है जब आम व्यक्ति को विकासात्मक कार्यक्रमों एंव योजनाओं के सन्दर्भ में पूर्ण ज्ञान हो। अतः सभी लोगों केा इस बात का ज्ञान होना अनिवार्य है कि उनके कल्याण हेतु कौन-कौन से कार्यक्रम व योजनाएं सरकार द्वारा चलाई गई है। इन कार्यक्रमों व योजनाओं से वे कैसे लाभ उठा सकते हैं ? और इनके सफल क्रियान्वन में वे कैसे अपना योगदान दे सकते हैं। इन सब बातों की पूर्ण जानकारी ही लोगों की भागीदारी को विकास कार्यक्रमों में सुनिश्चित करके, उनको सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

2. प्रशासनिक प्रक्रियाओं की सरलता
(Simplification of administrative procedures

विकास प्रशासन की कार्यवाही में जनता की सहभागिता को सुनिश्चित करने की दिशा में प्रशासनिक प्रक्रियाओं को अत्याधिक सरल बनाना एक महत्वपूर्ण कदम कहा जा सकता है। छोटे-छोटे कार्यो को करवाने के लिए भी जन साधारण को प्रशासन की कठिन प्रक्रियाओं से होकर गुजरना पड़ता है जो उनकी समझ से बाहर है। इन कार्यो को करवाने के लिए उन्हें बिचौलियों की सहायता लेनी पड़ती जो प्रशासन एंव जनता की दूरी को ओर बढ़ा देता है। अतः प्रशासन की सभी प्रक्रियाओं का इतना सरल बनाया जाए ताकि आय व्यक्ति उनको समझ सके और उनको अपनाकर स्वंय प्रशासन सम्बन्ध ी गतिविधियों में अपनी भूमिका निभा सके।

3. सुचारू संचार व्यवस्था
(Effeective Communication system)

विकास प्रशासन की गतिविधियों में जन सहभागिता को बढ़ावा देने के सन्दर्भ में जनता एंव प्रशासन के बीच सुचारू संचार व्यवस्था होना काफी कारगर सिद्ध हो सकता है। ऐसी संचार व्यवस्था के माध्यम से जनता को यह स्पष्ट करना कि प्रशासन ने जन कल्याण हेतू कौन -2 से कार्यक्रम चलाएं है? और प्रशासन को यह बता पाना कि जन साधारण की क्या आवश्यकताएँ है? और वह किस ढ़ंग के विकास कार्यक्रम चाहती है? काफी सरल हो जाता है। पत्र -व्यवहार, सन्देशों का आदान-प्रदान , लोक सम्पर्क एंव अन्य माध्यमें के लिए पर्याप्त सुविधाओं का होना, प्रशासन में जन सहभागिता को बढ़ावा देने में अहम भूमिका निभा सकता है। आजकल संचार व्यवस्था को चुस्त दुरूस्त बनाने की दिशा में कम्पयूटर , इन्टरनेट टेलीविजन इलैक्ट्रोनिक मीडिया, पत्रिकांए इत्यादि का सहारा लिया जा रहा है।

4. शक्तियों का विकेन्द्रीकरण
(Decentralisation of power)

विकास प्रशासन को सुचारू रूप से कार्य करने के लिए शक्तियों का विकेन्द्रीकरण अति आवश्यक है। शक्तियों का अत्याधिक केन्द्रीकरण नौकरशाही के अनेक दोषों जैसे कि भावहीनता , प थकता , कार्य में विलम्ब , कार्य का बेढँगापन, स्थानीय स्थिति के विषय में अज्ञानता इत्यादि को बढ़ावा देता है। अतः नौकरशाही एंव प्रशासन को दोष मुक्त बनाने के लिए शक्तियों का प्रशासन के विभिन्न स्तरों पर विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए। इसके साथ-साथ प्रशासन में जन साधारण के विश्वास को बनाए रखने के लिए कई बार तुरन्त निर्णय लेने होते हैं लेकिन सम्बन्धित अधिकारी के पास यह शक्ति न होने के कारण, ऊपर से निर्णय की प्रतिक्षा करनी पड़ती है लेकिन तब तक देर हो चुकी होती है। इस कारण जनता प्रशासन में अपने विश्वास को खो देता है।

5. नौकरशाही के व्यवहार में बदलाव लाना
(Behavioural changes in Bureaucracy)

विकासशील देशों के प्रशासन में जन-सहभागिता को सुनिश्चित करने के लिए इन देशों की नौकरशाही के व्यवहार एंव रवैये में अत्याधिक बदलाव की आवश्यकता है। उन्हें अपने आपको जनता का सेवक समझना चाहिए न कि स्वामी। उन्हें लोगों के साथ सौर्हादपूर्ण व्यवहार करके अपने एंव जनता के बीच दूरी को कम से कम करना चाहिए। जनता के लिए बनाए जाने वाले कार्यक्रम जन आवश्यकताओं के अनुसार हो ताकि अधिक से अधिक लोग उनमें भाग ले सकें।

इसके अतिरिक्त नौकरशाही को भ्रष्टाचार एंव अनैतिकता से बचाने के लिए उसमें नैतिक मूल्यों का संचार किया जाना आवश्यक है। इससे नौकरशाही अधिक कर्त्तव्य -निष्ठा के साथ कार्य करने को उन्मुख होगी।

6. गैर सरकारी एंव स्वैच्छिक संगठनों की भूमिका

(Role of Voluntary and non–governement organisations)

गैर सरकारी एंव स्वैच्छिक संगठन भी प्रशासन में जन सहभागिता को बढ़ाने की दिशा में एक अच्छी भूमिका निभा सकते हैं। ये संगठन प्रशासन एंव जनता के बीच एक बड़ी का काम करते है। प्रशासन के साथ मिलकर जनकल्याण हेतू बहुत सारी योजनाएं एंव कार्यक्रम तैयार करते हैं तथा लोगों को इन के बारे में जानकारी देकर जन-समर्थन के साथ इन कार्यक्रमों को प्रशासन की मदद से लागू करवाते हैं। इस प्रकार प्रशासन जन सहयोग को बढ़ावा देने के लिए अधिक से अधिक से अधिक कार्यक्रम इन संगठनों के सहयोग से बना सकता है और उन्हें लागू कर सकता है।

Chapter - 24
विशेषीकृत एजेंसियों की विकास में भूमिका
(Role of specialised Agencies in Development)

गरीबी उन्मूलन सम्बन्धी समस्या विकाशील देशों के सामने एक मुख्य चुनौती बन गई है । हाँलाकि इसे दूर करने के लिए लगभग सभी देशों ने भरपूर प्रयास किया। परन्तु एक लम्बे समय के बाद इन सभी में एक बात पर मतैक्य उभर कर आया उनके द्वारा संचालित सभी कार्यक्रम अपर्याप्त एंव अधूरे हैं और उन्हें अपने तरीकों में बदलाव लाना होगा भारत भी इन देशों में से एक है।

भारत में गरीबी उन्मूलन के सम्बन्ध में पहली पंच वर्षीय योजना के तहत 'सामुदाायिक विकास कार्यक्रम' (Coummunity Development Programmes) चलाए गए। इन कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य लोगों के जीवन स्तर को उपर उठाना था परन्तु ये कार्यक्रम अपने उद्देश्य की प्राप्ति में असफल रहे। सरकार के द्वारा द्वितीय पंचवर्षीय योजना के तहत सत्ता के विकेन्द्रीकरण का प्रयास किया गया। इस प्रयास के तहत बलवन्त राय मेहता कमेटी (B.R. Mehta Committee) की सिफारिशों के अन्तर्गत जिला ब्लाक एवं गांव के स्तर पर जिला परिषद् , ब्लाक सीमित एंव ग्राम पचांयतों का गठन किया गया ताकि विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों में प्रत्येक स्तर के लोगों की भागीदारी को सुनिश्चित किया जा सके। लेकिन यह प्रयास भी बहुत अधिक सफल नहीं हो सका। तीसरी पंचवर्षीय योजना के तहत देश के सम्पूर्ण विकास और आर्थिक असमानता को कम करने का प्रयास किया गया और इस समबन्ध में बहुत सारे कार्यक्रम सघन क षि क्षेत्रीय कार्यक्रम (I.A.A.P) समग्र क षि विका कार्यक्रम (I.A.D.P), एंव अधिक उपज किस्म कार्यक्रम (H.Y. V. P) आदि देश की उपजाऊ व समतल भूमि वाले क्षेत्रों में खेती की पैदावार को बढ़ाने के लिए चलाए गए। लकिन बहुत जल्द ही ऐसा महसूस किया गया कि आर्थिक विषमताएं घटने की बजाए बढ़ने लगी क्योंकि इन कार्यक्रमों का लाभ गरीब व्यक्तियों की बजाए अमीरों को अधिक मिला। इन कार्यक्रमों के परिणास्वरूप खेती की पैदावाद बढ़ने के साथ-साथ बेरोजगारी एंव आर्थिक विषमताओं को भी बढ़ावा मिला।

उपरोक्त प्रयासों के फलस्वरूप ऐसा महसूस किया गया कि जब तक गरीबी पर सीधा प्रहार (Attack) नहीं किया जाएगा। तब तब विकास सम्बन्धी प्रयास गरीबों की मदद नहीं कर सकतें हैं। अतः आर्थिक विषमताओं को दूर के लिए तथा गरीब लोगों के जीवन स्तर सुधार लाने के लिए, कुछ ठोस तरीके (Concrete Measures) में अपनाने की बात सामने आई। इस सम्बन्ध में Rural Credit Review Committee का गठन किया गया और उसकी सिफारिशों को मध्यनजर रखते हुए कुछ विशेषीक त एजेन्सियों का निर्माण किया गया ताकि गरीबी की समस्या पर सीधे तौर से प्रहार किया जा सके और गरीबों की मदद की जा सके।

मुख्य विशेषीक त एजेन्सियाँ (Main specialised Agencies)

1. सूखा सम्भावित क्षेत्रीय कार्यक्रम (Drought Prone Area DPA)

2. **मरूभूमि विकास कार्यक्रम** (Desert Development programme (DDP)
3. **कमाण्ड क्षेत्रीय विकास आर्थिरटी** (Command Area Development Authority (CADA)
4. **पर्वतीय विकास आर्थिरटी** (Hill Development Authority) (HDA)
5. **एकीक त जनजाति विकास एजेन्सी** (Intergrated Tribal Development agency (ITDA)
6. **परिसम्पति मूलक द ष्टिकोण** (Asset oriented approach)

विशेषीक त एजेन्सियों की मुख्य विशेषताएँ (Salient features of specialised agencies)

विकास के सम्बन्ध में निर्मित विशेषीक त एजेन्सियों की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. स्वायत्ता
(Autonomy)

इन सभी विशेषीक त एजेन्सियों को सहकारी सीमित अधिनियम के तहत गठित किया गया है। ऐसा प्रबन्धन पूर्व अप्रोच से भिन्न है। नए प्रबन्ध के अनुसार विशेषीक त एजेन्सियों को निर्णय-निर्माण प्रक्रिया एंव उन निर्णयों के लागू करने के सम्बन्ध में अधिक स्वायत्ता एंव लोचशीलता प्रदान की गई है। ये एजेन्सी Target group के द्वारा की जाने वाली Investment एंव उत्पादन से सम्बन्धित गतिविधि ायों के विषय में योजनाएं एंव कार्यक्रम तैयार कर सकती हैं।

2. उत्प्रेरक
(Catalyst)

ये विशेषीक त एजेन्सियाँ (target groups) लक्षित समूहों के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने एक उत्प्रेरक का कार्य करती हैं। इस सन्दर्भ में ये एजेन्सियाँ लघु एंव सीमान्त (Small & Marginal) क षको एंव भूमिहीन ग्रामीण दस्तकारों को आधुनिक तकनीकी का लाभ प्रदान करके उनके जीवन स्तर में सुधार लाने की कोशिश करती हैं।

3. सीमित प्रशासनिक स्टाफ
(Limited Administrative Staff)

इन एजेन्सियों का स्टाफ सीमित होता है क्योंकि ये एजेन्सिया विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों को लागू करने से सम्बन्ध नहीं रखती। इनके द्वारा निर्मित कार्यक्रमों को विभिन्न विभागों एंव संगठनों के द्वारा ही लागू किया जाता है। इनका मुख्य कार्य विभिन्न विभागों एंव संगठनों द्वारा लागू किए जा रहे कार्यक्रमों के मध्य समन्वय स्थापित करने का है। अतः इनका प्रशासनिक स्टाफ काफी हद तक सीमित ही होता है।

4. जिलाधीश का सम्मिलित होना
(Involvement of the District Collector)

लगभग सभी राज्यों के जिलाधीश इन एजेन्सियों के चैयरमैन के रूप में कार्य करते हैं। जिलाधीश विभिन्न विभागों के मध्य समन्वयक का कार्य करता है। प्रत्येक एजेन्सी में एक प्रोजैक्ट आफिसर एंव सहायक प्रोजैक्ट आफिसर जिलाधीश की मदद करने के लिए होता है।

5. आधिशासी निकास
(Governing Body)

प्रत्येक एजेन्सी की अपनी एक Governing Body होती है जो एजेन्सी के उद्देश्यों के सन्दर्भ में विभिन्न योजनाएं एंव कार्यक्रम तैयार करती है तथा एजेन्सी के वार्षिक बजट पर अपनी सहमति देती है।यह Govering Body एजेन्सी के प्रशासन एंव प्रबन्धन के सम्बन्ध में किसी भी कानून में फेरबदल कर सकती है।

6. वितीय सहायता
(Financial Assitance)

ये एजेन्सियाँ Target Goup को वितीय सहायता के रूप में Subsidy जिसे Margin money या seed money के नाम से पुकारा जाता है, भी प्रदान करती हैं। अलग- अलग एजेन्सी का Subsidy दर अलग-अलग होता है। Subsidy देने का मुख्य उद्देश्य Target group को राहत देने से होती है।

उपरोक्त विशेषीक त एजेन्सियों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है-

1. सूखा सम्भावित क्षेत्रीय कार्यक्रम
(Drought prone Area Programme)

भारत में सूखा व अकाल जैसी भंयकर आपदाओं से निपटने के लिए 1970 के दशक के आरम्भिक वर्षो (1970-71) में सूखा सम्भावित क्षेत्रीय कार्यक्रम (डी.पी. ए. पी.) का शुभारम्भ किया गया। देश के लगभग 128 जिले ऐसे हैं जिनमें न केवल सिचाँई सुविधाएं ही कम है बल्कि वर्षो भी औसत से कम होती है। सूखा प्रभावित क्षेत्र देश के कुल क्षेत्रफल का लगभग 19 प्रतिशत है जहां लगभग 12 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

डी.पी.ए.पी केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित स्कीम है तथा इस स्कीम पर जो खर्च किया जाता है वो केन्द्र एंव राज्य सरकारों के द्वारा बराबर-बराबर मात्रा में वहन किया जाता है। इस स्कीम का मुख्य अच्छी वर्षा उद्देश्यों वाले वर्षो में क षि की उत्पादकता के स्तर को बढ़ाना तथा कम वर्षा के दौरान नुकसान कम से कम होने देना है। इस स्कीम के तहत निम्नलिखित तरीके एंव कार्यनीतियाँ (Streategies) अपनाई जाती हैं।

1. सिंचाई के साधनों का प्रबन्ध एंव विकास ,
2. जमीन के अन्दर की नमी को बनाए रखने की व्यवस्था,
3. सूखारोधी किस्म की फसलें उगाना,
4. अन्य व्यवसाय जैसे पशुपालन, मुर्गीपालन, भेड़पालन आदि को बढ़ावा देना तथा इनके लिए आधारभूत सुविधाएं मुहिया कराना।
5. क षि पद्धतियों में परिवर्तन एवं पशुओं की उन्नत नस्ल तैयार करना।
6. फसलों के क्रम निर्धारित करना एंव चरागाहों का विकास करना

यह स्कीम सूखाग्रस्त क्षेत्रों में अपनी कार्ययोजनाओं को अन्जाम देने में काफी हद तक सफल रही है। इसकी मदद से न केवल जमीन की नमी एंव जल सरंक्षण को बढ़ावा मिला है बल्कि भूमिगत पानी के अधिक से अधिक दोहन (Exploitation) को भी प्रोत्साहन मिला है। इसके साथ-2 पशुपालन की मदद से भी लोगों को काफी लाभ मिल पाया है। हांलाकि यह स्कीम आशातीत परिणाम प्राप्त करने में असफल रही है क्योंकि इन क्षेत्रों में अब तक आधारभूत सरंचनाओं (Infra Structural Development) जैसे सड़कें, बिजली , पानी व उत्पादित माल के विपणन आदि के विकास की समस्या महत्वपूर्ण बनी हुई है।

2. मुरूभूमि विकास कार्यक्रम
(Desert Development Programme) (DDP)

भारत सरकार ने 1997-78 में डी.पी.ए.पी. से मिलता-जुलता एक अन्य कार्यक्रम का आरम्भ किया जिसे मुरूभूमि विकास कार्यक्रम (डी.डी.पी) के नाम से जाना जाता है। यह स्कीम हरियाणा राजस्थान, हिमाचल प्रदेश , जम्मू कश्मीर एंव गुजरात राज्यों के लगभग 19 जिलों में फैला हुआ है। कुछ क्षेत्रों में यह स्कीम, डी.पी.ए.पी. के साथ-साथ भी चलाई जा रही है।

इस स्कीम का मुख्य उद्देश्य Desert Area का पुनः विघटन एंव Desert Condition के फैलाव को रोककर मुरूभूमि का बचाव एंव संरक्षण है। इसके साथ-साथ यहां पर पाए जाने वाले संसाधनों का अधिकतम प्रयोग करके इन क्षेत्रों के लोगों की आय स्तर एंव उत्पादकता के स्तर को बढ़ाकर इन क्षेत्रों का एकीक त विकास करना है। इस स्कीम के तहत निम्नलिखित कार्यनीतियाँ (Streategies)अपनाई जाती है-

1. चरागाहों का विकास,
2. वनों का विकास,
3. नहरों एंव सिंचाई के साधनों का विकास,
4. पशुपालन को बढ़ावा,
5. डेरी विकास को बढ़ावा आदि

यह स्कीम मरूस्थलीय लोगों के लिए काफी हद तक लाभदायक सिद्ध हुई है क्योंकि इसका फायदा काफी लोगों ने उठाया है। लेकिन जिन क्षेत्रों में यह स्कीम डी.पी.ए.पी., के साथ-साथ चलाई जा रही, वहां पर इन दोनों स्कीमों का विलय आवश्यक है ताकि इनके तहत विभिन्न कार्यनीतियों को सरल एंव प्रभावी ढ़ंग से कार्यान्वन किया जा सके।

3. नहरी क्षेत्र विकास प्राधिकरण
(Command Area Development Authority) (CADA)

भारत में पहली चार पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान सिंचाई सम्बन्धी समस्या के समाधान हेतु कुछ योजनाएं बनाई गई और इनके लिए काफी पैसा भी दिया गया लेकिन इन सबके परिणाम सन्तोष जनक नहीं थे और इसी कारण चौथी पंचवर्षीय के अन्तिम वर्ष में नहरी क्षेत्र विकास प्राधिकरण (सी. ए.डी.ए.) की स्थापना की गई जिसके अर्न्तगत विभिन्न कार्यक्रमों को पांचवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान मूर्त रूप दिया गया। ऐसें विकास प्राधिकरणों की स्थापना लगभग 16 राज्यों में की गई। इनके तहत लगभग 80 छोटी तथा मझौली परियोजनाएं लागू की गई।

सी.ए.डी.ए का गठन निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए किया-

1. सिंचाई प्रणाली का आधुनिकीकरण एंव कुशल संचालन,
2. ऊबड़-खाबड़ भूमि का समतलीकरण,
3. नहर की प्रत्येक मोरी (outlet) के तहत आने वाले क्षेत्र में पक्की नालियों का विकास करना,
4. नालियों के माध्यम से एकत्रित पानी को आवश्यतानुसार वितरित करना,
5. सिंचाई के लिए नहरों का निर्माण,
6. भूमि को दलदल, खारेपन एंव खराब होने से बचाना,
7. प ष्ठीय जल की कमी को पूरा करने के लिए भूमिगत जल का विकास,
8. मार्केटिंग एंव प्रोसेसिंग सुविधाओं का विकास
9. भूमिविकास बैंक ,भूमि सुधार निगम , क षक सेवा समिति और क्षेत्रीय विकास निगम आदि से संस्थागत ऋण की व्यवस्था करना आदि।

यह स्कीम सिचांई की समस्या का हल निकालने में काफी महत्वपूर्ण कही जा सकती है लेकिन हाल ही में किए गए अध्ययनों के अनुसार ऋण की पूर्ण मात्रा में वसूली न होने कारण ऋण प्रदान करने वाली संस्थाएं आगे नहीं आ रही हैं। इसके तहत ऐसे किसान जो डिफाल्टर हैं, का नम्बर बढ़ा है।

इसके अतिरिक्त इस स्कीम के तहत भूमि समतल करवाने सम्बन्धी कार्य काफी मंहगा होने के कारण, काफी किसानों ने इस प्रोग्राम में भाग नहीं लिया जिसके कारण इस स्कीम का भूमि समतल बनाने से सम्बन्धित लक्ष्य की प्राप्ति बहुत कम हो सकी। हांलाकि उपरोक्त बातों का हल निकालने के लिए आने वाले पंचवर्षीय योजनाओं में अनेक प्रावधान किए गए हैं।

4. पर्वतीय विकास कार्यक्रम
(Hill Area Development Prgrammes (HADP)

पर्वतीय क्षेत्रों की सामाजिक - आर्थिक परिस्थितियों को मध्यनजर रखते हुए, इन क्षेत्रों के विकास हेतू पर्वतीय विकास कार्यक्रम की शुरूआत की। यह स्कीम केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित है तथा इससे सम्बन्धित खर्च को केन्द्र सरकार वहन करती है। इसके साथ-साथ राज्य सरकार को प्राप्त Grants में से भी इस स्कीम पर पैसा खर्च किया जाता है। यह स्कीम पांचवी पंचवर्षीय योजना के दौरान शूरू की गइ। यह स्कीम उन क्षेत्रों से जुड़ी है जिन्हें 'पर्वतीय क्षेत्र' (Hill Areas) के नाम से पुकारा जाता है। इस स्कीम को उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल, असम, पश्चिम बंगाल, केरल, कर्नाटक, तमिलनाडू, गोवा तथा महाराष्ट्र राज्यों के पर्वतीय क्षेत्रों में लागू किया गया है।

एच.ए. डी. पी. स्कीम के मुख्य उद्देश्य (1) पर्वतीय क्षेत्र के लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति (2)पर्वतीय क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक विकास दर में बढ़ोतरी ,(3) पर्वतीय क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का विकास (4) पर्वतीय क्षेत्रों में पर्यावरण सन्तुलन बनाए रखना आदि हैं।

यह स्कीम पर्वतीय क्षेत्र के लोगों के लिए काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुई लेकिन यह स्कीम अपने उद्देश्यों को पूर्ण रूप से प्राप्त न कर सकी। इसके लिए स्वैच्छिक संगठनों सहित लोगों और उनके स्थानीय संगठनों का सहयोग प्राप्त करना अति आवश्यक है।

5. एकीक त जनजाति विकास अभिकरण
(Intergrated Tribal Development Agency (ITDA)

भारत में बहुत सारी जनजातियाँ पर्वतीय क्षेत्रों या घने जंगलों में पाई जाती हैं। इनका सामाजिक जीवन काफी सहज एंव सरल है। इनकी अर्थव्यवस्था काफी हद तक आत्मनिर्भर होती है। भारत की कुल जनसंख्या का ये जनजातियाँ लगभग 7 प्रतिशत हैं। ये जनजातियाँ अधिकतर दुर्गम स्थानों पर निवास करती हैं जो आधुनिक जीवन से काफी अलग-थलग होते हैं। इन जनजातियों की अपनी एक विशेष संस्क ति होती है। इनकी सामाजिक , आर्थिक , सांस्क तिक जीवन शैली, देश की अन्य प्रजातियों से काफी भिन्न हैं। इनकी साक्षरता दर काफी कम है इसी कारण शैक्षिक क्षेत्र में इनकी उपलब्धियाँ नाम-मात्र ही हैं।

हाल ही के वर्षो में सरकार द्वारा जनजाति क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों, खानों तथा सिंचाई के लिए नदियों पर बनाए गए बांधों से इनके प्राक तिक निवास स्थानों को बाधा पहुँचाई है। इन लोगों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा आदिवासी कल्याण कार्यक्रम चलाए गए। लेकिन इन कार्यक्रमों का लाभ इन लोगों को बहुत कम हुआ क्योंकि न केवल इन लोगों की सांस्क तिक जीवन शैली देश के अन्य लोगों से काफी भिन्न है बल्कि विभिन्न जनजातियों में आपस में भी काफी हद तक भिन्नता है।

भारत सरकार द्वारा आदिवासी बहुल क्षेत्रों के विकास हेतू एकीक त जनजाति विकास अभिकरण (आई. टी.डी.पी.) की स्थापना की जिसका मूल उद्देश्य जनजाति क्षेत्रों के पिछड़ेपन और आर्थिक द ष्टि से विकसित क्षेत्रों के बीच अन्तर को कम करना है। इसके साथ-साथ इन लोगों के उनके जीवन स्तर

को उपर उठाना और उनको शोषण से बचाना, आदिवासी जनजातियों को राष्ट्र की मुख्य धारा के साथ जोड़ना, भिन्न-भिन्न संस्क ति वाले आदिवासी इलाकों व लोगों की पहचान करना व उन्हें लाभ पहुंचाना, इत्यादि भी इस अभिकरण के मुख्य उद्देश्य हैं।

एकीक त जनजाति विकास अभिकरण द्वारा आदिवासी जनजातियों के कल्याण स्वरूप कई कार्य शुरू किए गए जैसे कि-

1. दुधारू पशुओं-भेड़ बकरी आदि की सप्लाई करना,
2. चारे के भूखण्ड़ों की स्थापना करना
3. लघु सिंचाई कार्य शुरू करना
4. सहकारी समितियाँ बनाने में सहायता करना
5. अधिक उपज देने वाली बीजों, पम्प सेट की सप्लाई , म दा सरंक्षण बागवानी एंव फलोद्यान सम्बन्धी विकास कार्य शुरू करना।

उपरोक्त सभी कार्यो में लाभार्थियों को 25 से 50 प्रतिशत तक ही आर्थिक सहायता (Subsidy) के रूप में दी जाती है। लेकिन कुछ अध्ययनों से प्राप्त जानकारी के अनुसार इस अभिकरण की Performance अभी तक सन्तोष जनक नहीं है। बहुत सारे आदिवासी लोगों को इस अभिकरण के विषय में सम्पूर्ण जानकारी न होने के कारण आज भी वे इस अभिकरण द्वारा दिए जाने वाले लाभों से वंचित हैं। इसके अतिरिक्त न केवल इन कार्यक्रमों की प्रक्रियाएं जटिल हैं बल्कि कुछ कार्यक्रम भी व्यावहारिक नहीं है। अतः आई.टी.डी. ए. की सफलता के लिए इन कमियों को दूर करना अति आवश्यक है।

6. परिसम्पत्ति मूलक द ष्टिकोण
(Assest Oriented approach)

भारत में गांव के स्तर पर पर्याप्त मात्रा में रोजगार के अवसर न होने के कारण भी गरीबी की समस्या को बढ़ावा मिला। हांलाकि सभी पंचवर्षीय योजनाओं में गरीबी उन्मूलन एंव रोजगार के अवसरों का स जन, मुख्य मुद्दा रहा। लेकिन गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों के लाभों से वास्तविक गरीब व्यक्ति वंचित ही रहा।

भारत सरकार ने गावों में गरीबी उन्मूलन के कुछ कार्यक्रम तैयार किए जिनका मुख्य उद्देश्य रोजगार स जन भी था। इन कार्यक्रमों को विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के तहत एक निश्चित समावधि में लागू किया गया। सरकार ने कुछ परिसम्पतियों के निर्माण के माध्यम से ही रोजगार स जन के अवसर गांव के स्तर पर उपलब्ध करवाने की कोशिश की। सरकार का यह द ष्टिकोण परिसम्पति मूलक द ष्टिकोण (Assest oriented apporach) कहलाता है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित कार्यक्रम मुख्य रूप से सरकार द्वारा चलाए गए।-

1. लघु किसान विकास अभिकरण
(Small Farmers Development Agency) (SFDA) एंव

सीमांत किसान और क षि मजदूर विकास अभिकरण
(Marginal Farmer's and Agricultural Labours Development Agency(MFLA)

1971-72 में ग्रामीण ऋण समीक्षा समिति की सिफारिशों पर लघु किसानों के विकास हेतु एस.एफ.

---

1. अवस्थी , आनन्द प्रकाश विकास प्रशासन, उपरोक्त प ० 289.

डी. ए. तथा सीमान्त किसान और क षि मजदूरों के विकास हेतू एम.एफ. ए. एल. नामक दो अभिकरण स्थापित किए गए। इन अभिकरणों के माध्यम से लघु एंव सीमान्त क षकों एंव भूमिहीनों के लिए विशेष कार्यक्रम चलाए गए। लाभार्थियों में उन लोगों को सम्मिलित किया गया जिनकी 50 प्रतिशत से अधिक आय क षि पर आधारित थी। लघु एंव सीमान्त किसानों के लिए भूमि सुधार के कार्यक्रम अपनाए गए तथा भूमिहीन क षि मजदूरों के लिए मुर्गीपालन, दुग्ध उत्पादन एंव अन्य पूरक रोजगार निर्धारित किए गए। लेकिन लाभार्थियों के उचित चयन न होने के अभाव में इन कार्यक्रमों के लाभ अयोग्य व्यक्तियों ने अधिक उठाए।

2. न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम
(Minimum Needs Programme)

1974 में भारत सरकार ने इस कार्यक्रम की शुरूआत की। इस कार्यक्रम के तहत गांव में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों के रहन सहन का स्तर सुधारने तथा उनकी उत्पादक क्षमता को बढ़ाने सम्बन्धी पहलुओं पर दबाव दिया गया।

गांव के स्तर पर न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत विभिन्न कार्य जैसे कि ग्रामीण सड़के , ग्रामीण जल आपूर्ति, शिक्षण संस्थाएं, ग्रामीण विद्युतीकरण, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र आदि के निर्माण , हाथ में लिए जाने के कारण ग्रामीण रोजगार के अवसर स्वतः ही बढ़ गए।

3. अन्त्योदय
(Antyodaya)

इस स्कीम का मुख्य उद्देश्य गांवों के सबसे गरीब लोगों को उपर उठाने से या है। यह स्कीम 2 अक्तूबर 1977 में लागू की गई । इसके तहत प्रतिवर्ष पांच सर्वधिक गरीब परिवारों का चयन एंव उन्हें आर्थिक द ष्टि से उपर उठाने की कोशिश की गई है। इस कार्यक्रम के अधीन कई स्कीमें चलाई गई है। इस कार्यक्रम के तहत गांव के सर्वधिक गरीब परिवारों को क षि का भूमि का आबंटन और क षि के विकास हेतु ऋण सुविधाएं तथा व द्धो, अशक्त एंव अपंग व्यक्तियों को व द्धावस्था पेशंन दी जाती थी इसके साथ-साथ प्रत्येक ऐसे परिवार को विभिन्न व्यवसाय जैसे कि सुअर पालन, भेड़-बकरी पालन, जूते बनाना, बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी या ऊटंगाड़ी आदि के लिए पांच हजार रूपए तक 50 प्रतिशत ऋण एंव 50 प्रतिशत अनुदान देने का भी प्रावधान था। बाद में यह कार्यक्रम समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आई. आर. डी. पी) के रूप में विकसित हुआ।

4. काम के बदले अनाज
(Food for work Programme)

यह कार्यक्रम 1977 में गांव के स्तर पर गरीब लोगों को काम के अवसर मुहैया कराने के लिए शुरू किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य गांव के स्तर पर स्थायी परिसम्पतियों का निर्माण और निर्माण के दौरान बेरोजगारों को खाली समय में रोजगार के अवसर उपलब्ध करना था। इस कार्यक्रम के तहत काम के बदले मजदूरी न देकर, उसी कीमत का अनाज दिया जाता था। गांव में यह कार्यक्रम काफी लोकप्रिय हुआ और परिणामस्वरूप काफी निर्माण कार्य ग्रामीण स्तर पर सम्पन्न हुए।

5. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम
(National Rural Employment Programme (NREP)

यह कार्यक्रम सन् 1980 में ग्रामीण स्तर पर बेरोजगारी की समस्या को ध्यान में रखते हुए शुरू किया

गया। इसे केन्द्रसरकार के तत्वाधान में लागू किया गया और इसके लिए केन्द्र सरकार व राज्य सरकार आधे-आधे साधन जुटाती रही। केन्द्र अपने हिस्से की कुछ अदायगी नकदी में करता था। इस कार्यक्रम का निष्पादन पंचायती राज संस्थाएं करती थी तथा कार्यान्वन जिला विकास एजेन्सी को सौंपा गया। इस कार्यक्रम में विकास परियोजनाओं एंव विभिन्न विशिष्ट वर्गो की रोजगार स जन योजनाओं में उपयुक्त तालमेल बैठाने की कोशिश की गई ताकि रोजगार के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों का विकास भी हो सके। इस कार्यक्रम के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों का विकास भी हो सके। इस कार्यक्रम के तहत सामाजिक वानिकी, चरगाहों का विकास, भूमि सरंक्षण, सिंचाई बाढ़ नियन्त्रण और जल निकास, गावों में तालाबों का निर्माण व उनका रख रखाव स्कूल व डिस्पेसंरियों के भवनों के निर्माण जैसी परियोजनाओं को देने की बात को महत्व दिया गया। इस कार्यक्रम में स्वैच्छिक संगठनों को शामिल किए जाने का भी प्रावधान था। 1989 में भारत सरकार ने इस कार्यक्रम को भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के साथ मिलाकर, जवाहर रोजगार योजना के रूप में बदल दिया।

6. ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम
(Rural Landless Employment Guarantee programme(RLEGP)

यह कार्यक्रम 1980 में भूमिहीन श्रमिकों के लिए रोजगार सुविधाएं पैदा कराने के सन्दर्भ में शुरू किया गया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य भूमिहीन श्रमिकों के परिवारों में कम से कम एक सदस्य को सालभर में 80 से 100 दिन का रोजगार मुहिया कराना था। भूमिहीन मजदूरों को रोजगार प्रदान करने के लिए इसके तहत बहुत सारे निर्माण कार्य जैसे कि सामाजिक वानिकी, शौचालयों का निर्माण , लघु सिंचाई योजनाएं, जल सरंक्षण तालाबों का निर्माण, बेकार पड़ी भूमि को क षि योग्य बनाना, प्राथमिक स्कूलों के लिए भवन निर्माण , गांवों को जोड़ने वाली सड़कों का निर्माण इत्यादि आरम्भ किए गए। यह केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम था तथा इसका सारा खर्च केन्द्र सरकार ही वहन करती थी । 1989 में इस कार्यक्रम को जवाहर रोजगार योजना में मिला दिया गया।

7. समन्वित ग्राम विकास योजना
(Intergrated Rural Development Programme (IRDP)

गांव के सर्वागीण विकास हेतू 1978-79 में भारत सरकार द्वारा समन्वित ग्राम विकास कार्यक्रम चलाया गया। यह कार्यक्रम ग्रामीण विकास के सन्दर्भ में एक प्रमुख गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के रूप में शुरू किया गया। इसका उद्देश्य केवल क षि या उद्योग का विकास ही न होकर सामुदायिक जीवन के सभी पक्षों का विकास कर पूरे ग्रामीण जीवन स्तर को ऊँचा उठाना था। अतः इस में ग्रामीण सुधार के लिए न केवल क षि विकास के ही कार्यक्रम थे बल्कि गैर क षि विकास कार्यक्रम भी सम्मिलित किए गए। इस योजना के तहत लघु एंव सीमान्त किसानों के साथ-2 अन्य सहायक व्यवसाय स्थापित करने के लिए अनुमानित दरों पर सहायता दी गई। इनके अतिरिक्त ग्रामीण दस्तकार, व भूमिहीन लोगों को भी गैर-क षि कार्यो के लिए सहायता दी गई। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य एक लक्ष्य समूह क अभिनिर्धारित परिवारों की आय को गरीबी स्तर से उपर उठाने में सहायता करना था।

कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यो के लिए कार्य योजनाए तैयार की गई

1. लक्ष्य समूह के परिवारों को गरीबी रेखा से ऊपर उठाने के लिए विकास योजना तैयार करना,
2. ग्रामीण निर्धनों विशेषकर भूमिहीन मजदूरों , भूमिहीन किसान , शिल्पकार , स्त्रियों व बच्चों में कौशल स जन तथा विकास के कार्यक्रम बनाना एंव स्वरोजगार तथा मजदूरी प्रदत्त रोजगार के अवसरों का प्रसार करना।

3. क षि पशुपालन, मत्स्यपालन, वानिकी, ग्राम और कुटीर उद्योग एंव वाणिज्यिक क्रियाओं को बढ़ावा देना।

इस सन्दर्भ में किए गए अध्ययनों से सामने आया कि यह कार्यक्रम उचित मात्रा में स्वरोजगार अवसरों को स जन करने में असफल रहा इस कार्यक्रम के तहत गलत परिवारों को सहायता, भ्रष्टाचार व कुरीतियों का प्रचलन, पशुपालन के लिए अत्याधिक साधनों का व्यय इस योजना की मुख्य कमियाँ रही।

8. ट्राईसेम (TRYSEM) (Scheme of Tranining Rural Youth for Self Employment) (TRYSEM)

ग्रामीण युवकों को रोजगाार के लिए प्रशिक्षण योजना (ट्राईसेम)

ग्रामीण युवकों में बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिए 15 अगस्त, 1979 को केन्द्र सरकार द्वारा यह योजना शुरू की गई। इस योजना का मुख्य उद्देश्य गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों के लगभग 2 लाख ग्रामीण युवकों को प्रति वर्ष स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण प्रदान करना था। ट्राइसेम को समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के एक सहायक अंग के रूप में आरम्भ किया गया।

इस कार्यक्रम के तहत युवकों को राजगीरी, बढ़ईगीरी, दरी-कालीन बुनना, वस्त्र बुनना, माचिस व मोमबती बनाना, सिलाई-कढ़ाई आदि का प्रशिक्षण दिया जाता था।

प्रशिक्षण कार्यक्रम में लगभग 1/3 स्त्रियों का समायोजिक करने की भी व्यवस्था की गई। हांलाकि इस कार्यक्रम में प्रभावी कार्य अवसरों के प्रसार की काफी कोशिश की गई लेकिन फिर भी यह लक्षित समूह को स्वरोजगार प्रदान करने में पूर्ण रूप से सक्ष्म नहीं हो सका।

9. जवाहर रोजगार योजना
(Jawalar Rojgor Yojana (JRY)

ग्रामीण रोजगार कार्यक्रमों की कड़ी में यह योजना नवीनतम एंव महत्वपूर्ण योजना थी। इसका शुभांरभ सन् 1989 में एन.आर. ई.पी.एंव आर.एल.ई.जी.पी. के विलय कर देने के परिणास्वरूप हुआ। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगार एंव अल्प रोजगार वाले श्रमिकों को रोजगार प्रदान करने के लिए रोजगार के अतिरिक्त अवसरों का स जन करना था। इस योजना का लक्षित समूह गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोग थे। इसमें अनुसूचित जाति एंव अनुसूचित जनजाति के लोगों को प्राथमिकता देने का भी प्रावधान था। स जित रोजगार अवसरों का 30 प्रतिशत महिलाओं के लिए आरक्षित रखा गया।

यह योजना एक केन्द्र प्रायोजित योजना थी और राज्य सरकारों द्वारा लागू की गई। इस योजना पर किए गए खर्च का वहन केन्द्र एंव राज्य सरकारों द्वारा 80 व 20 के अनुपात में किया गया। लेकिन यह योजना भी पूर्ण रूप से अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल नहीं रह सकी।

10. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना
(Swarnjayanti Gram Swarojgar Yozana(SGSY)

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगारों का विकास करने के लिए यह योजना 1 अप्रैल , 1999 से प्रारम्भ की गई। इस योजना के अन्तर्गत आई.आर.डी. पी. ट्राइसेम, डवाकर, गंगा कल्याण योजना एंव 10 लाख कुओं की योजना का सम्मलित किया गया है। उपरोक्त सभी स्कीम अब क्रियान्वन में नहीं है।

इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक से अधिक संख्या में अतिलघु उद्यमों की स्थापना करना है। इस योजना के तहत यह भी लक्ष्य रखा गया कि 30 प्रतिशत ग्रामीण गरीबों को 5 वर्षो में इस कार्यक्रम के अर्न्तगत लाना है। देखना यह है कि यह योजना किस हद तक अपने उद्देश्यों की प्राप्त कर सकेगी।

11. जवाहर ग्राम सम द्धि योजना
(Jawahar Gram Samardhi Yozana)

यह योजना 1 अप्रैल , 1999 में पहले से चल रही जवाहर रोजगार योजना को पुनर्गठित करके, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार स जन हेतु आरम्भ की गई है। यह योजना गांव में पंचायत के स्तर पर लागू की जा रही है। इसके तहत सम्पूर्ण कार्य योजना ग्राम पंचायत बनाती है। और ग्राम सभा द्वारा पारित करने के बाद इसका कार्यान्वन करती है। यह योजना कहाँ तक अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल रहेगी, यह देखना शेष है।

Chapter - 25

स्वैच्छिक संगठनों की विकास प्रशासन में भूमिका

(Role of Voluntary Agencies in Development Administration)

आज राज्य की अवधारणा 'पुलिस राज्य' से बदल कर ' कल्याणकारी राज्य ' की बन गई। अतः जन कल्याण से सम्बन्धित सभी कार्य अब राज्य का उत्तरदायित्व है। भारत जैसे विकासशील देशों में, राज्य के कार्यो में अपार व द्धि और उन्हें पूरा करने के लिए राज्य के पास सीमित संसाधन होने के कारण , ऐच्छिक संगठनों का महत्व अत्याधिक बढ़ गया है। कोई भी सरकार चाहे वह कितनी ही साध न सम्पन्न क्यों न हो , अकेली सारे कल्याणकारी योजनाओं एंव कार्यक्रमों का बोझ वहन नहीं कर सकती। ऐच्छिक संगठन इन कार्यो के पूरा करने में सरकार का हाथ बटांकर उसके बोझ को हल्का कर देते हैं। ये सरकारी कार्य की प्रतिक्षा किस बिना ही स्वंय पहल करके स्वंय के साधनों से समाज के सहयोग द्वारा बहुत सारी समस्याओं जैसे कि आग लगना, बाढ़ आना , अकाल पड़ना आदि से निपटने का सार्थक प्रयास करते हैं। आवश्यकता मन्द, निराच्रित , मन्दबुद्धि, विकलांग लोगों की मदद करने में भी इनकी भूमिका सराहनीय है। ये सगंठन सामाजिक चेतना एंव विश्व प्रेम से प्रभावित होकर जन कल्याण सम्बन्धी अनेक कार्य करते हैं। इन संगठनों में मानवीय स्प श एंव द ष्टिकोण जिसका प्रायःसरकारी संगठनों मे अभाव रहता हैं, के कारण इन्हें जनता का प्रत्यक्ष योगदान भरपूर मात्रा में मिलता हैं।

इस प्रकार ये सगंठन प्रजातन्त्र की अवधारणा को वास्तविक रूप में परिणत करने का मुख्य साधन हैं। इनका अधिकक से अधिक प्रयोग प्रजातन्त्र की मूल आत्मा से जुड़ा हुआ है। अतः विकासशील देशों के प्रशासन द्वारा संचालित कल्याणकारी एंव विकासात्मक कार्यो के सफल क्रियान्वन में स्वैच्छिक संगठन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

भारत में ऐच्छिक संगठन

(Voluntary Organisation in India)

भारत में ऐच्छिक संगठनों का इतिहास बहुत पुराना है। उस समय पर धनी एंव व्यापारिक लोग अपनी अन्तरात्मा से प्रेरित होकर बहुत सारे ऐच्छिक कार्य करते थे। व्यवस्थित रूप में इन संगठनों की उत्पति एंव विकास 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक से Trace किया जा सकती है जब ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव हेतू संगठित प्रयास किया गया। इससे पहले इसाई मिशनरियों ने समाज सेवा के अनेक कार्य प्रारम्भ किए। इन कार्यो के माध्यम से वे अपने धर्म का प्रसार करना चाहते थे। 20 वीं शताब्दी के आरम्भिक दशकों में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में, बहुत सारे प्रयोग आरम्भ किए गए। इनमें से प्रमुख रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा शान्ति निकेतन यूनिवर्सिटी की शाखा के रूप में श्रीनिकेतन की स्थापना था जहाँ पर

ग्रामीण महिलाओं को रजाई बनाने की कला में चातुर्य हासिल करने के लिए प्रशिक्षण दिया जाता था। इसके बाद राजा राममोहन राय, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, रानाडे, दयानन्द सरस्वती एंव विवेकानन्द जैसे महानपुरूषों ने भी इस सन्दर्भ में अनेक कार्य किए। इस समय पर अनेक सामाजिक बुराईयों जैसे कि बाल-विवाह सती प्रथा आदि का विरोध किया गया तथा विधवा विवाह को कानूनी मंजूरी प्रदान की गई। इसके साथ-साथ प्रान्तीय एंव स्थानीय स्तरों पर जन स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रम, कल्याण आदि को भी काफी बढ़ावा दिया गया। 1931 के आसपास महात्मा गांधी ने भी सेवाग्राम नामक स्थान पर सामाजिक आर्थिक बदलाव की प्रक्रिया का शुभारम्भ किया। उसने भारतीय समस्याओं को गहनतम रूप से समझने की कोशिश की। उन्होनें हरिजन महिलाओं के कल्याण हेतु अनेक कदम उठाए।[1]

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले बहुत सारे छोटे बड़े स्वैच्छिक सगंठनों ने सामाजिक विकास में अपनी-अपनी भूमिका निभाई।

स्वेतन्त्रता से पूर्व कल्याणकारी सेवाओं का क्षेत्र पूर्णतः ऐच्छिक संगठनों का विषय था। इस समय कल्याणकारी सेवाओं के मार्ग में मुख्य बाधाएं ये थी -पर्याप्त धन का अभाव राजनीतिक आन्दोलन , उपयुक्त चेतना का अभाव तथा विभिन्न सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन। समाज कल्याण से सम्बन्धित इन समस्याओं ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस क्षेत्र में राज्य का प्रवेश अनिवार्य बना दिया। लेकिन स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी इन संगठनों की महत्ता को प्रशासकों एंव नीति निर्धारक के द्वारा स्वीकारा गया ओर पहली पंचवर्षीय योजना में इन संगठनों के लिए 4 करोड़ रूपए की धनराशि का प्रावधान कियागया जो विभिन्न योजनाओं के अर्न्तगत समय समय पर बढ़ाया गया।

स्वैच्छिक संगठनः अर्थ एंव परिभाषा
(Voluntary Agencies:Meaning & Definition)

साहियित्क रूप से Voluntary शब्द की उत्पति लैटिन भाषा के Valunta शब्द से हई है। Voluntary का लैटिन भाषा में अर्थ will अर्थात् इच्छा होता है। इस प्रकार Voluntary शब्द का अर्थ हुआ 'इच्छानुसार कार्य'। दूसरे शब्दो में स्वैच्छिक संगठन वे संगठन हैं जो स्व-इच्छा से प्रेरित होकर जनकल्याण हेतू कार्य करते हैं।

एन.आर.मलकानी के अनुसार,"ऐच्छिक संगठन वह है जिसके कार्यकर्ता चाहे वेतन भोगी हों अथवा न हों किन्तु जिसकी पहल एंव प्रसाधन इसके सदस्यों द्वारा बिना बाहरी नियन्त्रण के किया जाए"।

ऐच्छिक एंव गैर सरकारी संगठन में अन्तर
(Difference between Voluntary and non-Governmetal organisation)

आमतौर पर लोग ऐच्छिक एंव गैर-सरकारी संगठनों को एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में प्रयोग करते हैं। लेकिन इन दोनों में काफी अन्तर है। ऐच्छिक संगठन स्वतः जन्म लेते हैं। और जनता की पहल पर शुरू किए जाते हैं। जबकि गैर सरकारी संगठन सरकार द्वारा स्थापित किए जाते हैं। ऐच्छिक संगठन जनतान्त्रिक नीवं पर आधारित होने के कारण समाज में गैर सरकारी संगठनों की अपेक्षा अधिक लोक प्रिय होते हैं।

ऐच्छिक संगठनों की विशेषताएं
(Salient features of Voluntary Agenices)

ऐच्छिक संगठनों का उदय समाज कल्याण के उद्देश्य को मध्यनजर रखते हुए होता है। इनकी मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैः-

1. स्वेच्छा पर आधारितः-

इन संगठनों का विकास कुछ लोगों के ऐच्छिक प्रयासों का परिमाण होता है। ये लोग स्वेच्छा से मिलकर किसी कार्य को अन्जाम देने के सम्बन्ध में ऐसे संगठनों को जन्म देते हैं।

2. निश्चित लक्ष्यों एंव उद्देश्यों की प्राप्तिः-(Achievement of Definit Goals)

स्वैच्छिक संगठनों की स्थापना कुछ निश्चित लक्ष्यों एंव उद्देश्यों को मध्यनजर रखते हुए की जाती है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु ये संगठन कुछ कार्यक्रम तैयार करते हैं और उन्हें जन सहयोग से लागू करते है।

3. प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों पर आधारित कार्यप्रणाली
(Operate on Democrate Principles)

इन संगठनों की पहल तथा प्रशासन, स्वंय इनके सदस्यों द्वारा, जनसहयोग की मदद से चलाया जाता है। इनमें किसी प्रकार का बाह्य नियन्त्रण नहीं होता।

4. वित्तीय संसाधनों का तरीका
(Method of Financing)

स्वैच्छिक संगठन अपने कार्यक्रमों के क्रियान्वन हेतू कुछ न कुछ संसाधन स्वंय के ऐच्छिक स्त्रोतों से जुटाते हैं तथा बिना सरकार की प्रतिक्षा किए अपने संसाधनों से तथा जनता के सहयोग से बहुत सारी गम्भीर समस्याएं जैसे कि प्राक तिक आपदाएं आदि के निदान हेतू स्वंय पहल कदमी कर आगे आते है।

5. लाभ का उद्देश्य न होना
(Motive of Profit excluded)

स्वैच्छिक संगठनों की एक अन्य विशेषता यह है कि जनसहायतार्थ इनके द्वारा जो कार्यक्रम चलाए जाते है उनके उद्देश्य धनोपार्जन न होकर लोगों को सेंवाएँ देना होता है।

6. अपक्षपात पूर्ण संगठन
Non Partisan organisation

ऐच्छिक संगठन अपनी प्रक ति में अपक्षपाती होते हैं जिसके कारण ये किसी के साथ भी भेदभाव पूर्ण व्यवहार नहीं करते। इनकी सेवाएँ सब वर्गो के लोगों को प्राप्त होती हैं। ये संगठन धर्म, जाति, लिगं आदि के आधार पर अपनी सेवाएं जन साधारण को न देकर, सामान्य हित में इन्हें आम जनता तक पहुचातें हैं।

7. लोचशीलताः-
(Flexibility)

इन संगठनों की एक अन्य विशेषता यह है कि इनमें लोचशीलता की मात्रा अत्याधिक पाई जाती है। ये संगठन अपनी कार्यप्रणाली में समय की आवश्यकता तथा समस्या की गम्भीरता को समझते हुए आवश्यक फेरबदल कर लेते हैं। सरकारी संगठनों की तरह इनका द ष्टिकोण कठोर नहीं (Rigid) नहीं होता।

ऐच्छिक संगठनों के कार्यक्रम एंव सेवाएं
(Programmes and services by voluntary Agencies)

स्वैच्छिक संगठन समाज के विभिन्न वर्गो के लिए अनेकोनेक कार्यक्रम एंव सेवाएं प्रदान करते हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण सेवाएं निम्न प्रकार हैं-

1. व द्धों एंव दुर्बलों की सेवा (Services for the Aged and infirm)
2. विकलांगों के लिए कल्याण सेवाएं (Welfare Services for Handicapped)
3. युवा कल्याण (Youth welfare)
4. शिशु कल्याण एंव बाल विकास सेवाएं (Child welfare & Development service)
5. महिलाओं के लिए कल्याणकारी सेवाएं (Welfare Services for Women)
6. सकल समाज के लिए कल्याणकारी सेवाए (General Community welfare services)
7. सामाजिक सुरक्षा (Social Security)

स्वैच्छिक संगठनों की विकास प्रशासन में भूमिका
(Role of Voluntary Agencies in Development Administration)

स्वैच्छिक संगठन विकास प्रशासन में अहम् स्थान रखते हैं तथा विकास प्रशासन के उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विकास प्रशासन में इनकी भूमिका को निम्न बिन्दुओं की मदद से दर्शाया जा सकता है-

1.सरकार को Feedback प्रदान करने का विश्वश्नीय स्त्रोत

(Reliable Source of Feedback to the Government)

स्वैच्छिक संगठन, जनतान्त्रिक सिद्धान्तों पर आधारित होने के कारण, जनसाधारण के काफी निकट होते हैं। इसी कारण ग्रामीण स्तर पर इन्हें जनता के आखँ व कान (Eye & Cars of People) के रूप में देखा जाता है। ये संगठन जनसाधारण की इच्छाओं, आकांक्षाओं , आवश्यकताओं एंव समस्याओं से भली भांति परिचित होने के कारण सरकार को यर्थाथ सूचनाएं दे सकते हैं ताकि विकास प्रशासन अपने कार्यक्रम जन-साधारण की आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार कर सके।इसके साथ-साथ विकास प्रशासन द्वारा संचालित कार्यक्रमों की ग्रामीण स्तर पर सफलताओं एंव असफलताओं की सही-सही जानकारी भी ये सरकार तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

2. जन-सहभागिता को बढ़ावा
(Ensure People's participation in Administration)

विकासात्मक कार्यक्रमों एंव योजनाओं का सफलतापूर्वक क्रियान्वन इन कार्यक्रमों में जनता की भागीदारी पर निर्भर करता है। ऐच्छिक संगठन जनतान्त्रिक नींव पर आधारित होने के कारण , समाज में काफी लोकप्रियता प्राप्त करते हैं। इसके साथ-साथ जन साधारण इन संगठनों पर अधिक से अधिक विश्वास करता है। इसी विश्वास के आधार पर ये संगठन लोगों को प्रशासन के नजदीक लाने की कोशिश करते हैं तथा उन दोनों के मध्य फासले को कम करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार ये संगठन प्रशासन द्वारा संचालित विकासात्मक एंव कल्याणकारी कार्यक्रमों जनसमर्थन एंव जन-सहभागिता को बढ़ावा देने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ-साथ ये संगठन पारस्परिक सहायता को भी प्रोत्साहन प्रदान करते हैं।

3. जन चेतना पैदा करनाः-

आमतौर पर लोगों को समाज में फैली समस्याओं की बहुत कम जानकारी होती है। इन समस्याओं के निदान हेतू विकास प्रशासन अनेकानेक कार्यक्रम संचालित करता है। लेकिन इन कार्यक्रमों की सफलता के लिए इनके उद्देश्यों की पर्याप्त जानकारी आम व्यक्ति के स्तर होना अति आवश्यक है। लेकिन विकासशील देशों में अशिक्षा एंव द्ररिद्रता जैसी समस्याएं अधिक व्याप्त होने के कारण जन साध ाारण में चेतना का अभाव पाया जाता है जो विकास प्रशासन के लिए एक मुख्य बाधा है। इस सन्दर्भ में स्वैच्छिक संगठन, जन साधारण के अत्याधिक निकट होने के कारण न केवल उन्हें सामाजिक समस्याओं के प्रति सजग बनाते हैं बल्कि सरकार द्वारा चलाए गए विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में भी पर्याप्त जानकारी देते हैं। इस प्रकार ये संगठन जन-मानस में अधिकाधिक जागरूकता एवं चेतना का विकास करते है।

4. संचार के साधन के रूप में

(Channel of Effective Communication)

ऐच्छिक संगठन प्रशासन एंव जनता के बीच में संचार के एक प्रमुख साधन के रूप में भी अपनी भूमिका निभाते हैं। ये संगठन कुछ जागरूक लोगों से निर्मित होने के कारण, लोगों की आवश्यकतओं एवं जरूरतों की सही एंव पूर्ण जानकारी सरकार तक पहुंचाने में मदद करते हैं। इसके साथ-साथ ये संगठन प्रशासन द्वारा चलाए गए विभिन्न वर्गो के कल्याण हेतू कार्यक्रमों की सही जानकारी जन-साध ाारण तक भी पहुंचाते हैं। और जनता में सरकार व प्रशासन के प्रति व्याप्त भ्रातियों को दूर करने में अपनी भूमिका निभाते हैं।

5. विकास सम्बन्धी नियोजन की कमियों में सुधार

Rectify Errors of Development Planning

विकास प्रशासन के लिए यह अत्यन्त जरूरी है कि विकास सम्बन्धी नियोजन अर्थात नीतियाँ एंव कार्यक्रम, जन आवश्यकताओं के अनुरूप हों। आमतौर पर नीति निर्माता व प्रशासक नीतियां एंव कार्यक्रमों का बनाते समय जन साधारण की आवश्यकताओं की अनदेखी कर जाते हैं, जिसके कारण उनके क्रियान्वन के समय आवश्यक जन-सहभागिता न मिल पाने के कारण ये कार्यक्रम अपने उद्देश्य प्राप्त नहीं कर पाते। इस दिशा में ऐच्छिक संगठन विकास सम्बन्धी नियोजन के दौरान नीति निर्माताओं एंव प्रशासको को वास्तव में क्या होना चाहिए, के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी उपलब्ध करा कर उनकी कमियों में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

6. विकास प्रशासन के प्रयासों के पूरक के रूप में

Supplement the efforts of Development Adm)

विकासशील देशों में प्रशासन के सामने सबसे महत्वपूर्ण चुनौती प्रत्येक क्षेत्र के विकास सम्बन्धी है जैसे कि सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक एवं सांस्क तिक विकास। इसके अतिरिक्त प्रत्येक क्षेत्र में प्रशासन के सामने बहुत सारी समस्याएँ भी हैं जिनका समाधान एक साथ निकालना काफी कठिन कार्य हैं । प्रत्येक समस्या का यथोचित निदान अकेले विकास प्रशासन के लिए काफी कठिन कार्य है। विकास प्रशासन की इस जिम्मेदारी को बाँट लेने में ऐच्छिक संगठन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन विकास प्रशासन के प्रयासों के पूरक के रूप में कार्य करके, तथा जन कल्याण सम्बन्धी बहुत सारी समस्याओं के निदान हेतू विभिन्न क्षेत्रों में अनेकोनेक कार्यक्रम लागू करते हैं।

7. विकास कार्यक्रमों को सफल बनाने में सहायक
(Make Development Programmes a success)

स्वैच्छिक संगठन विकास प्रशासन के द्वारा तैयार किए गए विभिन्न विकासात्मक योजनाओं एंव कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इसका कारण यह है कि इन संगठनों में मानवीय स्पर्श तथा द ष्टिकोण की लोचशीलता पाई जाती है जो सरकारी संगठनों में अक्सर देखने को नहीं मिलती। अपने मानवीय स्पर्श एंव लोचशीलता के आधार पर ये लोगों का विश्वास जीत लेते हैं तथा सरकारी कार्यक्रमों की सम्पूर्ण जानकारी लोगों तक पहुँचाकर उन्हें इन कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रेरित करते हैं। लोगों के सहयोग पर ही इन कार्यक्रमों की सफलता टिकी होती है।

8. ग्रामीण चातुर्य एंव बुद्धिमता का उपयोग
(utilize rural skills and talents by channelising Human Resources)

विकास प्रशासन को प्रत्येक क्षेत्र में अपने जन कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों को लागू करने हेतू काफी मात्रा में मानवीय संसाधनों की आवश्यकता पड़ती है। प्रशिक्षित मानवीय शक्ति की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता न होने के कारण आवश्यक मानवीय शक्ति जुटाना काफी कठिन कार्य है। इस सम्बन्ध में ऐच्छिक संगठन विकास कार्यक्रमों को लागू करने के लिए गांव के शिक्षित व इच्छुक लोगों को आवश्यक प्रशिक्षण देकर, तथा उन्हें इन कार्यक्रमों में सम्मिलित करने के सन्दर्भ में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के तौर पर ये संगठन ग्रामीण शिक्षित लोगों को प्राथमिक स्वास्थ्य शिक्षा एवं स्वास्थय देखभाल के विषय में प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वास्थय सम्बन्धी कार्यक्रमों के क्रियान्वन में शामिल करते हैं।

9. सामाजिक अधिनियमों को लागू करने में पहलकदमी
(Intiative in the implementation of Social Legislations)

ऐच्छिक संगठन बहुत सारे सामाजिक अधिनियम जोकि सरकार के द्वारा जनकल्याण हेतू पारित किए जाते गए हैं, उन्हें लागू करने के सम्बन्ध में पहलकदमी करते है। इसके लिए ये संगठन इन अधिनियमों के सम्बन्ध में भी लोगों में आवश्यक जानकारी देकर जनमत तैयार करते हैं जिससे कुछ सामाजिक अधिनियम जैसे कि Minimum wages Act, Abrolition of Bonded Labour Act इत्यादि को letter एंव spirit में लागू किया जा सके।

स्वैच्छिक संगठनों की कमजोरियाँ
Weakness of voluntary Agencies:-

आज तीव्रगति सें बदलते युग में स्वैच्छिक संगठनों के संसाधनों के परम्परागत स्त्रोतों में भारी कमी आई है जिसके कारण इनके संसाधन काफी हद तक सीमित हो गए हैं। अपने कार्यो को अन्जाम देने के लिए अब ये संगठन काफी हद तक सरकारी अनुदान पर निर्भर करते हैं। हांलाकि बहुत सारे अर्न्तराष्ट्रीय संस्थाएं भी इन्हें विभिन्न वर्गो के लिए विशेष कार्यक्रम चलाने हेतू अनुदान प्रदान करती है। परन्तु इन संगठनों की सरकार एंव अर्न्तराष्ट्रीय संगठनों पर लगातार बढ़ती हुई अत्याधिक आच्रितता ने न केवल इनकी ऐच्छिक प्रक ति पर प्रहार किया है बल्कि इनकी अनेक स्वाभाविक उपयोगिताओं के लिए भी घातक सिद्ध हुई है।

इसके अतिरिक्त आज के युग में ये संगठन जनता से दूर जाते जा रहे हैं। असल में इन अभिकरणों का महत्व एंव जीवन शक्ति जनता से इनकी निकटता तथा जनमत को समझकर तदनुरूप व्यवहार करने की इनकी क्षमता में निहित है। जनता से दूर होने पर इनकी उपयोगिता घट जाती है तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता दूसरी श्रेणी के अधिकारी बन जाते है।

Chapter - 26

जन-सम्पर्क एवं विकास प्रशासन

(Public Relations and Development Administration)

आज जन-सम्पर्क लोक प्रशासन के एक मुख्य विषय के रूप मे उभरा है। इसके महत्व को आधुनिक समय में किसी अन्य काल की तुलना में ज्यादा व्यापकता मिली है। इसका मुख्य कारण राज्य की प्रक ति में बदलाव कहा जा सकता है। आज 'पुलिस राज्य' के स्थान पर 'लोक -कल्याणकारी राज्य' की अवधारणा का विकास हुआ है जिससे जनता का कल्याण में राज्य की कार्य की मुख्य जिम्मेदारी बन गई है। पुलिस राज्य में राज्य के कार्य सीमित होते थे तथा प्रशासन व जनता में काफी दूरी थी। इसके साथ-साथ प्रशासक एंव जनता का सम्बन्ध मालिक एंव नौकर जैसा था। प्रशासकों का भय जनता में व्याप्त होने के कारण , इन दोनों में कोई मानवीय सम्बन्ध एंव सम्पर्क नहीं था।

लोकतन्त्र के उदय ने कल्याणकारी राज्य को भावना की जन्म दिया जिसके कारण राज्य के कार्यो में अत्याधिक विकास हुआ। राज्य के स्वरूप एंव कार्यो में परिवर्तन के फलस्वरूप प्रशासनिक सरंचनाओं को भी परिवर्तित स्थिति के अनुकूल बनाया गया। इस प्रकार राज्य के बढ़ते हुए दायित्वों ने जनता एंव प्रशासन के पूर्व सम्बन्धों में आमुलचूल परिवर्तन ला दिया और प्रशासन को जनता के अत्याधिक समीप खड़ा कर दिया। आज प्रजातान्त्रिक व्यवस्था में सरकार की विभिन्न गतिविधियों एंव क्रिया-कलापों के सन्दर्भ में जनता को अवगत करना, प्रशासन की अहमभूत जिम्मेदारी है। अतः आज लोक प्रशासन में लोक सम्पर्क सम्बन्धी विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय बन गया है।

इसके अतिरिक्त, लोक सम्पर्क सम्बन्धी मुद्दा विकासशील देशों के प्रशासन मे अति विशिष्ट स्थान रखता है क्योंकि इन देशों के प्रशासन में अति विशिष्ट स्थान रखता है क्योंकि इन देशों का प्रशासन' विकास प्रशासन' कहलाता है। इस प्रशासन का मुख्य सम्बन्ध विकासशील देशों के 'चहुँमुखी विकास' से है। अतः इसे जन-विकास हेतू अनेकानेक अल्प एंव दीर्घकालीन योजनाएं बनानी पड़ती है और इन योजनाओं की सफलता जन सहयोग पर निर्भर करती हैं। लेकिन विकास प्रशासन में जन सहयोग तभी सम्भव है जब इसके प्रोग्राम एंव योजनांए जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप हों। जन-आवश्यकताओं का पूर्ण ज्ञान जन-सम्पर्क के माध्यम से ही सम्भव है। इस प्रकार जनता एंव विकास प्रशासन के बीच गहन सम्बन्ध स्थापित करने का शक्तिशाली साधन केवल 'जन-सम्पर्क ही है। अतः जन-सम्पर्क की विकास प्रशासन की सफलता में अहमभूत भूमिका है।

जन-सम्पर्क : अर्थ एंव परिभाषा
(Public Relations:Meaning and Definition)

लोक सम्पर्क एक व्यापक शब्द है तथा इसे निश्चित शब्दों की परिधि में बाँधना असाधारण कार्य है।

हालांकि अनेक विद्वानों ने इसे परिभाषित करने का प्रयास किया है। साधारण शब्दों में लोक सम्पर्क उन सभी क्रिया कलापों का मिश्रण है जो सरकार द्वारा संचालित कार्यक्रमों की जानकारी लोगों को देते हैं और लोगों की आवश्यकताओं , इच्छाओं एंव विचारों की जानकारी सरकार को देते हैं। इस प्रकार जन-सम्पर्क एक तरफा प्रक्रिया न होकर दोहरी प्रक्रिया है, "जिसमें जनता को एक तरफ तो सरकार के विभिन्न विभाग अपने कार्यो तथा कार्यक्रमों आदि के बारे में उचित सूचना प्रदान करके विश्वास प्राप्त करना चाहते है दूसरी तरफ जनता की आवश्यकता उसी माध्यम से विभागों तक पहुंचती हैं।

जॉन डी मिलेट के अनुसार, J. D. Milet "लोक -सम्पर्क इस बात की जानकारी प्राप्त करना है कि लोग क्या आशा करते हैं तथा इस बात का स्पष्टीकरण देना कि प्रशासन उन मांगों को कैसे पूरा कर रहा है।

रैक्स हारलो (Rax Harlow) के अनुसार ,"जन सम्पर्क एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक संगठन यथार्थ रूप में अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को पूरा करने तथा कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक लोक स्वीक ति और अनुमोदन प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

जे.एल.मेकेनी (J.L.Macany-) के अनुसार," प्रशासन में जन सम्पर्क , अधिकारी वर्ग तथा नागरिकों के मध्य पास जाने वाले प्रधान एंव गौण सम्बन्धों तथा इन सम्बन्धों द्वारा स्थापित प्रभावों एंव द ष्टिकोणों की पारस्परिक क्रियाओं का मिश्रण है।

लोक सम्पर्क : मिलते-जुलते शब्द
(Public Relations: Related terminology)

लोक सम्पर्क शब्द से कुछ शब्द जैसे कि लोक प्रसिद्धि (Publicity), प्रोपेगण्डा या प्रचार (Propganda) एंव जन संचार (Mass Media) मिलते जुलते से हैं। कई बार इन शब्दों को जन-सम्पर्क का पर्यायवाची भी माना जाता है परन्तु इन सब में कुछ न कुछ अन्तर है।

Public relations & Publicity
(जन सम्पर्क एंव लोकसिद्धि)

जनता का सामूहिक रूप से किसी विषय के सम्बन्ध में जानकारी उपलब्ध कराना लोक सिद्धि (Publicity) कहलाता है जबकि लोक सम्पर्क का ध्येय लोगों के पास व्यक्तिगत रूप से पहुचंना भी है।

Public relations & Propaganda
(जनसम्पर्क एंव प्रोपेगण्डा)

प्रोपेगण्डा में किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतू किसी घटना या विचारधारा को जानबूझकर अधिकाधिक प्रचारित एंव प्रसारित किया जाता है जबकि जन सम्पर्क का ऐसा कोई उद्देश्य नहीं होता। प्रोपेगण्डा का स्त्रोत छुपा होता है जबकि लोक सम्पर्क का स्त्रोत सभी को पता होता है। इसके अतिरिक्त प्रोपेगण्डा का उद्देश्य झूठी अफवाहें फैलाकर स्वार्थसिद्धि से जुड़ा होता है जबकि लोक सम्पर्क सही जानकारी लोगों तक पहुँचाने से जुड़ा हुआ है।

Public relations & Mass Media
(लोक सम्पर्क और जन संचार)

जन सम्पर्क एंव जन संचार आपस में काफी हद तक मिलते जुलते हैं। "जन संचार , लोक सम्पर्क का ही एक शैली मात्र है। सभी प्रकार का जन संचार लोक सम्पर्क है परन्तु सभी प्रकार का लोक

सम्पर्क जन संचार नहीं है। इस प्रकार लोक सम्पर्क व्यक्तिगत एंव सामूहिक दोनों हो सकता है जबकि जन संचार सामूहिक ही हो सकता है।

जनसम्पर्क की विकास प्रशासन में भूमिका
(Role of Public Relations in Development)

जनसम्पर्क की विकास प्रशासन मे अहम भूमिका है। जन सम्पर्क के माध्यम से ही विकास प्रशासन अपने विकास सम्बन्धी उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। जन सम्पर्क के अभाव में विकास प्रशासन की सफलता पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है। अतः विकास प्रशासन में जन सम्पर्क को होना अति आवश्यक है। विकास प्रशासन में जन सम्पर्क की भूमिका एंव योगदान निम्नलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट हैः-

1. जन जागरूकता पैदा करने में
(Awareness Generation)

विकास प्रशासन द्वारा संचालित जन विकास सम्बन्धी विभिन्न नीतियों एंव कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जनता में जागरूकता पैदा करने में , जन सम्पर्क का एक महत्वपूर्ण योगदान है। विकास प्रशासन के कार्यक्रम चाहे जितने अच्छे हो लेकिन उनके सम्बन्ध में अगर लोगों को जानकारी नहीं है तो वे उनमें बढ़ चढ़ कर भाग नहीं लेगें, जो विकास प्रशासन की विफलता का कारण बन सकते हैं क्योंकि विकास प्रशासन की सफलता जन-सहयोग पर ही निर्भर करती है। इस प्रकार विकास प्रशासन में जन-सहयोग की प्राप्ति जन-जागरूकता से जुड़ी हुई है। भारत जैसे देश में विकास प्रशासन द्वारा संचालित बहुत सारे कार्यक्रमों को जन-सम्पर्क के अभाव के परिणास्वरूप असफलता का मुहँ देखना पड़ा है। अतः विकास कार्यक्रमों को लागू करने से पहले उनके सम्बन्ध में पर्याप्त जन-जागरूकता का जनता में पैदा करना अति आवश्यक है। इस प्रकार की जन जागरूकता सम्पर्क के माध्यम से ही सम्भव है।

2. जन आकांक्षाएं जानने हेतुः-(To know the public Will)

विकास प्रशासन की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि उसके द्वारा संचालित विकासात्मक कार्यक्रम जन आकांक्षाओं के अनुरूप हों। अतः विकास सम्बन्धी कोई भी कार्यक्रम एंव नीति तैयार करने से पूर्व लोगों की इच्छाओं अपेक्षाओं एवं आकांक्षाओं की जानकारी अति आवश्यक है। ऐसा करने से विकास प्रशासन का कार्य अत्याधिक आसान हो जाता है। अगर कार्यक्रम जन आवश्यकताओं के अनुसार तैयार किए जाएं तो उनकी सफलता निश्चित हो जाती है। लोक सम्पर्क के विभिन्न उपकरण जन आकाक्षाओं एवं आवश्यकताओं की जानकारी में महत्वपूर्ण भूमिका निभातें हैं इस प्रकार विकास सम्बन्धी बेहतर योजनाएं एंव कार्यक्रम (Sound Development plans & Programme) तैयार करने में जन सम्पर्क का अत्याधिक योगदान है।

3. जनता एंव विकास प्रशासन के मध्य दूरी कम करने में
(To minimise the gap between Development administration and People)

विकास प्रशासन के लिए जन-विकास तभी सम्भव है जब इसमें और जनता में दूरी कम से कम हो। अगर इन दोनों के मध्य यह दूरी अधिक होगी तो विकास प्रशासन का कोई भी कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता। भारत में विकास प्रशासन के विभिन्न कार्यक्रमों की असफलता का मुख्य कारण इन दोनों के मध्य दूरी ही रहा है।जनता क्या चाहती है और विकास प्रशासन उन्हें पूरा करने हेतु कैसे विकास कार्यक्रम तैयार करता है, इन दोनों बातों में तारत्मय स्थापित करना ही विकास प्रशासन

की सफलता का द्योतक है। इस कार्य में जन सम्पर्क के विभिन्न, अभिकरण इस दोनों के मध्य एक समन्वयकर्ता की भूमिका निभाते हैं और दोनों को एक दूसरे के करीब लाने की चेष्टा करते है।यह न केवल विकास प्रशासन की योजनाओं एंव कार्यक्रमों की जानकारी लोगों तक पहुँचता है बल्कि लोगों की आवश्यकताओं एंव इच्छाओं की जानकारी भी विकास प्रशासन को देता है ताकि इसके कार्यक्रम जन -आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार किए जा सकें।

4. विकास कार्यक्रमों एंव नीतियों को सफलतापूर्वक लागू करने हेतू
(For the successful implementation of Development Programmes &Policies)

विकास प्रशासन के द्वारा जन विकास हेतु तैयार किए गए विभिन्न कार्यक्रमों एंव नीतियों को सफलतापूर्वक लागू करना अति आवश्यक है। लेकिन इन कार्यक्रमों एवं नीतियों को लागू करने से पहले इनके सम्बन्ध में जनता को भरपूर जानकारी देना अति आवश्यक है क्योंकि जब तक इनके विषय में विस्त त ढ़ंग से जानेगी नही तो उन्हें स्वीकार कैसे करेगी? जनता की अनभिज्ञता भी इन विकास कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक लागू करने के रास्ते में एक मुख्य बाधा है। इस बाधा का समाधान लोक सम्पर्क के विभिन्न अभिकरणों के माध्यम से सम्भव है। अतः लोक सम्पर्क विभिन्न विकासात्मक कार्यक्रमों एंव नीतियों को सफलता पूर्वक लागू करने के सम्बन्ध में अहम भूमिका निभाता है।

5. जनता को अफवाहों और गलतफहमियों से दूर रखना हेतू
(To remove misconceptions of the People)

विकास प्रशासन के द्वारा संचालित सामाजिक -आर्थिक कार्यक्रमों के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अति आवश्यक है कि जनता में उनसे सम्बन्धित कोई भ्रान्ति एंव गलतफहमी न हो। कुछ लोग गलत ढ़ंग से इन कार्यक्रमों की जानकारी जनता समक्ष रखते हैं जिससे जनता में आक्रोश पैदा हो जाता है। ऐसे समय में लोक सम्पर्क के साधन जनता को वास्तविक तथ्यों से अवगत कराते हैं और जनता के हर प्रश्न का जबाव देकर , उसकी गलतफहमियों को दूर करने में मदद करते है। विकास प्रशासन के प्रत्येक कार्यक्रम के उद्देश्यों के सम्बन्ध में स्पष्टता अत्यन्त अनिवार्य है। उदाहरण के तौर पर 1970 के दशक में जनसंख्या नियन्त्रण सम्बन्धी कार्यक्रम।

लोक सम्पर्क के साधन
(Means of Public Relations)

वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण आज लोक सम्पर्क के साधनों का अत्याधिक विस्तार हुआ है। आजकल लोक सम्पर्क के लिए विभिन्न प्रकार के द श्य-श्रव्य साधनों (Audio visual Aids) का विकास प्रशासन के द्वारा प्रयोग किया जाता है। इसके प्रमुख साधनों का वर्णन निम्नलिखित है-

1. प्रेस तथा प्रकाशन
(Press and Publication)

विकास प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों एंव योजनाओं को जनता तक पहुँचाने एंव जन-प्रतिक्रियाओं को जानने के लिए प्रेस एक महत्वपूर्ण साधन है। प्रेस की सहायता से जन-विकास योजनाओं के क्रियान्वन में आने वाली समस्याओं के सम्बन्ध में भी सरकार को समय-समय पर अवगत करवाया जाता है। इसके साथ-साथ जनता अखबार के सम्पादक को पत्र लिखकर इन कार्यक्रमों के सम्बन्ध में अपनी प्रतिक्रियाएं जताते हैं जो अक्सर 'Letter to the Editor column' में प्रकाशित की जाती हैं।

इसके अतिरिक्त, विकास प्रशासन के विभिन्न कार्यक्रमों एंव नीतियों का जनता तक पहुंचाने के लिए

अनेकों पत्रिकाएं, पुस्तिकाएं, इश्तिहार एंव पैम्फलेट इत्यादि का प्रकाशन भी करती है। यह प्रकाशन सामग्री या तो निशुल्क लोगों में वितरित की जाती है, या इसके बदले में नाम-मात्र की कीमत वसूली जाती है। इसका एकमात्र उद्देश्य जनता का जन विकास कार्यो के सम्बन्ध में गहन जानकारी देना होता हैं

2. रेडियो
(Radio)

रेडियों जन सम्पर्क का एक सस्ता एंव सुलभ साधन है। समाचार पत्र एवं प्रकाशित सामग्री तो केवल पढ़ीलिखी जनता तक ही सीमित होती है लेकिन रेडियों के कार्यक्रम तो पढ़े लिखे एंव अपनढ़ , दोनों तक भली भांति पहुंचते हैं। रेडियों के माध्यम से सरकार, विकास प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों एंव योजनाओं के सम्बन्ध में समय-समय पर जानकारी जनता का तक पहुंचाती है और इन कार्यक्रमों में जन-सहयोग की अपील भी करती है। इनसे सम्बन्धित बहुत सारे अन्य कार्यक्रम भी रेडियों पर प्रसारित किए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त रेडियो प्रसारण के लिए विभिन्न विभागों जैसे कि क षि, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि के विशेषज्ञों की भी सेवाएं ली जाती हैं जो अपने-अपने विभाग से सम्बन्धित विकास कार्यक्रमों की जानकारी एंव सूचनाएं देते हैं।

3. चलचित्र
(Films)

विकास प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विभिन प्रकार के चलचित्रों (Films, documentaries and News Reels) आदि का निर्माण किया जाता है। इन चलचित्रों का अधिकतर प्रयोग लोक सम्पर्क विभाग के द्वारा दूरस्थ गांव में अपने चलते फिरते वाहनों (Mobile vans) के माध्यम से किया जाता है। ये चलचित्र न केवल मनोरंजन का ही साधन हैं बल्कि विकास कार्यक्रमों से जुड़ी बहुत सारी जानकारियाँ भी जनता में पहुंचाते हैं । हांलाकि इलैक्ट्रोनिक मीडिया आ जाने के कारण आजकल इनका प्रयोग बहुत कम किया जाता है।

4. दूरदर्शन
(Television)

आज दूरदर्शन का विभिन्न विकास कार्यक्रमों को जनता तक पहुंचाने में एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह लोक सम्पर्क का एक अत्याधिक महत्वपूर्ण एवं एंव विश्वसनीय साधन है। दूरदर्शन के माध्यम से विकासात्मक कार्यक्रमों को विभिन्न क्षेत्रों में लागू करने से सम्बन्धित विशेषज्ञों के द्वारा बहुत सारी जानकारी आमने-सामने की स्थिति में जनता को प्रदान की जाती है। जनता से आपेक्षित सहयोग की अपील भी की जाती है ताकि इन कार्यक्रमों को सफल बनाया जा सके। विकास से जुड़ी महत्वपूर्ण समस्याओं पर विशेषज्ञों के परिसंवाद, गोष्ठियाँ एंव चर्चाएं भी दूरदर्शन पर आयोजित की जाती हैं।

5. प्रदर्शनियाँ
(Exhibitions)

जन संचार एंव जन सम्पर्क के लिए समय-समय पर बहुत सारी प्रदर्शनियों का आयोजिन किया जाता है। इन प्रदशनियों में विभिन विकास सम्बन्धी कार्य एंव कार्यक्रमों के फोटो चार्ट, ग्राफ रेखाचित्र , माडलयुक्त चित्र आदि के माध्यम से विभिन्न प्रकार की जानकारियां जनता को प्रदान की जाती हैं। इसके साथ-साथ इन प्रदर्शनियों में जनता को कुछ पैम्फलेट भी बांटे जाते हैं जो विभिन्न विकास कार्यक्रमों के सम्बन्ध में तैयार किए जाते हैं। इन प्रदर्शनियों से अनपढ़ व्यक्ति भी बहुत सारी जानकारियाँ प्राप्त करते हैं।

6. विज्ञापन

(Advertisement)

सरकार के विकास सम्बन्धी क्रियाकलापों एंव कार्यक्रमों की जानकारी विज्ञापनों के माध्यम से भी दी जाती है। इसके लिए सरकार बहुत सारे पोस्टरों, कैलण्टरों, होल्डरों एंव इश्तिहारों का प्रयोग करती है। इन विज्ञापनों के माध्यम से सरकार पंचवर्षीय योजना, गरीबी व छुआछुत उन्मूलन कार्यक्रम, परिवार नियोजन, परिवार कल्याण इत्यादि से सम्बन्धित कार्यक्रमों की जानकारी का प्रचार एंव प्रसार करती है। ये विज्ञापन आमतौर पर सार्वजनिक स्थान जैसे कि डाकघर, सरकारी अस्पताल, रेलवे स्टेशन व बस अड्डे आदि पर लगाए जाते हैं। इन सब विज्ञापनों का मुख्य उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों में विकास प्रशासन द्वारा संचालित कार्यक्रमों की पूर्ण जानकारी जनता तक पहुंचाना होता है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि लोक सम्पर्क विकास प्रशासन की सफलता के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण विषय है। इसके बिना विकास प्रशासन न तो अपने कार्यक्रमों की जानकारी जनता तक पहुँचा सकता है और न ही जनता की इच्छाओं आवश्यकताओं, आकांक्षाओं तथा अपने विभिन्न कार्यक्रमों के सम्बन्ध में जनता की प्रतिक्रियाओं को जान सकता है। अतः विकास प्रशासन के लोक सम्पर्क के विभिन्न अभिकरणों का अधिक से अधिक प्रयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

Chapter - 27
चिर-स्थायी विकास
(Sustainable Development)

आधुनिक समय में चिरस्थाई विकास (Sustainable Development) का विषय सामान्य तौर पर लोक प्रशासन में तथा विशेष तौर पर विकास प्रशासन में काफी लोकप्रिय विषय के रूप में उभर कर आया है। इसका कारण यह है कि वर्तमान में बहुत सारी गम्भीर समस्यांए जैसे कि जनसंख्या विस्फोट , बिगड़ता पर्यावरण सन्तुलन, बढ़ती हुई सामाजिक-आर्थिक अशान्ति, बढ़ता पर्यावरण प्रदूषण आदि ने Eco-system की चिरस्थाईता (Sustainability) के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण सवाल खड़े कर दिए हैं। पर्यावरण का विनाश मुख्य रूप से विकसित देशों के द्धारा आधुनिक तकनीकी अपनाकर अपने विकास एंव आधुनिकीकरण हेतु किए गए प्रयासों का परिणाम है। विकसित देशों की भांति विकासशील देशों ने भी विकास लाने की दिशा में जो प्रयास किए हैं उनसे भी प्राक तिक संसाधनों का हास व शोषण हुआ है और उनके ये प्रयास प्रक ति के खिलाफ ही गए हैं। इस प्रकार विश्व के सभी देशों ने अपना-अपना विकास करने की दिशा में विकास की Eco-friendly अवधारण की अनदेखी की है जिसके कारण आज मानव समाज बहुत सारी समस्याओं की चपेट मे आ गया है।

आज यह बात सर्वमान्य है कि विकास केवल Enviornment Friendly होना चाहिए जहां पर लोग पर्यावरण एंव विकास में आवश्यक एंव मधुर सामन्जस्य स्थापित कर सकें तथा एक watchdog के रूप में कार्य कर सकें। इस सन्दभ्र में चिरस्थाई विकास की अवधारणा अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है। विकास की यह अवधारण प्रत्येक क्षेत्र जैसे कि स्वास्थय शिक्षा सामाजिक सुरक्षा , सामाजिक न्याय, सामाजिक समता , मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति आदि में गुणात्मक सुधार लाने पर दबाव डालती है जिससे जन साधारण का अधिक से अधिक कल्याण हो सके। अर्थात् यह अवधारण सामाजिक भेदभाव, शोषण एंव अनावश्यक सामाजिक दबाव को दूर करने की पक्षधर है।

आज का मानव प्राक तिक संसाधनों का अत्याधिक दोहा, पर्यावरण प्रदुषण वनों की कटाई इत्यदि को दाव पर लगाकर आर्थिक विकास की होड़ में लगा हुआ है और उसके फलों का स्वाद चखना चाहता है लेकिन मानव की इस सोच एंव द ष्टिकोण के परिणाम भयावह एंव विनाशक होंगे जो आने वाली पुश्तों को भुगताने पड़ेगें। पर्यावरण के विनाश में सहायक आज के राजनैतिक एंव आर्थिक निर्णय आने वाली पुश्तों (पीढ़ियो)के भविष्य को अन्धकारमय बना सकते हैं। प्राक तिक न्याय का सिद्धान्त भी इस बात पर जोर डालता है कि आने वाली पीढ़ी के उपयोग हेतु कम से कम इतने संसाधन अवश्य हों जो आज की पीढ़ी के पास हैं।

इस प्रकार चिरस्थाई विकास (Sustainable Development) की अवधारणा विकास के सन्दर्भ में समाज के विभिन्न वर्गों के साथ न्याय, आने वाली पुश्तों के साथ न्याय एंव प्रक ति के साथ न्याय की बात पर जोर डालती है।[2] महात्मा गांधी ने भी इस सम्बन्ध में कहा था कि प्रक ति मानव की आवश्यकताओं की तो पूर्ति कर सकती है लेकिन मानव की Greed की नही।

चिरस्थाई विकास की अवधारणा की उत्पति
(Evolution of the Concept of Sustainable Development)

इस अवधारणा का विकास पिछले दो दशकों में उत्पन्न विचारों का परिणाम है। वास्तव में 1972 की स्टोकहोम कान्फ्रेंस (Stockholm Conferece)* में 'पर्यावरण' सम्बन्धी विषय अर्न्तराष्ट्रीय मुद्दे के रूप में उभरकर आया। इसके बाद यूनाइटेड नेशनस इन्वायरनमैन्ट प्रोग्रोम United Nations Enviorment Programme (UNEP) के द्वारा तैयार की गई अपनी 10 वर्षीय रिर्पोट (1972-82) में पर्यावरण को दो भागों में बांटा-प्राक तिक पर्यावरण एंव सामाजिक पर्यावरण । प्राक तिक पर्यावरण में यू.एन.ई.पी ने प्राक तिक तत्व जैसे कि पानी, भूमि हवा, वन एंव वन्य जीवन को सम्मिलित किया जबकि सामाजिक पर्यावरण में मानव जनसंख्या, स्वास्थ्य, क षि, संस्क ति, उद्योग, संसाधन, परिवहन , पर्यटन एंव समाज के वे सभी तत्व जो मानव जीवन को प्रभावित करते हैं। इस कान्फ्रेन्स में गरीबी, असमानता एंव अविकास जैसी समस्याओ को चिरस्थाई विकास के मार्ग में पहली बार मुख्य बाधा के रूप में देखा गया। इसके साथ साथ विकसित एंव विकासशील देशों के पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याएं भी इस कान्फ्रेंस में चर्चा का मुख्य मुद्दा बनाई गई।

इसके पश्चात् Sustainable development की अवधारणा को 1980 में वर्ल्ड कन्र्जवेसन स्टेटजी (World Conservation Streategy) के द्धारा और अधिक महत्वपूर्ण बना दिया गया। इस streategy का मुख्य उद्देश्य Eco-system की सीमाओं को मध्यनजर रखते हुए मानवीय जीवन में गुणात्मक सुधार लाने से था। वास्तव में चिरस्थाई विकास एंव बेहतर पर्यावरण प्रबन्ध के सम्बन्ध में Concrete नीति अपनाया जाना, वर्ल्ड कमीशन आन इन्वार्यमैन्ट एण्ड डव्लैपमैन्ट (World Commission on Envirnment and Development) द्वारा 1987 में पेश की गई ब्रेटलैण्ड रिर्पोट (Brandtland Report) का ही परिणाम है। यह रिर्पोट , इस कमीशन के चैयरमैन Bradtland जो नार्वे के प्रधानमंत्री थे, के नाम से जानी जाती है। Brandtland कमीशन ने इस बात पर चिन्ता व्यक्त की कि अगर आज की मानव पीढ़ी प्राक तिक संसाधनों का दोहन, पर्यावरण प्रदुषण , भौतिक संसाधनों का दुरूपयोग , गरीब लागों की उपेक्षा, इत्यदि इसी तरह से करती रही, तो वो दिन दूर नही जब मानवीय जीवन की गुणात्मकता का स्तर बहुत ही कम हो जाएगा। इस स्तर की गिरावट को विराम देने की दिशा में इस कमीशन ने 'Sustainable Development' नामक शब्द का विकास किया। इस रिर्पोट में विकसित (North) एंव विकासशील (South) देशों की इस सन्दर्भ में जिम्मेदारियों का जिकर करने के साथ-साथ कुछ तरीके अपनाए जाने की दिशा मे सुझाव भी दिए गए।

Barandtland रिर्पोट का सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह रहा कि इसने जून 1992 में दूसरी यू.एन. कान्फ्रेंस आन इन्वार्यन्मैन्ट एण्ड डव्लैपमेन्ट (U.N. Conference on Enviornment & Development) जोकि ब्राजील की राजधानी रायों डी जेनेरियों (Rio de Jenrio) में हुई, के लिए आधार तैयार किया। इसे (Earth Summit) या रायो कान्फ्रेन्स (Rio Conference) के नाम से भी जाना जाता है। चिरस्थाई विकास की दिशा में Earth Summit वास्तव में एक बहुत बड़ी छंलाग थी और इसने विश्व के लोगों द्धारा ऐसी विकास प्रक्रिया जो आने वाली पीढ़ियों के साथ भेदभाव न करे , को अपनाए जाने की आवश्यकता के बारे में जागरूक करने की दिशा में मील के पत्थर का काम किया। इसकी महता इस बात से स्पष्ट है कि पहली बार सामाजिक पर्यावरण के सन्दर्भ में Global Concern महसूस किया गया और ऐसा माना गया कि बेहतर सामाजिक पर्यावरण का विकास ही Sustaibble Development की दिशा एक महत्वपूर्ण द ष्टिकोण हो सकता है।

यह कान्फ्रेन्स Global Participation की द ष्टि से अपने आप मे अलग तरह की थी। इस कान्फ्रेन्स में 116 देशों के राजनयिक लगभग 7000 पत्रकार, 150 देशों के लगभग 10,000 अधिकारीगण और लगभग 15,000 जागरूक नागरिक एंव सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

यह कान्फ्रेन्स अब तक की सबसे बड़ी कान्फ्रेन्स मानी जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के दबाव व गिरते हुए पर्यावरण के स्तर के मध्यनजर प्रत्येक राष्ट्रीय सरकार द्वारा इस कान्फ्रेन्स के बाद पर्यावरण बचाव व इसे बेहतर बनाने की दिशा में कुछ नीतियां अपनाई गई। 1992 की इस Earth Summit में कुछ कहावतों जैसे कि "Think globally, act globally" and "Take Rio back home" आदि का जन्म हुआ। इस प्रकार Rio Conference में विकास के सन्दर्भ में एक नए Paradigm जो कि Enviornment friendly विकास पर अधिक जोर डालता है, का विकास किया गया। इस नए Paradigm को Sustainable Development के नाम से जाना जाता है।

चिरस्थाई विकासः अर्थ एंव परिभाषा
(Sustainable Development : Meaning & Definition)

साधारण तौर पर Sustainable Development से तात्पर्य विकास की एक ऐसी प्रक्रिया से है जो न केवल Eco-friendly है बल्कि पर्यावरण के अनुरूप बदलाव लाकर मानवीय जीवन में गुणात्मक सुधार को बढ़ावा देती है।

Brundtland Commission के अनुसार Sustainable Development वह "विकास है जो आज की पीढ़ी के उद्देश्यों की प्राप्ति, जिससे आने वाली पीढ़ियों की योग्यता, ताकि वे अपने आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें, से समझौता किए वगैर करती है।

चिरस्थाई विकास के सामने चुनौतियाँ
(Nature of Challenges to sustainable Development)

Sustainable Development के सामने निम्नलिखित चुनौतियाँ हैः-

1. पर्यावरण प्रदुषण
(Enviornemnt Poullution)

पर्यावरण प्रदुषण चिरस्थाई विकास के सामने एक गम्भीर चुनौती है। इस प्रदुषण ने पूरे ग्लोब के पर्यावरण के लिए संकट खड़ा कर दिया है। इसके लिए निम्नलिखित पहलू जिम्मेदार हैंः-

(a) ग्रीन-हाऊस प्रभाव
(Green House Effect)

फासिल फ्यूलस (Fossil fuels) के जलने के कारण, वायुमण्डल में कार्बनडाइआक्साइड गैस की मात्रा में बढ़ोतरी हुई है और इससे प थ्वी का वातावरण (Climate) काफी हद तक गर्म हो गया है। यह ग्रीन हाऊस प्रभाव कहलाता है। कुछ विद्वानों का मानना है प थ्वी के वातावरण में यह गर्मी इसी तरह बढ़ती रही तो सन् 2030 तक प थ्वी का तापमान 1.5 सैण्टीग्रेड से लेकर 4.5° सैटीग्रेड तक बढ़ जाएगा। Global Warming के कारण सर्द ऋतु छोटी और गर्मी की ऋतु बड़ी हो जाएगी जिसके कारण क षि क्षेत्र पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। इसके अतिरिक्त वनस्पति एंव वन्य-जीवन पर भी इसका विपरीत असर होगा।

Global Warming का जल-चक्र (Water cycle) पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। जैसे-जैसे प थ्वी का तापमान बढ़ता जाएगा, उतनी ही मात्रा में बर्फ अधिक पिघलेगी और अधिक बर्फ पिघलेगी तो अधिक जल नदियों में होगा जिससे नदियों के आस-पास के क्षेत्र जल मग्न होगें और लोगों को बाढ़

---

* Sustainable Development is "Development that meets the goals of the present without compromissing the ability of future generations to meet their own needs." *ibid* p 40

जैसी समस्या का सामना करना पड़ेगा। इसके साथ-साथ वह यह जल Sea Level को भी बढ़ा देगा और अगर Sea Level बढ़ा तो तटीय क्षेत्र (Costal areas) जल मग्न हो जाएगें जिससे मानवीय जीवन प्रभावित होगा।

(b) ओजोन परत का विघटन (Ozone Layer Depletion) :–

वायुमण्डल के समताप मंडल (Stratosphere) में ओजोन गैस (3) की एक परत पाई जाती है जो सूर्य से निकलने वाली हानिकारक किरणें , जिन्हें अल्ट्रावायलैट किरणें (Ultraviolet Rays) कहते हैं, को अवशोषित कर प थ्वी पर जीवन को सुरक्षित रखती है। लेकिन आजकल ओजोन परत का विघटन होने के कारण मानवीय जीवन के लिए असुरक्षा का खतरा उत्पन्न हो गया है। ओजोन परत के विघटन का प्रमुख कारण रफैजिरेट्रस (Refrigerators) में क्लोरोफ्लोरो कार्बन (Chlorofloro Carbon) का बढ़ता हुआ प्रयोग है। वैज्ञानिक इस बात पर एकमत हैं कि अगर ओजोन गैस की परत का विघटन बढ़ा तो इसका नुकसान न केवल मानव को ही होगा बल्कि पशु, पक्षी पेड़ पौधे इत्यादि भी इसके नुकसान से नहीं बच सकेगें। इस परत का विघटन skin cancer को बढ़ावा देता है।

(c) अम्लीय वर्षा (Acid Rain) :–

अम्लीय वर्षा भी पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा देती है। Fossil Fuels के जलने से वायुमण्डल में सल्फर व नाइट्रोजन के आक्साइडस उत्पन्न होते हैं। जब इन गैसों के ये आक्साइड (oxides) वायुमण्डल में सूर्य की रोशनी एंव नमीके साथ क्रिया (Reaction) करते हैं तो अम्ल का निर्माण करते हैं। सल्फर के आक्साइड सूर्य की रोशनी में पानी (अथवा नमी) से क्रिया करके सल्फ्यूरिक एसिड (H_2So_4) अर्थात् गन्धक का अम्ल पैदा करते हैं तथा नाईट्रोजन के आक्साइड नाइट्रिक एसिड (HNo_3) अर्थात् शोरे के अम्ल को पैदा करते हैं। इसके पश्चात् वर्षा,धुन्ध, कुहरा या वर्फवारी के साथ जमीन पर आ जाते हैं। इसे अम्लीय वर्षा के नाम से जाना जाता है। इस वर्षा के कारण नदी व नालों की मछलियाँ मर जाती हैं तथा कुछ व क्षों एंव फसलों की Growth रूक जाती है। इस प्रकार वन्य जीवन एंव वनस्पति के लिए यह अम्लीय वर्षा घातक सिद्ध होती है।

(d) वायु-प्रदूषण (Air Pollution):–

औद्योगिकरण के विकास के परिणामस्वरूप उद्योग जगत का विकास हुआ तथा उत्पादन का स्तर भी काफी हद तक बढ़ा। लेकिन बढ़ते औद्योगिकरण ने पर्यावरण प्रदुषण की समस्या को अत्याधिक बढ़ावा दिया है। फैक्ट्ररियों की चिमनियों से, कारखानों से , वाहनों आदि से निकलने वाले धुएं ने वायु-प्रदुषण की समस्या को गम्भीर बना दिया है। इस धुएं में जहरीलें तत्वों के कुछ फ्यूमस (fumes of toxic substances) पाए जाते है जो स्वास्थय सम्बन्धी अनेक बिमारियों को जन्म देते हैं। पर्यावरण में लगातार वायु प्रदूषण की बढ़ोतरी स्वच्छ मानव जीवन के लिए जी का जंजाल बन चुका है।

(e) जल-प्रदूषण (Water Pollution):–

औद्योगिक विकास ने जैसे स्वच्छ हवा को प्रदुषित किया है वैसे ही जल भी इससे अछुता नहीं रहा है। आज मानव के सामने पीने योग्य पानी की अपर्याप्त मात्रा में उपलब्धता एक विकट समस्या बनती जा रही है। फैक्ट्ररी व कारखानों आदि ने स्वच्छ पानी को गन्दा बना दिया है।

(f) वनों की कटाई (Deforestation):–

पर्यावरण प्रदूषण को जन आवश्यताओं की पूर्ति हेतु लगातार की गई वनों की कटाई से भी काफी बढ़ावा मिला है। वनों की कटाई ने पर्यावरण पर काफी गहर प्रभाव डाला है। वैज्ञानिकों का मानना है कि यह समस्या वातावरण में अत्याधिक बदलाव पैदा करके वर्षा की मात्रा में कमी लाने में नुकसान करेगी। इसके परिणामस्वरूप पीने योग्य स्वच्छ पानी की supply पर गहरा असर पड़ेगा।

(g) पैस्टीसाइडस (Pesticides) :–

आधुनिक युग में विशेष तौर पर क षि क्षेत्र में (Pesticides) का प्रचलन व इस्तेमाल काफी हद तक बढ़ा है जिसने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को गम्भीर बना दिया है। डब्लू. एच. ओ. (WHO) के अनुमान के अनुसार दुनिया के लगभग आधा मिलियन लोग बाहर के देशों से मंगवाई हुई पैस्टीसाइडस का जहर खा रहे हैं तथा उनमें से अधिकतर तीसरी दुनिया के देशों में निवास करते है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि पर्यावरण का लगातार गिरता स्तर (Sustainable Development) के सामने मानव जीवन को बचाने की दिशा में एक अहमभूत चुनौती बन गया है।

2. जनसंख्या विस्फोट (Population Explosion) :–

जनसंख्या विस्फोट की भयावह समस्या आज Sustainable Development के सामने एक गम्भीर चुनौती के रूप में खड़ी है। विशेषकर विकासशील देशों में जनसंख्या व द्धि की दर में काफी बढ़ोतरी हुई है। जनसंख्या में अत्याधिक बढ़ोतरी 21वीं सदी की सबसे अहम विडम्बना है। प्रत्येक देश (विकसित एंव विकासशील) में जनसंख्या की व द्धि का प्रभाव, विकास सम्बन्धी गतिविधियों, प्राक तिक संसाधनों के प्रयोग, भूमि का प्रयोग, सिंचाई व्यवस्था आदि पर स्पष्ट रूप से झलकता है।

1970 से 1990 के अन्तराल में विश्व की जनसंख्या 40 प्रतिशत बढ़ गई है। हांलाकि गरीब देशों में Infant Mortality की भी अहम समस्या बनी हुई है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 34 विकासशील देशों में 10 प्रतिशत बच्चे पांच वर्ष की आयु तक मौत का शिकार हो जाते है।

विकासशील देशों में आज भी एक मिलियन से ज्यादा लोग अत्याधिक गरीबी में जीवनयापन करते हैं। लगभग 1.5 विलियन लोगों को इन देशों में स्वच्छ पीने योग्य पानी की उपलब्धता नहीं है। इसके साथ-साथ लगभग 2 विलियन लोगों को सफाई एंव स्वास्थय जैसी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि मानवता का एक बहुत बड़ा भाग आज सामाजिक, आर्थिक , सांस्क तिक राजनैतिक एंव पर्यावरण की द ष्टि से unsustainable है।

3. भूमि व पानी सम्बन्धी संसाधनों पर दबाव (Stress on Land &water Resources)

भूमि व पानी जैसे संसाधनों पर लगातार बढ़ता दबाव भी Sustainable Develpment के सामने एक बहुत बड़ी चुनौती के रूप में उभर रहा है। पिछले 40 वर्षो में संसार में पानी के संसाधनों का प्रयोग तीन गुने से अधिक हो गया है। संसार का काफी क्षेत्र जैसे कि उत्तरी अमेरिका, केन्द्रीय अमेरिका, दक्षिण -पूर्व एशिया एंव दक्षिण -पश्चिमी अमेरिका में पानी की भारी किल्लत है। संसार के काफी भागों से प्रति वर्ष लगभग 338 मिलियन टन औद्योगिक व मानवीय अवशिष्ट पदार्थ, क षि खाद व पैस्टीसाइडस, अम्लीय वर्षा इत्यादि पानी जमीन को प्रदुषित करते हैं।

इसके अतिरिक्त आज औद्योगिकरण के प्रसार एंव बढ़ती जनसंख्या के लिए घर निर्माण हेतु उपजाऊ

भूमि का काफी हद तक प्रयोग कर लेने के कारण क षि योग्य भूमि पर दबाव बढ़ा है। इसके साथ जनसंख्या विस्फोट के कारण खाने की अधिक मांग व प्राक तिक आपदाओं ने क षि सम्बन्धी समस्या को ओर अधिक बढ़ा दिया है।

4. राजनेताओं का अपरिपक्व, स्वार्थपूर्ण एंव संकुचित द ष्टिकोण (Immature , selfish, narrow minded vision of Political Leaders)

Sustainale Development के सामने विशेषकर तीसरी दुनिया के देशों के राजनेताओं का अपरिपक्व, स्वार्थपूर्ण एंव संकुचित द ष्टिकोण है। इस द ष्टिकोण के परिणामस्वरूप इन देशों में राजनेता ad-hocism में विश्वास करते हैं। इनके द्वारा तैयार की गई नीतियों के उद्देश्य दूरगामी न होकर संकुचित होते हैं। यहां पर नेतागण आम आदमी के विकास की बजाय उसके शोषण में ज्यादा Busy रहते है। इसके साथ-साथ उनमें Commitment की भावना का भी अभाव है। इसी कारण इन देशों में Sustainble Development के सामने चुनौतियों को दूर करने के लिए बेहतर अधिनियमों के निर्माण में ये राजनेता अपने द ष्टिकोण के कारण फेल ही रहे हैं।

5. प्राक तिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण प्रयोग (Indiscriminate misuse of natural Resoures)

मानव के द्वारा आर्थिक विकास करने की होड़ में संसाधनों का अविवेकपूर्ण प्रयोग भी Sustainable Development के सामने एक मुख्य चुनौती है। मानव आज प्रक ति का अधिक से अधिक शोषण करके अपना विकास करना चाहता है। आज प्रक ति आर्थिक दिशा में प्रगति करने की सोच से मानवीय भूख (Human Greed) का शिकार है। इस सम्बन्ध में महात्मा गांधी का मानना है कि प्रक ति मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति तो कर सकती है लेकिन प्रत्येक मानव की Greed का नहीं। मानव प्राक तिक संसाधनों का अधिक से अधिक शोषण व अविवेकपूर्ण प्रयोग करके आर्थिक विकास को आकाश की ऊचांईयों पर ले जाना चाहता है। मानव का यह लालच ही Sustainable Development की सबसे बड़ी चुनौती है।

चिरस्थाई विकास की चुनौतियों को दूर करने हेतु कार्ययोजनाएं (Strategies to meet out the Challenges of Sustainable Development)

Sustainable Development के सामने जो चुनौतियाँ है उन्हें निम्नलिखित कार्ययोजनाएं अपनाकर कुछ हद तक दूर किया जा सकता है।

1. जनसंख्या नियन्त्रण सम्बन्धी प्रबन्धन (Population Stabilizaion management)
2. Non-Renewable संसाधनों का कम से कम प्रयोग (Little use of non-renewable Resources)
3. पर्यावरण सम्बन्धी शिक्षा एंव जानकारी की उपलब्धता Providing Enviornmental education and Awareness
4. Non-Polluting एवं Renewable ऊर्जा के स्त्रोतों का विकास (Development of non-polluting, renewable energy system)
5. अवशिष्ट पदार्थो का पुन-चक्र (Recycling of wastes & residues)
6. पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों को update करना (Updating Enviornmental Laws)
7. राजनीति की दूरदर्शिता (Far sighted vision of Politics)

1. जनसंख्या नियन्त्रण सम्बन्धी प्रबन्ध

Sustainable development के सामने सबसे प्रमुख चुनौती जनसंख्या विस्फोट की है।इस तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या को नियन्त्रित करने के लिए कुछ ठोस उपाय करना अति आवश्यक है। जनसंख्या नियन्त्रण हेतु विशेषकर विकासशील देशों में कुछ ऐसी नीतियाँ तैयार की जाएं ताकि जनसंख्या की गति को स्थिरता प्रदान की जा सके।

2. Non-Rebewable संसाधनों का कम से कम प्रयोग

ऊर्जा के ऐसे स्त्रोत व साधन जिन्हें Renew (पुनः नया न कर पाना) ना किया जा सके, का कम से कम प्रयोग किया जाना चाहिए। उदाहरण के तौर पर कोयला, डीजल, पैट्रोल आदि संसाधनों Non-renewable होने के कारण, इन्हें Renew नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त ऐसे संसाधनों का प्रयोग प्रदुषण भी फैलाते हैं। अतः ऊर्जा के इन स्त्रोतों का प्रयोग कम से कम किया जाना चाहिए।

3. पर्यावरण सम्बन्धी शिक्षा एंव जानकारीः-

पर्यावरण सम्बन्धी शिक्षा एंव जानकारी का जन-साधारण में फैलाव भी पर्यावरण प्रदुषण जैसी गम्भीर समस्या को काफी हद तक हल करने में सक्ष्म है। अशिक्षा एंव द्ररिद्रता के कारण विकासशील देशों में पर्यावरण सम्बन्धी शिक्षा एंव जानकारी का पर्याप्त अभाव है। इस अज्ञानता के कारण जल प्रदूषण , वायु प्रदूषण , पैस्टीसाइडस का अधिकाधिक प्रयोग , वनों की कटाई आदि समस्याओं को बढ़ावा मिला है। जन साधारण तक पर्यावरण संरक्षण व बचाव की आवश्यकता के विषय में जानकारी व शिक्षा प्रदान करके भी , इसे प्रदुषित होने से काफी हद तक बचाया जा सकता है। इस सम्बन्ध में सभी स्कूलों एंव कालेजों में पर्यावरण सम्बन्धी विषय को अनिवार्य विषय के रूप में अपनाया जाना चाहिए। इसके साथ-साथ गांव के स्तर पर भी सम्बन्धित अधिकारियों के माध्यम से अधिक से अधिक जानकारी दी जानी चाहिए।

4. Non-Polluting एवं Renewable ऊर्जा स्त्रोतों का विकासः-

Sustainable Development के सामने खड़ी चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों का विकास करना अत्याधिक आवश्यक है जिन्हें Renew किया जा सके तथा जो प्रदूषण भी न फैलाते हों। उदाहरण के तौर पर Solar Energy (सौर ऊर्जा) का प्रयोग इस दिशा में अधिकाधिक सहायक होगा। सौर ऊर्जा Renewable भी है तथा प्रदुषण भी नहीं फैलाती। इसके साथ पण-बिजली (पानी से बिजली तैयार करना) इसका अन्य उदाहरण है। ऐसे ऊर्जा स्त्रोतों का अधिक बढ़ावा देने से पर्यावरण प्रदूषण जैसी गम्भीर समस्या से निपटा जा सकता है।

5. अवशिष्ट पदार्थों का पुनचक्र (Recycling of Wastes & Residues)

अवशिष्ट पदार्थों का diposal सही प्रकार से न होने के कारण पर्यावरण प्रदूषण की समस्या काफी हद तक बढ़ गई है। इस समस्या का समाधान अवशिष्ट पदार्थों को कम से कम मात्रा में पैदा करने से हो सकता है। अवशिष्ट पदार्थ कम मात्रा में उत्पन्न हों, उसके लिए उनकी Recycling करना अति आवश्यक है। इस समस्या के समाधान में जन साधारण का योगदान आवश्यक है। प्रत्येक नागरिक के लिए आवश्यक है कि अवशिष्ट पदार्थों के उत्पन्न होते ही उसकी छंटाई - Edible (खाने योग्य) एंव Non Edible (न खाने योग्य) के रूप में की जानी चाहिए। खाने योग्य अवशिष्ट पदार्थों को पशु इत्यादि को खिलाकर गोबर आदि के रूप में परिवर्तित किया जा सकता हैं। Non-edible Products जैसे कि खाली माचिस, फ्यूज बल्ब, पोलिथिन प्लास्टिक सीसा व लोहे का प्रयोग मे न आने वाला समान, बेकार कागज, सभी प्रकार की पैकिंगस को सम्बन्धित फैक्ट्री में वापस भेजा जा

सकता है जिससे उन सबका पुनः इस्तेमाल किया जा सकता है। इस प्रकार हम Land Pollution जैसी समस्या से छुटकारा पा सकते हैं।

6. पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों में आवश्यक फेर बदलः-

पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्या को हल करने की दिशा में पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों में आवश्यक फेरबदल भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। इन सभी कानूनों को Update करके आधुनिक समय की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जाना अति आवश्यक है। इसके साथ-साथ इन कानूनों का पालन विशेष तौर पर विकासशील देशों में कड़ाई से किया जाना चाहिए और इन्हें लागू करते समय किसी प्रकार की ढील नही बरती जानी चाहिए।

7. राजनैतिक दूरदर्शिताः-

Sustainable Development की चुनौतियों को दूर करने में राजनैतिक दूरदर्शिता का होना भी अहमभूत भूमिका निभा सकता है।लगभग सभी विकासशील देशों में इसका प्रायः अभाव देखने को मिलता है। लेकिन इन देशों के राजनेताओं को स्वार्थपूर्ण बातों से ऊपर उठकर ऐसी नीतियों का निर्माण करना चाहिए जिनके परिणाम दूरगामी हो और जो पर्यावरण बचाव व संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।